झाँकना संभव, आँकना असंभव

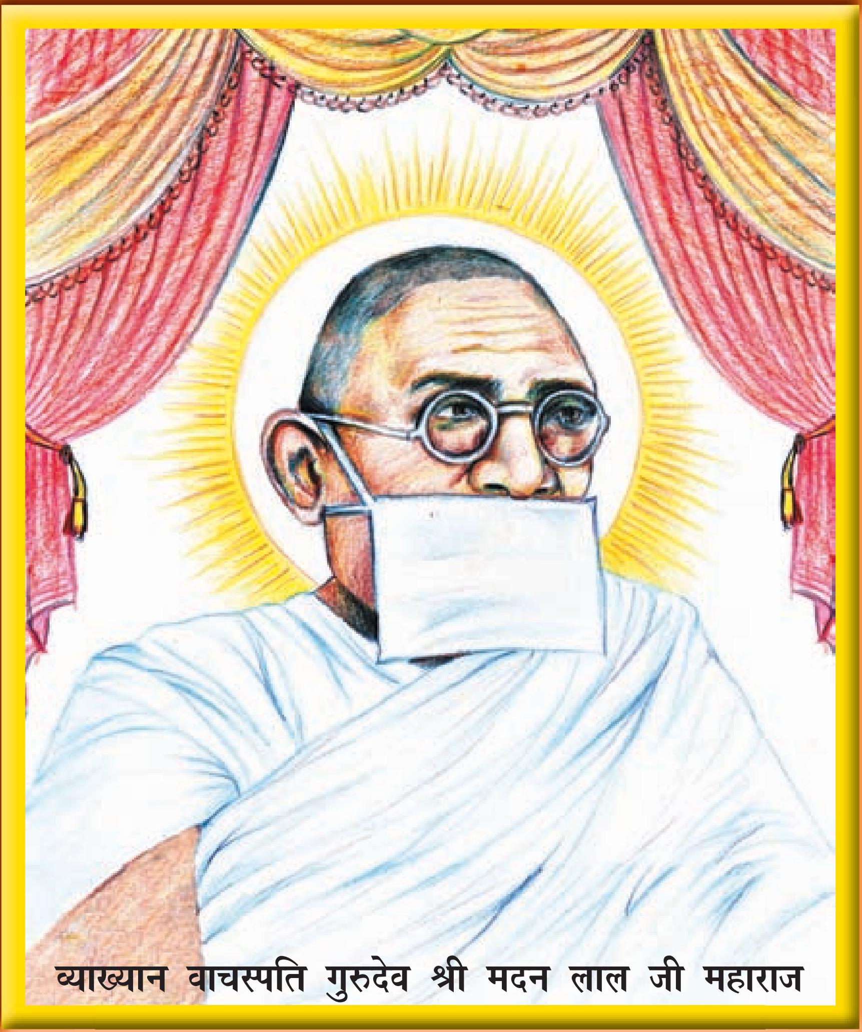

लेखकः गुरु सुदर्शन शिष्य–जय मुनि

पूज्य गुरुदेव का संक्षिप्त परिचय

नाम	: व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव श्री मदन लाल जी महाराज
जन्म स्थान	: राजपुर (निकट सोनीपत)
पिता	: श्री मुरारीलाल जैन
माता	: श्रीमती गेंदो देवी जैन
जन्म तिथि	: 23 फरवरी, 1896, (फाल्गुन सुदी नवमी, संवत् 1952)
घरेलू नाम	: मौजी राम जैन
पालन पोषण	: मौसी मोरनी के घर, सदर बाजार दिल्ली
दीक्षा तिथि	: 16 अगस्त 1914 (भादवा बदी दशमी, संवत् 1971)
गुरुदेव	: बहुसूत्री श्री नाथूलाल जी महाराज
विशेषण	: 1. व्याख्यान वाचस्पति। 12 फरवरी 1936 (फाल्गुन शुक्ला दूज, संवत् 1992), होशियारपुर 2. शांतिरक्षक (सभाध्यक्ष, Speaker) सादड़ी सम्मेलन, सोजत सम्मेलन, भीनासर सम्मेलन पर 3. श्रमण संघ प्रधान मंत्री : 1 अप्रैल 1956 से 21 अक्तूबर 1956 तक।
शिष्य	: 1. सरलात्मा बाबा श्री जग्गूमल जी म. 2. संघशास्ता गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. 3. घोर तपस्वी श्री बदरी प्रसाद जी म. 4. महान् आत्मार्थी, गच्छाधिपति सेठ श्री प्रकाश चन्द जी म. 5. आगमज्ञान रत्नाकर भगवन् श्री राम प्रसाद जी म. 6. पूज्य श्री राम चन्द्र जी म.
देवलोक	: 27 जून, 1963 जण्डियाला गुरु (निकट अमृतसर)
उत्तराधिकारी	: संघ शास्ता पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी महाराज
विचरण क्षेत्र	: पंजाब (वर्तमान पाकिस्तान सहित), हरियाणा, हिमाचल, दिल्ली, यू.पी., राजस्थान, गुजरात
कुल दीक्षा	: 48 वर्ष
कुल आयु	: 67 वर्ष

झांकना संभव,
आंकना असंभव

लेखकः गुरु सुदर्शन शिष्य—जय मुनि

प्रथम संस्करण : जून 2017
सर्वाधिकार © प्रकाशक

प्रकाशक/प्राप्ति स्थान :
रविंदर जैन
जय जिनशासन प्रकाशन
212, वीर अपार्टमैन्टस्, सैक्टर 13,
रोहिणी, दिल्ली-110 085
Mob: +91-98102 87446
Email : jaijinshaasanprakaashan@gmail.com

मुद्रक :
सिस्टम्स् विज़न, नई दिल्ली
Mob: +91-98102 12565
Email: systemsvision96@gmail.com

JHANKNA SAMBHAV, ANKNA ASAMBHAV

Author: गुरु सुदर्शन शिष्य—जय मुनि

इस पुस्तक के सर्वाधिकार सुरक्षित हैं। प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश की, फोटोकॉपी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रॉनिक अथवा मशीनी, किसी भी माध्यम से, अथवा ज्ञान के संग्रहण एवं पुनर्प्रयोग की किसी भी प्रणाली द्वारा, किसी भी रूप में, पुनरुत्पादित अथवा संचारित-प्रसारित नहीं किया जा सकता।

विषयक्रम

आशीर्वचन.................... v

दो शब्द.................... vii

पृष्ठभूमि.................... xi

अथातो जन्म जिज्ञासा.................... 1

दीक्षया व्रतमादत्ते.................... 7

ततो जयमुदीरयेत्.................... 42

क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः.................... 55

सत्याज्जायते धर्मः.................... 74

संगच्छध्वम् संवदध्वम्.................... 87

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत.................... 100

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्.................... 118

वयं रक्षामः.................... 138

तत् त्वमसि श्वेतकेतो.................... 154

पूर्णमदः पूर्णमिदम्.................... 168

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः.................... 176

समानी वः आकूतिः समानि हृदयानि वः.................... 200

कुर्वन्नेवेह कर्माणि.................... 215

न कर्म लिप्यते नरे.................... 232

अहं ब्रह्मास्मि.................... 255

सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म 285
परिशिष्ट 312
प्रवचन कला का चमत्कार 313
औत्पातिकी बुद्धि का चमत्कार 315
व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव के चातुर्मासों की तालिका 319
व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव के हस्त लिखित प्रवचन के
कुछ पन्ने तथा कुछ ऐतिहासिक तस्वीरें 322

आशीर्वचन

(पूज्यपाद तपस्वीराज गणाधीश श्री प्रकाश चंद जी म. की ओर से)

2 फरवरी 1958 के रोज दिल्ली, चांदनी चौंक में, मुझे, श्री संघनायक शास्त्री पद्‍म चन्दजी म. एवं कृपानाथ श्री शान्ति मुनि जी म. की त्रिवेणी को दीक्षापाठ पढ़ाने वाले दादा गुरुदेव व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलाल जी म. का जीवन चरित्र प्रकाशित होने जा रहा है, इससे मेरे मन को परम प्रसन्नता है।

उनका जीवन इन्द्रधनुषी रंगों की छटा लिए हुए था। वे मुनियों में संयम तथा संघों में संगठन देखना चाहते थे। उन्होंने आत्म-शान्ति की अतल गहराइयों को छूआ था, तभी तो कैंसर के कारण होने वाली भयंकर पीड़ा में भी अविचल भाव से अध्यात्म-लीन रहे थे। उनके चरणों में रहने का मुझे भी सौभाग्य मिला था।

उनकी जीवनदृष्टि को जितना समझ सका, उतना अपने अंदर उतारने का प्रयास करता रहा हूँ। आज जो कुछ भी हूँ, उन्हीं की कृपा का फल है।

उनके जीवन चरित्र के पठन से मुनियों में संयम भाव बढ़े, तथा श्रावकों में प्रेमभाव बढ़े ऐसी मेरी भावना है।

लेखक मुनि को इस शुभ कार्य के लिए मेरे शत सहस्र आशीर्वाद हैं। वह अपने ज्ञान दर्शन चारित्र में प्रगति करें।

इन्हीं शुभकामनाओं के साथ –

प्रकाश मुनि

दो शब्द

(पूज्य प्रवर, मनोहर व्याख्यानी, संघ संचालक श्री नरेश मुनि जी म. की ओर से)

वाचस्पति गुरुदेव का प्रस्तुत जीवन वृत्त बहुश्रुत पूज्य पं. रत्न श्री जय मुनि जी म. द्वारा लिखा गया है। वाचस्पति गुरुदेव के यद्यपि इन्होंने साक्षात् दर्शन लगभग नहीं किए पर उनके सुशिष्य संघशास्ता गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. के चरणों में दीक्षा धारण की। इन्होंने गुरुदेव के चरणों में अगाध ज्ञान अर्जित किया। शायद आज उत्तर भारत में कोई-कोई मुनि ही इतनी विद्वत्ता हासिल कर पाया है। आगम ज्ञान के अलावा व्यवहारिक ज्ञान, इतिहास की छानबीन इनका स्वभाव है। और जब लेखन के लिये कलम चलाई तो सब चमत्कृत रह गए। इन्हीं के द्वारा गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. का जीवन परिचय आज घर-2 में गीता, रामायण और आगमों की तरह पारायण किया जाता है। और जो भी अन्य लेख आदि लिखे हैं उन से ज्ञान वर्धन, शंका निवारण तो होता ही है तथा वे लेख आज के संदर्भ में कितने सटीक हैं ये पढ़ने वाले ही जानते हैं। पूज्य श्री मयाराम जी म. के गण के मुनियों की जीवनचर्या में निर्लेपता निःसंगता इतनी रही है कि पुस्तक, सामग्री, लेख, इतिहास आदि को भारभूत परिग्रह मानकर उसका संरक्षण ही नहीं किया गया तथा लेखन की तरफ रुचि भी नहीं बनाई। नहीं तो पूज्य आचार्य श्री आत्माराम जी म. के समान पूज्य भगवन् श्री जी द्वारा लिखित आगमों के रहस्य हमारे सामने होते। अब हमारी आशा बहुश्रुत श्री जय मुनि जी म. में है। जिन्हें गुरुदेव– “मेरा गौतम है” और श्री तपोधनी जी म.– “मेरा छोटा राम प्रसाद है” कहकर संबोधित करते थे। मुनिराजों के आग्रह पर इन्होंने कलम चलाई तो अमृत रसास्वादन होने लगा। भजनों की रस धारा बहने लगी। सब

तरफ से मांग बढ़ी तो इन्होंने संघ के आग्रह पर ही वाचस्पति गुरुदेव का जीवन वृत्त लिखा। इनकी एक विशेषता ये है कि जो लिखते हैं स्पष्ट लिखते हैं। भाव प्रवण होकर लिखते हैं। निष्पक्षता से लिखते हैं। बीते हुए महापुरुषों को सम्मान से लिखते हैं। जहां आज केवल अपनी एवं अपने से संबद्ध गुरु या व्यक्तियों की प्रशंसा से लेख भरे रहते हैं, वहां ये किसी अन्य की प्रशंसा में भी कंजूसी नहीं करते।

वरिष्ठ एवं कनिष्ठ गुरु भाइयों की प्रशंसा, उनकी विशेषता उद्घाटित करते हुए कई लेख पत्रिकाओं की शोभा बढ़ा रहे हैं। गत वर्ष पूज्य श्री संघनायक शास्त्री श्री पद्म चन्द जी म. की स्मृति में 'एक सूरज मुखी फूल' विशेषांक इनकी कालजयी कृति है। आगमों के रहस्यों को खोलते हुए प्राचीन परम्पराओं व धारणाओं को सोचने के लिए मजबूर कर दिया है। जो वर्षों से परम्पराओं को आगम का नाम देकर सम्प्रदाय का पोषण कर रहे थे। कट्टरवाद व सम्प्रदायवाद को फैला रहे थे।

और कहीं कटु प्रसंग हो तो उसे भी निसंकोच प्रस्तुत कर देते हैं। बातें इनकी तर्क संगत होती हैं। स्वयं की प्रशंसा की इन्होंने कभी अपेक्षा नहीं की, न ही कोई अधिकार की इच्छा रखते हैं। विनय इतनी कि बड़ों के चरणों में ही रहना है। और इसी भावना को साकार करने के लिए गुरुदेव के बाद पूज्य गणाधीश श्री प्रकाश चन्द्र जी म., पूज्य संघनायक 'शास्त्री' श्री पद्म चन्द्र जी म., कृपानाथ पूज्य श्री शान्ति चन्द्र जी म. तथा संघाधार पूज्य श्री विनय चन्द्र जी म. के चरणों में रहे और शिष्यों की तरह आराधना करी। त्यागी इतने की शिष्य बनाने का इन्हें त्याग है। योग्यता इतनी कि गुरुदेव इन्हें जो पद या जिम्मेदारी देना चाहते थे वो भी नहीं ली। सभी संत चाहते थे कि आप हमारे नियंता बनो। उसे मना कर दिया। कोई भार नहीं, कोई परिग्रह नहीं, किसी से कोई सेवा लेने की इच्छा नहीं। दिन भर पढ़ते रहना, पढ़ाते रहना, ये ही इनका शौक रहा है। इनके बाद दीक्षा में मेरा ही नम्बर आता है और मुझ से लेकर आगे जितने भी लघु मुनि हैं सभी को इन्होंने कुछ न कुछ

पढ़ाया है। और कमाल ये, कि कहते हैं कि मैं किसी को नहीं पढ़ाता बल्कि पढ़ने वालों के बहाने मेरी स्वाध्याय या पुनरावृत्ति हो जाती है। भगवन् श्री जी ने एक बार जींद में फरमाया था कि जय मुनि जी ने ऐसी पुस्तकें भी पढ़ ली हैं जिनके मैंने नाम भी नहीं सुने। खैर... प्रशंसा करते रहो तो आनन्द ही आता है। ये आनन्द प्रदाता हैं। लघुभूत विहारी हैं। जब इन्होंने गुरुदेव वाचस्पति जी म. के बारे में लिखा तो आश्चर्य हुआ कि शायद साथ रहने वाला भी इतनी जानकारी, घटनाएं इकट्ठी ना कर सके। फिर ये ही भाव बना– ये अपने गुरुओं के प्रति सच्ची श्रद्धा अभिव्यक्ति होगी। गुरुदेव का मुनि संघ उनके नाम से उनके काम से ही आगे बढ़ रहा है तो नए मुनियों में भी वही तरोताज़गी संयम प्रियता बनी रहे। साध्वी वर्ग भी वाचस्पति गुरुदेव की ही देन है, संयम जागरुकता बढ़ती रहे और श्रावक वर्ग जो उन्हें गुरु भगवान् मानता रहा है तो उनको जानता भी रहे। गुरुदेव के मुनि संघ पर आपका परिश्रम कृपा का ही वर्षण है। सुज्ञ पाठक पढेंगे, लाभ लेते रहेंगे।

इन्हीं विनम्र शुभ कामनाओं के साथ–

मुनि नरेश

पृष्ठभूमि

लेखन की दुनिया से सर्वथा अनभिज्ञ मुझे पूज्य गुरुदेव संघशास्ता श्री सुदर्शन लाल जी म. की स्मृति में उनका जीवन चरित्र 'सूर्योदय से सूर्यास्त' लिखने का सौभाग्य संघ पुरुषों ने दिया। उसकी जन स्वीकृति ने मन में आशा का संचार किया। सन् 2005 में मुझे संघनायक शास्त्री श्री पद्म चन्द जी म. के चरणों में वर्ष भर तक रहने का मौका मिला। उस समय मैंने निवेदन किया कि व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव श्री मदन लाल जी म. के जीवन से सम्बन्धित जो जानकारियां आपके पास हैं, वे प्रदान करने की कृपा करें। उन्होंने, अपनी निश्राय में रखे अनेकानेक पत्र, पुराने दस्तावेज, तथा वाचस्पति गुरुदेव द्वारा लिखित अपूर्ण आत्मकथा देकर बहुत बड़ा अनुग्रह किया। इसके अलावा उनके स्मृति प्रकोष्ठ में और भी असंख्य जानकारियां सुरक्षित थी, उन्हें वे सुनाते रहे– मैं उन्हें नोट करता रहा। बहुत सी बातें उन्होंने रात के समय बताई। मैं कच्ची पैंसिल से लिखता। अंधेरे में कुछ अस्पष्ट लिखा जाता तो अगले रोज उनसे पूछकर थ्पंत कर लेता। 2005 का चातुर्मास पूरा होते होते काफी सामग्री संगृहीत हो गई। इसके अलावा उस युग के अनेक महापुरुषों के प्रकाशित जीवन चरित– आ. श्री अमर सिंह जी म., आ. श्री सोहन लाल जी म., आ. श्री कांशीराम जी म., आ. श्री जवाहर लाल जी म., आ. श्री गणेशी लाल जी म. आदि– पढ़ने से सामग्री में वृद्धि होती गई। सम्मेलनों की कारवाइयां पढ़ी। वाचस्पति गुरुदेव को केन्द्र बनाकर पत्रिकाओं के पुराने नए विशेषांक देखे। एक बृहत्काय पाण्डुलिपि के रूप में काफी सामग्री का संयोजन करके श्री संघनायक जी म. को सुनाया। आवश्यक संशोधन भी मिले। सन् 2008-2009 में पूज्यपाद गणाधीश तपस्वीराज

श्री प्रकाश चन्द जी म. की निश्राय में राजस्थान भ्रमण हुआ। वहां भी इतिहास के कुछ नए अध्याय ज्ञात हुए। अजमेर, सादड़ी, सोजत आदि सम्मेलन स्थल देखे। सिंहपोल, जोधपुर की स्थानक में केवल इतिहास के सम्मानार्थ गए। दृढ़ अनुशास्ता गणावच्छेदक श्री छोटे लाल जी म. की जन्मभूमि सांगानेर तथा बहुसूत्री श्री नाथू लाल जी म. की घासा पलाना में इसी उद्देश्य से जाना हुआ। बहुत कुछ नया भी मिला। बहुत कुछ छूट भी गया। सैंकडों प्रयत्नों के वाबजूद कुछ पहलू खुल ही नहीं पाए। पुराने लिखे विषय को फिर से पढ़ा। काफी कुछ इसलिए छोड़ दिया कि कहीं किसी भी संत या श्रावक को अप्रिय न लगे। कुछ उपयोगी जोड़ दिया। यों समझे कि उस पाण्डुलिपि का ही दूसरा संस्करण लिखा गया।

फिर सन् 2013 में वाचस्पति गुरुदेव के स्वर्गवास की अर्धशताब्दी आ गई। मन ही मन ये निर्णय हुआ कि जीवन चरित को सर्वजनोपयोगी रूप से ढालकर पेश किया जाए। कोशिश कामयाब हुई और तीसरा संस्करण भी तैयार हो गया। प्रायः सभी मुनिराजों की इच्छा थी कि ये जीवनी सार्वजनिक हो। पर श्री संघनायक जी म. का मन नहीं बना। 2014 में उनका दीक्षा शताब्दी वर्ष आया और चला गया। हाँ– उस जीवनी का हस्तलिखित रूप कुछ पाठकों के हाथ अवश्य आया। श्री संघनायक जी म. की सहमति से "अहिंसाञ्जलि" पत्रिका में उसका धारावाहिक प्रकाशन भी प्रारम्भ हो गया। अब पूज्य गणाधीश श्री प्रकाश चंद जी म., संघ संचालक श्री नरेश मुनि जी म. का भाव बना कि उसको व्यवस्थित रूप में ही जनभोग्य बना दिया जाए। इस विचार के फलस्वरूप महान् जीवन के संक्षिप्त चरित को आप देख पा रहे हैं।

इस पुस्तक की मुख्य सामग्री का मुख्य स्रोत पूज्य संघनायक शास्त्री श्री पद्म चंद जी म. हैं। मैंने तो उस महापुरुष के दर्शन भी अबोध आयु में किए थे। अतः तथ्यगत घटनाओं की प्रामाणिकता के लिए मैं अपने 'आप्त पुरुष' श्री संघनायक जी म. पर निर्भर रहा हूँ। किसी भी पूज्य पुरुष के प्रति कोई आपत्ति जनक शब्द लिखा हो

तो पहले से ही क्षमायाचक हूँ। किसी ने सूचित किया तो संशोधन के लिए तत्पर हूँ।

पूज्य गुरुदेवों की महानता तथा अपनी अक्षमता का अहसास मुझे पल-2 रहा है। अब भी है। इसीलिए इस पुस्तक का टाइटल दिया है— "झांकना संभव, आंकना असंभव"।

आओ, अपनी संभवता को अधिकाधिक विकसित करें।

गुरु सुदर्शन शिष्य – जय मुनि

अथातो जन्म जिज्ञासा

युग निर्माता, युगद्रष्टा, युगपुरुष, व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव श्री मदनलाल जी म.सा. का जन्म सोनीपत (हरियाणा) के निकटवर्ती गांव 'राजपुर' में फाल्गुन माह की सुदी नवमी, संवत् 1952 (23 फरवरी 1896) को हुआ। पिता थे श्री मुरारीलाल जी तथा माता थी श्रीमती गेंदोबाई। अग्रवाल जैन परिवार स्थानक वासी परम्परा में गर्ग गोत्र था। राजपुर गांव में स्थानक वासी साधु-साध्वियों के प्रति जैनों के अलावा जाट परिवारों में भी आस्था थी। श्री मयाराम जी म., उनके गुरुभ्राता श्री जवाहरलाल जी म. तथा बत्तीस आगमज्ञ श्री शिवदयाल जी स. ने वहाँ की सरल भद्र जनता में धर्म ध्यान के प्रति रुचि जागृत की थी। प्रवचन श्रवण, सामायिक-आराधना, पौषध-पालन, रात्रिभोजन-त्याग आदि विशुद्ध धर्म क्रियाओं के प्रति वहाँ अनुकूल वातावरण था।

श्री मुरारीलाल जी की प्रकृति शान्त एवं मधुर थी। गेंदोबाई के लिए पूरा गांव व सब रिश्तेदारियाँ साक्ष्य देकर प्रमाणित करती थी कि इस देवी को हमने कभी लड़ते नहीं देखा। गेंदोबाई का भाई घमंडी लाल रिंढाणा गांव में पटवारी था तथा इनकी बहन मोरनी देवी दिल्ली सदर बाजार के विख्यात कपड़ा व्यवसायी दिगम्बर जैन परिवार में विवाहित थी।

मुरारी-गेंदो दम्पति ने जितना सुख पाया था उसकी तुलना में दुःख भी कम नहीं झेला था। उनकी कई प्रारंभिक संतानें या तो जन्मते ही कालकवलित हो गई थी या स्वल्प आयु में। संतान व जननी का संबंध तादात्म्यरूप माना गया है। संतान सुखी है तो माता-पिता सुखी हैं। संतान दुःखी है तो माता-पिता दुःखी होते ही होते हैं। जिस दिन संतान मरती है उस दिन भावनात्मक स्तर पर माता-पिता भी मर

जाते हैं। 'पुत्रे मृते अहं मृतः' जैसी उक्तियों को मुरारी लाल व गेंदों ने जीवन में बहुत बार भोगा व भुगता था। संतान मिलती, आशा बंधती, जीवन मुस्कुराता। संतान छिनती आशा टूटती और जीवन कुसुम मुरझा जाता। धूप छाया की आंख मिचौनी के बीच ही उस घर में एक-एक करके ऐसे पुत्र व पुत्री युगल की प्राप्ति हुई जिसे कुदरत ने कुछ उम्र के लम्बे लमहे बक्शे। पुत्र का नाम रखा गया मौजीराम जिसे आगामी युग ने श्री मदनलाल जी म. कहकर पुकारा। पुत्र योग्य व आज्ञाकारी बनने लगा। माता-पिता के अरमान पूरे होने लगे थे। बालक मौजीराम गांव के पाधे से (अध्यापक शब्द का ग्राम्य संस्करण) पढ़ाई करने लगा। माता-पिता के अनुकरण में धर्मानुष्ठान में भी रुचि रखने लगा। चार-पांच वर्ष की उम्र में सवंत्सरी का उपवास करने का साहस भी किया।

कस्यैकान्ततो दुखमुपनतं सुखमेकान्ततो वा

सुख अथवा दुःख समग्र रूप से,
स्थायी रूप से किसे प्राप्त हुआ है?

किसी छोटी सी बीमारी का बहाना बना और गेंदो बाई मौत के मुंह में समा गईं। रोते रह गए निढाल मुरारीलाल, सात साल का मौजीराम तथा लगभग उतनी ही उनकी बहन। दोनों भाई-बहन गले लगकर रोए। वक्त गुजरा, दुःख हल्का होने लगा। मां के वियोग की अग्नि कुछ ठण्डी हुई थी कि बहन भी ठण्डी हो गई। बिलखता रह गया भाई का मासूम दिल और ढलान की ओर लुढ़कता मुरारीलाल का कलेजा।

घर के चिराग को बचाने में मुरारीलाल ने अपना सर्वस्व दाव पर लगा दिया। कहीं पूर्वजों की यह निशानी किसी क्रूर निगाह का शिकार ना बन जाय। पिता, मां, बहन यों तीन रोल अदा करने पड़े मुरारीलाल को लेकिन ये सब भी कुछ अर्से के ही अभिनय रहे। एक झौंका आया और मुरारीलाल जी भी रंगमंच से विदा हो गए। बालक मौजीराम की मौज खत्म हो गई, शायद रोना भी भूल गया हो। परिवार जनों,

कुटुम्बियों ने आठ वर्ष के मौजीराम से पिता को मुखाग्नि दिलवा दी और सिर मुंडवा कर पगड़ी बांध दी।

परिवार की विरासत को सुरक्षित रखने के लिए जन्मे, बढ़े उस बालक को क्या पता था कि कच्ची उम्र में खुद लावारिस हो जाएगा। उस उभरते बालक का भविष्य किसके हाथों में सुरक्षित रह सकता है, यह चिन्तन चिंता का रूप धारण करने लगा था। परिवार बहुत बड़ा था। श्री मुरारीलाल जी के पांच भाई थे। पर 8-9 साल के इस बालक का समग्र दायित्व निभाने के लिए कोई भी आगे नहीं आया। उस समय उनकी मौसी मोरनी बाई ने बालक के भरण-पोषण, पढ़ाई-लिखाई, काम-धन्धे और समग्र भविष्य-निर्माण का भार अपने कंधे पर ले लिया। उनके पतिदेव ला. भौंदूमल जी थे। 'रामगोपाल सन्तलाल' तथा 'घमण्डीलाल लालचन्द' इन दो फर्मों वाले परिवार का दिल्ली सदर बाजार के दिगम्बर समाज में ऊँचा रुतबा था। सन् 1900 के आसपास उस परिवार का कारोबार 20-25 लाख रुपये का था जो उस युग में उच्च प्रतिष्ठा का प्रतीक था। सारा परिवार जैनत्व विशेषतः दिगम्बर जैनत्व के संस्कारों से ओत-प्रोत था। सबसे बड़ी बात यह थी कि मानवीयता का जज्बा कूट-कूट कर भरा हुआ था। इसी कारण दूर की रिश्तेदारी के बालक को अपने घर ले आए। मोरनी बाई बालक के लिए दूसरी मां बनकर आई। मौसी मां जैसी हो सकती है यह यथार्थ उस देवी के जीवन से मालूम हुआ। बालक मौजीराम राजपुर से दिल्ली सदर बाजार में आ गया। परिवार, परिवेश, परिस्थिति काफी बदल गई। ग्रामीण वातावरण से शहरी वातावरण मिल गया। आर्थिक सम्पन्नता ने रहन-सहन, खान-पान को बदल दिया। गांव में स्थानकवासी मान्यताएं थी, मुखपत्ती लगाकर सामायिक करना, पर्वों पर पौषध करना, गुरुओं के दर्शन करना, प्रवचन सुनना मुख्य अनुष्ठान होते थे। यहाँ मंदिर में जाकर भगवान् जी के (मूर्ति के) दर्शन करने, पूजा प्रक्षाल करना, स्नान-हवन शुद्धि आदि में व्यस्त रहना आदि धर्म-संस्कारों के अंग बन गए।

श्री मौजीराम जी के साथियों में श्री छज्जूराम जैन का नाम उल्लेखनीय है, जो श्रीमती मोरनी बाई के पड़ोसी बालक थे तथा जिनके सुपुत्र श्री हेमचन्द्र जी बाद में वाचस्पति गुरुदेव के परम भक्तों में परिगणित हुए।

उस बालक की पढ़ाई दिगम्बर जैन पाठशाला में नियमित रूप से होने लगी। लौकिक व धार्मिक दोनों प्रकार की शिक्षा का वहाँ सुन्दर प्रबंध था। संस्कृत भाषा के अध्ययन के लिए कातंत्र व्याकरण का अध्ययन उसी अवस्था में हुआ। जीवनचर्या में दो मौलिक परिवर्तन हुए। प्रथम, रात्रि भोजन त्याग तथा द्वितीय, कन्दमूल और मधु का सर्वथा विवर्जन। दिगम्बर परम्परा में ये सावधानियां विशेष रूप से निभाई जाती थी और मोरनी मौसी का घर तो हर भांति चुस्त दिगम्बर संस्कारों वाला था। एक प्रसंग इस विषय में पर्याप्त रहेगा। बालक मौजीराम अपने दोस्तों के साथ खेलने में व्यस्त हो गया और सांझ ढलते घर पहुँचा तथा खाना मांग लिया। उसे इतना अहसास नहीं रहा कि यहाँ रात्रिभोजन पर पूर्ण प्रतिबंध है। मौसी वैसे तो बहुत दयालु ममतामयी थी पर उस समय कठोर होकर बोली– "क्या तू किसी मुसलमान या ईसाई के घर पैदा हुआ है जो रात को खाना मांग रहा है। ये जैनों का घर है यहाँ तो दिन रहते ही भोजन मिलेगा, बाद में नहीं।" बालक मौजीराम ने ये संस्कार 9-10 साल की उम्र में ग्रहण कर लिए जो कि उनके आजीवन अंग बन गए।

परिवार ने यह निर्णय लिया कि बालक मौजीराम पढ़ाई के साथ व्यवसाय में भी ध्यान दे। बुद्धि की कुशाग्रता है अतः आराम से दोनों दिशाओं में प्रवीण हो जाएगा तथा उचित समय पर अपने पैरों पर खड़ा हो जाएगा। साथ ही उठती हुई युवावस्था के दोष-दुर्गुणों से भी बचाव रहेगा। 'संसर्गजा दोष गुणा भवन्ति।' दोष और गुणों का उभार संसर्ग पर निर्भर करता है। दुकान पर बैठने से बड़ों की निगरानी बनी रहेगी अन्यथा दोस्तों की महफिलें ही बुलाएंगी और जीवन के दूषित होने की संभावनाएं बढ़ सकती हैं। मौजीराम जी दुकान पर भी बैठने लगे

पढ़ाई भी चालू रखी। मंदिर में पूजा प्रक्षालन के साथ-साथ स्वाध्याय में भी प्रगति की लेकिन एक बात जिससे पारिवारिक अभिभावक जान बचाना चाहते थे वह थी मित्रों की संगति, उससे नहीं बचा सके। क्षमता इतनी थी कि हर मोर्चे को कुशलता से संभाल लेते थे। स्कूली पढ़ाई में अव्वल, दुकान के काम में दक्ष, मंदिर में अग्रणी स्वाध्यायी, घर में सर्वप्रिय तथा दोस्तों के हमजोली, हमदम। इस अंतिम योग्यता ने जीवन में कुछ ऐसी विसंगतियां प्रविष्ट कर दी जो किसी भावी महापुरुष के जीवन से मेल नहीं खाती मगर यथार्थ से इंकार भी नहीं किया जा सकता। श्री मौजीराम जी जिन विसंगतियों के शिकार हुए उनकी स्वीकृति स्वयं उन्होंने की है। विकृति के चन्द मोड़ यों रहे– थियेटर देखने का शौक लगा, पैसे की प्रचुरता से खान-पान भी बिगड़ा। सिगरेट पी, पान में तम्बाकू डलवाकर खाया। सब कार्य परिवारजनों के परोक्ष में किए लेकिन धीरे-धीरे मन से संकोच कम होता जा रहा था। एक मित्र ने कोकीन का शौक भी लगवा दिया। सरकार की ओर से प्रतिबंधित होने के कारण कोकीन सुलभ नहीं थी पर पैसा पास हो तो दुर्लभ भी नहीं थी। पैसे का प्रबंध अपनी व्यक्तिगत चीजें बेचकर कर लिया। सोने के बटन कोकीन के शौक में गए। अंगूठी भी बिकी। और तो और, दुकान व घर की कुछ चीजें भी छिपकर उठाई और बेची। चोरी का इल्जाम भी नौकरानी पर लगा। परिवार में किसी को भनक भी नहीं लगी कि इस युवक की दिशा भटक गई है। घर और दुकान का विश्वास बराबर बना रहा। हाँ, अपनी अन्तरात्मा जरूर कचोटती थी। मंदिर में जाकर स्वाध्याय करते समय मानसिक ग्लानि और गहन हो जाती पर धर्म की आस्था कम नहीं हुई। सदाचार और सद्‌गुणों को अच्छा माना पर मन पर मित्रों का प्रभाव बरकरार रहा।

16-17 साल की उम्र में अच्छाई व बुराई का खासा अनुभव बटोर लिया। मौज-मस्ती, अल्हड़पन, पारिवारिक मर्यादा, प्रभु-भक्ति, शास्त्र-स्वाध्याय शिक्षा की निपुणता, व्यवसाय की दक्षता आदि विषयों में पारंगत श्री मौजीराम के अभिभावक उसके भावी जीवन की, विशेषतः

वैवाहिक जीवन की, योजना बना रहे थे ताकि सुव्यवस्थित गृहस्थी बसा सके किन्तु प्रकृति उसके लिए कुछ और ही योजना बना रही थी जिसका अहसास उस समय तक न परिवार को था न इन्हें स्वयं को।

दीक्षया व्रतमादत्ते

उन्नीसवीं सदी का प्रथम दशक पूर्ण हुआ था, देश के राजनैतिक फलक पर परिवर्तनों की शुरुआत हो रही थी। अंग्रेजी शासन का केन्द्र कलकत्ता से उठकर दिल्ली आ रहा था। इंग्लैंड में जार्ज पंचम की ताजपोशी हो चुकी थी। सम्राट के प्रतिनिधि के रूप में लार्ड हार्डिंग भारत के वाइसराय बनकर शासन तंत्र संभालने दिल्ली आ रहे थे। उनके स्वागत समारोह को भव्यता प्रदान करने के लिए देश की सभी रियासतों के राजा अपनी ताकत झोंकने में लगे हुए थे। किन्तु देश का एक क्रांतिकारी तबका विदेशी ताकतों को सबक सिखाने के लिए योजना भी बना रहा था। वह बताना चाहता था कि ब्रिटिश साम्राज्य के सरगना कलकत्ता में अपने को असुरक्षित समझते हैं तो दिल्ली में भी चैन से नहीं बैठने दिए जाएंगे। 23 दिसम्बर 1912 का दिन था लार्ड हार्डिंग अपनी पत्नी सहित बलरामपुर रियासत के हाथी पर (कहीं-कहीं फरीदकोट के मोती हाथी की धारणा भी है।) सवार होकर दिल्ली के चांदनी चौंक से निकल रहा था। लाखों की जनमेदिनी जिसमें मौजीराम जी भी दर्शक के रूप में मौजूद थे, नए शासक का वैभव देखने उपस्थित थी। फतेहपुरी से लालकिले तक भीड़ खचाखच भरी थी। जैसे ही लार्ड की सवारी धुलिया कटरा के पास पहुँची पंजाब नैशनल बैंक की छत पर से मास्टर अमीरचन्द, अवध बिहारी बोस, बोस का व्यक्तिगत सेवक वसन्त कुमार विश्वास तथा बाल मुकुन्द को हमला करने का मौका मिल गया। औरत के वेष में वसन्त ने फूलों की थाली में बम छिपाया और 11.45 पर लार्ड पर बम फैंक दिया। निशाना हल्का सा चूक गया। पति-पत्नी दोनों बच गए। महावत व पहाड़ी धीरज का एक युवक विस्फोट में मारे गए। इस आकस्मिक हमले से वायसराय एकदम सकते में आ गया। तैश

खाते हुए आदेश दिया– 'सारी भीड़ को पुलिस और मिलिट्री अपने घेरे में लेकर मशीनगनों से भून दे ताकि आगे से कोई हिन्दुस्तानी ऐसी गुस्ताखी ना करे।' देश के सर्वोच्च शासक के आदेश मात्र से जनता सन्न रह गई। कौन मरेगा, कौन बचेगा किसको ज्ञात है। श्री मौजीराम के सामने भी मृत्यु का दृश्य उपस्थित हो गया। इसी दृश्य के साथ एक विचार और कौंधा– अरे मौजी! दुनिया में आया भी और खाली हाथ चला जाएगा। न कोई त्याग, न कोई साधना, न लक्ष्य प्राप्ति, न आत्मशांति, इस जीवन का क्या लाभ लिया। शास्त्रों के विविध वाक्य स्मृतियों में उतर आए। निर्णय लिया– यदि इस मृत्यु की विभीषिका से बच गया तो मुनि दीक्षा अंगीकार कर लूंगा। जिजीविषा सब मानवों के मनों पर छायी हुई थी पर श्री मौजीराम जी की जिजीविषा के साथ मुमुक्षा भी जुड़ गई। अनाथी मुनि ने नेत्र वेदना की तीव्रता से निर्विण्ण होकर कहा था

"सयं च जइ मुच्चेज्जा वेयणा विउला इओ,
खंतो दंतो निरारंभो पव्वइए अणगारियं।"

'यदि मेरी विपुल वेदना आज के बाद स्वयं ही दूर हो जाएगी तो मैं
क्षमावान्, दमनशील अणगार के रूप में प्रव्रजित हो जाऊँगा।'

यही भावना श्री मौजीराम के मन में उभरी। तभी लार्ड हार्डिंग की मेम साहिबा ने अपने पतिदेव को शान्त किया। कहने लगी– ***"आप बच गए, मैं बच गई, विशेष जन-हानि भी नहीं हुई, ऐसे में बेगुनाह जनता पर गोलियां बरसाने का क्या फायदा है। अपराधी तत्वों को पकड़ा जाय, दण्डित किया जाय। उत्तेजना में लिए गए इस निर्णय का दूरगामी दुष्परिणाम हो सकता है।"*** वाइसराय को बात जंच गई। गोली चलाने का आदेश तो वापस ले लिया पर भीड़ को मिलिट्री के घेरे में 18 घंटे तक रखा गया ताकि संदिग्ध व्यक्तियों की शिनाख्त करके अपराधियों को पकड़ा जा सके। दहशत व कोफ्त के 18 घंटे व्यतीत करके मौजीराम जी घर पहुँचे तो सबने राहत की सांस ली। घर वालों को कुछ पता नहीं था

कि इसका मन किस ओर मुड़ चुका है, पर उसे तो संसार से, सांसारिक संबंधों से विरक्ति हो चली। मंदिर में जाकर स्वाध्याय करते समय अपनी भूलों का पश्चात्ताप भी गहन होने लगा। उन्हीं दिनों उनका परिचय श्रावक श्री बनवारी लाल जी से हुआ, जो विशुद्ध स्थानकवासी परम्परा के अनुसार अपना जीवन निवृत्ति में बिता रहे थे। साधुओं जैसी चर्या थी, स्थानक में संवर पौषधादि करते थे तथा घरों से भिक्षा लाकर जीवनयापन किया करते थे। श्री मौजीराम जी के घर पर भी भिक्षा लेने चले जाते थे। उनकी जीवन शैली से मौजीराम जी प्रभावित हुए तथा अपने भावी लक्ष्य की चर्चा करने लगे। श्रावक बनवारी लाल जी ने स्थानकवासी मुनियों की संयम साधना का स्पष्ट चित्रण किया तो वह सुनकर दंग रह गए। इनका तो यही विश्वास था कि मुनि तो दिगम्बर संप्रदाय में ही हो सकते हैं। वस्त्र धारण करने वाले तो मुनि हो ही नहीं सकते। पहली बार प्रतीत हुआ कि वस्त्र-पात्र आदि का धारण करना मुनित्व में बाधक नहीं है। राजपुर गांव में बचपन में जो स्थानकवासी संस्कार पाए थे वे पुनर्जागृत हो गए।

श्रावक जी ने बात को सिरे लगाने वास्ते बताया कि सदर बाजार की स्थानक में राजस्थानी संत श्री माधव मुनि जी म. ठहरे हैं तथा चांदनी चौंक में श्री छोटेलाल जी म. हैं जो कि पंजाब सम्प्रदाय के है। श्री मौजीराम जी को चांदनी चौंक जाना उचित लगा क्योंकि सदर में घर वालों का दखल रहेगा, वहाँ बचाव रहेगा। दो-चार बार आने-जाने से परिचय हो गया तो गुरु चरणों में निवेदन किया कि मैं आपके चरणों में दीक्षा लेना चाहता हूँ।

श्री छोटेलाल जी म. ने परिवार का पूरा परिचय लिया, विश्वस्त हुए क्योंकि वे राजपुर परिवार को तो भली-भांति जानते थे, दिल्ली वालों को भी सामाजिक प्रतिष्ठा के आधार पर पहचानते थे। गुरुदेवों की अनुमति पाकर श्री मौजीराम जी वैरागी के रूप में विद्याध्ययन करने लगे। श्री छोटेलाल जी म. के परम शिष्य बहुसूत्री श्री नाथूलाल जी म. उन्हें ज्ञान-ध्यान सिखाने लगे। स्थानकवासी परम्परा के अनुसार सामायिक के

पाठ, प्रतिक्रमण याद करने लगे। घर जाना बंद। बारादरी के एक कमरे में बन्द होकर स्वाध्यायलीन हो गए। स्वाध्याय का शौक पुराना था। पहले दिगम्बर सम्प्रदाय के ग्रंथ पढ़े, याद किए थे अब श्वेताम्बर परंपरा के प्रारम्भ हो गए। बौद्धिक विलक्षणता के कारण हर विषय कण्ठस्थ कर लिया। एक विशेष बात यह हुई कि सूर्योदय से पूर्व बाहर घूम आते, रात को कमरे से बाहर निकलते। दिन में अन्दर ही रहते मानों कैद हो गए हों। इस कायगुप्ति से कुछ गोपनीयता सी झलकने लगी तो श्री छोटेलाल जी म. ने पूछ लिया– "बच्चा, तुम लोगों से मिलने में कतराते हो, एकान्त में रहते हो, क्या चोरी या कोई गलत काम करके घर से भागकर तो नहीं आए।"

मौजीराम जी ने कहा– "गुरुदेव मैंने कोई अपराध नहीं किया है पर घरवालों को पता ना लगे इसलिए अकेला रहना पसन्द करता हूँ। वे मुझे यहाँ रहने नहीं देंगे और मैं वहाँ जाना नहीं चाहता।" गुरुदेव सन्तुष्ट हुए। एक दिन सदर बाजार की स्थानक के निर्माता श्रावक श्री जौहरीमल जी पूज्य श्री छोटेलाल जी म. के दर्शनार्थ आए। श्री छोटेलाल जी म. ने वैरागी जी को बुलाकर उनके सामने प्रस्तुत किया और बताया कि ये बच्चा रामगोपाल संतलाल परिवार का है, हमारे पास रहता है। आपकी क्या राय है। श्री जौहरीमल जी बालक को जानते थे और परिवार को तो अच्छी तरह। बातचीत की। मौजीराम जी ने कहा– "मैं घर नहीं जाना चाहता, आप मेरी मदद करें ताकि गुरुदेव मुझे निःसंकोच रख लें।" श्री जौहरीमल जी उसकी भावना से प्रभावित हुए तथा गुरुदेवों से विनती की– 'आप इस बालक को सहर्ष रख लें। मैं इसके परिवार की गारंटी लेता हूँ।' साथ ही साथ मौजीराम जी को भी संयम दृढ़ता एवं गुरुभक्ति की शिक्षा दी। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. संतुष्ट हुए तथा श्री मौजीराम जी निश्चिन्त।

सन् 1914 विक्रमी 1971 आषाढ़ माह के प्रारम्भ में श्री मौजीराम जी गुरु-चरणों में अर्पित हो गए। प्रतिभा कुशाग्र थी। इसी कारण 15 दिन में सामायिक प्रतिक्रमण, 25 बोल याद कर लिए। उस वर्ष महाराज

श्री का चातुर्मास मेरठ जिले के बामनौली कस्बे में तय हुआ था, तेरह दिन शेष थे। आषाढ़ सुदी तीज को श्री छोटेलाल जी म., श्री नाथूलाल जी म., श्री राधाकृष्ण जी म. ठाणे तीन के साथ वैरागी मौजीराम जी बामनौली के लिए प्रस्थित हुए। शाहदरा की एक धर्मशाला में पड़ाव किया। शाम होते ही मुनि मण्डल प्रतिक्रमण में संलग्न हो गया। तभी कुछ आर्य समाजी उपदेशक आए, जैन मुनियों को देखा तो एकदम आपे से बाहर हो गए। तत्कालीन परिस्थितियां ऐसी थी कि आर्य समाज का प्रत्येक उपदेशक, जैन धर्म, जैन गुरु तथा जैन विधानों का कटु आलोचक होता था। इसी परम्परा का निर्वाह करते हुए आगन्तुक उपदेशकों ने भी जैन धर्म के तथा जैन साधुओं की चर्या के विरूद्ध अनर्गल प्रलाप करना शुरू कर दिया। श्री मौजीराम जी को बुरा लगा। अपने धर्म के विरूद्ध निराधार निन्दा सुनना उन्हें सह्य नहीं था इसलिए उनकी बातों का उत्तर देने लगे। यह चर्चा बाद में विवाद में बदल गई, गरमा-गरमी होने लगी। आवाज दोनों की बुलंद थी। आर्य उपदेशकों को उम्मीद नहीं थी कि एक उभरता हुआ बालक उन्हें निरुत्तर कर देगा। वहाँ से चलने में उन्होंने भलाई समझी। इस प्रक्रिया में ऊँची आवाज के कारण मुनियों के प्रतिक्रमण अनुष्ठान में बाधा पहुँची। अतः विजेता बनकर अन्दर पहुँचे मौजीराम के सामने प्रतिकूल माहौल उभर कर आया। पूज्यपाद श्री छोटेलाल जी म. ने वैरागी को साधुवाद देने की बजाय डांटना शुरू कर दिया। कहने लगे– 'तू अपने घर चला जा, तू बहुत क्रोधी है, उसके साथ क्यों लड़ रहा था, बाद में तू हमसे भी लड़ा करेगा आदि-आदि।' मौजीराम जी स्तब्ध रह गए, दिशाएं कांपने लगी। डरते-डरते अपनी बात रखी कि वह आपके खिलाफ बोल रहा था इसलिए मैं उलझ गया। पर बड़े म.सा. ने एक न सुनी। कहने लगे– 'तू हमारे लिए कहाँ-कहाँ लड़ेगा? लोग तो बोलते ही रहते हैं, साधु का धर्म तो क्षमा है, तू साधु बनना चाहता है, तुझे बर्दाश्त नहीं, इसलिए तू हमारे लायक नहीं है इसलिए अपने घर जा।' गुरुदेवों के इस स्पष्ट जवाब से वैरागी के पैरों तले की जमीन खिसक गई। दिल

भर आया। घर छोड़ दिया सो छोड़ दिया उधर तो जाना ही नहीं है पर यहाँ का ठिकाना छूटता नजर आया तो रुलाई आ गई। उस समय करुणा निधान पूज्यपाद श्री नाथूलाल जी म. ने स्थिति को संभाला। वैरागी को पुचकारा, सहलाया और ढाढ़स दिया तथा बड़ों के चरणों में डालकर क्षमा याचना करवाई। वैरागी जी ने बड़ों के पैर पकड़े, भूल के लिए माफी मांगी तथा आगे से ऐसी भूल न करने की प्रतिज्ञा की। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. मान गए। श्री मौजीराम जी को साधना के प्रवेश द्वार पर अनुशासन का प्रथम पाठ पढ़ने को मिल गया और वे चौकस होकर गुरु आराधना में लीन हो गए।

गुरु भगवन्त आषाढ़ सुदी एकादशी को बामनौली पधारे। क्षेत्र का कण-कण आनन्द से झूम उठा। चारित्र चूड़ामणि श्री मयाराम जी म. द्वारा पालित पोषित बामनौली क्षेत्र पू. श्री छोटेलाल जी म. को पाकर कृतार्थ हो गया। म. श्री के आगमन की खुशी में लड्डू और बताशे बांटे। श्री मौजीराम जी को जनश्रद्धा का विशुद्ध वेग देखकर विशेष प्रसन्नता की अनुभूति हुई। रौनकों में रहना उनको अच्छा लगता था पर ये कला उन्हें सहज उपलब्ध थी कि भीड़ में भी एकान्त बना लेते थे और अपने ज्ञान-ध्यान को निर्बाध चला लेते थे। चातुर्मास के प्रथम माह में ही उन्होंने सम्पूर्ण दशवैकालिक सूत्र, तेंतीस बोल का थोकड़ा, एषणा के 42 दोष, साधु समाचारी, नवतत्व आदि कण्ठस्थ कर लिए। इतनी सामग्री दीक्षार्थी के लिए पर्याप्त मानी जाती है। व्याख्यान सामग्री की दृष्टि से उन्होंने केसराज रचित 'रामायण' का पठन, स्मरण व गायन भी प्रारंभ कर दिया। तात्विक विषय श्री नाथूलाल जी म., प्रावचनिक विषय श्री छोटेलाल जी म. से सीखे। उनकी सर्वविध क्षमता से मुनिवर्ग चकित और हर्षित था।

एक प्रसंग उल्लेखनीय है कि समाज के प्रतिष्ठित श्रावक श्री जौहरीमल जी वैरागी जी को अपने घर भोजन कराने ले गए। साथ ही सोचा कि श्री मयाराम जी म. के धर्मवंश में दीक्षा लेने जा रहे इस वैरागी का अपने मन इन्द्रियों पर कितना निग्रह है यह भी परख लूं। श्रावक जी

ने प्रारंभ में कई दिन भोजन में रूखा फुल्का तथा बिना नमक की दाल परोसी। वैरागी जी ने सहज भाव से खाना खाया, न माथे पर शिकन, न वाणी में शिकायत और न ही शरीर की भाव-भंगिमा में कोई अकुलाहट। कुछ दिन बाद दाल में सामान्य से ज्यादा नमक डाल दिया, वैरागी जी तब भी तटस्थ रहे। गुरुदेवों से कहना तो दूर मन में भी नाराजगी नहीं लाए। श्रावक जी आश्चर्यचकित भी हुए, हर्षित भी। गुरुदेवों के पास आकर स्वयं निवेदन किया कि मैंने वैरागी जी को अच्छी तरह परखा है। यह आत्मजयी, इन्द्रियनिग्रही युवक है। इसे आप कभी भी दीक्षा दे सकते हैं। यह आपके कुल को उन्नत बनाएगा। गुरुवर्ग वैरागी के आध्यात्मिक विकास से पहले ही संतुष्ट था श्रावक की मोहर लगने पर और आश्वस्त हो गया।

श्री मौजीराम जी का चित्त अब बड़ी छलांग के लिए मचलने लगा था। गुरुदेवों से विनती की कि मुझे शीघ्र मुनि-दीक्षा प्रदान करें। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. वैरागी के आन्तरिक विकास का जायजा ले चुके थे अतः दीक्षा-विधि के लिए तैयार हो गए। दीक्षा के लिए दो आवश्यक कार्य सम्पन्न करने शेष थे। राजपुर और दिल्ली सदर बाजार परिवार की सम्पूर्ण आज्ञा प्राप्त करना तथा तत्कालीन आचार्य श्री सोहनलाल जी म. की अनुमति। परिवार को मनाने में लाला न्यामत सिंह जी हकीम तथा सिताबराय जी ने अहम योगदान दिया। (पश्चाद्वर्ती घटनाओं से प्रतीत होता है कि पारिवारिक आज्ञा की प्राप्ति पूर्णतया पारदर्शी नहीं रही होगी केवल साधारण स्तर की सूचना देकर औपचारिकता का निर्वाह कर लिया गया होगा) आचार्य श्री सोहनलाल जी म. ने तो सहर्ष स्वीकृति फरमा ही दी, क्योंकि उन्हें पूरा यकीन था कि श्री छोटेलाल जी म. वैरागी को अच्छी तरह परख कर ही दीक्षा देंगे। श्री मयाराम जी म. का सारा मुनि परिवार आचार्य श्री के प्रति तथा संयम नियमों के प्रति पूर्ण निष्ठावान रहा था। अतः दीक्षा की घोषणा हो गई। भादवा बदी दसमी, संवत् 1971 रविवार तदनुसार 16 अगस्त 1914 का दिन मुकर्रर हुआ।

दीक्षा एक प्रतिज्ञा है महाव्रतों का आजीवन पालन करने की। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, और अपरिग्रह का स्थूल और सूक्ष्म स्तरों पर मानसिक, वाचिक और कायिक धरातलों पर ज्ञान, प्रत्याख्यान और आचरण दीक्षा की अनिवार्य शर्त है। श्री मौजीराम जी उच्च लक्ष्य लेकर साधना के मार्ग पर अधिरुढ़ हो रहे थे। अतः उन्हें ज्ञात था कि कठोर मर्यादाओं के भीतर ही आभ्यन्तर जीवन का आलोक प्रकट हो सकता है। कुछ मर्यादाएं सार्वकालिक, सार्वभौमिक और सार्वजनिक होती हैं, जिन्हें शास्त्रीयता की कोटि में रखा जाता है। और कुछ मर्यादाएं तात्कालिक, स्थानीय और वैयक्तिक होती है जिन्हें गुर्वाधीन माना जाता है। पांच महाव्रत, पच्चीस भावनाएं, पांच समिति तीन गुप्ति आदि को प्रथम श्रेणी में तथा विनय, अनुशासन, आहार-विहार की व्यवस्थाएं द्वितीय श्रेणी में समाविष्ट होती हैं। पर्यूषण पर्व से कुल तीन दिन पूर्व श्री मौजीराम जी की चिरपिपासा पूर्ण हुई। सोत्साह दीक्षा सम्पन्न हुई। गृहस्थ से साधु बने। अव्रती-देशव्रती से सर्वव्रती बने, धोती-कुर्ताधारी की जगह चादर चोलपट्टा, मुखवस्त्रिका, रजोहरणधारी श्वेताम्बर बने। धनार्थी की जगह श्री ज्ञानार्थी बने। राजपुर ग्राम के गर्ग गोत्री की जगह श्री नाथूलाल जी म. के शिष्य श्री मदनलाल जी म. बने। श्री मदनलाल जी म. के नामान्तरण के पीछे उनकी प्रकृति जन्य प्रभावकता कारण थी। उस युग में जैन मुनि 'मदन-श्रेष्ठी' कथानक को शौक से सुनाया करते थे। कथानक का मुख्य पात्र बड़ा रौबीला, गर्वीला होता था। असंभव कार्य भी अपनी प्रतिभा के बल पर संभव कर डालता था। साधु और गृहस्थ दीक्षार्थी को देखकर कहा करते कि यह ही वह मदन श्रेष्ठी है। इस लोक भावना को मूर्तरूप देते हुए पूज्य गुरुदेवों ने दीक्षार्थी का नाम 'मदन मुनि' घोषित कर दिया। श्री मदनमुनि जी म. को दो गुरुओं का साया मिला। शिक्षा-दीक्षा गुरु रहे श्री नाथूलाल जी म. तथा आज्ञादायक रहे पूज्य श्री छोटेलाल जी म.। श्री नाथूलाल जी म. शांति के देवता थे तो श्री छोटेलाल जी म. तेजस्विता पुंज। दोनों ही चारित्र-चूड़ामणि श्री

मयाराम जी म. की छत्रछाया में पले पुसे थे। उनके प्रशिष्य-शिष्य थे। श्री मयाराम जी म. का अभी दो वर्ष पूर्व ही भिवानी में देवलोक गमन हुआ था। एक गहरी रिक्तता बनी हुई थी। जिसको भरने का प्रयत्न उनका शिष्य-प्रशिष्य वर्ग कर रहा था। श्री मदनमुनि जी म. के प्रवेश से जनमानस को ढाढस सा बंधा कि उस महनीय मूर्ति की प्रतिमूर्ति तैयार होने जा रही है। इतिहास आश्वस्त सा हो गया था। श्री मदनमुनि जी म. साहब आश्वस्त थे कि मुझे स्थानकवासी परम्परा पंजाब संप्रदाय, मयाराम कुल मिल गया तथा सूर्य और चन्द्र की भांति ताप और शैत्य की निरन्तर वर्षा करने वाले दो गुरुदेव मिल गए हैं दृढ़ अनुशास्ता श्री छोटेलाल जी म. एवं बहुसूत्री शान्तात्मा श्री नाथूलाल जी म.।

"बहुं सुणेई कण्णेहिं बहुं अच्छिहिं पिच्छई"

श्री मदनमुनि जी म. की पांचों इन्द्रियां तथा मन अत्यंत संवेदनशील तथा दक्षतापूर्ण थे। हर विषय, व्यक्ति और घटना इन्द्रियों के माध्यम से मन पर स्थायी रूप से रजिस्टर्ड हो जाते थे। यही उनका क्षयोपशमातिशय था, यही उनकी मेधाशक्ति थी।

दीक्षा के तुरंत पश्चात् उन्होंने तुरंत उत्तराध्ययन सूत्र स्मरण करना प्रारंभ किया और दो महीने में पूरी तरह याद कर लिया। उनकी फोटोग्राफिक मेमोरी का करिश्मा था कि एक घंटे में साठ गाथाएं याद कर लेते थे। दीक्षा के तुरंत बाद अपने गुरुदेवों के साथ केसराज कृत रामायण प्रवचन में गाने लगे, जिसके लिए बुलंद आवाज, सधा हुआ स्वर तथा संगीत का अभ्यास अपेक्षित होता है, पर उन्हें यह सब तो सहज ही प्राप्त था।

बामनौली से बड़ौत आना था। पहले बावली गांव में पधारे, जहाँ एक जाट परिवार के निवास पर ठहरे। तीन भाईयों का परिवार था और तीनों में ही धर्म भावना अद्भुत थी। बड़ा भाई हरनन्द सरल था और प्रसन्नवदन रहता था, दूसरा रामदिया बारहव्रती श्रावक तो था ही, आरंभ समारंभ से निवृत्ति ले छः काया की हिंसा से विरत हो धर्म ध्यान

करता रहता था। चार खंद का नियम धारण किए हुए था। आयंबिल तप का कठोर अभ्यासी था। छोटा दरबाराम बाल ब्रह्मचारी, नवकार मंत्र का साधक था, उसे एक दिन पौड़ियां चढ़ते वक्त काले सांप ने डस लिया, मुनियों को पता ही नहीं। कुछ घंटे बाद पुनः आया तो पता चला कि सांप काटने के बाद वह वापस चला गया था, नवकार मंत्र का जाप करके काटे जगह पर थूक लगा लिया और धीरे-धीरे विष का प्रभाव नष्ट हो गया। नवकार मंत्र की निष्ठा और प्रभावकता देखकर श्री मदनलाल जी म. विशेष चमत्कृत हुए।

दस दिन वहाँ लगाकर पूज्य श्री छोटेलाल जी म. ठाणे 4 बड़ौत पधारे। श्री मोहरसिंह जी म. ठाणे 3 पहले से ही विराजमान थे क्योंकि जहरीला कांटा लगने से उनका पैर पक गया था, भयंकर पीड़ा थी। जर्रा से ईलाज चल रहा था, तभी श्री केसरासिंह जी म. भी पधार गए। संतों का लघु सम्मेलन सा हो गया। उस युग में बड़ौत में स्थानकवासी घर अल्प संख्या में थे, मुनि अधिक थे। एषणा समिति की शुद्धि के लिए श्री नाथूलाल जी म. समीपवर्ती गांवों से आहार लाते थे। मुनियों की अधिकता, आहारादि की कष्टसाध्यता तथा रोग की दीर्घकालीनता देखकर श्री राधाकृष्ण जी म. कुछ उकता गए। सोचा कि यहाँ से विहार कैसे हो? उन्होंने नवदीक्षित श्री मदनलाल जी म. को समझा दिया कि गुरुदेवों से कह दे कि मेरा मन नहीं लग रहा इसलिए यहाँ से विहार कर दें। श्री मदनमुनि जी म. ने यह बात सरलता से पूज्यपाद श्री छोटेलाल जी म. से कह दी कि यहाँ से विहार कर दें क्योंकि मेरा मन नहीं लग रहा। श्री छोटेलाल जी म. के सामने छोटे से संत की यह हिमाकत! कड़क कर बोले– 'हमारे पास यह बात नहीं चलेगी। बीमार संत को बीच में छोड़कर हम चले जाएं यह नहीं होगा। जब तक दिल्ली से जड़ावचंद जी म. नहीं आ जाते हम इनकी सेवा करेंगे। पर ये बता, तेरा मन क्यों नहीं लग रहा? क्या दिक्कत है? यदि मन नहीं लग रहा तो लगाना पड़ेगा। यहाँ अपनी मर्जी नहीं गुरुओं की मर्जी चलेगी। श्री मदनलाल जी म. श्री छोटेलाल जी म. के तेजस्वी व्यक्तित्व से भलीभांति परिचित

हो चुके थे पर इस कथन का ये नतीजा निकलेगा ये अंदाजा नहीं था। अंततः सारी बात बता दी कि मुझे तो कोई परेशानी नहीं है पर मुझसे तो कहलवाया गया है। अब श्री छोटेलाल जी म. का रुख सम्बद्ध संत की ओर मुड़ा। उन्हें तलब करके स्पष्टीकरण मांगा। उनको अपनी योजना का खुलासा करना पड़ा। श्री छोटेलाल जी म. ने इस बात का सख्त एक्शन लिया। नए मुनि को असंतुष्ट करने के अपराध में तथा सेवा धर्म से बचने की कोशिश में चौले तप का प्रायश्चित दिया जिसे तत्काल पूरा भी करवाया। इस कठोर निर्णय से श्री मदन मुनि सहित सभी साधु स्तब्ध रह गए पर संदेश सब तक पहुंच गया कि यहाँ अनुशासनहीनता नहीं चलेगी। लगभग दो महीने तक वहाँ विराजना हुआ फिर हरियाणा की ओर कदम बढ़े। कुताना के पास से जमुना पार की और पीपली खेड़ा गांव में पहुँचे। वहाँ से आए अपनी जन्मभूमि राजपुरा में। उल्लास, संकोच, भय-संशय की स्थिति में गांव की गलियां देखी। दस साल पहले छोड़े गांव को पुनः देख पुरानी स्मृतियां इन्द्रधनुष बनकर आंखों के आगे नाचने लगी, आकुल करने लगी। गांव में हलचल मच गई कि श्री छोटेलाल जी म., श्री नाथूलाल जी म. के साथ मौजीराम (श्री मदनलाल जी म. का घरेलू नाम) आया है। गांव वाले उत्सुक व प्रसन्न थे तो घर वाले रुष्ट और उत्तेजित। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. के समक्ष घर वालों का रोष प्रकट होने लगा तो उन्होंने कहा– 'आप लोगों से रात में बात करेंगे।' श्री मदनमुनि जी म. तटस्थ बनकर स्थिति का अवलोकन करते रहे। आगे आकर कहना-सुनना उन्हें उचित नहीं लगा। प्रतिक्रमण के पश्चात् फिर परिवार आ गया। कहने लगा– 'हमारी इजाजत के बिना आपने इसे क्यों दीक्षा दी। हमें कोई बुलाने नहीं आया। हमारी नाक कट गई। लोग हमें ताने दे रहे हैं कि मां-बाप के अभाव में तुमने घर से निकाल दिया इसकी संपत्ति पर कब्जा कर लिया आदि।' श्री छोटेलाल जी म. यों तो खरे थे और खरी-खरी सुना भी सकते थे पर अब जोश की बजाय होश की जरूरत थी। संभलकर बोले– 'हमने दोनों स्थानों पर श्रावक भेजकर आज्ञा मंगवा ली थी, हमने लड़के को

बहकाया फुसलाया नहीं, ये अपनी मर्जी से हमारे पास आया था।' घर वालों के पास कोई ठोस उत्तर तो था नहीं। आगे बोलें तो क्या बोलें? अन्दर का लावा अभी ठण्डा नहीं हुआ था। उस वक्त तो चले गए पर अगले दिन फिर मोर्चा संभाल लिया। व्यर्थ विवाद का सिलसिला टूट नहीं रहा था। श्री छोटेलाल जी म. ने **'संकिलेसकरं ठाणं दूरओ परिवज्जए'** कलह-क्लेश बढ़ाने वाले स्थान से दूर रहना चाहिए' सिद्धान्त को ध्यान में रखते हुए राजपुर से विहार कर दिया। 'न होगा बांस न बजेगी बांसुरी।' छोटे-छोटे गांवों को लाभान्वित करते हुए कान्ही पहुँचे।

श्री मदनमुनि जी म. वहाँ के धार्मिक वैभव को देखकर भावाभिभूत हो गए। भगवती सूत्र में वर्णन है कि तुंगिया नगरी के श्रावक तीर्थंकर तथा स्थविरों के समक्ष गहन तात्विक जिज्ञासा लेकर उपस्थित होते थे। परस्पर धर्म चर्चा किया करते थे। उसी तरह कान्ही नगरी के श्रावक भी बड़े तत्वज्ञ, शास्त्र प्रेमी तथा जिज्ञासु थे। साधु संत कान्हीं को तुंगिया कहकर पुकारते थे। श्रावक श्री भागमल जी गम्मे के थोकड़े के इतने विशेषज्ञ थे कि अनेकानेक साधु-साध्वी उनसे सीखने आते थे। अस्सी के लगभग जैन परिवार थे। दूध दही की प्रचुरता थी। वहाँ श्री मदनमुनि जी म. ने विशेष ज्ञानवृद्धि की।

रोहतक आए तो मन बाग-बाग हो गया। उस समय सब सम्प्रदायों के लोग जैन संतों पर श्रद्धा रखते थे। उन्हें तो यह लगा कि सारी रोहतक जैन नगरी है। दिगम्बर व श्वेताम्बरों के 200 के करीब घर थे तथा आपस में प्रेम, सौहार्द, एकता बहुत अधिक थी। पारस्परिक भेदभाव नहीं था। कई जैन युवक वकील थे। पता चला कि सवंत्सरी पर दिगम्बर-श्वेताम्बर ही नहीं सनातन बन्धु भी मुखवस्त्रिका लगाकर पौषध करते हैं। श्री मदनलाल जी म. के लिए ऐसा साम्प्रदायिक सौहार्द नई चीज थी। उनके अन्तर्मन ने स्वीकार किया कि ऐसी मधुरता हर क्षेत्र में होनी चाहिए। पूज्य श्री मयाराम जी म. के उपकार के दर्शन भी रोहतक में हुए। श्री मयाराम जी म. के विस्तृत परिवार से भी साक्षात् परिचय क्रमशः रोहतक में होने लगा। कुछ मुनियों से बड़ौत में मिले थे कुछ से अब रोहतक में। यहाँ सौभाग्य मिला

श्री वृद्धिचन्द जी म. के दर्शनों का जो श्री छोटेलाल जी म. के गुरुभ्राता थे। दोनों ही महापुरुष मेवाड़ की धरती के थे। दोनों गुरु भाई ठाणे आठ से कलानौर पहुँचे तो श्री रामनाथ जी म., श्री सुखीराम जी म. (दोनों श्री मयाराम जी म. के सहोदर युगल) श्री लेखराज जी म., नवदीक्षित श्री रामजीलाल जी म. से मिलना हुआ। बड़े मुनियों ने बड़ों से चर्चाएं की तो नवदीक्षितों ने नवदीक्षितों से। श्री मदनलाल जी म. ने श्री राम जी लाल जी म. को अपना हमजोली बना लिया जो उनसे आयु में पांच साल बड़े पर दीक्षा में तीन महीने छोटे थे। साधना जीवन के प्रारंभ में जुड़ी इस जोड़ी ने जीवनान्त तक साथ निभाया। तत्रस्थ दीक्षा वृद्धों से प्रेरणा तथा समवयस्कों से सद्भावना का पाथेय लेकर श्री मदनमुनि जी तृप्त व तुष्ट हुए।

वही रोहतक से चली आठ मुनियों की टोली भिवानी पहुँची। नवदीक्षित मुनि के लिए भिवानी एक चमत्कार से कम नहीं था। पूज्यपाद श्री मयाराम जी म. के कर्तृत्व की अनूठी निशानी थी भिवानी। उन्हें ज्ञात हुआ कि यूं तो भिवानी में स्थानकवासी जैन परिवार आठ-दस ही हैं। तेरापंथी ज्यादा हैं पर श्री मयाराम जी म. के विचरण ने सब कुछ बदल रखा था। सारी नगरी भक्तों की नगरी बनी हुई थी। वहाँ के बड़े-बड़े रईस जैन गुरुओं के श्रद्धालु एवं प्रेमी थे। दो वर्ष पूर्व श्री मयाराम जी का चार्तुमास था तब सारा शहर जैनमय बन गया था। दुर्भाग्य से चातुर्मास के अर्धांश में ही (भादवा सुदी एकादशी 1969) उनका स्वर्गवास हो गया वर्ना सारा शहर स्थायी रूप से स्थानकवासी जैनत्व का उपासक बन जाता। छत्तीस कौम के लोग उनके कारण बाद में भी धर्माराधक तथा गुरु चरणों के सेवक बने रहे। श्री मदनलाल जी म. के मन में एक टीस उठी काश! मैं भी उनके साक्षात् दर्शन कर पाता। उनके धर्माभियान को गतिमान रखने का शुभसंकल्प उनके हृदय में प्रतिष्ठित हुआ।

भिवानी में ही उन्हें तपस्वी श्री हीरालाल जी म. के दर्शन हुए, जो आचार्य श्री मोतीराम जी म. के शिष्य थे तथा श्री मयाराम जी म. की

सेवा में भी रहे थे। उदीयमान मुनि श्री मदनलाल जी म. ने भिवानी में ही अपने साधना जीवन का नकारात्मक दृश्य भी देखा तथा उससे भी भविष्य निर्माण का सुन्दर अध्याय सीखा।

एक दिन पू. श्री छोटेलाल जी म. ने किसी मामूली सी बात पर इन्हें कठोरता से डांट दिया। इन्हें अपना अपराध दृष्टिगोचर नहीं हुआ। बड़ों को अपराध ही अपराध प्रतीत हुआ। इनकी कोमल भावनाएं आहत हो गई। चित्त में उद्विग्नता, खिन्नता उबलने लगी। प्रकट करने की हिम्मत नहीं हुई। अंदर की घुटन को रिलीज करने के वास्ते बिना किसी को कुछ बताए बाहर घूमने चले गए। मन हल्का होने पर वापस आ रहे थे कि पू. श्री वृद्धिचन्द जी म. मिल गए। उन्हें अंदेशा हो गया था कि नए मुनि को कुछ ज्यादा ही डांट दिया है और वह क्षुब्ध है। वे स्वयं ढूंढने आये थे, मिलने पर उन्हें राहत हुई। बात पूछी तो साफ बता दिया कि मुझे बिना कसूर के डांटा गया है इसलिए मैं बाहर आ गया। श्री वृद्धिचन्द जी म. ने कृपार्द्र होकर कहा– बिना बताए आने पर अप्रतीति होती है, विश्वास टूट जाता है, श्रावकों को पता चले तो बात भारी हो जाती है। वे गुरुदेव अपने हितैषी हैं। आगम में कहा है– **"कोहं असच्चं कुविज्जा, धारेज्जा पियमप्पियं।"** अर्थात् क्रोध की सत्ता को खत्म करके अनुकूल-प्रतिकूल सब परिस्थितियों को स्वीकार करना ही साधुता है। श्री मदनलाल जी म. को अपनी भूल का अहसास हुआ। उनसे भी क्षमा मांगी तथा स्थानक में आकर बड़े महाराज से भी। भविष्य में ऐसा कदम न उठाने का वचन दिया। उस समय श्री नाथूलाल जी म. ने अपने कोमल कर स्पर्श से उनके हृदय को सहलाया और खिन्नता को खत्म किया।

भिवानी से चलकर मुनिवृन्द हाँसी पधारा। इस क्षेत्र का मौलिक निर्माण श्री मयाराम जी म. के हाथों हुआ था। इसके संबंध में जितना सुना था उससे अधिक श्रद्धा व धार्मिकता का उत्साह देखने को मिला। जैनों की तीनों शाखाओं के समान घर थे। समृद्धि की दृष्टि से स्थानकवासी, तेरापंथी व दिगम्बरों से कुछ आगे थे। स्थानकवासी

कानूनगो, जागीरदार, जमींदार या पट्टीदार कहलाते थे। कई-कई गांवों के मालिक थे। किसी-किसी के पास तो नौ-नौ गांवों की भी मिल्कियत थी। धनसंपदा, भूसंपदा के बावजूद भी अधिकतर जैन ऐबों से बचे हुए थे। श्रावक महताब सिंह जी आगमों के ज्ञाता थे। समग्र क्षेत्र की भावना से श्री छोटेलाल जी म. इतने प्रभावित हुए कि एक मास (कल्प) पर्यन्त ठहरे। बड़े संत प्रभावित हुए तो श्री मदनलाल जी ज. तो प्रभावित होने ही थे। फिर पहुँचे जीन्द। स्थानक होते हुए भी संत गृहस्थों के आवास पर ही ठहरते थे, क्योंकि आचार्य श्री सोहनलाल जी म. ने स्थानक को सन्तों के लिए वर्जित कर रखा था। श्री मदनलाल जी म. के लिए धर्मस्थान का बहिष्कार नई जानकारी थी। धर्मस्थान एक सामाजिक संपत्ति होती है। साधु-साध्वी का उसमें कोई निमित्त या उद्देश्य नहीं होता। श्रावक वहाँ धर्मक्रिया करते हैं तथा सन्तों को ठहराते भी हैं। परन्तु कुछ भावुक श्रावक या साधु भोलेपन से कह देते हैं कि यह स्थानक सन्तों के लिए बनाया है और इसी कारण सन्तों के लिए वर्जित मान लिया जाता है। जीन्द पधारने पर समाज ने पू. श्री छोटेलाल जी म. से निवेदन किया कि गुरुदेव सार्वजनिक भवन होते हुए भी संत प्राईवेट घरों में ठहरते है, वहाँ हर परिवार नहीं आता क्योंकि किसी का उस घर से लगाव है किसी की अनबन। समाज का धर्मस्थान उपयोग के अभाव में बेकार होता जा रहा है। दर्शनार्थी बन्धुओं की सेवा समाज करे तो समस्या, मकान मालिक करे तो समस्या। आप इस उलझन को सुलझायें। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. ने सारी जांच पड़ताल की और स्थानक को बिल्कुल निर्दोष पाया। अपनी रिपोर्ट आ. श्री सोहनलाल जी म. के पास भिजवाई। वे श्री मयाराम जी म. के गणीय मुनियों को प्रमाणिक मानते थे। अतः आज्ञा भिजवा दी कि आज के बाद जीन्द की स्थानक संतों के लिए खोली जाती है। समग्र क्षेत्रवासी खुशी से झूम उठे। प्रचुर धर्माराधना हुई। श्री मदनलाल जी म. को यह निर्णय बहुत उचित लगा। वहाँ से रिण्ढाणा पधारे जो इनका ननिहाल था। कई बार बाल्यकाल में मामा के यहाँ आया करते। नटखट होने के कारण शरारत भी किया करते। परन्तु

आज तो धीर गंभीर मुनि बनकर आए थे। ला. भिखारी लाल, जुगलामल, न्यादरमल, तथा बस्तीराम पटवारी मुख्य श्रावकों में थे। पटवारी जी इनके मामा के परिवार से थे। अपने भांजे का आध्यात्मिक विकास देख बड़े प्रसन्न हुए। रिंढाणा होली चौमासी पर विशेष धर्म-ध्यान तो हुआ ही आगामी चातुर्मासों का निर्णय भी लिया गया।

श्री वृद्धिचन्द जी म. रिंढाणा तथा श्री छोटेलाल जी म. चांदनी चौंक दिल्ली के लिए निश्चित हुए। हरियाणा के कुछ क्षेत्रों को पावन करते हुए दिल्ली सदर बाजार पहुँचे। वैशाख का महीना था। वहाँ गणावच्छेदक श्री जवाहरलाल जी म., जो कि श्री मयाराम जी म. के गुरुभ्राता थे, के पावन दर्शन हुए। उनके पावन सान्निध्य में कुछ दिन बिताने का मन था लेकिन वातावरण प्रतिकूल हो गया। श्री मदनलाल जी म. की मासी के परिवार को पता चला कि हमारा भांजा साधु बनकर आया है, प्रसन्नता की जगह रोष उभरकर आया। घर से युवा लड़के का पलायन, गैरों से दीक्षा की आज्ञा मंगवाना और न जाने कितने शिकवे-शिकायत थे। राजपुर वालों से उपालम्भ मिला होगा अतः अपना रोष निकालने के लिए धन बल, जनबल का सहारा लेकर स्थानक में आ गए। संतों को भला बुरा कहने लगे। स्थानकवासी युवाओं को अपने गुरुओं का अपमान सहन नहीं हुआ। आपसी टकराव होने की नौबत आ गई। परिवार के कुछ युवकों ने साधु उठा ले जाने की बात कही तो मामला और संगीन हो गया। स्थिति इतनी विकराल हो गई कि दिगम्बर-श्वेताम्बरों में साम्प्रदायिक झगड़ा होने की नौबत आ गई। स्थानकवासी समाज के मुखिया थे जौहरीमल धन्नामल जी, जो कि वैरागी को पास रखने की अनुमति देकर आए थे। परिवार और उनके समर्थक उनसे भिड़ने पर आमादा थे। पूज्य गणावच्छेदक श्री जवाहरलाल जी म. के शान्त स्वभाव, शान्त भाषा ने लोगों को टिकाया। मारपीट से बचाव हो गया। लोग एक बार तो अपने घर चले गए परन्तु आगे का खतरा खत्म नहीं हुआ। श्री जवाहरलाल जी म. ने श्री छोटेलाल जी म. से कहा कि यहाँ से विहार कर दो, इसी में भलाई

है। उनका निर्देश पाकर वहाँ से तत्काल विहार हो गया। चांदनी चौंक जमना पार विचरण किया तथा सदर का मामला ठण्डा पड़ गया। Out of sight out of mind.

चांदनी चौंक में चातुर्मास प्रारम्भ हुआ तो श्री नाथूलाल जी म. ने कुछ निर्देश दिए। ये दिन स्वाध्याय आत्मचिन्तन के लिए अधिक उपयुक्त हैं, तुम्हारी युवावस्था है, नई दीक्षा है, नए-नए प्रपंच आएंगे, उलझना नहीं है। गुरुओं से कोई बात नहीं छिपानी, इससे दोषों को पनाह नहीं मिलेगी। श्री मदनलाल जी म. को अपने गुरुओं की हर बात अच्छी लगती थी अतः हर आज्ञा निर्देश पर 'तहत' कहते रहे। उस वर्ष उन्होंने गुरुओं से आगमों का गहन ज्ञान लिया। स्वाध्याय की रुचि तो पूर्व से थी ही अब गुरु सान्निध्य में उस रुचि की पूर्ति भी भरपूर होने लगी। सारा वातावरण स्वाध्यायमय बना रहता था। श्री मदन लाल जी म. के पुराने मित्र भी उनके पास काफी आने लगे। पूज्य श्री नाथूलाल जी म. चौकसी रखते थे कि ये मित्र मुनि के स्वभाव को, समय को खराब तो नहीं करते। उनसे होने वाली बातचीत का विषय पूछते रहते थे तथा मुनि जी भी निःसंकोच भाव से हर बात बता देते। गुरुदेव को उस वार्तालाप में कुछ अनुचित लगता तो आगे से सावधान कर देते। अधिक टोकाटाकी करने की बजाय संकेत करना ही उनका स्वभाव था।

उस साल नए मुनिराज ने पचोले की तपस्या की। सभी समर्थ मुनि वर्ष में एक पचोला करने का भाव रखते ही थे। जब श्री मदनलाल जी म. की तपस्या चल रही थी तब जमना पार का एक भाई आकर उनसे कुछ बात करने लगा था। एक दिन कहने लगा– "यदि आपको सपने में कोई नम्बर दिखाई दे तो मुझे बतलाने की कृपा करना।" उस भाई के अन्तर्निहित भावों से अनभिज्ञ म. श्री ने हाँ कर दी। उन्हें स्वप्न में कुछ दिखाई दिया और उस बन्धु को बता दिया। वह सट्टे का व्यसनी था इधर-उधर से नम्बर पूछता रहता था। श्री मदन मुनि जी म. द्वारा तपस्या के दौरान बताए गए नम्बर से कुछ कमाई हो गई। आगे और कृपा मिलती रहेगी इस दृष्टि से उनकी प्रशंसा करने लगा। श्री मदनलाल

जी म. ने उस भक्त की तथाविध भक्ति का जिक्र अपने गुरुदेव बहुसूत्री श्री नाथूलाल जी म. के समक्ष किया। उन्होंने सारी बात को स्पष्ट करते हुए कहा कि यह भाई स्वार्थ पूर्ति के लिए संतों की चाटुकारिता करता है तथा उन्हें गलत दिशा में ले जाता है। ऐसे श्रावकों के वाग्‌जाल से बचकर चलना है।

नए मुनिराज को गुरुजनों की ओर से मिले संकेत से आगे का मार्ग निष्कंटक हो गया। फिर उस श्रावक की दाल नहीं गली। जीवन के प्रारंभिक वर्ष शेष जीवन के लिए भूमिका तैयार करते है। **'पुव्वाइं वासाइं चरेऽप्पमत्तो तम्हा मुणी खिप्पमुवेइ मोक्खं'** अर्थात् संयम के पूर्वतन वर्ष यदि अप्रमत्तता से व्यतीत हो जाएं तो मुनि शीघ्र ही मुक्ति प्राप्त कर लेता है।

"विहार चरिआ इसीणं पसत्था"

दीक्षा पर्याय का दूसरा वर्ष प्रारंभ हो चुका था। गुरुओं से, आगमों से, संघ समाज से, आत्मचिन्तन से तथा कुछ आघात-प्रत्याघातों से बहुत कुछ सीखा था तथा सीखने का क्रम चालू था। चांदनी चौंक चातुर्मास के पश्चात् श्री छोटेलाल जी म. का विचार मेवाड़ की ओर विहार करने का बना। दो टोलियों को बनाना विचरण हेतु प्रभावशाली समझते हुए पू. श्री वृद्धिचन्द जी म. से सम्पर्क किया। दोनों टोलियां रोहतक में मिली।

ठाणे आठ का कार्यक्रम निश्चित हो गया। श्री मदनलाल जी म. तथा श्री प्रेमचन्द जी म. के लिए सब कुछ नया था। बाकी सब सिद्ध हस्त पुराने खिलाड़ी थे। अलवर तक मार्ग सुगम सा रहा। वहाँ से जयपुर तक का सफर कठिन अति कठिन था। सौ मील के सफर में सैकड़ों तकलीफें सामने आई। रास्ते टूटे-फूटे, कंकर-पत्थर-बहुल एवं आहार-पानी की असुलभता। एक दिन मालाखेड़ा पहुँचना था। खाली पेट सुबह-सुबह चल दिए। श्री मदनलाल जी म. को भूख सताने लगी। बड़े म. से कहा– 'आहार की इच्छा है।' उन्होंने कहा– 'मालाखेड़ा पहुँचने पर आहार मिल जाएगा। धैर्य रखकर चलते रहो।' कुछ मील

चले। मार्ग के एक ओर कुछ मकान दिखे। श्री मदनलाल जी म. ने फिर कह दिया— 'गुरुदेव भूख लगी है।' जवाब मिला— 'भाई भूख तो हमें भी लगी है पर इन बस्तियों में हमारी मर्यादा के अनुकूल आहार नहीं मिल सकता।' मन मारकर आगे चले। भूख परेशान कर रही थी फिर कह बैठे— 'तेज भूख लग रही है।' श्री छोटेलाल जी म. ने झोली हाथ में पकड़ा दी और कहने लगे— 'जा खुद मांग ला खाना और खा ले। यहाँ कोई तेरी नानी बैठी है जो पका-पकाया आहार दे देगी। हमें पता है कहाँ आहार मिल सकता है कहाँ नहीं। साधु बने हो तो परीषह सहने ही पड़ेंगे।' कड़कती आवाज ने भूख तो भगा ही दी आगे चलने की हिम्मत भी जगा दी। परीषह सहने की क्षमता का विकास हो गया।

आठों संत चार-चार की टोली में आगे पीछे चल रहे थे। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. ठाणे चार से अग्रिम टोली में थे, श्री वृद्धिचन्द जी म. ठाणे चार पश्चाद्वर्ती में। जयपुर पहुँचने से पूर्व दिन कोई पड़ाव नहीं मिला। 22 मील (35-40 किमी.) चलकर मावटा के घाटे (पहाड़ों का मध्यवर्ती मार्ग जो काटकर बनाया जाता है व स्वयमेव भी बन जाता है।) भूखे-प्यासे शाम को पहुँचे। पौह का महीना, कड़कड़ाती ठण्ड, बस्ती नहीं, और सुरक्षित मकान की संभावना ही नहीं। राहगीरों के लिए कुछ बरामदे से बने थे। आस पास पानी होने से रात को शेर व अन्य वन्य पशुओं का आना संभावित था।

फर्श पर बिछाने के लिए पराली आदि भी नहीं मिली। बस देव गुरु धर्म का शरणा लेकर संत ठहर गए। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. ने रात भर जागकर पहरा दिया। तीनों संतों ने हल्की फुल्की नींद लेकर रात बिताई। रात्रि निर्विघ्न व्यतीत हुई। जयपुर पहुँचने पर परीषहों को विश्राम मिला। दो दिन बाद श्री वृद्धि चन्द जी म. भी पधार गए।

श्री मदनलाल जी म. प्रथम बार ही जयपुर पधारे थे। वहाँ के संबंध में बड़ी मौलिक जानकारी ग्रहण करके अपने प्रज्ञाकोष में रखी। महाराज सवाई जयसिंह ने उस शहर को बसाया था। शहर के चारों ओर लाल पत्थर का परकोटा था। चौपड़ बाजार वहाँ

का मुख्य केन्द्र था। वहाँ खड़े होने पर जयपुर के चारों दरवाजे नज़र आते थे। सन् 1916 में सवाई माधोसिंह का शासन था। वह विलासप्रिय और शौकीन शासक था। कबूतर बाजी का शौक तो कमाल का था। कबूतरों की प्रतियोगिता करवाता था इसका शुभ परिणाम यह आया कि कबूतरों के मारने पर पूर्ण पाबंदी थी। जैन और हिन्दू अहिंसा प्रधान होने से कबूतरों को दाना डालते ही थे, मुसलमान भी इस विषय में कम नहीं थे।

श्वेताम्बरों की अपेक्षा दिगम्बर परिवार अधिक थे। तीन-चार हजार घर तो खण्डेलवाल दिगम्बरों के ही थे। पंडित टोडरमल जयपुर के ही थे। उन्होंने दिगम्बर समाज को निश्चयवाद की ओर मोड़ा। उनके सुपुत्र गुमानीराम जी ने गुमानी पंथ चलाकर एक नया वर्ग निर्मित किया था।

श्वेताम्बरों की तीनों शाखाएं— मूर्तिपूजक, स्थानकवासी, तेरापंथी, ओसवाल जाति में मान्य थीं। ज्यादातर स्थानकवासी जौहरी थे। समृद्ध और प्रतिष्ठित थे। श्री नथमल जी, महाराज के वजीर तथा उनके भाई दीवान जवाहरलाल जी खजांची थे। उनके कारण स्थानकवासी समाज का दर्जा कुछ ऊँचा था। उनके विशाल महल उनके वैभव का ज्वलन्त प्रमाण थे। जयपुर के स्थानकवासी समाज में राजस्थान की साम्प्रदायिकता का प्रभाव नहीं था। यहाँ तक पंजाब का मुनिमण्डल समय-समय पर विचरता था।

मुनियों का अगला लक्ष्य अजमेर का बना। किशनगढ़ तक फिर वही कठिनाईयां झेलनी पड़ी जो अलवर से जयपुर तक झेली थी। हाँ! किशनगढ़ जाने पर साता मिली।

श्री मदनलाल जी म. को राजस्थान की साम्प्रदायिकता का, वहाँ की मानसिकता का प्रत्यक्ष दर्शन वहाँ जाकर हुआ। वहाँ के दो सौ घरों में दो वर्ग बने हुए थे। एक स्थानक समर्थक था तो दूसरा स्थानक विरोधी। स्थानक में ठहरने वाले मुनियों के पास आना और न आना विवाद का मुद्दा बना हुआ था। न आने वालों की संख्या ज्यादा थी। पंजाबी मुनिराज हवेली में ठहरा करते थे अतः श्रोताओं की संख्या अधिक हो

जाती थी। दिन का प्रवचन श्री छोटेलाल जी म. एवं श्री वृद्धिचन्द जी म. संभालते थे तथा रात्रि में भजन स्तवनों का समां श्री मदनलाल जी म. तथा श्री प्रेमचन्द जी म. बांधते थे।

अजमेर पहुँचने पर रत्नवंश के आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म. से मिलन हुआ। उदीयमान मुनिराज श्री मदनलाल जी म. ने अपनी सूक्ष्म दृष्टि से पाया कि श्री शोभाचन्द जी म. का स्वभाव, आचरण, संयम-व्यवहार, शास्त्रीय ज्ञान तथा बौद्धिक उत्कर्ष बड़ा प्रभावशाली है। इनकी सम्प्रदाय के श्रावक भी समझदार लगे, कट्टरपंथी या कटुता-प्रिय नहीं। वहाँ से चलकर ब्यावर पर्दापण हुआ जहाँ हुक्मीगच्छ के मुनि श्री देवीलाल जी म. तथा श्री खूबचन्द जी म. मिले। श्री मदनलाल जी म. को पता चला कि राजस्थान में हुक्मीगच्छ का व्यापक प्रभाव था। मुनि संघ भी विस्तृत था। कई बार विभाजनों का शिकार भी हुआ था। पूज्य श्री मयाराम जी म. का इस संघ के सभी प्रमुख मुनिराजों से गहन संबंध रहा था। इस समय भी यह संघ दो भागों में बंटा हुआ था। एक दल 'श्री लाल जी म.' तथा दूसरा 'जावरा वाले' संतों का। ये मुनि दूसरे दल के थे।

पूज्यपाद श्री नाथूलाल जी म. ने बताया कि श्री लाल जी म. के उपदेशों से मुझ में धर्म रूचि जागृत हुई तथा वैराग्य भाव भी उनके कारण उत्पन्न हुआ था। श्री लाल जी म. को अपने नाम से शिष्य बनाने का त्याग था पर अपने हाथों से 80-85 दीक्षाएं देकर श्री संघ को श्री-सम्पन्न किया था। श्री मदनलाल जी म. ने उनका जीवन-चरित्र पढ़ा भी तथा जन-जन मुख से उनके गुणानुवाद सुने भी।

ब्यावर में आठों मुनि स्थानक की बजाय एक नौहरे में ठहरे। घरों की अच्छी जानकारी न होने से कुछ पेरशानी रही, विशेषतः पानी को लेकर। पीने के लिए जो धोवन पानी आता था वह स्वाद में तीखा और कड़वा होता था। शरीर के लिए रोगकारक और असमाधि दायक। उसमें लाल मिर्चों का असर होता। वहाँ के लोग उसे 'भाजी का ओसामण' बोलते थे। भोजन बनाते समय बहनें कड़छी को बार-बार धोने वास्ते

पानी के बर्तन में डुबोती थी, वह पानी शस्त्र परिणत होने से प्रासुक और ग्राह्य तो होता था पर शरीर के प्रतिकूल था। निरन्तर प्रयोग करने वालों को अनुकूलता में ढल जाता होगा पर प्रथम बार के प्रयोक्ता के लिए दस्तावर था। वैसे दशवैकालिक में ऐसे जल को लेने का निषेध है। पर विवशता में लेना पड़ा। सभी मुनियों का तीन दिन में बुरा हाल हो गया। विहार का निर्णय कर लिया तथा श्री देवीलाल जी म. को बता दिया। उन्होंने कारण पूछा तो पानी की प्रतिकूलता बताई। श्री देवीलाल जी म. बोले– 'आप पानी मेवाड़ी वास (मोहल्ले का नाम) के घरों से ले आया करें। वहाँ सामान्य धोवन मिल जाता है। अधिकतर संत वहीं से लाते हैं।' पानी के इस कड़वे समन्दर को पार करने के बाद मुनिवर्ग का कई दिन वहाँ पर विराजना रहा।

ब्यावर प्रवास में ही श्री मदनलाल जी म. को अपने जीवन का एक और कठोर अनुभव मिला। एक दिन स्वाध्याय कर रहे थे। उनके पीछे कौन है इस बात से देर तक अनभिज्ञ रहे। इस कारण उनकी पीठ पूज्य श्री छोटेलाल जी म. की ओर हो गई। कुछ देर की प्रतीक्षा के बाद श्री छोटेलाल जी म. ने ललकारते व लताड़ते हुए कहा– 'देख किसकी तरफ पीठ किए बैठा है?' मुड़कर देखा तो सहम गए। कुछ स्पष्टीकरण और क्षमायाचना की भूमिका पर पहुँचते उससे पहले तो अनुशासनात्मक कार्यवाही चालू हो चुकी थी। 'तू अविनीत है, हमारे लायक नहीं है, अपने घर वापस चला जा, तुझे दिल्ली भेज देते हैं।' श्री मदन मुनि जी म. के लिए घर भेजना फांसी की सजा से कम नहीं था, पर अब तो ये सजा दरपेश थी। गहन विनय, असीम धैर्य, अतुल तितिक्षा के धनी श्री मदन मुनि ने गुरुओं के प्रति रोष या क्षोभ प्रकट नहीं किया। बच्चों की तरह सुबक-सुबक कर रोने लगे। रोम-रोम कांपने लगा। कहते क्या? दीनदयाल गुरुदेव श्री नाथूलाल जी म. ने स्थिति को संभाला। बड़ों से निवेदन किया– 'गुरुदेव, ये अभी बच्चा है, हर बात का बोध नहीं है, इससे भूल हो गई पर आप तो क्षमाशील हैं।' इतने में उन्होंने भी विनती की हिम्मत की– 'मैं आपका बच्चा हूँ जान-बूझ कर आपकी तरफ

पीठ नहीं की, भूल से हो गई। आईन्दा ऐसा नहीं होगा।' श्री छोटेलाल जी म. कुछ नरम पड़े। चौले उपवास का दण्ड देकर गलती की शुद्धि करवाई। तथा चौला भी तभी पच्चखवा दिया। चार दिन निराहार मदन मुनि जी आत्म शुद्धि करते रहे। विनय के शिखर चूमते रहे। **"बीती ताहि बिसार दे आगे की सुधि लेय।"** अतीत की घटना के रजकणों को झाड़कर भविष्य के उन्नत आकाश में उड़ान भरनी प्रारंभ कर दी। चातुर्मास उदयपुर करने का भाव था पर बीच में कुछ ऐतिहासिक स्थलों का लाभ लेना तथा उन्हें लाभान्वित भी करना था। मदारिया, मसूदा, गुलाबपुरा होते हुए 'सांगानेर' पहुँचे। राणा-सांगा द्वारा बसाया गया यह कस्बा पूज्य श्री छोटेलाल जी म. का जन्म स्थान था। इनके परिवार की प्रतिष्ठा और समृद्धि दर्शनीय थी। बड़े भाई श्री खूबचन्द जी डांगी अच्छे श्रावक थे। श्री मदनलाल जी म. को अपने दादा गुरुदेव की जन्म भूमि देख विशेष प्रसन्नता हुई। श्री छोटेलाल जी म. हर अवसर पर अप्रमत्तत्ता का दिग्दर्शन कराते थे ये बात पुनः प्रकट हुई। वे अपने सांसारिक परिवार में आहार के लिए गए। बड़ा परिवार, काफी सामान बना हुआ था। शंका सी हुई कि कहीं हमारे निमित्त तैयारी तो नहीं की? पूछताछ की तो सबने मना कर दिया। फिर भी वे एक छोटे बालक को एक ओर ले गए। उससे रसोई की रौनक के बारे में पूछा तो उसने कह दिया कि आपके आने की खुशी में सब तैयारी की है। शंका की पुष्टि होने पर श्री छोटेलाल जी म. ने तत्काल निर्मित भोजन सामग्री में से कुछ नहीं लिया पर घर में जो वस्तु दीर्घ काल से पहले से बनी रखी थी, उसमें से लेकर उनकी भावना को सम्मान दिया। उनकी जागरुकता सभी मुनियों को अच्छी लगी विशेषतया श्री मदनलाल जी म. को। ओसवालों के 20 घर थे, पर म. श्री के प्रवचनों में पांच सौ से ऊपर श्रोता होते थे, क्योंकि माहेश्वरी, ब्राह्मण, छीपा आदि जातियों के लोग आते थे।

वहाँ से भीलवाड़ा जाते वक्त एक सूखी नदी मिली। वहाँ का दृश्य बड़ा रमणीय था। श्री मदन मुनि जी को बहुत भाया। परन्तु श्री छोटेलाल जी म. ने एक घटना सुनाकर वातावरण को गंभीर बना दिया। उन्होंने

फरमाया– “18 वर्ष पूर्व संवत् 1955 सन् 1898 में मैं और मेरे गुरु भाई श्री मनोहरलाल जी म. भीलवाड़ा आए थे। श्री लालचन्द जी म. राजस्थान भ्रमण को आए थे वे भी भीलवाड़ा में थे। जिस मकान में ठहरे वह यक्षाधिष्ठित था। पहली रात को श्री मनोहरलाल जी म. पर उस यक्ष ने प्रकोप किया। रात को वे आवश्यक कार्य के लिए छत पर गए तब उसने विकराल रूप बनाकर उन्हें डराया, फिर उन्हें तापमान हो गया। इलाज का भी लाभ नहीं मिला। तीन दिन में ही उनका स्वर्गवास हो गया। इस सूखी नदी पर लाकर ही उनका अंतिम संस्कार किया था। मुझे उस गुरु भाई की याद आ रही है। मेरी जोड़ी टूट गई थी और मैं अकेला रह गया था। श्री लालचन्द जी म. साथ थे अतः कुछ संभल सका।” श्री छोटेलाल जी म. का अपने गुरुभ्राता के प्रति लगाव देखकर श्री मदनलाल जी म. का हृदय भी द्रवित हो उठा।

भीलवाड़ा में श्री नानकदास जी की सम्प्रदाय के श्री गजमल जी म. तथा श्री शीतलदास जी म. के श्री प्रतापमल जी म. से भी मधुर मिलन हुआ। श्री प्रतापचन्द जी म. श्री जड़ावचन्द जी म. के मामा लगते थे इसलिए बड़ी आत्मीयता से कहते थे– ‘तुम मेरे भांजे के परिवार के सन्त हो।’ प्रेम-प्यार की इस बयार में पन्द्रह दिन भी थोड़े लगे।

फिर चित्तौड़गढ़ पहुँचे। धर्म-ध्यान के अलावा श्री मदनलाल जी म. वहाँ के इतिहास में भी डुबकी लगाते रहे। वहाँ के गढ़ की सुरक्षा के लिए बनाए गए सात कोट सुरक्षित थे। ऐसे-ऐसे झरने थे जिनका स्रोत तो मालूम नहीं होता था पर उनका पानी गर्मी में राजमहल में आता था। महल क्या था– एक अजूबा। शाश्वत सौन्दर्य की प्रतीक रानी पद्मिनी के महल भी देखने में आए। सोलह हजार हिन्दू नारियों के साथ जौहर करने वाली पद्मिनी भारतीय सतीत्व की मुकुटमणि थी। सूर्यकुण्ड भी था। किले के अन्दर जैन मन्दिर देख कर श्री मदनलाल जी म. को गर्व व हर्ष भी हुआ कि जैन धर्म यहाँ का राजधर्म रहा था। विशाल तोपें यहाँ की शूरता-वीरता का उद्घोष कर रही थी। जयमल फत्ता के स्मारक तो सुरक्षित थे पर किला जीर्ण-शीर्ण था। वहाँ के वृद्धों

से ज्ञात हुआ कि चित्तौड़ में जैनों के तीन लाख घर थे। अधिकतर युद्धों में मारे गए। अब तो थोड़े ही जैन थे कुछ गढ़ में ऊपर थे, कुछ गढ़ से नीचे की बस्ती में। वहाँ एक सुविशाल आम का वृक्ष बड़ा रमणीय प्रतीत हुआ। श्री मदनलाल जी म. की इतिहास की रुचि पूर्ण होती जा रही थी और उन्हें विशेष आनन्द आ रहा था।

चित्तौड़ से नाथद्वारा-देलवाड़ा पधारे। नाथद्वारा में श्री नाथ जी का विश्वविख्यात मंदिर था, जिसमें गोसाई लोगों का आधिपत्य था। वहाँ से पहुँचे पलाना (घासा पलाना)। जीवन सर्वस्व श्री नाथूलाल जी म. की जन्म भूमि। वहाँ जाकर श्री मदन लाल जी म. का मन स्वर्गोपम आनन्द में मग्न हो गया। श्री नाथूलाल जी म. की निर्लेपता अपनी जगह थी श्री मदनलाल जी म. की उत्सुकता अपनी जगह। बहुत पूछा, बहुत समझा, बहुत बटोरा। लगने लगा कि सारा गांव दुग्गड़ ओसवालों का है। थी तो और भी जातियां पर प्रभुत्व इन्हीं का ही था। छोटा गांव भी न जाने कितना बड़ा प्रतीत हुआ। गांव के बाहर श्री ऋषभदेव की मूर्ति थी तथा बाहर हाथी पर आरुढ़ माता मरुदेवी की आकृति थी। श्री नाथूलाल जी म. ने अपने बचपन की कुछ बातें सुनाकर सब मुनियों को सुप्रसन्न किया। दीक्षा के बारह साल बाद पहली बार गांव में आए थे। चाचा-चाची उनके बेटे-बेटियां पास आकर रोने भी लगे। श्री नाथूलाल जी म. की तो एक ही प्रतिक्रिया थी कि ये सब मोह का एक आवरण है। उन्होंने अपने संबंध में जो सुनाया उन्हीं के शब्दों में सार-सार– "मेरा जन्म पलाना में हुआ। बाद में पिताजी सपरिवार उदयपुर जाकर बस गए। पिताजी का शीघ्र ही देहान्त हो जाने पर कारोबार की जिम्मेदारी मुझ पर आ गई। छोटा भाई ज्यादा लाडला था इसलिए बेफिक्र था। बहन की शादी उदयपुर में तेरापंथ के प्रतिष्ठित व्यक्ति श्री हीरालाल जी लोढ़ा से विक्रम संवत् 1961 सन् 1904 में हुई थी। श्री छोटेलाल जी म. का चातुर्मास उदयपुर में था। इनके साथ श्री वृद्धिचन्द जी म., श्री कृपाराम जी म., श्री रामसिंह जी म. भी थे। मुझे इनकी संयमचर्या बहुत पसन्द आई। दिन में तो इनके प्रवचन और

सान्निध्य का कम लाभ ले पाया क्योंकि दुकान संभालता था, पर रात को आकर बहुत कुछ सीखा। मन में दीक्षा का भाव पक्का बना। काम को समेटने की इच्छा थी। हर सांसारिक कार्य पाप प्रतीत होता था। पर मां नहीं मान रही थी। दिन भर रोती रहती, रोकना भी नहीं चाहती थी। आज्ञा देना भी कठिन था। बहन थी, मुझे समझाती, घर तो तू ही संभालेगा। मां का क्या होगा? छोटा तो तेरे भरोसे है, मैं पशोपेश में था। फिर संकल्प की ओर मुड़ा। छोटे को समझाया कि तू काम संभाल ले। वह मान गया तो मां के पैर पकड़ लिए। उनकी आज्ञा मिल गई। प्रतिक्रमण तथा अन्य आवश्यक श्रुतज्ञान याद कर चुका था और अंततः आसोज सुदी दसवीं संवत् 1961 (18 अक्टूबर, 1904) दशहरे के दिन पूज्य गुरुदेव श्री छोटेलाल जी म. ने मुझे दीक्षा दे दी। मेरा छोटा भाई मेरे वियोग को सहन नहीं कर पाया और दीक्षा के ग्यारह दिन बाद उसका देहान्त हो गया। पर मेरा मन मोह बंधनों से मुक्त था। अतः कोई पीड़ा या विषाद मन पर नहीं उभरा।”

गुरुदेव की जन्मभूमि पर गुरुदेव की आप बीती सुनकर श्री मदनलाल जी म. भावविह्वल हो गए। संवत् 1961 के वर्ष की कुछ और जानकारी भी श्री नाथूलाल जी म. ने दी। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. ठाणे 4 से मेवाड़ की धरती पर आए थे तथा एक साल के अन्दर नौ ठाणे हो गए थे। चौमासे से पूर्व ही श्री वृद्धिचन्द जी म. के भाई बगडूंदा निवासी श्री कंवर सेन जी दीक्षित हुए। दशहरे पर श्री नाथूलाल जी म.। चातुर्मास के पश्चात् उदयपुर निवासी पुष्करणा ब्राह्मण श्री राधाकृष्ण जी म. तथा नाई गांव निवासी वेराणिया गोत्री ओसवाल श्री रत्नचन्द जी म. तथा उसी साल श्री कृपाराम जी म. के शिष्य बने श्री भेरू जी म.। उस समय चारित्र चूड़ामणि श्री मयाराम जी म. तथा उनके मुनियों के संयम के प्रति जनमानस में अगाध श्रद्धा थी जिसके परिणाम स्वरूप स्वल्प काल में ही इतनी दीक्षायें संभव हो सकी। बड़ों की छत्र-छाया में छोटे मुनियों की विहार यात्रा जारी थी। लक्ष्य था उदयपुर का पर अभी कुछ और इलाका फरसना था। अधिकतर स्थलों पर श्री छोटेलाल जी

म. श्री वृद्धिचन्द जी म. व श्री नाथूलाल जी म. की रिश्तेदारियां थी हर क्षेत्र में तीन बार प्रवचन होते थे तीनों बार भरपूर रौनकें। मुनिमण्डल क्रमशः एकलिंग पहुँचा जो कि हिन्दुओं के लिए तीर्थभूत था। मेवाड़ के शासक एकलिंग के भक्त रहे हैं। उनका राज्य मूलतः एकलिंग के अधीन होता था वे तो एकलिंग के दीवान होकर काम करते थे।

एकलिंग का प्राकृतिक सौन्दर्य देखकर श्री मदनलाल जी म. अभिभूत से हो गए। वहाँ की मुख्य फसलें थी गुलाब, केवड़ा, चंपा तथा पोस्त। चारों ओर फूल ही फूल खिले थे। वहाँ साधुओं को जो आहार मिला वह भी अद्भुत था। एकलिंग को राजपरिवार की ओर से मोहनभोग चढ़ाया जाता था, जिस में छत्तीस तरह के मिष्ठान्न आदि वस्तुएं होती थीं। मेवे का प्रयोग ज्यादा होता था। मंदिर के पुजारियों, हाकिमों के घर वह मोहनभोग जाता था तथा मुनि वहीं से लेकर आए थे। प्रासुक पानी के स्थान पर गुलाब और केवड़े का अर्क मिला क्योंकि घरों में टब के टब भरे रहते थे। एक दिन के लिए सही, मुनियों ने राजशाही भोजन पान का आस्वाद लिया, पर आसक्ति नहीं आने दी। वहाँ से भुआना पधारे जो उदयपुर से तीन मील ही था। श्री छोटेलाल जी म. के पदार्पण के समाचार मात्र से उदयपुर के हजारों नर-नारी भुआना में दर्शनार्थ पहुंच गए। भुआना में कुल बीस जैन परिवार थे पर मुनियों के लिए सारी बस्ती खुली थी। कुम्हार, तेली भी जैन संतों की भक्ति करते थे। तीन-चार दिन बाद उदयपुर के लिए चले। शहर से डेढ़ मील पहले ठहर गए। अगली प्रातः जो लोगों का हजूम आया, देख-देखकर श्री मदनलाल जी म. आश्चर्य चकित रह गए। नन्दलाल बाफना नगर सेठ के नेतृत्व में उदयपुर का बच्चा-बच्चा स्वागत में हाजिर था। आगे-आगे महामुनि, पीछे भाई और बहन। बहनों के गीत के बोल थे– **'आज सोना रो सूरज उगियो, उगियो म्हारा थानक रो पोरसहिओ..।'** सरुपरियों के नौहरे में जुलूस जाकर रुका, विशाल परिषद् जमीं। श्री छोटेलाल जी म. का सम्बोधन हुआ। लोगों की मांग थी, चातुर्मास चाहिए और पूज्य श्री जी ने स्वीकृति देकर जन भावनाओं का सम्मान किया।

उदयपुर में ही श्री मदनलाल जी म. ने मुनियों की एक ऐसी टोली के दर्शन किए, जिसमें एक पिता तथा दो पुत्र थे। श्री लक्ष्मीचन्द जी म. अपने पुत्र श्री पन्नालाल जी तथा श्री रत्नचन्द जी के साथ आचार्य श्री श्रीलाल जी म. के चरणों में दीक्षित हुए थे।

उदयपुर चातुर्मास में समय शेष था, अतः कुछ क्षेत्र और देखने थे। पुनः भुआना आए। वहाँ से 'करुण किया' गांव पहुंचे। मेवाड़ में पहली बार कुछ प्रतिकूलता का सामना करना पड़ा। यहाँ जैन परिवार कोई नहीं था पर जैन मंदिर था, जिसका संचालन उदयपुर का मंदिर मार्गी समाज करता था। मुनिगण दिन में तो चौपाल में ठहरे पर गर्मी के निवारणार्थ शाम को मंदिर की विस्तृत जगह पर आ गए। किसी आगन्तुक भाई की आज्ञा लेकर ठहर गए। थोड़ी देर में उदयपुर के मंदिर मार्गी भाई आए, स्थानकवासी संतों को देख बिदक गए। अनाप-शनाप बकने लगे, मुनि फिर भी शांत रहे। परन्तु वे लोग नहीं रुके। मुनियों का अपमान देख गांव के अजैन लोगों को तैश आ गया।

उनको खूब लताड़ लगाई और कहा– 'हम तो अजैन होकर भी तुम्हारे गुरुओं की साधना को नमन करते हैं और एक तुम हो जो इनका तिरस्कार कर रहे हो। इन्होंने यहाँ आकर कृपा की है यदि आगे कुछ बोले तो तुम्हारी खैर नहीं है। मंदिर की एक-एक ईंट उखाड़ दी जाएगी।' तब जाकर उन्हें चुप होना पड़ा। मुनि तदपि मौन रहे। परन्तु श्री मदनलाल जी म. को जैनों में बढ़ती असहिष्णुता का गहरा मलाल हुआ।

आगे मुनिमण्डल दो दिशाओं में गया। श्री वृद्धिचन्द जी म. ठाणे चार से अपनी जन्मभूमि बगडूंदा की ओर गए। यहाँ से उन्हें गोगूंदा चातुर्मासार्थ जाना था। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. कुछ छोटे-छोटे गांवों को फरसकर भुआना में एक कल्प तक विराजे। वहाँ से उदयपुर पधारे। चातुर्मास करना था। सोने पर सुहागा यह हुआ कि उनके साथ ही श्री चम्पालाल जी म. का चातुर्मास भी हुआ। ये श्री धर्मदास जी म. की सम्प्रदाय के प्रमुख संत थे। ठाणे सात में दीक्षा वृद्ध थे श्री

नन्दलाल जी म., प्रवचनकार थे श्री चंपालाल जी म.। श्री ताराचन्द जी म., श्री रामचन्द्र जी म., श्री सौभाग्यमल जी म., श्री सूरजभान जी म., श्री पूरणमल जी म. (बाबा जी म.) साथ में थे। पंचायती नौहरे में कुल ग्यारह संतों का चातुर्मास अद्‌भुत रूप से सफल रहा था। अलग-अलग स्थान भी थे। पर ये सबका सांझा था। संतों का आपसी तालमेल कमाल का था। श्री मदनलाल जी म. को श्री चंपालाल जी म. ने विशेष प्रभावित किया। एक चोल-पट्टा, एक चादर इतनी अल्प उपधि, बुलन्द आवाज, प्रभावी प्रवचन सब कुछ लाजवाब था। श्री मदनलाल जी म. ने उनकी प्रवचन शैली को अपनाना प्रारंभ किया। वे भी लघुमुनि को प्रवचन के टिप्स देते थे। कहते थे– 'निःसंकोच, निडर होकर बोलो। श्रोताओं से ज्यादा मैं जानता हूँ, यह आत्मविश्वास मत खोना।' लघुमुनि के प्रति अपनी प्रसन्नता को अभिव्यक्त भी कर देते थे ताकि मनोबल में वृद्धि हो। श्री मदनलाल जी म. प्रवचन की ऊँचाईयों पर पहुँचकर भी अपने प्रारंभिक आईडियल का आभार मानते रहे।

बाबा पूरणमल जी म. ने दीर्घ तपस्या की तथा चार महीने तक का मौन रखा। पंजाब सम्प्रदाय के चारों मुनियों से बोलने का आगार रखा।

पूज्य श्री छोटेलाल जी म. समवायांग सूत्राधारित प्रवचन पहले करते, बाद में श्री चम्पालाल जी म. सूत्र कृतांग के अनुसार तथा मल्लिनाथ की ढाल सुनाते थे। श्री मदनलाल जी म. भी खुलकर प्रवचन क्षेत्र में उतरे।

मध्याह्न में भगवती सूत्र की वाचना होती जिसमें तत्वज्ञ तथा जिज्ञासु श्रावक भी भाग लेते थे। वाचना श्री चंपालाल जी म. फरमाते तथा शंकाओं का समाधान पूज्य श्री नाथूलाल जी म. करते। कई बार आगम की कोई गुत्थी उलझती तो संत परस्पर चर्चा करते रहते पर श्री नाथूलाल जी म. चुप रहते। जब श्री चंपालाल जी म. उनसे सवाल करते तो वे समाधान दे देते। चंपालाल जी म. तब मीठी डांट लगाते– 'तू इतनी देर तक क्यों नहीं बोला?' तो श्री नाथूलाल जी म. विनम्रतापूर्वक फरमाते– 'आपकी आज्ञा के बिना मैं क्या बोलता?' इतना निरभिमान व्यक्तित्व श्री मदन मुनि जी म. के लिए सात्विक हर्ष का कारण था।

श्री चंपालाल जी म. प्रवचनों में फरमाते हम ग्यारह संतों में पंडित तो श्री नाथूलाल जी म. हैं।

श्री मदनलाल जी म. ने इस वर्ष भी पचोला किया। वहाँ के श्रावक रतनलाल मेहता से सौ थोकड़े सीखे। 8-9 संतों ने श्रावक जी के ज्ञान भण्डार का लाभ उठाया। श्री छोटेलाल जी म. ने 500 तथा श्री नाथूलाल जी म. ने 250 थोकड़े याद किए।

श्री नाथूलाल जी म. ने श्री मदनमुनि जी म. को उत्तराध्ययन का शब्दार्थ और भावार्थ याद कराया।

उस चातुर्मास की मधुरता के बीच छोटी सी अप्रियता भी बनी। हुआ ऐसा कि संवत्सरी के निकट 'जैन प्रकाश' में समाचार छपा कि श्री लाल जी म. बाईस सम्प्रदाय के आचार्य हैं। ये शब्द जन चर्चा का विषय बन गया था या बना दिया गया। श्री चंपालाल जी म. ने प्रवचन में ये बात उछाल दी। कहने लगे– "वे एक सम्प्रदाय के आचार्य हैं, बाईस के नहीं।" फिर अपनी बात के समर्थन में श्री छोटे लाल जी म. को पेश करने लगे। पूछा– "क्या वे आपके भी आचार्य हैं?" श्री छोटे लाल जी म. मौन रहे। फिर उन्होंने अपने चहेते श्री मदन मुनि जी से पूछ लिया तो उन्होंने बेझिझक साफ-साफ कह दिया– "हमारे पूज्य तो श्री सोहन लाल जी म. हैं।" एक ही झटके में श्री चंपालाल जी म. की जीत व श्री लाल जी के पक्ष की किरकरी हो गई। पर बाद में प्रबुद्ध श्रावकों ने जतलाया कि आपको अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं करनी चाहिए थी। उन्हें भी लगा कि चुप रहना बेहतर होता।

उदयपुर के संदर्भ में श्री मदनलाल जी म. ने जो बाह्य जानकारियां संगृहीत की तथा स्थायी रूप से सुरक्षित की उनमें से कुछ इस प्रकार थी। महाराणा प्रताप के 25 हजार सैनिकों के लिए बारह साल तक का वेतन, भोजन देने वाला दानवीर सेठ भामाशाह जैन था। उनके वंशजों में अंबालाल जी कावेड़िया चौमासे में उनके काफी निकट रहा। चौमासे में विशेष जिम्मेदारी निभाने वाले श्रावकों में दीवान बलवन्त सिंह जी कोठारी, जगन्नाथ मेहता तथा नगर सेठ बाफना का नाम मुख्य था।

उदयपुर के महाराणा फतेहसिंह जी संतों के प्रति श्रद्धाशील थे। उन्होंने चालीस साल की आयु में ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण कर लिया था। राज्य की ओर से पर्यूषणों के आठ दिनों में कत्लखाने बन्द रहते थे। सब्जी के बाजार व भट्टियां भी बन्द रखने जरूरी थे। जिस रोड पर जैनों का पंचायती नोहरा था उस रोड से कोई कसाई पशुओं को मारने वास्ते नहीं ले जा सकता था। कोई उस उद्देश्य से ले जाता तो 'अमारिया' घोषित हो जाता, उसे अभयदान देकर पशुशाला में छोड़कर आना पड़ता तथा पशु को लाने वाले व्यक्ति को राज्य की तरफ से दण्ड का प्रावधान था।

चातुर्मास की सानन्द पूर्ति हुई। प्रेम-सौहार्द की भावना को पुष्ट करते हुए श्री चंपालाल जी म. व श्री बाबा पूरणमल जी म. गुरुदेव को चित्तौड़गढ़ तक छोड़ने आए। शेष पांच मुनिराजों का मालवा की ओर विहार हुआ। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. के नेतृत्व में मुनि मंडल ने वही मार्ग अपनाया जिस मार्ग से आगमन हुआ था। ब्यावर, अजमेर, किशनगढ़, जयपुर और पुनः अलवर। जयपुर से अलवर के मार्ग में लगभग वही परेशानियां आई जो पिछले विहारों में आई थी। बल्कि एक नई घटना और घटी। जयपुर अलवर दोनों रियासतों की सीमा पर बसवा गांव में चारों संत ठहरे थे। अगले रोज दोपहर का आहार लेकर विहार किया। कुछ दूर जाकर सूखी नदी थी। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. तथा राधाकृष्ण जी म. आगे बढ़ गए पर श्री नाथूलाल जी म. व श्री मदनलाल जी म. शौच निवृत्ति के लिए रुक गए। स्वच्छ निर्दोष, स्थण्डिल जगह देखकर बैठ गए। तभी कुछ 'नागा' लोग वहाँ पहुँच गए, पास ही उनका डेरा था। वे हथियारों से लैस थे। दोनों महापुरुषों को भला बुरा कहने लगे। बोले— 'या तो इस जगह को साफ करो वर्ना तुम्हें जान से मारेंगे। परिष्ठापित मल को मुनि कैसे साफ करते? मना करना पड़ा। क्रुद्ध सशस्त्र नागाओं ने दोनों को पकड़ लिया और अपने डेरे में ले गए। काफी साथियों को बुला लिया। सबने निर्णय लिया, दोनों को माता की भेंट चढ़ा दें। श्री मदनलाल जी म. को ठेठ सर्दी में पसीने छूट गए। इस निर्जन में किसे पुकारें,

किसके आगे फरियाद करें? पूज्य श्री नाथूलाल जी म. ने लघुमुनि को आश्वस्त किया– "घबराता क्यों है? नवकार मंत्र का शरणा ले, चिन्ता मत कर, सब संकट टल जाएगा।" कहकर स्वयं ध्यानासीन हो गए। श्री मदनलाल जी म. नागाओं की गतिविधियों पर पैनी नजर रखे हुए थे। उन्होंने शस्त्र तैयार किए। अगली कार्यवाही करने ही वाले थे कि एक लम्बा, विशालकाय, वृद्ध पुरुष न जाने कहीं से अचानक आया जिसकी दाढ़ी सफेद, वस्त्र भी सफेद, चेहरा प्रभावशाली था। बिना किसी से पूछताछ किए नागाओं के बीच चला गया। आदेशात्मक भाषा से बोला– "इन जैन संतों को क्यों पकड़ रखा है?" नागा कुछ नहीं बोले तो उसने फिर कहा– "छोड़ो इन्हें, ये जैन साधु हैं। रात को सफर नहीं करते।" उस दिव्य पुरुष के समक्ष नागा हतप्रभ हो गए। कुछ बोल ही नहीं सके। फिर उसी पुरुष ने गुरुओं से विनती की– "चलो महाराज, आपको देर हो रही है, सफर लम्बा है, ये लोग नादान हैं।" संतों की जान मे जान आई, तत्काल चल दिए। कुछ दूर जाकर पीछे मुड़कर देखा तो वह पुरुष अदृश्य हो चुका था। कौन था? कहाँ से आया था? इन जिज्ञासाओं का समाधान कौन करता? पड़ाव पर पहुँचकर पूज्य श्री छोटेलाल जी म. को सारा वृत्तान्त सुनाया तो उन्हें भी राहत मिली।

अलवर पहुँचने पर पूर्व परिचित श्री देवीलाल जी म. (जावरा वालों) से पुनर्मिलन हुआ। पूज्य श्री मदनलाल जी म. उनकी प्रभावना शक्ति से विशेषतः प्रभावित थे। उनके प्रवचनों की सर्वत्र धूम होती थी और वे पंजाब की ओर विहार कर रहे थे क्योंकि जम्मू में उनकी सम्प्रदाय के नव आचार्य श्री मन्नालाल जी म. का चादर समारोह होने जा रहा था।

पूज्यपाद श्री छोटेलाल जी म. अपना अगला चातुर्मास संवत् 1974 सन् 1917 का अलवर का स्वीकार कर दिल्ली की ओर जा रहे थे अर्थात् लौटने का मन बनाकर। वापसी का मन इसलिए बनाया क्योंकि पंजाब सम्प्रदाय के साधु-साध्वियों में कुछ वैमनस्य सा उत्पन्न होता जा रहा था उससे बचने के लिए यह निर्णय लिया था। वैमनस्य की ये भूमिका

थी कि आ. श्री सोहनलाल जी म. ने एक जैन तिथि पत्र (पंचांग) इस आशय से तैयार किया था ताकि लौकिक पंचांगों की अधीनता के कारण होने वाले पर्वों की भिन्नताएं दूर हो जाएं। लेकिन अखिल भारतीय स्तर पर उनका आदेश लागू नहीं हो सकता था। वे केवल पंजाब प्रांत के ही आचार्य थे। जिन मुनियों का विचरण पंजाब से बाहर होता था उन पंजाबी संतों के लिए विकट समस्या थी। अपने संघ की एकता को देखते हुए पत्री को मानना अभीष्ट था लेकिन अन्य प्रान्तों में विचरते हुए वहाँ की व्यवस्थाओं को स्वीकार करना आवश्यक था। अन्यथा हर गांव नगर में विवाद, विषमता का वातावरण बनता। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. आदि दस बारह मुनियों का जन्म राजस्थान की भूमि पर हुआ था, उधर का विचरण होता था। अतः वहाँ की व्यवस्था में ढलना उनकी मजबूरी थी। पू. श्री सोहनलाल जी म. इस बात से असंतुष्ट थे। बड़ों का असंतोष छोटों को बहुत भारी पड़ता था। अतः पूज्य श्री छोटेलाल जी म. ने एक बीच का समझौता फार्मूला पेश किया था कि जब हम श्री मयाराम जी म. के गण के मुनिराज घग्घर नदी की सीमा तक रहेंगे तब तक हर कार्य पत्री के मुताबिक करेंगे। घग्घर से निकलने के बाद हमें लौकिक पंचांग के अनुसार चलने की अनुमति चाहिए। परन्तु आचार्य श्री जी इसके लिए भी रजामंद नहीं हुए। पंजाब के सभी वरिष्ठ मुनिराज श्री लालचन्द जी म. तथा पंजाब प्रवर्तिनी श्री पार्वती जी म. इस फार्मूले के पक्षधर थे। पर आज्ञा तो आचार्य श्री की चलती है। श्री मदनलाल जी म. उभरती प्रतिभा के धनी थे। अतः होने वाले प्रत्येक घटनाक्रम पर जागरूक दृष्टि रखते थे। अपने गुरुओं के साथ दिल्ली पधारे। चांदनी चौंक रुककर सदर बाजार में रुके। पिछली बार सदर बाजार में परिवार की ओर से जबरदस्त हंगामा हुआ था और शीघ्र ही प्रस्थान करना पड़ा था। इस बार भी हलचल हुई तो पर धीमी फ्रीक्वैंसी की। पूज्य श्री मदनलाल जी म. बाजार से निकल रहे थे कि घर वालों ने किसी के जरिए कहलवाया— 'घर वापस आ जा तेरे साथ पूर्ववत् ही व्यवहार किया जाएगा कोई फर्क नहीं मानेंगे।' पूज्य महाराज

श्री ने बात को अनसुना कर दिया, कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की। उधर से कुछ लेना देना ही नहीं था फिर चर्चा कैसी?

"अपना ही फैसला था घर छोड़ के चले,
मुड़-मुड़ के फिर ये क्यों दरो दीवार देखना।"

कुछ दिन सदर में लगे पूर्णतया अनासक्त भाव से। अलवर पहुँचना था रिवाड़ी होकर रास्ता लिया। इस बार का अनुभव कम सुखद था। वहाँ एक निर्माणाधीन जैन मंदिर में किसी सामान्य भाई की आज्ञा लेकर ठहर गए। शाम को देखा तो साम्प्रदायिक कट्टरता उभर आई। "एकदम निकलो" का फरमान जारी कर दिया। गुरुदेवों ने समझाया कि रात भर ठहरना है दिन निकलते ही चले जाना है। तुम भी जैन हो और हम भी, फिर इतना विरोध क्यों? पर वे लोग नहीं माने। मुनियों ने अपना भण्डोपकरण समेटा और मंदिर से बाहर आ गए। पास ही कोई छप्पर था उसमें डेरा डाल लिया। मुनियों की रात समता से कटी परन्तु रात में उस मंदिर का शिखर फट गया। क्यों? भगवान जाने। मुनियों ने मन में उन श्रावकों का धन्यवाद दिया कि हमें जबरन निकाल कर किसी बड़े हादसे से बचा दिया। श्री मदनलाल जी म. का मन तो साम्प्रदायिकता से बगावत करता था।

चलते-चलते बावल आए। आहार की किल्लत इतनी कि सुबह से दोपहर तक ढूंढने पर भी मुनियों को आहार उपलब्धि नहीं हुई। पूज्य श्री नाथूलाल जी म. अन्ततः दो मोटे सूखे रोट लेकर आए और गले से नीचे उतारने वास्ते कुछ छाछ। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. ने मुनियों से कहा– "अभी कुछ विश्राम या स्वाध्याय कर लो, घंटे बाद तुमको कलाकंद मिलेगा।" थकान झपकी लेकर मिटाई और कलाकंद के मीठे-मीठे सपने भी लिए। इसी बीच श्री छोटेलाल जी म. ने दोनों रोट छाछ में भिगो दिए, घंटे भर में वो मुलायम हो गए। थोड़ा-थोड़ा अंश मुनियों को बांट दिया। भूख की वजह से बड़ा स्वाद आया। पर कलाकंद की तमन्ना तो रह ही गई। श्री मदनलाल जी म. ने पूछ ही लिया– 'गुरुदेव कलाकंद

नहीं खिलाया।' बड़े म. ने हंसकर कहा– "क्या इसमें कलाकंद जैसा मजा नहीं आया।" हंसकर ही जवाब दिया– "हाँ! स्वाद तो कलाकंद से भी ज्यादा आया।" जगह-जगह इस तरह के कलाकंद का रसास्वादन करते हुए अलवर पहुँचे। लाला धर्मचन्द गूजरमल सुजंती की कोठी में चातुर्मास किया। भरपूर धर्म ध्यान हुआ। श्री मदनलाल जी म. ने अपने गुरुदेवों से शास्त्र स्वाध्याय के गहन तत्व ग्रहण किए।

अलवर चातुर्मास में ही आचार्य श्री सोहन लाल जी म. ने श्री मयाराम जी म. के मुनियों से पत्री मान्य न करने के कारण संबंध विच्छेद कर दिया। उन मुनियों में गणावच्छेदक श्री जवाहर लाल जी म., श्री छोटेलाल जी म., श्री जड़ावचन्द्र जी म. तथा उनका शिष्य-प्रशिष्य परिवार शामिल था। पूज्य श्री लाल चन्द्र जी म. एवं श्री पार्वती जी म. का परिवार संबंध-विच्छेद से बचा रहा क्योंकि इस वर्ष वे पंजाब में ही विहार कर रहे थे तथा वहाँ पत्री को अमान्य करने का कोई कारण नहीं था। तथापि उनका समर्थन पूज्य श्री मयाराम जी म. के मुनियों के साथ था। श्री मयाराम जी म. के मुनियों का पहला निर्णय यह था कि हम संघ भेद करके नया संगठन और संगठन का आचार्य नहीं बनाएंगे। दूसरा ये कि जब तक आचार्य जी संतुष्ट नहीं हो जाते तब तक चातुर्मास-दीक्षा आदि की आज्ञा स्थविरों के तहत होगी। पूज्य श्री छोटे लाल जी म. अलवर चातुर्मास पूर्ण कर हरियाणा के बांगर संभाग में विचरे और श्री मदन मुनि जी म. उनके सान्निध्य में। म. श्री साथ का लाभ लेते हुए जीवन निर्माण की उच्च भूमिकाओं पर आरोहण करते रहे।

ततो जयमुदीरयेत्

श्री मदनलाल जी म. ने चार साल में आगमिक, लौकिक अध्ययन इस स्तर का प्राप्त कर लिया, जिसके बलबूते पर बड़े संत उन्हें प्रवचन का, विशेषतः सूत्रस्पर्शी प्रवचन का दायित्व सौपने का मन बनाने लगे। संवत् 1975 सन् 1918 का चातुर्मास दिल्ली चांदनी चौंक होना था। वहाँ आगमों के श्रोता अधिक होते थे, कथा-कहानी के श्रोता कम। समग्र भारत में ये प्रसिद्धि थी कि जिस साधु-साध्वी को चांदनी चौक वाले उत्तीर्ण कर दें वह सर्वत्र उत्तीर्ण माना जाता था। इस चातुर्मास में गुरुदेवों ने श्री मदनलाल जी म. की ड्यूटी सूत्र सुनाने की लगाई तो उन्हें सौ फीसदी अंक मिले क्योंकि समग्र समाज को उनकी व्याख्या शैली, प्रस्तुति सरस और सरल प्रतीत हुई। प्रचुर धर्म-ध्यान हुआ परन्तु दशहरे के बाद दीपावली तक दिल्ली में प्लेग ने कहर ढा दिया। घर-घर में मृत्यु का ताण्डव नृत्य होने लगा। बुजुर्ग, जवान, बाल, वृद्ध, पुरुष, महिलाएं देखते-देखते ही काल कवलित होने लगे। शव ज्यादा थे संस्कार करने वाले कम। दिल्ली की साढ़े तीन-चार लाख की आबादी में से ग्यारह सौ मृत्युएं चन्द दिनों में हो गई। परिवार के परिवार चिताओं पर सो गए। एक घटना विशेष रूप से चर्चित रही। चांदनी चौंक का एरिया फतेहपुरी से लाल किले तक का माना जाता है। उन दिनों सड़क के बिल्कुल बीच में एक पटरी बनी हुई थी जिस पर पठानों की दुकानें होती थी, जो प्रायः मेवा बेचा करते थे। पटरी के नीचे नहर थी। नहर पर बड़े-बड़े सघन छायादार वृक्ष थे जिनसे प्रकृति और बाजार का सौन्दर्य सुरक्षित रहता था। लेकिन सरकार का मंसूबा और था। वृक्षों को काट-काटकर नहर को पाटकर या तो चौड़ी सड़क बनाई जाया या ट्राम चलाई जाय। सबसे पहले

एक मुसलमान ठेकेदार ने वृक्ष काटने का ठेका लिया और बड़ी जल्दी सारे पेड़ नेस्त नाबूद हो गए। उस धंधे में उस मुस्लिम भाई को खासी आमदनी हुई। लेकिन प्रकृति की विचित्र विडम्बना थी कि उस प्लेग में उसका सारा परिवार खत्म हो गया। श्री मदनलाल जी म. ने इस तरह की हृदय विदारक घटनाओं के माध्यम से कर्मादान जैसे हिंसा शोषण प्रधान व्यवसायों का परित्याग करवाया।

दीपावली बाद पूज्यपाद श्री छोटेलाल जी म. की पावन शरण में एक युवक आया, जिसका नाम था बलवन्त राय, जिसे बाद का युग 'भण्डारी जी म.' के नाम से पुकारा करता, जिन्होंने सेवा और वैयावृत्य को एक मिशन बनाकर जीवन जीया।

लुहारा सराय (अमीनगर सराय) में जन्म, प्रजापति परिवार, पिता यादराम, मां मामकौर ये स्वल्प सा परिचय था। परिवार को सूचित किए बिना ही दिल्ली आया था क्योंकि घरवालों की अनुमति की संभावना नहीं थी। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. ने उनके घर पर बच्चे के आने का समाचार भिजवा दिया तथा निर्णय लिया कि जब तक आज्ञा नहीं मिलती तब तक साथ रहेगा। आज्ञा मिलने पर दीक्षा दे दी जाएगी। चातुर्मास के पश्चात् यू.पी. के कुछ प्रमुख क्षेत्रों की स्पर्शना हुई। उसके बाद हरियाणा का खादर संभाग लाभान्वित किया। वैरागी श्री बलवन्त राय ने अपनी भावना को परिपक्व बनाने के लिए मुनियों के साथ भिक्षाचर्या को जाना शुरू कर दिया। रिंढाणा आए हुए थे। एक प्रमुख श्रावक जुगलाल जी ने परामर्श दिया कि भले ही आज्ञा से पूर्व इस युवक को दीक्षा मत दो पर साधु का वेष पहना दो। रजोहरण पर निसीतिए (वस्त्र) का प्रयोग ना करो ताकि साधु और श्रावक का अन्तर ज्ञात होता रहे। संभव है परिवार वाले मुनि वेष से प्रभावित हो कुछ नरम पड़ जाएं। सलाह उचित थी और उसका सुपरिणाम भी आया। वेश से प्रभावित हो परिवार वालों ने आज्ञा दे दी। रोहतक में ही श्री मदनलाल जी म. को एक विलक्षण महापुरुष के दर्शन का सौभाग्य मिला, जिन्होंने बाद में पंजाब के जैन साधु-साध्वियों की, संघ

की बागडोर संभाली। वे थे युवाचार्य श्री काशीराम जी म.। उनके तप-त्याग की चर्चा जन-जन के मुख पर थी। रोबीला व्यक्तित्व, सिंह समान दुर्धर्ष। रोहतक का हर श्रद्धालु नर नारी उनकी एक झलक पाने को बेताब नजर आया। हर श्रोता उनके प्रवचनों से प्रभावित था। श्री मदनमुनि जी म. उनके सर्वांगीण व्यक्तित्व के कायल बने।

रोहतक से देहली फरसते हुए फिर यू.पी. का विचरण हुआ। वहीं खट्टा गांव में वैशाख वदी अष्टमी संवत् 1976 (सन् 1919) के दिन श्री बलवन्त राय जी को दीक्षा पाठ पढ़ाकर पूर्ण साधुत्व प्रदान कर दिया। गुरुदेव बने पूज्यपाद दृढ़ अनुशास्ता श्री छोटे लाल जी म.।

चातुर्मास के लिए रोहतक पधारना था अतः यू.पी. का भ्रमण शीघ्र पूरा किया। संवत् 1976 का चातुर्मास धर्म-ध्यान की दृष्टि से तो प्रभावशाली रहा ही विशेष उपलब्धि रही वैरागी मूलचन्द के रूप में। देहरा गांव, सुनार परिवार से संबद्ध श्री मूलचन्द जी तीन साल बाद रोहतक में ही पूज्यपाद सरलात्मा श्री नाथूलाल जी म. के द्वितीय शिष्य के रूप में दीक्षित हुए तथा श्री मदनलाल जी म. के गुरुभ्राता बने।

रोहतक चातुर्मासानन्तर पुनः राजस्थान की ओर कदम बढ़े। राजस्थान का चुम्बक तत्कालीन मुनियों के लिये अधिक शक्तिशाली बना हुआ था जिसके कारण पुनः पुनः उधर ही रूख और मुख हो जाते थे। अलवर होते हुए जयपुर पहुंचे ही थे कि गति अवरुद्ध हो गई। पूज्यपाद श्री छोटे लाल जी म. के पैर में ऐसा कांटा लगा कि निकल नहीं पाया और घाव गहरा बन गया। जहर सा फैलने लगा, स्थिति इतनी गंभीर सी बन गई कि पैर गंवाने की नौबत आ सकती थी । ईलाज वास्ते न केवल ठहरे बल्कि चातुर्मास भी करना पड़ा। चातुर्मास के बाद भी रुकना पड़ा। उस साल श्री खूबचन्द जी म., जो हुक्मी गच्छ के श्री मन्नालाल जी म. के दल के प्रमुख थे, का चातुर्मास भी साथ था। इधर शारीरिक व्याधि रही उधर सामाजिक उपाधि भी बनी। अतः गहन समाधि का अभाव रहा। सामाजिक उपाधि का कारण था श्री हुक्मीगच्छ का विभाजन। एक दल श्री लाल जी म. का बना दूसरा श्री मन्नालाल

जी म. का। भक्त भी दो दलों में बंट गए थे। जयपुर श्री संघ भी इस बात को लेकर खींचतान का शिकार रहा। श्री लाल जी म. का अनुयायी वर्ग इस बात से खफा था कि श्री खूबचन्द जी म. का चातुर्मास क्यों है? उन्होंने चातुर्मास का बहिष्कार सा किया। ये विषमता पूज्य श्री मदनलाल जी म. को विशेष रूप से खलती थी। पंजाब सम्प्रदाय के ये संत उनके साथ पूर्ण तालमेल के साथ रहे परन्तु पारिवारिक फूट के कारण श्रावक अनावश्यक रूप से कषाय बढ़ाते रहे। ऐसी स्थिति में सामायिक पौषध, शास्त्र वाचन, रौनक कितनी ही अधिक हो जाय पर मन को समाहित नहीं कर पाती।

जयपुर में हुई एक व्यक्तिगत घटना का लेखन पूज्य श्री मदनलाल जी म. ने अपनी कलम से किया है। वही उद्धृत है– "मैं बड़ों से छिपकर कभी-कभी नसवार सूंघने लगा। धीरे-धीरे उसका शौक लग गया। ये बात कब तक छिपती। अन्ततः बड़ों को पता लग गया कि मदन मुनि नसवार का प्रयोग करता है। बड़े म. श्री छोटे लाल जी म. काफी क्षुब्ध हुए। श्री नाथूलाल जी म. भी बचाव नहीं कर सके। जब बड़ों ने पूछा तो मैंने अपनी भूल स्वीकार कर ली।"

"कडं कडेत्ति भासिज्जा अकडं नो कडे त्ति य"

भूल की हो तो हाँ भरनी है, न की हो तो मना करना है।

आगे नसवार का सेवन न हो, इस सुधार की भावना से दण्ड देकर पिछली गलती की शुद्धि की गई।

जयपुर के एक वर्षीय प्रवास में शास्त्राध्ययन का क्रम बहुत सुन्दर चला। एकदा अध्ययन के दौरान आगम का एक स्थल मिला जिसके संबंध में यह ज्ञात हुआ कि उसकी विधिवत् आराधना करने से देवता सिद्ध हो जाता है। श्री मदनलाल जी म. के मन में धुन सवार हो गई। पाठ की विधि, सहवर्ती तपस्या, आवश्यक सावधानी, सबकी जानकारी लेकर जाप प्रारंभ कर दिया। संकल्प बल से आगे बढ़े तो अनुभूति होने लगी कि देव-सिद्धि निकट

है। सर्प जैसे भयोत्पादक जन्तु आसन के इर्द-गिर्द दिखने लगे पर ये तो निर्भीक हो अपने लक्ष्य के प्रति अविचल चलते रहे। पूर्ति में तीन-चार दिन शेष हैं ऐसी भी अनुभूति हुई। प्रसन्न वदन हो पूज्य गुरुदेव श्री नाथूलाल जी म. से निवेदन किया– "गुरुदेव आपकी कृपा से कार्य सफल होने वाला है। देवसिद्धि निकट है। लक्षण दिखाई देने लगा है।" सुनकर श्री नाथूलाल जी म. गंभीर हो गए। शाबासी देने की बजाय सावधानी देते हुए बोले– "मुनि जी, साधु को आत्मा वश में करनी है, देवता नहीं। देव सिद्धि प्रायः प्रमाद और असंयम को बढ़ा देती है।" अपने आराध्य पूज्य गुरुदेव के इंगित को समझते हुए पूज्य श्री मदनलाल जी म. बोले– "मेरे लिए आपकी आज्ञा भगवदाज्ञा है। मैं अभी से इस पाठ को रोक देता हूँ। यदि आप की आज्ञा के विपरीत देव-सिद्धि हो भी जाएगी तो अनर्थ का कारण बनेगी। देवसिद्धि के बिना भी गुर्वाज्ञा से जीवन की विघ्न बाधाएं टलती रहेंगी।" और तत्काल ही वह देवसिद्धि वाला पाठ बीच में ही रोक दिया।

चातुर्मास पूर्ण हुआ। फिर भी दो महीने और रुके क्योंकि चलने की शक्ति नहीं आई थी।

ठीक होने पर हरियाणा की ओर कदम बढ़ाए अथवा कहें कि बढ़ाने पड़े। पंजाब जैन संघ की स्थिति विस्फोटक बनती जा रही थी, अतः अपने गण के मुनियों से विचार विमर्श भी करना था, साथ ही उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. का विचार भी लेना था। पहले अलवर आए। वहाँ की समाज को मानो नवनिधियां मिल गई। विनती ही नहीं, पूरा आग्रह किया कि आगामी चातुर्मास अलवर को प्राप्त हो। अन्ततः आश्वासन देकर ही विहार संभव हुआ। भिवानी पहुँचे। तब तक तो श्री मदनलाल जी म. की प्रवचन कला निखार पर आ चुकी थी। मन में उत्साह था, समाज के लिए कुछ करने की तड़फ थी, चाहते थे जैन समाज को व्यापक पहचान मिले। उनके प्रवचन भिवानी वालों ने सुने तो समाज प्रमुखों ने सोचा कि म. श्री के प्रवचन जैनोपयोगी न होकर सर्वजनोपयोगी हैं। अतः बड़ों से विनती की कि इनका सार्वजनिक

प्रवचन करवाया जाय। बड़े संत सहर्ष राजी हो गए। पच्चीस वर्षीय युवा मुनिराज श्री मदनलाल जी म. भिवानी में आम जनता के बीच जब बोलने लगे तब सभा में हजार के लगभग बैठे श्रोता सुनकर स्तब्ध व चकित रह गए। स्पष्ट भाषा, बेबाक शैली, नवरस रूचिर प्रस्तुति, बुलंद आवाज, सटीक सर्वजनोपयोगी मुद्दे। जनता भाव-विभोर हो गई। जैन समाज को एक योग्य कर्णधार मिल गया था। गुरुओं को अपने मुनि पर गर्व था। उत्तर भारत में जैन संतों में आम व्याख्यान Public speech की शुरुआत सन् 1920 में पूज्य श्री मदनलाल जी म. ने भिवानी में की थी।

इस इतिहास संरचना के साथ दूसरा इतिहास श्री मदनलाल जी म. के जीवन में स्वतः ही निर्मित हो रहा था। उस युग की दिव्य-विभूति, प्रज्ञा-पुरुष उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. से प्रथम मिलन इतिहास का मंगल मुहूर्त था। वे अपने गुरुदेव श्री शालिग्राम जी म. की निश्राय में आए थे। साथ ही पंजाब संघ के सर्व वरिष्ठ मुनिराज श्री लालचन्द जी म. तथा श्री हेमचन्द जी म. भी थे। सांघिक विचार विमर्श तो वरिष्ठ मुनियों के मध्य ही होना था पर आत्मीयता की स्थापना हुई इन दो महापुरुषों में। दोनों ने परस्पर को समझा और पहचाना तथा एकमेक हो गए। आयु का दीर्घ अन्तर इस आन्तरिक निकटता में बाधक नहीं बना। उपाध्याय श्री जी की विद्वत्ता व इनकी उर्जा एक दूसरे की पूरक बनने को बेताब थी। सांघिक विकास तथा पंजाब की समस्या के समाधान की अधिकारिक मंत्रणा बड़ों में हुई तो मैत्री स्तर पर दोनों में हुई। पत्री और परम्परा दोनों का टकराव चरमोत्कर्ष पर था। परम्परावादियों का भिवानी में यह लघु मिलन था। श्री मयाराम जी म. के पारिवारिक तीन गणावच्छेदकों की टोलियां थी। गणावच्छेदक श्री जवाहर लाल जी म. के प्रतिनिधि श्री बनवारी लाल जी म. ठाणे-2 गणावच्छेदक श्री छोटेलाल जी म. ठाणे पांच तथा गणावछेदक श्री जड़ावचन्द जी म., तपस्वी केसरी सिंह जी म., श्री अमीं लाल जी म. श्री रामजीलाल जी म. ठाणे चार थे। आचार्य श्री मोतीराम जी म. के परिवार से श्री आत्माराम जी म. ठाणे चार थे। विचारणीय विषय था आचार्य श्री सोहनलाल जी म. द्वारा

लिए गए निर्णय। दो साल पहले श्री मयाराम जी म. के परिवार से संबंध विच्छेद करने के बाद इस साल महासाध्वी श्री पार्वती देवी जी म. भी संघ से निष्कासित कर दी गई थी। उस कारण से समग्र समाज में उबाल सा आया हुआ था। पू. आचार्य श्री अमर सिंह जी म. के जमाने से जिस साध्वी ने स्थानकवासी परम्पराओं को बचाया था, जो बड़े-बड़े संतों से ज्यादा अहमियत रखती थी, उसका निष्कासन समाज के लिए असहनीय हो गया था। श्रावक समाज भी दो फाड़ होता जा रहा था। गृहस्थों के पारिवारिक रिश्ते टूटने के कगार पर थे। इस विषम स्थिति को संभालने के लिए मुख्य मुनिराजों ने आचार्य श्री जी की पूर्ण गरिमा को सुरक्षित रखते हुए पत्र लिखा था कि आप श्री जी ने महासती जी को किस कारण से निष्कासित किया है? इसके अतिरिक्त और कोई कदम उस समय नहीं उठाया।

भिवानी में तीसरा महत्वपूर्ण अध्याय पूज्य श्री मदनलाल जी म. के साथ और जुड़ा। वह था– "जैन समाज की शाखा तेरापंथ के प्रश्नों का समाधान।" उस जमाने में इस पद्धति को वाद-विवाद या शास्त्रार्थ कहा जाता था। इस शास्त्रार्थ के पीछे कारण यह भी था कि भिवानी में पांच-छः महीने पहले दोनों सम्प्रदायों का चातुर्मास था। इधर गणावच्छेदक श्री जड़ाव चन्द्र जी म., श्री केसरी सिंह जी म. ठाणे चार थे और उधर तेरापंथ के आचार्य श्री कालूगणी जी म. आदि। समीपवर्ती समाज होने से पारस्परिक चर्चाएं होती रहती थी। कभी-कभी सीधे शास्त्रार्थ होने की परिस्थिति भी तैयार हुई तो टल गई। तेरापंथ की मान्यताओं का सनातन धर्म तथा आर्य समाजियों की ओर से विरोध होता रहा था। दयाधर्म की व्याख्या कारण थी। इस मुनि समागम के समय वे चर्चाएं पुनः जोर पकड़ गई। पू. गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. अपने स्वभावानुसार चर्चाओं को परिणति तक ले जाने को तैयार हो गए। उन्होंने अपनी ओर से कह दिया कि मैं उस संघ के किसी भी मुनि विद्वान् या प्रतिनिधि से शास्त्रार्थ करने को तत्पर हूँ। चारो ओर डंका बज गया। नंदराम जी के कटरे में स्थान और समय निश्चित हो गया। दो

हजार के लगभग श्रोता उस शास्त्रार्थ को सुनने या देखने को उपस्थित थे। उधर से एक विद्वान् गृहस्थ प्रतिनिधि के रूप में आया। गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. भी समय पर उपस्थित हो गए। प्रश्न आरम्भ हो गए। गुरुदेव जी म. सटीक और सतर्क शास्त्रीय उत्तर देते रहे। अन्त में उत्तराध्ययन सूत्र के नौवें अध्ययन की एक गाथा पर बहस चालू हो गई।

मासे-मासे तु जो बालो कुसग्गेणं तु भुंजए,
न सो सुयक्खाय धम्मस्स कलं अग्घइ सोलसिं।

यदि कोई मिथ्यात्वी एक-एक महीने की तपस्या भी करता है तो भी वह सम्यक्त्वी की साधना की सोलहवीं कला जितना भी मूल्य नहीं रखता।

तेरापंथ का प्रतिनिधि पुनः पुनः कहने लगा कि मिथ्यात्वी की साधना का भी तो कुछ मूल्य है। गुरुदेव ने आगम प्रमाण से कहा कि यहाँ स्पष्ट निषेध है। वह अड़ा रहा, ये समझाते रहे। मामले को निर्णायक स्थिति में न आते देख एक प्रबुद्ध सनातन बन्धु श्री बच्छूसिंह जी आगे आ गए। बोले— 'मेरी बात सुनो'— लोगों का ध्यान उस ओर हुआ। उस भाई ने एक रुपये के सोलह आने के सिक्के मंच पर रख दिए। एक-एक एकन्नी करके उठाता गया। पन्द्रह उठा ली। फिर सबको दिखाकर बोला— 'यह सोलहवीं भी उठा रहा हूँ'। उठाकर बोला— 'अब क्या बचा?' इस प्रत्यक्ष प्रैक्टिकल के आगे वह प्रतिवादी मौन हो गया। लोगों के जयकारों से गगन गूंज उठा। संघ को Public Speaker के साथ-साथ शास्त्रार्थ विजेता के रूप में गुरुदेव को पाकर अपार हर्ष हुआ। इस जय उदीरणा घोषणा के बाद गुरुदेव हाँसी पधारे। श्री बनवारी लाल जी म. तो अपने गुरुदेव श्री जवाहर लाल जी म. के पास रिंढाणा चले गए। शेष मुनिवृन्द वहीं रहा। दीवान जी की विशाल हवेली सभी मुनिराजों के अनुकूल रही। उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. के आगमानुसारी प्रवचनों को वहाँ पसन्द किया गया। दिगम्बर तथा तेरापंथ के बंधु भी उनसे ज्ञान लाभ लेने आए। हाँसी से रोहतक पहुँचे। पहले से ही धर्मप्रेमी वहाँ की जनता को उपाध्याय

श्री आत्माराम जी म. का ज्ञान खूब सुहाया और भाया। उपाध्याय श्री जी व श्री छोटेलाल जी म. का संयुक्त विचरण आत्मीय एवं मधुर रहा। अब दोनों की विचरण दिशा परिवर्तित हुई। उपाध्याय श्री जी रिंढाणा की ओर तथा पूज्य श्री छोटेलाल जी म. दिल्ली की ओर प्रस्थित हुए। मार्ग में एक धर्मशाला में बहादुरगढ़ में ठहरे। दोपहर बाद उस धर्मशाला में एक जलसे की तैयारी होने लगी। दरियां, मेज, कुर्सियां आ गई। श्री मदनलाल जी म. ने जानकारी हासिल की तो पता लगा कि आर्य समाज के प्रसिद्ध प्रचारक श्री सत्यानन्द जी यहाँ भाषण देने आएंगे। कई दिनों से शहर में मुनादी भी करवाई गई थी, काफी संख्या में जनता की उपस्थिति संभावित थी। श्री मदनलाल जी म. पूज्यपाद श्री छोटेलाल जी म. के चरणों में पहुँचे। निवेदन किया यहाँ ठहरने के बजाय अन्यत्र स्थान पर चले जायें तो ठीक रहेगा। क्योंकि आज यहाँ आर्य समाज का जलसा है, सत्यानन्द को आना है और वह अपने स्वभाव और संस्कार के अनुसार जैन धर्म की निन्दा करेगा फिर मैं चुप नहीं रह सकूंगा। बड़े म. श्री जी भी समझते थे कि मदन मुनि जैनत्व के विरूद्ध किसी भी टिप्पणी को सहन नहीं करेगा, तदपि समझाने के नाते से कहा– 'भई! हमें किसी से लड़ना थोड़े ही है। कोई कुछ भी कहे हमें क्या लेना देना?' श्री मदनलाल जी म. ने विनयपूर्वक अपना पक्ष रखते हुए कहा– "गुरुदेव अगर वह कुछ अनुचित कहेगा तो उसका उत्तर तो देना ही पड़ेगा। जैन-धर्म की बुराई मुझसे सुनी नहीं जाएगी। बेहतर यही रहेगा कि हम स्थान बदल लें।" बड़े म. कुछ देर सोचते रहे फिर बोले– "अगर जलसा न हो तो फिर तुझे ठहरने में कोई एतराज तो नहीं है?" श्री मदनलाल जी म. ने कहा– 'गुरुदेव! मेजें, कुर्सियां, दरियां आ चुकी है, पूरी तैयारी है। मुनादी भी हो चुकी है, फिर जलसा क्यों नहीं होगा? हाँ यदि जलसा नहीं होता तो बहुत अच्छा। दूसरी जगह वे कुछ भी करें मुझे कोई मतलब नहीं। अपने सामने अपने धर्म की निन्दा मैं नहीं सुन सकता। जाने क्या हुआ? थोड़ी देर बाद कुछ आदमी आकर कहने लगे– यहाँ संत महात्मा ठहरे हुए है हम जलसा कहीं और कर लेंगे।

अपना सामान उठवाया और चल दिए। वहाँ जलसा नहीं हुआ जैसा कि श्री मदनलाल जी म. के समक्ष श्री छोटेलाल जी म. ने कहा था।

सदर बाजार पहुँचे तो फिर श्री उपाध्याय आत्माराम जी म. से मिलन हुआ। साथ ही चांदनी चौंक गए। वहाँ से वे जमना पार होते हुए लुधियाना के लिए रवाना हो गए। श्री मूलचन्द जी म. की दीक्षा हुई। ठाणे छः हो गए। अलवर जाना था, दो टोलियां बना ली। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. ठाणे चार तथा श्री नाथूलाल जी म. तथा श्री मदनलाल जी म. गुरु-शिष्य युगल ठाणे दो। जेठ महीने की भीषण गर्मी में विहार प्रारंभ किए। महरौली, झाड़सा, बादशाहपुर का रास्ता अनुकूल समझकर अपनाया था पर यह पुराने दोनों रास्तों से भी अधिक कष्टपूर्ण रहा। हवादार मकान तथा प्रासुक पानी ग्रीष्म की मौलिक आवश्यकताएं है। दोनों की अनुपलब्धि ने मार्ग को दूभर बना दिया। सब जगह पीने के लिए खारा पानी मिला क्योंकि उस इलाके में बर्तन भी खारे पानी से धोये जाते थे तथा खारा पानी ही गर्म किया जाता था। दो ही तरह का पानी स्थानकवासी मुनि लेते है। कठिनाई को साधुत्व का अभिन्न अंग मान मुनि फिर भी सहते रहे और चलते रहे। 'नगीना' पहुँचने पर कुछ अनुकूलता बनी, वहाँ के लोहिया परिवार से अनुकूल आहार व पानी मिला। अन्य पड़ावों पर तो दो-दो मील से पानी लाना पड़ा था। कुछ दिन नगीना ठहरे, मौसम की प्रतिकूलता के बावजूद विहार किया। फिरोजपुर-झिरका का लक्ष्य था दूरी बारह मील अर्थात् लगभग 20 किमी. का सफर। पहले दिन आधा सफर तय करना था। नगीना से चलने में देर हो गई। बिना पानी लिए चल दिए रास्ते में मिला नहीं। सूरज चमक उठा प्यास लगने लगी। अभी तीन-चार किमी. ही चले थे कि आगे चलना कठिन प्रतीत हुआ। छः किमी. कैसे पूरे हो? यह विचार करते हुए निर्णय लिया कि आज वापस नगीना चलें और अगले रोज नए सिरे से चलें। विवशता थी अतः वापस मुड़े। रास्ते में कुछ मेव मुसलमान खड़े थे। पूछने लगे— 'महात्मा जी वापस क्यों आ गए?' संतों ने बताया कि गर्मी की अधिकता के कारण आगे नहीं जा सके। संतो की चर्या से

अनभिज्ञ उन ग्राम्य मेवों को मजाक सूझा। बोले– 'इतने मोटे-ताजे हो फिर भी गर्मी से डर गए।' इस टिप्पणी पर भी दोनों महामुनि मुस्कुराकर वापस नगीना आ गए।

अगले रोज हल्की वर्षा हो गई। तापमान गिरा। तीसरे दिन चलने के लिए दूसरा रास्ता लिया, जिसमें एक गांव में दिगम्बर घर थे। छः मील चलकर गांव आया। तब तक भयावह गर्मी हो चुकी थी। प्यास से मुंह शुष्क था। पानी खारा। एक घर से ठण्डाई मिल गई। गुरु-चरणों में प्रस्तुत की। पूज्य म. ने कहा– "मदन मुनि मुझे तो ठण्डाई का त्याग है, तुम ही पी लो। तीव्रतम पिपासा की स्थिति में उनकी समता देखने योग्य थी। लाए गुरुदेव के लिए थे पर मजबूरी में स्वयं पीनी पड़ीं फिर तेज दुपहरी में बारह बजे डेढ़ मील से गुरुदेव श्री नाथूलाल जी म. के लिए पानी लेने गए। साढ़े नौ बजे का भोजन जो लाया हुआ था बिना पानी खाया नहीं था। डेढ़ बजे पानी आया। गुरुदेव को पिलाया। फिर भी खाने की रुचि नहीं बनी। चार बजे आहार करना ही पड़ा। सारा दिन एक पात्र पानी से गुजारा किया। अगले दिन फिरोजपुर झिरका पहुँचे। वहाँ दिगम्बर जैन परिवार थे। पानी का खारापन यहाँ भी बदस्तूर था। इतने दिन खारा पानी पीते-पीते दस्त लग गए। फिर भी विहार किया। नौगावां में पल्लीवाल परिवार थे। कुछ सुविधा बनी। दो दिन रुके और परिचित गांव आए। चलते-चलते बहादुरपुर कस्बा आया। तीन ओसवाल घर थे। राजस्थान की शुरूआत थी। अलवर प्रवेश में समय पर्याप्त था अतः वहाँ धर्म जागरण का मन बना। श्री मदनलाल जी म. ने अपने मनमोहक प्रवचन प्रारंभ कर दिए, रौनकों के ठाठ लग गए। पन्द्रह दिन में कुछ का कुछ हो गया। पर वहाँ के संबंध में गुरुदेव ने टिप्पणी की है कि वहाँ पर तीन ओसवाल घर थे। तीनो की आपस में बोलचाल, लेना-देना, आना-जाना, भाई-चारा सब बन्द।

अलवर प्रवेश से पूर्व पूज्य गणावच्छेदक श्री छोटेलाल जी म. ठाणे चार भी आ मिले। आषाढ़ सुदी त्रयोदशी को अलवर में प्रवेश किया। चार वर्ष पूर्व की रौनक, उत्साह आज चार गुनी हो गई। संवत्सरी पर

मांस की दुकानें, बूचड़खाने बन्द रहे। अहिंसा के प्रसार से जैन समाज की प्रतिष्ठा बढ़ी। उस चातुर्मास में पूज्य गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. ने तत्रत्य तत्वज्ञ श्रावक श्री चांदराम जी पालावत, श्री खुशालचन्द जी सुजंती से कर्म ग्रंथों का विशेष पारायण किया।

चातुर्मास के पश्चात् वापस दिल्ली की ओर पधारे। हर कार्य अपनी सहजगति से होता रहा। विशेषता आई तो पू. गुरु श्री मदनलाल जी म. के प्रवचनों की शैली में। आगमों की गहनता प्रवचनों में झलकती थी। उसी आगमिकता को पुष्ट करने के लिए पूज्यपाद श्री छोटेलाल जी म. ने संवत् 1979 सन् 1922 का चातुर्मास चांदनी चौंक दिल्ली का मान लिया। वहाँ के मूर्धन्य तत्ववेत्ता श्रावक श्री उमरावमल जी अलवर वाले ऐसे प्रावचनिक मुनियों के रसिक थे। बड़े महाराज श्री जी ने श्री मदनलाल जी म. को चातुर्मास में अधिकाधिक आगम व्याख्यान सुनाने को प्रेरित किया। श्रावक-श्राविकाओं ने जी भरकर आनन्द लिया। चांदनी चौंक की गरिमा को वाचस्पति गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. ने सदैव कृतज्ञता से स्वीकारा है।

चातुर्मास को भव्यता मिली तब जब श्री छोटेलाल जी म. साहब ने तपस्या प्रारंभ कर दी। चारों ओर तपस्या की चर्चा हुई। अजैनों में भी बात पहुँची। अपरिचित लोग भी दर्शनों की लालसा रखने लगे। पूज्य म. श्री ने तपस्या के साथ एक मानसिक अभिग्रह धारण कर लिया कि बैंक का अंग्रेज मैनेजर यदि पारणे की विनती करे तो पारणा करूं अन्यथा अनिश्चित काल के लिए तपस्या चलेगी। इस अभिग्रह को कागज पर लिखकर अपने पास रख लिया। इक्कीस दिन हो गए। तपस्या की चर्चा से प्रभावित अंग्रेज मैनेजर भी दर्शन करने को आया। साधना देखकर विशेष प्रभावित हुआ। कुछ प्रश्नादि पूछे। अन्त में विनती की कि आप मेरी प्रार्थना माने और पारणा कर लें। काफी जनता खड़ी थी पूज्य श्री जी ने अपना लिखित अभिग्रह दिखा दिया। समग्र जनता प्रभावित व प्रसन्न हुई। विशेषतः अंग्रेज मैनेजर। पूज्य म. श्री ने उस अंग्रेज मैनेजर से कहा– 'देखो, हम आपकी बात मान रहे हैं, आप भी हमारी बात

मानो। उसने हाँ भर ली तो म. बोले– 'आप बन्दर का शिकार करते हो इसका जीवन भर के लिए त्याग कर दो। आपका यह त्याग अहिंसा देवी के समक्ष सर्वोत्तम चढ़ावा होगा। अंग्रेज मैनेजर ने सहर्ष गुरुदेवों की आज्ञा सिर माथे चढ़ाई। सर्वत्र तपस्या, अभिग्रह, शिकार त्याग का अनुमोदन हुआ। पारणे के उपलक्ष्य में ला. रतनलाल पारिख ने दूध की प्याऊ लगवाई तथा गरीबों को भोजन वितरित किया।

पूज्यपाद गणावच्छेदक श्री छोटेलाल जी म. के पारणे के पश्चात् श्री मदनलाल जी म. भी तपस्या के क्षेत्र में आ डटे। यों तो प्रतिवर्ष ही पंचोला या इससे कुछ अधिक तप करते थे पर इस बार तो अठाई से बढ़कर दस दिन की तपस्या तक पहुँच गए और कमाल ये कि प्रवचन आदि समग्र क्रियाएं पूर्ववत् चलती रही। उनका नित्य क्रम तपस्या से बाधित नहीं हुआ। तपस्या आराम से चल रही थी, दसवें दिन शाम को बारादरी (स्थानक) की छत पर टहल रहे थे कि सामने घंटे वाले हलवाई की दुकान पर जलेबी बनते देख ली। आहार संज्ञा जागृत हो गई। सब संतों का पूर्वानुमान था कि तपस्या आगे भी करेंगे पर उन्होंने अग्रिम प्रत्याख्यान नहीं लिया और पारणा हो गया। पारणे में उन्होंने दुग्ध आदि वस्तुएं ही ली, जलेबी नहीं, क्योंकि जलेबी का तो उन्हें बचपन से ही त्याग था।

दोनों महापुरुषों की तपस्या से प्रेरित होकर श्रावक वर्ग में भी तप-त्याग का वातावरण बना।

क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति
तदेव रूपं रमणीयतायाः

मुनि जीवन का प्रत्येक पल नूतनता लिए होता है और यही नूतनता मुनित्व को सौन्दर्य प्रदान करती है। कहीं जन्म, कहीं पालन, कहीं दीक्षा, कहीं भ्रमण, कहीं चातुर्मास और कहीं प्रवास। पूज्य श्री मदनलाल जी म. अपने बड़ों की छाया में नित्य नूतन आयामों को चूम रहे थे। म. श्री को पता चला कि इस वर्ष पंजाब का विचरण होगा, मन में स्वाभाविक प्रसन्नता हुई। खुशी कि कुछ नया देखने को मिलेगा। बड़े मुनियों के लिए पंजाब जाना कुछ चिन्ताजनक भी था, चिन्ता निवारणार्थ भी था। पत्री और परम्परा का भेद वैचारिक ही नहीं रहा, कुछ भावनात्मक भी हो चला था। अलग-अलग खेमों में आधारहीन बातें फैलने लगी। किसी ने चर्चा चला दी कि नए आचार्य का चयन करने से समस्या हल हो जाएगी। "एक सम्प्रदाय दो आचार्य" बड़ी भयंकर कल्पना थी। इस तरह की कुचर्चाओं को विराम देने के लिए श्री मयाराम जी म. के पारिवारिक चौदह मुनिराजों ने पंजाब की ओर कदम बढ़ाए। उनमें प्रमुख नाम श्री छोटेलाल जी म., श्री वृद्धिचन्द जी म., श्री मोहर सिंह जी म., श्री बनवारी लाल जी म.। लक्ष्य था अमृतसर जहाँ संघ की निर्णायक सत्ता आचार्य श्री सोहनलाल जी म. विराजमान थे। उनसे अपनी विवशताएं प्रत्यक्ष रखनी थी, भ्रान्तियों का निवारण करना था।

मार्ग में मलेरकोटला था। वहाँ अन्य कुछ समविचारक मुनियों से भी मिलन हुआ। उपाध्याय श्री आत्माराम जी म., गणी श्री उदयचन्द जी म. अपने-अपने संतों के साथ पधारे। पत्री के मामले में सबके अपने विचार ये थे कि इसे अभी लागू करने की अनुकूलता नहीं है। फिर भी

इकट्ठे बैठ कर सारी योजना बनानी थी। वहीं राजस्थान के श्री मिश्री लाल जी म.[1] भी पधार गए। उन्हें समाज के ज्वलन्त प्रश्नों पर भूख हड़ताल करने के रूप में मान्यता मिली हुई थी।

मलेरकोटला समागम से कुछ बातें स्पष्ट हुई। श्री गणी जी म. के अलावा तत्रस्थ सभी मुनिराज उस समय आचार्य श्री जी द्वारा आज्ञा से बाहर घोषित थे। श्री गणी जी म. इसलिए बचे हुए थे कि आचार्य श्री जी के पौत्र शिष्य तथा श्री गैण्डेराय जी म. के शिष्य होने के कारण पारिवारिकता निभाते हुए उन्होंने न चाहते हुए भी पत्री को अभी तक माना हुआ था। वहाँ पहुँचकर चर्चा और रणनीति निर्धारण के लिए चार मेम्बरी कमेटी बना ली। गणी श्री उदयचन्द जी म., श्री छोटेलाल जी म., श्री शालिग्राम जी म. तथा उपाध्याय श्री आत्माराम जी म.। पूज्य श्री मदनलाल जी म. छोटी उम्र और छोटी दीक्षा के कारण सेवा मण्डली में थे। उनके अभिन्न हृदय सखा श्री आत्माराम जी म. उन्हें विशेष अधिमान देते थे। वैसे भी श्री मदन लाल जी म. सामान्य द्रष्टा मुनियों से ज्यादा स्थिति के ज्ञाता थे। कमेटी में निर्णय लिया जा रहा था कि आचार्य श्री को पत्र लिखेंगे जिसमें स्पष्टतया विनती होगी कि पत्री को छोड़ दो तथा सभी मुनि आचार्य श्री के पास स्वयं हाजिर भी हों। चर्चा के अंतिम क्षणों में श्री मदनलाल जी म. पानी पिलाने अन्दर गए। उपाध्याय श्री जी कुछ आकुलता सी अनुभव कर रहे थे। पानी पीने उठे। श्री मदन मुनि जी म. को एक तरफ ले गए। प्रस्तावित निर्णय की रूपरेखा बताकर पूछने लगे कि “आपकी क्या राय है?” श्री मदनलाल जी म. बोले– ‘मुझे अपनी राय देने का हक नहीं है, यह कार्य कमेटी का है।’ फिर भी उपाध्याय श्री ने इसरार किया कि व्यक्तिगत राय पूछ रहा हूँ उसे तो आप बता ही सकते हो। उपाध्याय श्री के आग्रह को टालने की हिम्मत तो थी ही नहीं। अतः कहा– ‘सभी संतों को लुधियाना जाना ही है। वहाँ अपने बड़े

1 घोर तपस्वी श्री रोशनलाल जी म. इन्हीं के चरणों में दीक्षित हुए थे।

श्री गणपति राय जी म. विराजमान हैं, उनकी सलाह के बाद कोई पत्र आदि लिखा जाय तो अच्छा रहेगा। उनके परामर्श से निर्णय लेना वाजिब है।' उपाध्याय श्री को बात जंच गई और उन्होंने कमेटी में आकर कह दिया कि निर्णय लुधियाना जाकर करेंगे। प्रस्ताव बनते-बनते निरस्त हो गया। सब भौंचक्के रह गए। सबको लगा कि यह सब गड़बड़ श्री मदन मुनि की है। यद्यपि कोई मसला न बना था, न बिगड़ा था पर बात को ऐसे पेश किया जाने लगा कि मानो सारी घटना का खलनायक मदन मुनि हो। लोगों के जेहन में भी एक युवा मुनि की छवि गलत बनाई जाने लगी। अगले दिन मलेरकोटला से विदाई के समय सैकड़ों भाई बहनों की नजरें श्री मदनलाल जी म. को घूर रही थी। लुधियाना पहुँचते-पहुँचते यह बात सर्वव्यापी बना दी। श्री गणपति राय जी म. से विचार-विमर्श हुआ, निर्णय वही हुआ जो मलेरकोटला में लिया था। बस अब बड़ों की मोहर लगने से प्रामाणिकता अधिक बढ़ गई। जालंधर होते हुए जंडियाला पहुँचे तो बाईस मुनियों का समुदाय हो गया। सब धुरन्धर मुनिराज थे। लोग उत्सुकता से निहार रहे थे। काफिला आचार्य श्री तक पहुँचा। अमृतसर वालों ने आगन्तुक मुनियों का भरपूर स्वागत किया। यह नहीं प्रतीत हुआ कि आचार्य श्री की आज्ञा के बाहर जो मुनि हैं उनकी कद्र नहीं करते। आचार्य श्री जी के प्रति निष्ठा के बावजूद वे मुनि मात्र के प्रति श्रद्धावान थे। मुनि मंडल ने आचार्य श्री के दर्शन वन्दन के पश्चात् एकान्त में वार्तालाप प्रारम्भ किया। अपना-अपना मन्तव्य प्रस्तुत किया। एक बिन्दु पर आचार्य श्री की मानसिक आशंका होठों पर आ गई। कह उठे– "मैं तो पत्री लागू करूंगा तुम अपना आचार्य अलग बना लो।" लगा कि एक क्षण में संघ दो टुकड़े हुआ और श्रावक खण्ड-खण्ड हो गए। पूज्य गणावच्छेदक श्री छोटेलाल जी म. ने मामले को संभाला– 'हजूर, आप हमारे आचार्य थे, हो और रहोगे, हम अपना नया आचार्य नहीं बनायेंगे। हम आपकी पत्री मानने को पूर्णतः तैयार हैं पर हमारी मजबूरी यह है कि पंजाब

से बाहर हमें मेवाड़-मारवाड़ में विचरते समय दिक्कत आती है। ये पत्री वहाँ का श्रावक समाज नहीं मानता, उन्हें कैसे समझाएं। उनकी सम्प्रदायों के आचार्य, साधु लौकिक पंचांग मानते हैं और श्रावकों को भी वैसे ही चलाते हैं। जब तक समग्र भारत के साधु-साध्वी तथा श्रावक संघ पत्री न मानें तब तक हम वहाँ इसे कैसे लागू कर सकते हैं? हमारा आपके नेतृत्व में पूर्ण विश्वास है। आचार्य श्री की ये भ्रांति दूर हुई कि ये मुनि पृथक् संघ बनाना चाहते हैं। समस्या का समाधान तो नहीं हुआ पर संघ भेद की आशंकाएं मिट गई, इतनी प्रसन्नता सबको हुई। पर श्री मदनलाल जी म. के पीछे तो मलेरकोटला वाला प्रसंग पड़ा हुआ था। भावुक मनों में उनके खिलाफ विष घोल दिया गया था। एक दिन उनका प्रवचन चल रहा था। साफगोई इतनी थी कि कच्चे दिल दहल सकते थे। ऐसा ही हुआ। एक श्रावक खड़ा हुआ और पूज्य श्री मदनलाल जी म. की ओर लपका। श्री खजानचन्द जी म. ने मोर्चा लिया। ओघा उठाकर उसकी ओर बढ़ा दिया और कहा 'खबरदार! अगर ऐसा दुस्साहस किया। बिना कारण संत को हाथ लगा दिया तो बख्शा नहीं जाएगा।' जैसे-तैसे मामला शांत हुआ। मुनि तो सामान्य थे ही। अमृतसर से वापस लुधियाना आए। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. तथा उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. का साथ था। श्री मदनलाल जी म. की नजदीकियां और बढ़ी, सोचा पंजाब का संयुक्त भ्रमण हो। कार्यक्रम तय कर लिया। फरीदकोट जाना था, पहले जगरावाँ पहुँचे। यह चर्चा आम थी कि श्री मदनमुनि जी म. सार्वजनिक जैनत्व के हिमायती है अतः तत्रस्थ श्रावकों ने उनका प्रवचन गुरुद्वारे में करवाया। सिक्खों को अपनी सिक्खी व जैनत्व का समन्वय नया और मोहक लगा। राधाकृष्ण हाई स्कूल में धुआंधार प्रवचन हुए। लाला लाजपत राय जी के पिता श्री राधाकृष्ण के नाम से यह स्कूल था। ये मूलतः स्थानकवासी जैन थे। सारे शहर में तहलका मच गया। उन्होंने ये मिथक तोड़ दिया कि जैन साधु आर्य समाज के उपदेशों की बराबरी नहीं कर सकते।

जगरावाँ में ही वयोवृद्ध श्री वृषभान जी म. व उनकी सेवा में विराजमान श्री कुन्दन लाल जी म.[1] के दर्शन हुए। श्री कुन्दनलाल जी म. से श्री मदनलाल जी म. बहुत प्रभावित हुए। कारण यह था कि वे गरीब जनता के लिए अवलंबभूत थे। कितने ही गरीब लोग उनके भरोसे अपनी आजीविका चला रहे थे। जगरावाँ में श्री रूपचन्द जी म. की समाधि की मान्यता उस समय तक पर्याप्त हो चुकी थी। वहाँ से मोगा पदार्पण हुआ। लघु क्षेत्र था पर डा. मथुरा दास जैन डा. पन्ना लाल जैन के कारण जैन समाज का पूरे शहर में अच्छा सम्मान था।

फरीदकोट जाते हुए एक गांव सलीना पड़ा। वहाँ एक बाबा दिखाई पड़ा। इतना भारी शरीर कि किसी संत ने ऐसा नहीं देखा था। संत आपस में कहने लगे– 'इतना मोटा कैसे हो गया? क्या खाता है? कैसे उठता बैठता है?' बात को विनोद का रूप देने में माहिर उपाध्याय श्री जी बोले– **'सन्त मतीरे पए-पए वधदे।'** सन्त और तरबूज पड़े रहें तो मोटे हो जाते है। साधु तो चलता भला। कई संतों का मन था, इस बाबा से कुछ पूछें, पर संकोच कर गए। श्री हेमचन्द जी म. ने हिम्मत कर ही ली पर बाबा का मूड नहीं था, इसलिए बोल पड़ा– **'ऐह चिड़िया जेही जान मेरे नाल भिड़ेगी।'** बस 'चिड़िया जेही जान' का जुमला संतों में काफी दिनों तक चलता रहा, दिलों को गुदगुदाता रहा। संबंध प्रगाढ़ होते गए। फरीदकोट पहुँचे। श्री मदनलाल जी म. को यह क्षेत्र बहुत पसन्द आया क्योंकि यहाँ जैन समाज का गौरव अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा व्यापक और गहरा था। यहाँ के जैन शिक्षा में अग्रणी थे। प्रशासन में अच्छा दखल रखते थे। राजा की ओर से जैन समाज को एक बड़ा मकान धर्म क्रियाओं के लिए मिला हुआ था। वहाँ संतों का ठहरना मण्डी में हुआ। उपाध्याय श्री का वहाँ विशेष प्रभाव था।

---

1 पंजाब स्थानकवासी संघ में अजीवमति नामक एक मुनि वर्ग था, जिसकी शुरुआत श्री जीवराज जी म. ने की थी। तप. श्री रूपचन्द जी म. उसी परम्परा में हुए, आगे उसी परम्परा में श्री कुन्दन मुनि जी म. हुए। उसी परिवार में श्री छोटे लाल जी म. के शिष्य श्री सुशील मुनि जी म. विदेश गामी हुए।

चैत्र सुदी त्रयोदशी का दिन निकट आ रहा था। पूज्य श्री मदनलाल जी म. के मन में एक अद्भुत विचार कौंधा कि भगवान महावीर की जन्म जयन्ती मनाई जाए। समग्र भारत में महावीर जयन्ती मनाने का यह पहला विचार था और इसी प्रथम विचार को कार्यरूप देने में महाराज श्री जुट गए। प्रमुख श्रावक श्री रूपलाल जी, ला. खूबचन्द जी आदि को रूपरेखा समझाई। पंजाब ही क्यों भारतवर्ष की प्रथम घटना होने से फरीदकोट का चप्पा-चप्पा झूम उठा। नौजवानों ने दिन रात एक कर दिया। मण्डी के उसी विशाल भवन के आगे पंडाल लगा। राज्य की ओर से सहायता मिली। उन दिनों राजा के नाबालिग होने के कारण रियासत का संचालन कौंसिल के हाथ में था। व्याख्यान में सारी कौंसिल उपस्थित हुई। श्री आत्माराम जी म. व श्री मदनलाल जी म. इन दोनों महापुरुषों के प्रवचनों का गहरा प्रभाव पड़ा। इस प्रथम पर्व को बाद में स्थान स्थान पर अनुकृत किया गया। चार माह के संयुक्त विचरण के बाद उपाध्याय श्री जी वापस लुधियाना पधार गए दीर्घ कालीन प्रेम एवं एकसूत्रता बनाकर।

श्री वृद्धिचन्द जी म. ठाणे चार जंगल देश की ओर तथा श्री छोटेलाल जी म. ठाणे चार फिरोजपुर की ओर पधारे। गुरु-शिष्य-युगल पूज्य श्री नाथूलाल जी म. तथा श्री मदन लाल जी म. ने भी जंगल देश विचरण का मन बनाया। कोट कपूरा एक धर्मशाला में ठहरे। वहाँ एक दिन दुर्बल भिखारी को देखकर श्री मदनलाल जी म. दयार्द्र हो उठे। पूज्य श्री नाथूलाल जी म. ने उसे बुलाया। कहने लगे– 'भाई बड़ा दुःखी है। हर प्रकार से अभाव ग्रस्त है। क्यों नहीं संसार को छोड़कर त्याग मार्ग अपना लेता। साधु बनने से तेरा लोक परलोक सुधर जाएगा।' सुनते ही वह तो तमक उठा। कहने लगा– "दुःखी तो तुम हो, मैं तो आपसे ज्यादा सुखी हूँ।" उसकी मोहावस्था को देखकर ज्ञात हुआ कि संसारी आत्मा को संसार क्यों प्यारा लगता है।

अगला ईलाका फरसना था। सारा ईलाका भक्ति से भरपूर लगा। अग्रवाल ओसवाल दोनों में जैनत्व था। ढूंढिए जैनों में सनातनत्व का

प्रभाव भी था, हाँ अजैनों में भी जैनत्व की ठोस छाप थी। पूज्य श्री चन्द जी म. श्री केसरी सिंह जी म. का उपकार और प्रभाव जनता में स्पष्ट लक्षित हो रहा था।

काफी इलाका देखा। चातुर्मास फरीदकोट होना था। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. ठाणे छः फरीदकोट, श्री वृद्धिचन्द जी म. ठाणे चार जीरा का चातुर्मास फरमा चुके थे।

श्री नाथूलाल जी म. जब जैतों पधारे तब आते ही बीमार पड़ गए। उनकी जंघा में फोड़ा हो गया। तीव्र असाता हो रही थी। पीड़ा की जितनी अधिकता उससे अधिक उनकी सहिष्णुता। शिष्य रत्न भी अपने पूज्य गुरुवर की साता में जी जान से जुट गए। वहाँ एक श्रावक श्री कच्छूमल जी थे। मूलतः वह नाभा के थे पर पोस्ट मास्टरी के सिलसिले में जैतों में लगे हुए थे। उन्होंने उपचार के लिए विशेष प्रयत्न किया पर राहत नहीं मिली। गर्मी के कारण वेदना भी बढ़ती जा रही थी। फोड़े के स्थान पर भीषण गर्मी की अनुभूति हो रही थी। आखिर रेलवे फाटक पर नियुक्त किसी भाई का उपचार काम आया। पन्द्रह दिन में कुछ आराम हुआ तब श्री मदनलाल जी म. को चैन मिला।

जैतों में ही गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. को एक ज्योतिषी मिला। उससे कुछ अंतरंग वार्तालाप हुआ। उसके कुछ वक्तव्यों से मन पर विशेष प्रभाव पड़ा। बाद के कुछ घटनाक्रमों ने उसके कथन को सत्य प्रमाणित किया। पूज्य गुरुदेव की जन्मतिथि अज्ञात होने से जन्मपत्री बनानी और पढ़ानी संभव नहीं थी पर हस्तरेखाओं के आधार पर किए गए भविष्य कथनों को सत्य माना गया। बीस दिन रुककर कोट कपूरा आए। वहाँ पूज्य पाद श्री छोटेलाल जी म. के दर्शन हुए। फिर ठाणे छः ने चातुर्मासार्थ फरीदकोट प्रवेश किया।

विक्रम संवत् 1980 सन् 1923 का वह चातुर्मास नूतन उपलब्धियों से मंडित रहा। युवा वर्ग ने नई करवट ली। क्योंकि युवा मुनि श्री मदनलाल जी म. ने प्रवचन की कमान संभाली, किंवा संभालनी पड़ी। पूज्य गुरुदेव

श्री नाथूलाल जी म. के जिगर में सूजन हो गई। पीलिया होने की संभावना बन गई। विश्राम आवश्यक था अतः उन्हें प्रवचनादि के दायित्व से मुक्त किया। प्रातःकाल का आगम वाचन पूज्यपाद श्री छोटेलाल जी म. ने प्रारंभ किया। मध्याह्न के प्रमुख प्रवचनों की कमान युवा मुनि श्री मदन लाल जी म. के हाथों में आई और उन्होंने समस्त युवा शक्ति में करंट भर दिया। धारा जम्बू जी का आख्यान जब काव्य की धारा से निकलता था तब श्रोता वर्ग विस्मित, विमुग्ध होकर रह जाता था। जैनों के साथ अजैनों ने भी शिरकत की। इससे कुछ विघ्न प्रिय तत्वों को कुछ जलन सी होने लगी और उन्होंने बढ़ती हुई लोकप्रियता का रुख मोड़ने वास्ते सनातन धर्म के प्रसिद्ध प्रचारक पं. गोपाल शास्त्री को बुला लिया। कृष्ण-जन्माष्टमी के दिन उसकी विशाल सभा आयोजित थी। गोपाल शास्त्री जी ने पारस्परिक सद्भाव की पावन गंगोत्री को विक्षुब्ध करने के उद्देश्य से विष-वमन करना शुरू कर दिया। उसने अपने प्रवचन का मुख्य विषय यह रखा कि श्री कृष्ण जी ने जैन और बौद्ध नास्तिकों के विनाश के लिए अवतार लिया था। सभा में उपस्थित जैन युवक बौखला उठे। जैनों को नास्तिक करार देकर माहौल बिगाड़ दिया था। सभी युवक श्री मदनलाल जी म. के पास आए। उन्होंने भी तत्काल एक्शन लिया। गोपाल शास्त्री के पास लिखित नोटिस भिजवा दिया कि आपने यह बात किस आधार पर कह दी। या तो सार्वजनिक रूप से माफी मांगो, नहीं तो शास्त्रार्थ करो। शास्त्रार्थ का माहौल सा बनने लगा। जैन युवक भी अडिग थे। बच्चे-बच्चे ने भीम द्वात्रिंशिका के दोहे याद कर लिए और गलियों में गाने शुरू कर दिए। जैनों की आस्तिकता जन-जन मन ने स्वीकारनी शुरू कर दी। अन्ततः वामन द्वादशी को पर्यूषण से एक दिन पूर्व गोपाल शास्त्री ने माफी मांग ली। युवकों को पूर्ण संतुष्टि मिली। सबने पूज्य गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. का आभार माना।

पर्यूषणों के निराले नजारे थे। राज्य की ओर से कत्लखानों के अलावा भट्ठी आदि के आरंभ समारंभ पूर्ण व्यवसायों पर पाबंदी लगी। उस साल फरीदकोट समाज में नव जागरण हुआ।

चातुर्मास के बाद लुधियाना पहुंचे। मुनियों के पुराने संबंध प्रगाढ़ हुए और दिल्ली जाने का लक्ष्य ले कोटला, मूनक, जीन्द रोहतक का रास्ता लिया।

रोहतक पहुँचने पर ज्ञात हुआ कि श्री वृद्धिचन्द जी म. के महान् शिष्य श्री मामचन्द जी म. गंभीर रूप से रुग्ण है। चार सौ थोकड़ों के अलावा आगमों के अतिगहन अभ्यासी, निरभिमानता के मूर्तिमान श्री मामचन्द जी म. श्री छोटेलाल जी म. को याद कर रहे थे। उनकी सेवा-वैयावृत्य हेतु श्री छोटेलाल जी म. ने दो समर्थ मुनियों श्री मदनलाल जी म. एवं श्री बलवन्त राय जी म. को अपने साथ लिया और शेष तीन– श्री नाथूलाल जी म., श्री राधाकृष्ण जी म. तथा श्री मूलचन्द जी म. को भिवानी में चातुर्मासार्थ नियुक्त किया। पूज्य श्री मदनलाल जी म. का दीक्षा के दसवें वर्ष में प्रथम बार अपने गुरुदेव श्री नाथूलाल जी म. से पृथक् चातुर्मास होने जा रहा था, पर सेवा के सामने अपनी भावनाओं को गौण करना वे जानते थे अतः दिल्ली के लिए प्रस्थित हुए। दिल्ली पहुंचने पर देखा कि वहाँ साम्प्रदायिक तनाव का माहौल बना हुआ है। हिन्दू-मुस्लिम दंगों ने वातावरण को विषाक्त बना रखा था। सदर बाजार में लोटन जाट की अगुवाई में हिन्दुओं का मोर्चा लगा हुआ था। गोहत्या को लेकर अधिक विवाद और फिसाद हो रहे थे। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. को मोर्चे के बीच से गुजरना पड़ा। चातुर्मास प्रारंभ होने से कुल दो दिन पूर्व चांदनी चौंक बारादरी में पहुँच पाए। संवत् 1981 सन् 1924 का वह चातुर्मास केवल रुग्न मुनि जी की सेवा के लिए किया गया था। अन्यथा श्री छोटेलाल जी म. सामान्य स्थितियों में वहाँ चातुर्मास नहीं कर सकते थे और न ही वे करते।

श्री मामचन्द जी म. को टी.बी. का असाध्य रोग था। मुनियों ने भरपूर सेवा की। उन्हें भी अपने ऊपर बड़ों का साया देख संतुष्टि हुई। जीवन ज्योति मन्द-मन्दतर होती जा रही थी। उन्होंने पूर्ण जागृत अवस्था में आलोचना, निन्दना तथा क्षमापना करके निःशल्यता के परम शिखर को छू लिया और आहार पानी का प्रत्याख्यान करके बैठ गए। उसी अवस्था में शरीर का तंत्र निष्क्रिय हो गया तथा आत्मा के

वियोग से मुनियों के मन आहत और पीड़ित हुए। समय बीता तो कुछ साम्यावस्था में लौटे।

उस वर्ष प्रकृति ने महामृत्यु का ताण्डव नृत्य भी किया। भीषण वर्षा हुई। यमुना में बाढ़ आ गई। चारों ओर बस्तियों में पानी ही पानी घुस गया। मकान तबाह हो गए, रास्ते टूट गए। गरीबों तथा पशुओं का तो कोई रक्षक नहीं था। पानी के प्रवाह में जीवित तथा मृत पशुओं व मानवों को बहते देखकर भी कोई प्रतिकार नहीं कर पाया। उन भीषण दृश्यों को देखने वालों की भूख और नींद भी उड़ गई थी। काफी दिनों के बाद बाढ़ उतरी तो महामारी का खतरा मंडराने लगा। जैसे-तैसे समय निकाला और चौमासा पूरा किया। समझदार लोगों ने गुरु-चरणों तथा धर्म-ध्यान का शरणा लेकर उस संकट काल को पार किया।

चौमासा पूरा कर जमना पार विचरे। अग्रिम चातुर्मास रोहतक का मान्य किया। पूज्य गुरुदेव श्री नाथूलाल जी म. के साथ भी यह चातुर्मास नहीं हो सका क्योंकि उनकी नियुक्ति चांदनी चौंक में स्थित पूज्य श्री जड़ावचन्द्र जी म. के चरणों में लगी। साथ ही श्री जसराम जी म. तथा श्री मूलचन्द जी म. को रहना था। जबकि पूज्य श्री छोटेलाल जी म. श्री मदनलाल जी म. आदि ठाणे चार मुनिराज, रोहतक में विराजमान श्री रामनाथ जी म. जो कि चरित्र चूड़ामणि श्री मयाराम जी म. के लघुभ्राता थे, की सेवा में रहेंगे, ये तय हुआ। श्री रामजीलाल जी म. तथा श्री नेकचन्द जी म. पहले से उनकी सेवा में थे।

संवत् 1982 सन् 1925 के उस चातुर्मास में श्री मदनलाल जी म. को एक अंतरंग मित्र मुनि की उपलब्धि हुई जो जीवन पर्यन्त एक जान दो जिस्म बनकर रहे। श्री रामजीलाल जी म. सा. उस दिव्यात्मा का नाम था। उन्होंने उस चातुर्मास में अपने लिए श्री मदनलाल जी म. को रोल मॉडल बना लिया। दोनों की एक आवाज, एक विचारधारा, एक दिशा तथा एक गन्तव्य बन गए। दो हंसों की इस जोड़ी ने साथ-साथ ख्यालों के आसमान में उड़ान भरनी शुरू कर दी।

चातुर्मास का महीना-सवा महीना ही बीता था कि दिल्ली से समाचार आ गया कि श्री नाथूलाल जी म. अस्वस्थ हो गए हैं। श्री जड़ावचन्द्र जी म. की सेवा के लिए श्री नाथूलाल जी म. की नियुक्ति हुई थी, वे ही रुग्ण हो गए, शेष मुनि इतना बड़ा दायित्व पूरा करने में असमर्थ थे अतः श्री मदनमुनि की आवश्यकता थी। बुलावे की खबर से ही श्री मदनलाल जी म. सुप्रसन्न हो गए। एक तो बड़ों की सेवा का सुअवसर मिलेगा, दूसरे अपने गुरुदेव का सान्निध्य। पर्यूषणों के दूसरे दिन रोहतक से चले और चौथे दिन चांदनी चौंक पहुँच गए। साथ में थे श्री नेकचन्द जी म.। श्रावक संघ में नवयौवन उमड़ आया। श्री मदनलाल जी म. ने अकेले दम पर तीनों मोर्चे– श्री जड़ाव चन्द जी म. की सेवा, श्री नाथूलाल जी म. का उपचार तथा पर्यूषणों की आराधना– संभाल लिए।

पूज्य श्री नाथूलाल जी म. क्रमशः स्वस्थ होते गए। पर न जाने क्या हुआ श्री मदनलाल जी म. स्वयं बीमार हो गए। बीमारी इस स्तर पर आ गई कि कभी-कभी बेहोशी सी बन जाती। साधुओं में अत्यधिक चिन्ता थी ही, श्रावक वर्ग भी निराशाग्रस्त हो गया। एक रोज श्री उमराव सिंह जी अलवर वाले (मानसिंह मोती राम) पूज्य गुरुदेव के पास रात को दो बजे तक बैठे रहे, जब तक कि उनकी मूर्छा कम नहीं हुई। श्रावक जी इनके प्रति श्रद्धा तथा अपनत्व से भरे हुए थे। बीमारी का प्रभाव कुछ कम होने लगा, स्वास्थ्य लाभ हुआ फिर कूद गए जन जागरण के अभियान में। स्थानीय श्रावक श्राविकाओं की रुचि को ध्यान में रखकर उन्होंने 'जीवाभिगम' सूत्र को आधार बनाकर प्रवचन शृंखला प्रारंभ कर दी। वहाँ का जौहरी वर्ग पूज्य गुरुदेव की प्रवचन शैली से अतीव प्रभावित रहा था। उनके मन में भी चांदनी चौंक के प्रति विशेष लगाव था। उनके मन में आया कि चांदनी चौंक के श्रावकों की स्वाध्यायशीलता को एक स्थायी रूप दे दिया जाय। इसके लिए एक पुस्तकालय की आवश्यकता महसूस की गई। अपनी भावना समाज के समक्ष प्रकट की। सभी प्रबुद्ध श्रावक सन्नद्ध हो गए। देखते ही देखते

'महावीर जैन पब्लिक लाइब्रेरी' की स्थापना हो गई। आर्थिक सहयोग दिया श्री गोकुलचन्द जी नाहर ने तथा समय व श्रमदान किया श्री निहालचन्द चोरड़िया, फूलचन्द पारख, गुलाबचन्द लोढ़ा और छुट्टन लाल तातेड़ आदि ने। यह लाईब्रेरी बड़े-बड़े विद्याभिलाषियों, अनुसंधान प्रेमियों तथा इतिहास विदों का केन्द्र बनी। श्री गुरुदेव का यह स्पष्ट चिंतन रहा कि समाजोपयोगी कार्यों में प्रेरणा तो रहे पर संलिप्तता नहीं। इसलिए वे कभी द्रव्य याचना या प्रबंधन में नहीं उलझे।

उसी चातुर्मास में जब पूज्य श्री मदनलाल जी म. रोहतक में पूज्यपाद श्री छोटेलाल जी म. के चरणों में थे, तब विष्णु कुमार नामक एक होनहार युवक उनके पास आया। अपना परिचय देते हुए उसने बताया मेरे माता पिता काल कर गए हैं। अब मैं अनाथ हूँ। जगह-जगह धक्के खाकर किसी के परामर्श से आपके पास आया हूँ। पूज्य श्री छोटेलाल जी म. ने दयार्द्र हो उसे शरण दे दी। उसे धार्मिक प्रशिक्षण देना प्रारंभ कर दिया। कुशाग्रमति युवक ने अपनी लगन से गुरुओं को आश्वस्त और संतुष्ट कर दिया। विनय और विद्या का सुन्दर समन्वय उस युवक में था। पूज्य श्री जी ने सोचा कि चातुर्मास में ही इसकी दीक्षा कर दें। एक दिन उससे कहा— बेटा! अब जीवन पर्यन्त के लिए तुम्हें साधु बनाना है और साधु को सदा सत्य वचन बोलना है। गुरु से कोई बात नहीं छिपानी। अब तक जीवन में हुई प्रत्येक अच्छाई बुराई की सही तस्वीर गुरुओं के सामने पेश करनी है, तभी दीक्षा का लाभ है। युवक बड़ा भावुक और विनीत था। अतः उसने अपना समग्र अतीत गुरु-चरणों में प्रकट कर दिया। उस प्रक्रिया में ज्ञात हुआ कि जौनपुर उ. प्र. में उसका विशाल परिवार है। घर के कई सदस्य ऊँचे ओहदों पर हैं लेकिन वह परिवारजनों से रुष्ट तथा असंतुष्ट होकर चुपचाप भागकर आया है।

पूज्य श्री छोटेलाल जी म. ने कहा— 'बच्चा, तेरे माता-पिता जीवित है। उनकी आज्ञा मिलने पर ही हम तुझे दीक्षा प्रदान कर सकते है। उन्हें हम समाचार देंगे। वे आएंगे तब तू उन्हें मना लेना। विष्णु कुमार गिड़गिड़ाने लगा। गुरुदेव, वे मुझे बिल्कुल आज्ञा नहीं

देंगे। मुझे जबरदस्ती ले जाएंगे। आप उन्हें समाचार मत दें। मेरा उनके पास जाने का मन नहीं है। आप मुझे साधु बना दें। पर श्री छोटेलाल जी म. पूर्णतया पारदर्शिता के पक्ष में थे। उन्हें भी अहसास था कि परिवार वाले नहीं मानेंगे और एक होनहार शिष्य हाथ से चला जाएगा। पर शिष्य प्राप्ति का मोह छोड़ सत्य का सिद्धान्त अपनाया। विष्णु के घर समाचार दिया। उसका चाचा आया। बच्चे को देख फूट-फूटकर रोया। पूज्य श्री जी को वन्दना की। अहसान माना कि आपने इसकी जिन्दगी बचा दी। हमने बहुत तलाश की, पर नहीं मिला तो मरा हुआ मानकर चुपचाप बैठ गए। आपने हमारे घर को जीवनदान दिया है।

विष्णु ने अपने चाचा से आग्रह किया कि मुझे साधु बनने की आज्ञा दे दो। तुम लोगों ने जब मुझे मरा हुआ मान ही लिया था तो अब आनाकानी क्यों? पर चाचा नहीं माना। एक बात पर अड़ गया कि एक बार तू घर चल फिर तू जैसा कहेगा वैसा ही कर लेंगे। उसे तथा संतों को पता था कि एक बार जाने के बाद वापस आना नितान्त असंभव है। फिर भी संतों ने चाचा की बात मानने को कहा। लड़का चला गया वापस नहीं आ सका। लेकिन पूज्य श्री छोटेलाल जी म. की सिद्धान्त दृढ़ता से जन-जन प्रभावित हुआ। दिल्ली भी इस घटना का विवरण पहुँचा तो श्री मदनलाल जी म. को बहुत अच्छा लगा। लेकिन चातुर्मास के अंतिम दिनों में पूज्य श्री छोटेलाल जी म. ने श्री मदनलाल जी म. से कुछ नाराजगी जाहिर की और कई मसलों में असहयोग भी। संभव है, पुस्तकालय की स्थापना को लेकर कुछ विभ्रम बना हो। पर श्री मदनलाल जी म. ने अपने गुरुजनों के प्रति सदैव श्रद्धा भावना रखी।

चातुर्मास पूर्ण हुआ। विचरण की रूपरेखाएं बनी। नया इलाका चुना। या कहिए उपेक्षित इलाका चुना। वह था यमुना के निकट खादर का संभाग। जहाँ गांव-गांव में स्थानकवासी जैन परिवार थे पर साधु-साध्वी कम विचरते थे। आर्य समाज का नूतन प्रवेश जाट लोगों

में हो चुका था। जैनत्व पर भी बादल मंडराने लगे थे। सारे परिदृश्य की सुध लेने के लिए श्री मयाराम जी म. के दस मुनियों ने गहन अवगाहन का मन बनाया। बड़ों की ठण्डी छाया, साथियों का उत्साह तथा श्री मदनलाल जी म. की बेबाक प्रवचन शैली के बल पर नए-नए आयाम स्थापित करने थे। श्री वृद्धिचन्द जी म. ठाणे तीन, श्री नाथूलाल जी म. ठाणे तीन, श्री राधा कृष्ण जी म. ठाणे 2, श्री रामजीलाल जी म. ठाणे 2 ये दस मुनिराज पुरखास गांव में इकट्ठे हुए। गन्नौर, समालखा, पानीपत, राजाखेड़ी आदि में धूम मचाई। फिर देहरा-महावटी जुडवां गांवों को केन्द्र बनाया। दिन में देहरा में प्रवचन होता तो सारा गांव उमड़ पड़ता, फिर तत्काल महावटी चले जाते। रात को वहाँ धुआंधार वर्षा होती। रौनकें कल्पना से बाहर होने लगी। सारे इलाके का सन्नाटा टूट गया। इसी क्रम में शहर मालपुर से ब्यौहली गांव आए हुए थे। जैनों की संख्या अल्प थी। उन्हीं दिनों वहाँ आर्य समाज के प्रचारक आए हुए थे। उनके साथ पूरा साजो-सामान व ताम-झाम था। अधिकांश गांव आर्य समाज का अनुयायी था। उनकी महफिल में छः सौ-सात सौ व्यक्ति उपस्थित थे। छोटे संतों ने चुटकी ली– 'मदनलाल जी म., यहाँ कुछ करके दिखलाओ तो जानें।' चुनौती मंजूर हुई। मयाराम कुल के तीन युवा मुनिराज बगल-बगल में बैठ गए। श्री मदनलाल जी म., श्री रामजीलाल जी म. तथा श्री प्रेमचन्द जी म.। शेराना दिल, बुलंद आवाज, तूफानी जोश। भजन शुरू किया। आसमान दहल गया। आर्य समाज के समग्र श्रोता उठ-उठकर मदन दरबार में हाजिर हो गए। उधर मैदान खाली। आर्य समाजी अपना ढोल-साज उठाकर नदारद हो गए। भजन पूरा हुआ और पौने घण्टे तक सिंह गर्जना हुई। श्रोता धन्य हुए, जिन शासन जयवन्त हुआ। छोटे मुनि गुदगुदाए और बड़ों का आशीर्वाद मिला। ऐसी-ऐसी प्रभावनाओं की गूंज समूचे हरियाणा, जमना पार, यू.पी. तथा दिल्ली तक पहुँची। अगला लक्ष्य बना जन्म-भूमि राजपुर का। पिछले पदार्पण की अशांति काफूर हो चुकी थी, अब तो स्वागत के लिए पलक-पांवडे बिछे हुए थे। पूज्य श्री नाथूलाल जी म. की नेश्राय

में अपने हमदम श्री रामजीलाल जी म. को लेकर ठाणे पांच से राजपुर पधारे। इक्कीस दिन ठहरे। प्रतिदिन तीन बार व्याख्यान दिए। सारे गांव में धर्म की विशेष वृद्धि हुई। सारा गांव दीवाना हो गया अपने लाल के कमाल पर। ला. न्यादरमल फतेहचन्द के परिवार ने इक्कीस दिन तक प्रवचनोपरांत प्रभावना बांटी। सैकड़ों दर्शनार्थी समीपवर्ती गांवों से आ-आकर धर्मोपदेश का अमृत रस चखते रहे। वहीं बामनौली समाज का आगमन हुआ। अर्थात जन्म-भूमि पर दीक्षा भूमि का अवतरण। विनति और आग्रह था कि हमें चातुर्मास चाहिए। 'बड़ों की आज्ञा हो तो हम तैयार हैं' ये आश्वासन देकर उन्हें आशा बंधाई। इस आश्वासन को मूर्तरूप देने वास्ते पूज्य श्री छोटेलाल जी म. के चरणों में रोहतक पहुँचे तथा निर्णय हुआ कि पूज्य श्री छोटे लाल जी म. दिल्ली में विराजमान श्री जड़ावचन्द जी म. के सान्निध्य में दिल्ली में, श्री नाथूलाल जी म. तथा श्री मूलचन्द जी म. ठाणे दो बिनौली में और श्री राधाकृष्ण जी म. की निश्राय में श्री मदनलाल जी म. बामनौली में चातुर्मास करेंगे। यह चातुर्मास क्रियात्मक रूप से श्री मदनलाल जी म. का माना गया। क्योंकि श्री राधाकृष्ण जी म. प्रवचन या अन्यान्य कार्य संपादित नहीं कर सकते थे। दोनों मुनिराज संवत 1983 सन् 1926 का चातुर्मास करने जिस दिन बामनौली पधारे जनता का उत्साह देखते ही बनता था। लोगों के जत्थे के जत्थे आ रहे थे। मेला लग रहा था। प्रमुख श्रावकों ने दायित्व वहन किया। उनकी नामावली में से कुछ नाम ला. बाल मुकुन्द जी, सिताब राय, न्यामत सिंह, हरदेव सहाय, धर्मचन्द, दीपचन्द, जयदयाल, सुजानमल आदि है। सबने मुनियों और दर्शनार्थियों की भरपूर सेवा की। इसी धरा पर बारह वर्ष पूर्व दीक्षित होने वाले श्री मदनमुनि ने गांव की फिजा में धर्म-ध्यान का शंखनाद कर दिया। पहले दिन से अपूर्व उल्लास छा गया। एक बार इक्कीस रंगी का आह्वान किया। जिसमें 441 भाई-बहनों ने 1575 सामायिकें की। उस दिन की गहमागहमी का दृश्य अविस्मरणीय बन गया। एक बार उन्होंने 6500 सामायिकें करवाई। एक छोटे से गांव में साढ़े छः हजार सामायिकें एक

कीर्तिमान बन गया। चातुर्मास में धर्मचक्र भी करवाया। दो समय प्रवचन होता था। प्रातः सूत्र वाचन होता जिसमें गंभीर और तत्वचिन्तक व्यक्ति रस लेते थे। दोपहर में काव्यमय रामायण और महाभारत का व्याख्यान होता था जिसमें समग्र ग्रामवासी उपस्थित होते थे। चारों ओर बामनौली की रौनकों के तथा श्री मदनलाल जी म. के चर्चे हुए।

श्री मदनलाल जी म. ने हर पहलू से उस चातुर्मास की गरिमा को बनाया, बचाया और बढ़ाया। संतुलित प्रज्ञा से प्रत्येक निर्णय लिया। बामनौली के निकट ही चार मील अर्थात सात कि.मी. की दूरी पर दोघट गांव में आचार्य श्री मोतीराम जी म., पण्डित श्री पृथ्वीचन्द जी म., कवि श्री अमर मुनि जी म., जो कि आठ-दस वर्ष बाद श्री मदनलाल जी म. के घनिष्ठ मित्र बने, का चातुर्मास था। उनके पूर्वज श्री रतन चन्द जी म., श्री मनोहर दास जी म. का जमना पार में विशेष उपकार रहा था। दोघट उनके कृपापात्र क्षेत्रों में से एक था। वहाँ से एक पत्र समाज के नाम आया जिसमें दो मुद्दों पर विवाद, चर्चा, शास्त्रार्थ करने की चुनौती दी गई थी। प्रथम विषय था चौथ की संवत्सरी मनाना त्रुटिपूर्ण है। दूसरा विषय था आगम में अकाल मृत्यु की धारणा नहीं है। गुरुदेव श्री जी सोचने लगे कि जैन समाज के दो मुनि अपने मतभेदों को जनता के मध्य उछालेंगे तो धर्म की बदनामी ही होगी। वे शास्त्रार्थ करने यहाँ आएँ या मैं वहाँ शास्त्रार्थ करने जाऊँ इस प्रक्रिया में प्रेम वृद्धि की बजाय कषाय वृद्धि ज्यादा होगी। इन चर्चाओं का न कहीं अन्त हुआ है, न होगा। अतः इस बात को अधिमान नहीं देना। समाज में पत्र को लेकर काफी सुगबुगाहट रही। कहने लगे– बामनौली की रौनकों से ईर्ष्या हो रही है। साधुओं को इन कामों में रूचि नहीं लेनी चाहिए आदि-आदि।

श्री मदनलाल जी म. ने हर विवाद को दर किनार रखते हुए एक पत्र दोघट लिखवा दिया। जिसका सारांश था– "मेरा और आपका क्या मुकाबला है? मैं छोटा संत हूँ और आप बड़ी दीक्षा के बहुश्रुत आचार्य हैं। यदि चर्चा या शास्त्रार्थ करना है तो पंजाब संघ के आचार्य श्री सोहनलाल जी म. या उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. के साथ करिए।

अगर मैं जीत गया तो भी, अगर हार गया तो भी मेरा कुछ नहीं होगा वरन् आपका गौरव नहीं रहेगा। मैं तो बालक हूँ, बड़ों के साथ बड़ों का मुकाबला हो तब ही बड़ों का गौरव है। मेरे लिए तो आप ऐसी शिक्षा दें जिसमें मेरा संयम, तप, ध्यान और स्वाध्याय बढ़े।" पत्र भिजवाकर स्वयं निश्चिन्त हो गए और वातावरण की जो धूल थी वह शान्त हो गई।

पर्यूषण और संवत्सरी पर्व अभूतपूर्व धर्म-ध्यान के साथ व्यतीत हुए। चारों महीने रौनके बढ़ती रही। जो भावनाओं का ज्वार उस चातुर्मास में बामनौली की जनता में आया, उसका उदाहरण अन्यत्र, अन्यदा दुर्लभ था। चातुर्मास पूर्ति पर सिरसली गांव पधारे, जहाँ बिनौली का गरिमापूर्ण वर्षावास पूर्ण करके पूज्यपाद श्री नाथूलाल जी म. भी पधार गए। अपने पूज्य गुरुवर्य के पादपद्मों में समस्त उपलब्धियों को समर्पित करके श्री मदनमुनि जी म. कृतार्थ और धन्य हो गए। फिर चले सभी मुनिराज दिल्ली की ओर। पूज्यपाद, गणावच्छेदक श्री छोटेलाल जी म. की विहार करने की क्षमता समाप्त प्रायः हो चली थी। अतः वे चांदनी चौंक में पूज्य श्री जड़ावचन्द जी म. के साथ ही स्थिरवास करने का मन बना चुके थे। चांदनी चौंक के श्रावकों को अपनी शास्त्र श्रवण रूचि को तृप्त करने की इच्छा रहती थी, उसका एकमात्र उपाय था कि शास्त्र व्याख्याता श्री मदनमुनि जी म. भी साथ रहें। उनके रहते न सेवा की कमी, न प्रवचनों की चिन्ता और न रौनकों का अभाव। संवत् 1984 सन् 1927 का चांदनी चौंक में वह दीर्घ प्रवास और चातुर्मास हर पहलू से लाजवाब रहा। पूज्य गुरुदेव ने आचारांग सूत्र की व्याख्या प्रवचनों में सुनाई। धार्मिक उत्साह तो शिखर पर होना ही था क्योंकि श्री मदनलाल जी म. कार्यक्रमों के सूत्रधार थे। एक साथ एक आसन पर तीस सामायिकों के आयोजन हुए। अर्थात् पूरे चौबीस घण्टे तक बिना खाए पीए बिना सोए लेटे सामायिक करना। ऐसे कार्यक्रम प्रायः होते ही रहे। चांदनी चौंक से भी ऊँचे दर्जे की प्रभावना सदर बाजार में पूज्यपाद श्री नाथूलाल जी म. ने की। उन्होंने वहाँ पर हरनाम दास माली को लगन लगाई, शुद्ध सम्यक्त्व का बोध कराया और उसमें सामायिक, संवर

पौषध आदि के भाव भरे। क्रमशः दृढ़धर्मी जैन बना दिया। प्राचीन जैनों से बढ़कर ऊँचा जीवन जीने वाले उस नवजैन भाई ने कई हजार लोगों को मांसाहार, मदिरापान से मुक्त कराया। नए बाजार की प्रसिद्ध फर्म रतनलाल जयभगवान के मालिक सेठ श्री विश्वंभर दयाल को जैनत्व के रंग में पूज्य गुरुदेव ने रंगा। खारी बावली के पंडित श्री सूरजभान जी को भी जैन बनाया।

पूज्यपाद श्री नाथूलाल जी म. का यह विशुद्धि अभियान बढ़ते-बढ़ते दुर्भेद्य मुस्लिम दुर्ग को भी पार कर गया। जमील अहमद नामक युवक को वे बुलाकर लाए। वह स्थानक में आया। धीरे-धीरे उसे अहिंसा धर्म समझाया तथा उसको मांसाहार का त्याग करवाया। बढ़ते-बढ़ते उसको सामायिक और सामायिक के पाठ सिखाए। प्रतिक्रमण याद करवाया। पच्चीस बोल का स्तोत्र कण्ठस्थ करवाया, अर्थबोध भी दिया। नव-तत्व, छब्बीस द्वार, गुणस्थान द्वार, तैतीस बोल का स्तोत्र आदि बहुविध तात्विक ज्ञान उस मुस्लिम को देते गए और वह भी पूरी लगन व समझ के साथ ग्रहण करता रहा। चार महीने के स्वल्पकाल में इतनी बड़ी उपलब्धि चमत्कार से कम नहीं होती।

उस युवक की तीव्र भावना बनी कि मैं जैन साधु बन जाऊँ। पर पूज्यपाद श्री नाथूलाल जी म. जानते थे कि इसे आज्ञा नहीं मिल पायेगी। अतः उसे इस दिशा में अग्रसर होने से निरुत्साहित कर दिया। मगर उसका मन नहीं माना। घर में दीक्षा की बात चला दी कि मुझे जैन साधु बनना है आज्ञा दे दो। घरवाले तो पहले से ही खफा थे कि जैन संतों के पास क्यों जाता है? अब तो आग बबूले हो गए। बुरी तरह से उसकी पिटाई की। फिर पूज्य श्री नाथूलाल जी म. से झगड़ने लगे और धमकी दी कि यदि इस बालक को अपने पास बुलाओगे तो तुम्हें जान से मार देंगे। पूज्य गुरुदेव श्री नाथूलाल जी म. ने निर्भीकता से कहा— "तुम्हारी आज्ञा के बिना इसे साधु नहीं बनाएंगे, निश्चिन्त रहो पर यदि ये स्वेच्छा से आयेगा तो हम धर्म शिक्षा देने में स्वतंत्र हैं।" घरवालों को शान्त होना पड़ा। पूज्य महाराज श्री ने जमील अहमद को दीक्षा के लिए

आग्रह न करने वास्ते मनाया। सोचा-कहीं अनावश्यक साम्प्रदायिक दंगा न हो जाय। धर्ममय जीवन बना रहे यह भी पर्याप्त है। वह उस आग्रह से तो दूर हो गया पर उसने स्थानक में आकर सामायिक प्रतिक्रमण आदि निरन्तर जारी रखे। बाद में उसने टोपियां बनाने का कारखाना लगाया। उसके बच्चे महावीर जैन स्कूल में पढ़े और वह स्थानकवासी समाज में प्रतिष्ठित श्रावक के रूप में विख्यात रहा।

उसी साल श्री नाथूलाल जी म. को राजस्थान के राजपूत युवक भिक्खा सिंह की उपलब्धि हुई। श्री भिक्खा सिंह जी नारनौल तथा नीम के थाने के बीच मिलगाणा ढाणी के रहने वाले थे। यों ही शौकिया तौर पर गाड़ी में सवार होकर दिल्ली आ गए। वापिस जाने पर घरवाले पीटेंगे, इस डर से नहीं गए। हरनाम दास माली से कहीं मुलाकात हो गई और वह पूज्य श्री नाथूलाल जी म. के चरणों में ले आया। होनहार युवक को गुरुदेवों ने धर्म का शरणा दिया तो उसने साधुवृत्ति में ढ़लने का संकल्प ले लिया। चातुर्मास पूर्ति पर मुनि मिलन हुआ और वैरागी की दीक्षा का निर्णय लिया गया। बामनौली संघ ने विनती की कि तेरह वर्ष पहले श्री मदनमुनि जी की दीक्षा का सौभाग्य हमें मिला था तो ये भी हमें मिले। पूज्यपाद श्री छोटेलाल जी म. ने उनकी भावना का सम्मान किया। आ. श्री सोहनलाल जी म. से आज्ञा प्राप्त हो गई। पौष सुदी त्रयोदशी, संवत् 1984 (5 जनवरी 1928) के दिन वह भव्य कार्यक्रम आयोजित हुआ। उस अवसर पर पांच दिन तक मैना सुन्दरी नाटक का मंचन हुआ था जिसकी शोहरत दूर-दूर तक फैलती रही। वैरागी भिक्खा सिंह जी दीक्षित होकर पूज्यपाद श्री नाथूलाल जी म. के तृतीय शिष्य श्री फूलचन्द जी म. कहलाए।

सत्याज्जायते धर्मः

पूज्यपाद श्री मदनलाल जी म. की जिन्दगी एक पर्वतारोही की यात्रा के समान ऊँचाई की ओर बढ़ती जा रही थी। पर्वतारोही को चलना भी होता है और ठहरना भी। उसको खाईयां भी लांघनी होती है, चोटियां भी। उपत्यकाओं अधित्यकाओं का निरन्तर सम्मान उसका मानस मंत्र होता है। कुछ पड़ावों का स्वाद लेने आओ आगे बढ़ें।

बामनौली में दीक्षा के समय ही फिर अग्रिम चातुर्मास की विनती का आग्रह बढ़ने लगा। दो वर्ष पुराना उल्लास पुनः दीप्त हो उठे इसलिए वहाँ के समाज ने श्री मदनलाल जी म. के चातुर्मास की मांग की। संघ ने विनती रखी कि म. श्री अपनी रहनुमाई में चातुर्मास करें। शास्त्रीय कल्प का प्रावधान नहीं था अतः पूज्यपाद श्री नाथूलाल जी म. की निश्राय में संवत् 1985 सन् 1928 का श्री मदनलाल जी म. का चातुर्मास घोषित हो गया। दीक्षा महोत्सव पर बामनौली वालों को दोहरा उपहार मिल गया। चातुर्मास का प्रारंभिक काल हर्षोल्लास से व्यतीत हो रहा था कि क्षेत्र में सामाजिक असंतोष के स्वर कर्णगोचर होने लगे। बामनौली में स्थानकवासी सम्प्रदाय के घर ही मुख्य थे। दिगम्बर परिवार दो चार थे पर मंदिर न होने से स्थानकवासियों के साथ चलते थे। आर्थिक दृष्टि से निम्न मध्यम वर्ग के थे। स्थानकवासी कुछ समृद्धिमान थे। इनसे उन्हें कुछ-कुछ ईर्ष्या भाव भी था। उन्होंने स्थानकवासियों के एक वर्ग को असंतोष की हवा दे दी। दीक्षा के अवसर पर जिन परिवारों को नाटक मंचन के दौरान मंच पर स्थान नहीं मिला, उन्होंने स्वयं को उपेक्षित सा मान लिया था। उन्हीं को दिगम्बर घरों ने अपने खेमे में मिला लिया। और वे समाज के नेतृत्व को चुनौती देने लगे। नेतृत्व वाला वर्ग उनके विरूद्ध प्रत्यक्ष परोक्ष टीका-टिप्पणी करने लगा। फलतः कटुता बढ़ने

लगी। युवा मुनि श्री मदनलाल जी म. को लगा कि असंतुष्ट वर्ग खुद काम करता नहीं, औरों को करने देता नहीं। इस दृष्टिकोण के कारण गुरुदेव ने उस असंतुष्ट वर्ग को खरी-खरी सुना दी। खिन्नता के कारण उन्होंने मुनियों की उपेक्षा करनी शुरू कर दी। धीरे-धीरे स्थिति इस मुकाम पर पहुँच गई कि तीस चालीस परिवारों ने श्वेताम्बर पंरपरा का परित्याग करके दिगम्बरत्व को स्वीकार कर लिया। इस विषय में पूज्य गुरुदेव ने अपनी भूल को स्वीकार करते हुए लिखा है– "यह चौमासा अशांति का रहा। मैं कुछ पक्षपात राग भाव में आ गया। जवानी थी, कुछ सोचा नहीं। वहाँ के मुखिया, प्रभावशाली श्रावक मेरा पक्ष करते थे। इसलिए मैंने समझ लिया कि मेरा सिक्का बैठ गया है, ऐसा समझना मेरी भूल थी।"[1] इस सत्य स्वीकृति से गुरुदेव का आध्यात्मिक जीवन निखर उठा। छद्मस्थता जन्य भूल यदि अज्ञान के कारण होती है तो आलोचना से उसका निराकरण होता ही होता है।

चातुर्मासोपरान्त पूज्य श्री छोटेलाल जी म. के चरणारविन्द में चांदनी चौंक ही पहुँचना था। पूज्यपाद गणावच्छेदक श्री छोटेलाल जी म. के घुटनों की पीड़ा असह्य हो चली थी। चलना फिरना अति कष्टप्रद था। विहार की तो कल्पना भी अशक्य थी। लेकिन वे अपनी सन्निधि में श्री मदनलाल जी म. को रखकर निश्चिन्त हो जाते थे। प्रवचन, सेवा, लोक प्रभावना सब कुछ सरलता से हो सकता था। सवंत् 1986 सन् 1929 में चांदनी चौंक समाज ने महावीर भवन (बारादरी) का जीर्णोद्धार करने का निर्णय कर लिया। लाला गोकुलचन्द जी की रहनुमाई में सारा कार्य संपादित होना था। पूज्यपाद श्री छोटेलाल जी म. ठाणे छः श्री रतनलाल जी पारख द्वारा निर्मापित लेहसवा कटरे में ठहर गए। वहीं प्रवचनादि होने लगे। धर्म-ध्यान के ठाठ तो होने ही थे क्योंकि संचालक थे श्री मदनलाल जी म.।

---

1 बामनौली में स्थानकवासी परिवारों की क्षति को पूज्य गुरुदेव ने कुछ अर्से बाद प्रकारान्तर से पूर्ण भी किया। बिजरौल गांव के कुछ दिगम्बर परिवारों को स्थानकवासी आस्थाओं से जोड़ा। उन्हीं परिवारों में से एक परिवार के दौहित्र श्री नरेश मुनि जी म. वाचस्पति गुरुदेव के प्रशिष्य हैं।

उस समय की दो मुख्य घटनाएं उन्हीं के हवाले से— “श्री छोटेलाल जी म. ने समीपवर्ती कुएं पर एक छायामय आकृति की ओर इशारा करते हुए पूछा— “मदनमुनि क्या कुछ दिख रहा है?” मैंने कहा— ‘एक छायाकृति प्रतीत हो रही है।’ बड़े महाराज बोले— ‘यह एक सैयद है।’ प्रथम बार किसी दैवीय शक्ति का एहसास हुआ था। जैन तत्व विज्ञान का आश्रय लें तो सैयद को व्यन्तर देव कह सकते हैं। दूसरी, मैंने अपने पन्द्रह वर्षीय साधु जीवन की प्रत्येक ज्ञात त्रुटि की आलोचना पूज्य गुरुदेव श्री नाथूलाल जी म. के समक्ष प्रस्तुत की। उन्होंने गहन संतुष्टि प्रकट की और यथोचित प्रायश्चित देकर आत्मशुद्धि कर दी।” चौंतीस-पैंतीस साल की उदीयमान आयु में आलोचना का साहस वही कर सकता है जिसके अन्तर में सत्य के प्रति गहरी आस्था और निष्ठा होती है।

चातुर्मास के पश्चात् इस वर्ष नया अनुभव लेने की योजना बनी। मूनक में विराजमान पूज्यपाद श्री मयाराम जी म. के गुरुभ्राता, बचपन के साथी गणावच्छेदक श्री जवाहरलाल जी म. के मंगलमय दर्शन करके उनका मंगल आशीष लेना और मंगल मार्गदर्शन प्राप्त करना। जीन्द, बड़ौदा, नरवाना, टोहाना को स्पर्श करते हुए मूनक पहुँचे। पूज्य श्री जवाहरलाल जी म. के अतिरिक्त श्री खुशीराम जी म., श्री गणेशीलाल जी म., श्री बनवारी लाल जी म., श्री हिरदूमल जी म. श्री मेलाराम जी म. तथा तपस्वी श्री फकीरचन्द जी म. के दर्शन भी हुए। पूज्य गणावच्छेदक जी म. ने उभरते हुए युवा मुनि का संयम, प्रवचन, चिन्तन, स्वभाव, अनुभाव, प्रभाव देखा तो गद्गद हो गए। उन्होंने देखा कि मदनमुनि जी प्रत्येक दीक्षा-वृद्ध को घुटने टिकाकर श्रद्धा सहित वन्दना करता है तब इसके चेहरे पर अलग ही आभा होती है। प्रवचन करता है तो आगमों का सार निचोड़ देता है, समाज को झिंझोड़ देता है। मुनिसंघ के भविष्य निर्माण के लिए सोच भी है, योजना भी है तथा चेष्टा भी है। ये किसी भी काम को हाथ में ले ले तो काम पूरा होकर ही रहता है। पूज्य श्री जवाहरलाल जी म. अपने कृपापात्र श्री मदनलाल जी म. को प्यार से ‘छोटी खुदा’

कहकर पुकारने लगे। उनकी हार्दिक इच्छा बनी कि मदनमुनि जी मेरे पास वर्ष में एक बार अवश्य आएं। इस भावना के बिल्कुल समान ही श्री मदनलाल जी म. भी सोच रहे थे कि ऐसे महापुरुषों के प्रतिवर्ष ही दर्शन करूं। मूनक से चलकर पुनः चांदनी चौंक में गणावच्छेदक श्री छोटेलाल जी म. की सेवा में पहुँचे। उस वर्ष संवत् 1987 सन् 1930 का चातुर्मास भी कटरा लेहसवां में हुआ। क्योंकि बारादरी का निर्माण कार्य चालू था। धर्म-ध्यान की लहर पूर्ववत् बरकरार रही। अभूतपूर्व कहें तो भी ठीक, पूर्ववत् कहें तो भी ठीक।

चातुर्मास पूर्ण होते ही पुनः मूनक जाकर पूज्य श्री जवाहरलाल जी म. के दर्शनों का लाभ लिया। रास्ता पड़ाव मंजिल गतवर्ष की तरह ही थी। इस बार अतिरिक्त आनन्द का कारण बना उनके प्रिय सखा श्री रामजीलाल जी म. का साथ। आपसी मंत्रणाओं में रातें गुजर जाती, समय का पता नहीं चलता। वापसी में कैथल का इलाका छूआ और साथ मिला तपस्वी श्री फकीरचन्द जी म. तथा श्री टेकचन्द जी म. का। कैथल में धर्म प्रभावनाओं की प्रबल संभावना देखी। कुछ समय लगाने का मन भी था पर प्राथमिकता मिली बड़ौदा को। पूज्य श्री मयाराम जी. म. की जन्मस्थली होने के साथ-साथ बड़ौदा ने प्रिय साथी श्री रामजीलाल जी म. को जन्म दिया था, इसलिए बड़ौदा का चाव बढ़ गया। श्री मोहर सिंह जी म. के नेतृत्व में जिन शासन के दो युवा मुनि बड़ौदा की धरती पर पहुँचे तो जर्रा-जर्रा झूठ उठा। प्रवचन सुनाया गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. ने, साथ निभाया श्री रामजीलाल जी म. ने। बड़ौदा में भिवानी श्री संघ चातुर्मास की विनती लेकर उपस्थित हुआ। 23 वर्ष पूर्व जो गरिमा-महिमा श्री मयाराम जी म. ने भिवानी में फैलाई थी उसे दोबारा दिखाने की क्षमता थी श्री मदनलाल जी म. में, इसलिए उस क्षेत्र की भावना थी कि चातुर्मास मिले। गुरुदेव श्री जी ने पूज्य श्री छोटेलाल जी म. की आज्ञा मंगवाकर भिवानी को संवत् 1988 सन् 1931 के चातुर्मास की स्वीकृति प्रदान कर दी।

पूज्य श्री मोहरसिंह जी म. के निश्राय में जब बांगर इलाके का विचरण चल रहा था तब ज्ञात हुआ कि राजस्थान से आचार्य श्री जवाहरलाल जी

म. उत्तर भारत के विचरण हेतु पधार रहे हैं। हुक्मी गच्छ के मूर्धन्य आचार्य का स्वागत करने का निर्णय लिया क्योंकि इनके पूर्वज श्री उदयसागर जी म. ने श्री मयाराम जी म. को अपने शिष्य श्री छोटेलाल जी म. को उपहार में दिया था। श्री जवाहरलाल जी म. की प्रवचन शैली का सारा जमाना कायल था। हाँसी में उनका भव्य स्वागत किया गया। उन्होंने भी श्री मदनलाल जी म. की कर्तृत्व शक्ति को पहचाना। आपसी विचारों का आदान-प्रदान हुआ। उनका उत्तर भारत में करीब एक वर्ष विचरण रहा। शताधिक साधु-साध्वी उनसे मिले मगर उन्होंने अपनी जीवनी में दो युग पुरुषों का ही उल्लेख किया है। एक श्री मदनलाल जी म. का, दूसरे श्री कवि जी म. का जो कि चरखी दादरी में मिले थे। हाँसी के मिलन की तो विशेष स्तुति की है। उस मिलन में दोनों महापुरुषों ने अपनी-अपनी विशेषताओं का पारस्परिक आदान-प्रदान भी किया। पूज्य श्री जवाहरलाल जी म. ने जैनों की नवोदित शाखा 'तेरापंथ' के प्रश्नों के समुचित उत्तर सिखाये तथा श्री मदनलाल जी म. ने उत्तर भारत में आक्रामक बनकर उभरे आर्य समाज के तर्कों के समाधान पूज्य श्री जवाहरलाल जी म. को बताए। यद्यपि श्री जवाहरलाल जी म. पूज्य गुरुदेव से बीस वर्ष बड़े थे पर कभी बड़े छोटेपन का अहसास नहीं कराया।

श्री जवाहरलाल जी म. दिल्ली बारहदरी में चातुर्मासार्थ प्रस्थित हुए जहाँ गणावच्छेदक श्री छोटेलाल जी म. के साथ संयुक्त चातुर्मास होना था तथा श्री मोहर सिंह जी म., श्री मदनलाल जी म. ठाणे पांच भिवानी के लिए चले। कलानौर में गिरोड़ निवासी श्री मनोहरलाल जी अग्रवाल की दीक्षा हुई और ठाणे छः का चातुर्मासार्थ प्रवेश हुआ। श्री नौबत राय जी म., श्री बलवन्त राय भण्डारी जी म. तथा श्री इन्द्रसेन जी म. ये तीन मुनिराज और थे। भिवानी चातुर्मास मील का पत्थर प्रमाणित हुआ।

हजारों लोगों ने कुव्यसनों का त्याग कर जीवन का रूपान्तरण किया। गुरुदेव के सैद्धान्तिक प्रवचनों का इतना प्रभाव पड़ा कि डेढ़ सौ

से दो सौ के लगभग परिवारों ने सम्यक्त्व ग्रहण की और जैनत्व को अपनाया। जो कार्य कभी श्री मयाराम जी म. के माध्यम से हुआ करता था आज श्री मदनमुनि जी म. के हाथों हुआ। जैन समाज के विस्तार के संबंध में उनके जेहन में एक ब्लूप्रिंट था, उसके आधार पर वे कहते थे कि मैं प्रतिवर्ष पांच सौ नए जैन परिवार तैयार कर सकता हूँ बशर्ते पुराने जैन उन्हें स्वीकार कर सकें, अपना सकें, हजम कर सकें।

इस अद्वितीय सफलता को दिल्ली विराजमान पूज्य गुरुदेव श्री छोटेलाल जी म. के चरणों में अर्पित करने का भाव था। परन्तु मूनक में स्थानापति रूप से विराजित पूज्य श्री जवाहरलाल जी म. उनके प्रमुख गन्तव्य थे। हाँसी से मूनक निकट है अतः उधर ही बढ़े। इस बीच रोहतक में दीर्घ समय से स्थिरवास किए पूज्य गणावच्छेदक श्री जड़ावचन्द्र जी म. का स्वर्गवास हो गया। गण के तीन गणावच्छेदकों में से एक का निधन संघ के लिए कष्टप्रद था। तदपि संघ संचालन के दो सूत्रधार अपनी आभा बिखेर रहे थे। ये आश्वासन सबके लिए पर्याप्त था। जब श्री मदनलाल जी म. मूनक पहुँचे तो पूज्य श्री जवाहरलाल जी म. ने उनको सीने से लगा लिया। कहने लगे मैं तेरी प्रतीक्षा कर रहा था। मेरी 'छोटी खुदा' आ गई। श्री गणावच्छेदक जी म. की तबियत कुछ खराब चल रही थी। दिन भर शास्त्रों का पारायण होता रहता था। एक दुपहरी को पूज्य श्री जवाहरलाल जी म. ने श्री मदनलाल जी म. को बुलाया, कहने लगे– "मुझे संथारा करवा दो।" ये तो भौचक्के रह गए। कहने लगे– 'गुरुदेव आपकी सेहत अभी भी काफी अनुकूल है। बस कमजोरी सी है। कुछ खुराक ले लो कमजोरी कम हो जाएगी। अभी संथारे की स्थिति तो प्रतीत नहीं हो रही।' पूज्य श्री फरमाने लगे– 'अच्छा, अभी तक मुझसे मोह नहीं छूटा, चल, ले आ कुछ।' श्री मदनलाल जी म. मुग्ध भाव से उनके लिए थोड़ा दूध लाए। पूज्य श्री जी ने कुछ पीया, फिर हंसकर बोले– 'मदन जी म. मैंने तुम्हारी बात मान ली, अब तुम मेरी बात मान लो, संथारा करवा दो।' दूध मंगवाने के पीछे उनकी क्या भावना थी, ये बात अब समझ में आई।

बात को पूरा करने के लिए श्री मदनलाल जी म. ने श्री रामजीलाल जी म. से आंख मिलाई। दोनों की सहमति बन गई। बड़ों की बात मानने में विनय प्रतिपत्ति भी थी, उत्कृष्ट साधना का समर्थन भी।

एक युग पुरुष को आखिरी विदाई देनी बड़ी हृदय विदारक घटना थी, पर ये भी करनी पड़ी। मध्याह्न अढ़ाई बजे संथारा करवाया। पूज्य म. श्री दीवार का सहारा लेकर बैठे थे। मुनिमण्डल पास था। समाज हाजिर हो गया। सूत्र वाचन अविराम चलने लगा। श्री मदनलाल जी म. उस दिव्य आत्मा की सन्निधि में बैठे रहे और रात साढ़े तीन बजे संथारा पूरा हो गया। कुल तेरह घंटे पूर्व जो आत्मा देह में थी वह विदेह हो गई। सब मुनियों को उनके जाने का दुःख था पर उनकी भावना पूर्ण करवाने में सहयोग दिया इस बात की संतुष्टि थी। संस्कार और श्रद्धांजलि के बाद मुनियों के विहार हुए।[1]

दो माह में दो गणावच्छेदक संघ को अनाथ कर गए थे, इस ग़म को कम होने में काफी समय लगा।

अब जाना तो पूज्य श्री छोटेलाल जी म. व श्री नाथूलाल गुरुदेव के चरणों में ही था, पर रास्ता थोड़ा भिन्न लिया। पहले तो त. श्री फकीरचन्द जी म. की जन्म भूमि 'दनौदा' को तृप्त किया फिर उकलाना मण्डी पधार गए। जनता ने उनका नाम सुना और दीवानगी छा गई। मण्डी में आम सभा का आयोजन करवाया। गुरुदेव ने समाज सुधार की हुंकार लगाई। प्रेरणा दी कि– "मण्डी की चार दीवारी में असामाजिक हरकतें न हों, यदि यहाँ सांग होंगे, शराब की दुकाने खुलेंगी तो मण्डी का सम्मान ध्वस्त हो जाएगा।" सारी मण्डी उनके उद्बोधन से जाग गई। सबने सामूहिक रूप से कसम खाई कि आइंदा यहाँ कभी भी सांग नहीं होगा और न ही शराब की दुकान खुलने दी जाएगी। यह प्रतिज्ञा कोई तात्कालिक उबाल नहीं थी, पत्थर की लकीर बनकर आज तक उस दिन की याद दिला रही है।

---

1 यहाँ तक की अधिकतर सामग्री व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. द्वारा लिखित अपूर्ण आत्मकथा से ली गई, इसके बाद अन्यान्य स्रोतों से।

इधर श्री मदनलाल जी म. अपने पूज्य पुरुषों के दर्शन करने के लिए दिल्ली की ओर आ रहे थे, उधर होशियारपुर में पंजाब में प्रमुख-प्रमुख साधु-साध्वियों का सम्मेलन हो रहा था, जिसमें उपाध्याय श्री आत्माराम जी म., युवाचार्य श्री काशीराम जी म., गणी श्री उदयचन्द जी म., प. श्री नेकचन्द जी म. आदि मुनिराज तथा प्रवर्तिनी श्री पार्वती जी म., आर्या राजमती जी म. आदि ने भाग लिया। उस सम्मेलन में विशिष्ट निर्णय लिए गए। पंजाब के सभी साधु-साध्वियों ने आचार्य श्री सोहनलाल जी म. में अपने निष्ठा व्यक्त की। कांफ्रेंस द्वारा प्रकाशित पक्खी पत्र सभी को मान्य होगा। आचार्य श्री जी म. ने अपने पक्खी पत्र का आग्रह छोड़ दिया। इसलिए जिन साधु-साध्वियों से लगभग तेरह साल से जो संबंध विच्छिन्न हो गए थे, उनसे पुनः संबंध कायम हो गए। अब तक पृथक् रहने वाले मुनियों– विशेषतः श्री मयाराम जी म. परिवार वाले मुनियों– ने स्थविरों की आज्ञा से चातुर्मास किए थे। कोई नया आचार्य बनाकर संघ भेद नहीं किया था।

अगले वर्ष होने वाले साधु सम्मेलन में पंजाब संप्रदाय के पांच मुनियों को प्रतिनिधित्व का अधिकार दिया गया जिनमें पूज्यपाद श्री मदनलाल जी म. को भी चुना गया। यद्यपि वे उस सम्मेलन में मौजूद भी नहीं थे तथा आयु में सबसे छोटे थे।

पूज्यपाद श्री मदनलाल जी म. के प्रति समग्र समाज सतृष्ण आंखों से निहार रहा था और वे चले अपने गुरुओं को निहारने दिल्ली की ओर। रोहतक में श्री रामनाथ जी म., श्री सुखीराम जी म. के दर्शन किए। दिल्ली पहुँचते ही कहसून का संघ अगले चातुर्मास की विनती लेकर आ गया। अधिकतर चातुर्मास घोषित हो चुके थे। बहुसूत्री श्री नाथूलाल जी म. का बामनौली के लिए स्वीकृत कर लिया था। पूज्य श्री मदनलाल जी म. के लिए चांदनी चौंक का आग्रह था। बड़े म.सा. अपने पास इसलिए रखना चाहते थे कि अगले वर्ष होने वाले अजमेर बृहत् साधु सम्मेलन की रूपरेखा तय करने में, प्रमुख प्रबंधक श्रावकों से संपर्क बनाने में दिल्ली

उपयुक्त स्थान था। श्री मदनलाल जी म. को प्रतिनिधि का दर्जा मिल चुका था। अतः श्रावक वर्ग उनसे परामर्श करना उचित समझता था। परन्तु कहसून के श्रावक तो उनका चातुर्मास लेने को बजिद थे। ला. न्यादरमल, पारसदास, कलीराम, रामनारायण, केदारनाथ, कंवरसेन आदि श्रावकों की भावनाओं को ठुकराने का मन तैयार नहीं हुआ था। पूज्य श्री मदनलाल जी म. तथा श्री बलवन्त राय भण्डारी जी म. ठाणे दो का नाम कहसून चातुर्मास के लिए घोषित कर दिया। दोनों मुनिराज दिल्ली से रोहतक आए तो उन्हें उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. के एक शिष्य जिनका नाम अज्ञात है मिले। उन्हें उपाध्याय श्री ने विशेष रूप से इसलिए भेजा था ताकि चातुर्मास में दो की बजाय तीन का सिंघाड़ा तो बन ही जाय। पारस्परिक प्रेम में ऐसी संवेदनशीलता और भावुकता उभरती ही है।

कहसून जैसा छोटा गांव व श्री मदनलाल जी म. जैसे महतो महीयान् मुनिराज अद्‌भुत संयोग था। सामान्य जनता ही नहीं, प्रबुद्ध संत भी कहसून चातुर्मास के निर्णय से चकित थे। सड़क, रेल किसी भी प्रकार का रास्ता वहाँ नहीं जाता था। एक सौ बीस घरों का गांव था। चालीस परिवार जैन, चालीस ब्राह्मण व चालीस हरिजन परिवार थे। जैन प्रायः सम्पन्न थे। गुरुदेव के पदार्पण से एक बहार आ गई। मध्याह्न प्रवचन में समग्र ग्राम तथा निकटवर्ती ग्रामों की जनता बढ़ चढ़कर भाग लेती थी। स्थानीय समाज ने दर्शनार्थियों की सेवा में दिन रात एक कर दिया। अमृतसर के दर्शनार्थी बन्धुओं की टिप्पणी थी कि रात को सोने के लिए बिछाई गई चांदनियां इतनी साफ और धुली हुई थी कि मानों वे दूध से धोई हो। पूज्य गुरुदेव हरियाणा के सुदूर कोने में भी बैठकर समाज की मुख्य गतिविधियों के प्रति सतर्क दृष्टि अपनाए हुए थे। उनका चिन्तन कभी भी निष्क्रिय नहीं हुआ। अगले वर्ष चैत्र वदी 1990 (अप्रैल, सन् 1933) के लिए अजमेर में बृहत साधु सम्मेलन होने की घोषणा से पूज्य गुरुदेव प्रभाावित थे। उनका मन्तव्य था कि स्थानकवासी मुनियों को एक बार मिलकर

आपसी मतभेदों का निराकरण करना चाहिए। सदियों पुरानी परम्परा एवं भिन्नताओं के कारण जनमानस बंटा हुआ है और समाज की ऊर्जाएं पारस्परिक प्रतिद्वंद्विता में क्षीण हो रही हैं। खेलशंकर दुर्लभ जी भाई के नेतृत्व में कांफ्रेंस मुनि सम्मेलन का आयोजन कर रही थी। तथा स्थान-स्थान पर जाकर मुनियों को अजमेर पहुँचने के लिए मना रही थी। पूज्य गुरुदेव उस विशाल कार्यक्रम की भावी परिणति का पहले ही आकलन करना चाहते थे। इसलिए उन्होंने कहसून पहुँचकर जीवाभिगम सूत्र के "विजयदेव अधिकार" का सविधि पारायण करना प्रारंभ कर दिया। उनका देवसिक समय तो शासन प्रभावना में व्यतीत होता था। संध्या तथा रात्रि का बहुल भाग पूर्वोक्त पाठ के परावर्तन (जाप) में। पर्यूषणों से पूर्व उन्हें आभास हुआ कि अजमेर सम्मेलन का मुख्य लक्ष्य (जैन-एकता संघ-एकता) प्राप्त नहीं हो पाएगा। छोटे से गांव कहसून में पर्यूषणों में श्रोता हजारों की तादाद में होने लगे। संवत्सरी पर तो दो हजार से ऊपर होंगे। उस मंगलपर्व पर गुरुदेव की वाग्धारा लगातार आठ घंटे बरसती रही।

उस वर्ष की एक दैविक घटना सुचर्चित रही है। आधार है जनश्रुतियां। पूज्य गुरुदेव तीन मंजिला मकान में ठहरे हुए थे। संवत्सरी से तीन दिन पूर्व मुनि-मण्डल तीसरी मंजिल पर था। एक भाई भी विश्राम रत था। दूसरी मंजिल पर तीन भाई– बड़ौदा का मुखराम, सूरतराम, फूलचन्द सुपुत्र श्री भगतराम थे। सूरत का उपवास का चोला था तथा शेष दो का तेला। पहली मंजिल पर श्रावक नानकचन्द का तप का ग्यारहवां दिन था। रात साढ़े बारह बजे सारे गांव में हो हल्ला मच गया। ऐसा लगा मानो डाकुओं ने गांव पर हमला बोला हो, सारे गांववासी चीखने लगे हों। सूरतराम डरकर दूसरी मंजिल से नीचे कूद गया। फूलचन्द उछल पड़ा तथा छत से टकरा गया। शोर शराबे में गुरुदेव की आंख खुल गई। चारों ओर से शोर सुनाई पड़ रहा था। "उधर गए, उधर से गए।" मतलब कुछ समझ में नहीं आ रहा था। गुरुदेव नीचे आकर स्थिति

का जायजा लेने लगे। सूरतराम, फूलचन्द को देखा कि भयभीत हैं। छलांग और उछाल के बावजूद चोट किसी को नहीं आई, अतः राहत मिली। उन दोनों से पूछताछ की, तुम्हें क्या हो गया था? उन्होंने बताया– "गुरुदेव, दो आदमी आए थे, शक्ल अलग-अलग ही थी। हमसे पूछने लगे– गुरु म. कहाँ है? हमने ऊपर की मंजिल की ओर ईशारा कर दिया। वे ऊपर जाते देखे।" पूज्य गुरुदेव इस पृच्छा के बाद पहली मंजिल पर आए। नानकचन्द से पूछा, बोला– 'दो देवता आए थे, मुझे पानी पीने को देने लगे, मैंने मना कर दिया क्योंकि मेरी तपस्या है। फिर वे दोनों कहने लगे– चलो ऊपर गुरु म. के दर्शन कर आते हैं। यह कहकर वे दोनों ऊपर गए तथा थोड़ी देर बाद विशाल तेज पुंज गांव से बाहर जाते देखा।' पूज्य गुरुदेव सारी बातें सुनकर ऊपर चले गए। समग्र हरियाणा में चर्चा हो गई कि दो देवता दर्शन करने आए थे। इस चर्चा को बल इस बात से भी मिला क्योंकि नानकचन्द श्रावक जो बहुत सालों से बीमार था, वात-रोग से पीड़ित था चलने-फिरने में काफी असमर्थ था, उस घटना के बाद पूर्णतः ठीक हो गया। दीर्घ आयु पाई तथा लोगों को बताता रहा। चर्चा का दूसरा कारण ये बना कि संवत्सरी के तुरन्त बाद पूज्य गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. गंभीर रूप से सन्निपात रोग से ग्रस्त हो गए। उनको बुखार इतना तेज व लंबा रहने लगा कि स्थिति चिन्ता की बन गई। गांव में उपचार की सुविधा नहीं थी। इक्यावन दिन बुखार चला। जनसामान्य की धारणा बनी कि विजयदेव के पाठ की किसी त्रुटि के कारण आगन्तुक देवता प्रकोप कर गए। तत्त्वं केवलिगम्यम्।

जब गुरुदेव बुखार की पीड़ा से पूरी तरह टूटते जा रहे थे, तब उन्होंने अपने प्रिय-सखा, अभिन्न-हृदय श्री रामजीलाल जी म. को याद किया। उन्हें बीमारी का पता चला तो वे भी तड़प उठे। उन दिनों उन्होंने लघु सर्वतोभद्र तप का विधि सहित जप और तप करके पारणा किया ही था कि अपने आराध्य प्राणप्रिय श्री मदनलाल जी म. की रुग्णता ने आकुल-व्याकुल कर दिया। अब विश्राम का क्या

काम था? गुरुजनों से आज्ञा ली और रोहतक से प्रस्थान किया। निरन्तर चलकर दो दिन में कहसून पहुँच गए। अपने 'रामजी' को पाकर गुरुदेव आश्वस्त हुए। श्री रामजीलाल जी म. किंकर्त्तव्यविमूढ़ थे कि दवा और सेवा का कोई परिणाम नहीं आ रहा था। बुखार की इक्यावनवीं रात दो बजे गुरुदेव के शरीर में भीषण पीड़ा बढ़ने लगी। सारे बदन में ऐंठन आ गई, लगा कि जीवन लीला पूरी न हो जाय। योगिराज श्री रामजीलाल जी म. कभी शरीर को दबाते, कभी हल्के हाथों से सहलाते तथा मन ही मन कुछ शास्त्रीय जाप भी करते जाते। बैठे-बैठे वे किसी असामान्य भाव लोक में पहुँच गए। उस स्थिति में उन्होंने देखा कि एक जाना पहचाना चेहरा है। फिर स्पष्ट हुआ कि पूज्यपाद श्री मयाराम जी म. का श्रावक जीतराम सुराणा, चांदनी चौंक में मूंगे की हवेली का निवासी है। लेकिन उसे दिवंगत हुए कई साल हो चुके थे। उसे उपस्थित देख श्री रामजीलाल जी म. कुछ पूछने ही वाले थे कि श्रावक खुद ही बोल पड़ा– "महाराज श्री जी, आप चिन्ता न करो, गुरुदेव अब ठीक हो जाएंगे और आपको पांच दिन तक बुखार आयेगा।" फिर वह श्रावक गुरुदेव जी म. की तरफ मुड़ा। उनके शरीर पर हाथ रखा तथा एक काला कपड़ा शरीर से उतारा और एक तरफ रख दिया। ऐसा श्री रामजीलाल जी म. को दिखा कि फिर वह दृश्य ओझल हो गया। उन्होंने अपने स्वाभाविक स्तर पर आकर कुछ स्थिति का जायजा लिया तथा पूज्य गुरुदेव को निवेदन किया– "गुरुदेव, जीतमल जी आए थे, कह गए हैं कि गुरुदेव जी म. ठीक हो जाएंगे, तुम्हें पांच दिन बुखार आएगा।"

दो घण्टे से तड़पते शरीर में कुछ सुधार के चिन्ह प्रकट होने लगे और धीरे-धीरे सन्निपात का प्रभाव उतरा। इधर रोग दूर हुआ उधर श्री रामजीलाल जी म. तीव्र ज्वर से पीड़ित हो गए। यह पहले से ही आभास हो चुका था कि पांच दिन बुखार आएगा अतः दवाई भी नहीं ली। पाठ-जाप करते रहे। रोजाना कहसून से गोघड़िया गांव तक घूमने जाते, वापस आकर यथारूचि दुग्ध आदि लेते। दिनचर्या निर्बाध रखी।

मन में संतोष था कि गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. स्वस्थ हो गए। पांच दिन बाद स्वयं भी। क्रमशः दुर्बलता दूर हुई। दोनों मित्र मुनि भावी योजनाओं की कल्पनाओं में घूमने लगे। सही समय पर कहसून से विहार हो गया। इतिहास का स्वर्णिम पृष्ठ लिखा जा चुका था।

संगच्छध्वम् संवदध्वम्

चार महीने बाद अजमेर में समग्र भारत के स्थानकवासी मुनियों का पहली बार सम्मेलन होने जा रहा था। पंजाब के पांच प्रतिनिधि घोषित हो चुके थे। गणी उदयचन्द जी म. वृद्धावस्था के बावजूद सम्मेलन में शरीक होने के इच्छुक थे। अतः चातुर्मास से पूर्व ही राजस्थान में प्रविष्ट हो चुके थे। युवाचार्य श्री कांशीराम जी म. भी प्रस्थित थे। उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. अपने साथी श्री मदनलाल जी म. की जीन्द में प्रतीक्षा कर रहे थे। पूज्य श्री रामजीलाल जी म. तो श्री मदनलाल जी म. के सहवर्ती थे ही। सभी दिल्ली जाकर पूज्य गणावच्छेदक श्री छोटेलाल जी म. के चरणों में अवनत हुए। अजमेर सम्मेलन में जाने की अनुमति मांगी। उन्होंने विशेष रूचि नहीं दिखाई। क्योंकि उन्हें लग रहा था कि सम्मेलन में विशेष कुछ उपलब्धि तो होगी नहीं तो दो तीन महीने में सात सौ आठ सौ मील का सफर करने की तुक क्या है? दूसरा उनका ख्याल था कि अधिक भीड़-भाड़ में मुनियों की संयम नियमावली कुछ ना कुछ शिथिल होती है। स्वाध्याय ध्यान चिन्तन की प्रक्रिया में व्यवधान भी पड़ता है। उनके विचारों के आगे श्री मदनलाल जी म. तथा श्री रामजीलाल जी म. तो अवनत हो गए पर उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. ने निवेदन किया कि हजूर हजार साल में ये अवसर आ रहा है। मुनियों का एकीकरण हो रहा है। कुछ प्रबुद्ध चिन्तक मुनि ही वहाँ ठोस काम कर सकेंगे। श्री मदनमुनि जी म. जैसे स्पष्ट चिन्तक मुनिराज की वहाँ महती आवश्यकता है और हाँ यदि ये नहीं जाएंगे तो मेरा मन भी वहाँ जाने का नहीं है। पांच में से तीन प्रतिनिधि नहीं पहुँचेंगे तो पंजाब की आवाज को कौन सुनेगा? उपाध्याय श्री जी की दलील काम कर गई। अनुमति मिल गई। 20 जनवरी 1933 को कांफ्रेंस के मुख्य-मुख्य

पदाधिकारी दिल्ली आए। बारादरी में श्री छोटेलाल जी म.सा. से इजाजत ली ताकि मुनि मण्डल अजमेर के लिए विहार करे। सफर लम्बा था पर उत्साहशक्ति उससे भी प्रबलतर थी। पूज्य गुरुदेव राजस्थान की दो बार यात्रा कर चुके थे। मार्ग से काफी परिचित थे। पड़ावों का भी ज्ञान था। उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. जैसे अन्तरंग हृदय वाले महामुनि की प्रमुखता में चिन्ता भी कुछ नहीं थी। खट्टे-मीठे अनुभव का रसास्वादन करते हुए मुनिमण्डल आगे बढ़ रहा था। रिवाड़ी जिले के बावल कांटी स्टेशन पर पड़ाव डला हुआ था। स्टेशन मास्टर भावनाशील था। ठहरने का पर्याप्त स्थान दिया। आहार के समय पूज्य गुरुदेव ने पूछा "आहार किन-किन घरों से उपलब्ध हो सकता है?" स्टेशन मास्टर ने कुछ रेलवे क्वार्टर समझा दिए। तथा विनती भी कर दी कि पहला क्वार्टर मेरा है वहाँ अवश्य पधारना। गुरुदेव श्री जी सर्वप्रथम उसके क्वार्टर पर ही चले गए। वहाँ बड़ा विषम विचित्र नजारा मिला। गृह स्वामिनी देखते ही आग बबूला हो गई। जलती लकड़ी हाथ में लेकर मारने को दौड़ी। सावधानी पूर्वक बचाव किया। कुछ समझने समझाने का अवसर ही नहीं दिया। गालियों की बौछार शुरू कर दी। एक बात बार-बार बोलने लगी– "मैं तुम्हें कैद कराऊँगी।" पूज्य गुरुदेव असमंजस मे पड़ गए कि मैं निर्दिष्ट घर की बजाय गलत घर में पहुँच गया। यथार्थ समझने के लिए स्टेशन पर लौट आए। स्टेशन मास्टर से पूरी कहानी कही। स्टेशन मास्टर शर्मसार हुआ। हकीकत बयान करने लगा– 'गुरुदेव पहले तो क्षमा करना, वो मेरी धर्मपत्नी ही है, उसका स्वभाव बड़ा उग्र है। पर अनुमान नहीं था कि आपसे भी ऐसा सलूक करेगी। मुझे तो प्रतिदिन सत्तर बार कैद करवाती है। संतों को हंसी भी आई, दया भी। बेचारा कैसे गृहस्थी चला रहा है।

संवत् 1990 के सम्मेलन के लिए विहार चल रहा था। मार्ग में एक गांव में ठहरे। एक वृद्ध जैन भाई अपने चार वर्षीय पौत्र को लेकर आया। बोला– 'गुरुदेव! इससे लोगस्स तथा इच्छामिखमासमणो का पाठ सुनो।' अनुमति मिलने पर बालक ने सुस्पष्ट उच्चारण के साथ

पाठ सुनाए। पूछा कि किसने सिखाया? वृद्ध बोला– 'जब से बोलना सीखा है तभी से सुना रहा है। हमने नहीं सिखाया।' उस बालक को पच्चीस बोल का थोकड़ा सुनाने को कहा तो चुप रहा। वृद्ध बोला– 'बीच-बीच में पूछ लो।' गुरुदेव ने चौबीसवें बोल के बाईस अंक का भंग सुनाने को कहा– उसने सही-सही सुना दिया। कुछ शास्त्र पाठ भी सुनाए। पूज्य गुरुदेव ने कहा– 'यह अमूल्य निधि है, पूर्व जन्म का ऋषि है, संभालकर रखना, ऐसी चीजें ज्यादा नहीं ठहरती।' जब गुरुदेव उस गांव में वर्ष भर बाद गए तो वह बालक नहीं आया। वृद्ध व्यक्ति आया। उसने बताया– 'गुरुदेव आपने कहा तो ठीक था पर हम उस निधि को संभाल नहीं सके। वह बालक काल कर गया।'

पंजाब के मुनियों का काफिला अजमेर की ओर बढ़ रहा था। गुजरात, कच्छ, काठियावाड़, पंजाब, यू.पी. मालवा आदि प्रान्तों के सन्त परीषह सहते-सहते पधार रहे थे पर राजस्थान के मेजबान मुनियों में आपसी तनातनी चल रही थी, विशेषतः हुक्मी गच्छ में। आ. श्री जवाहरलाल जी म. जैसे प्रतापी संत, सम्मेलन में प्रतिनिधि के तौर पर आने से आनाकानी कर रहे थे। युवाचार्य श्री कांशीराम जी म. के नेतृत्व में पंजाब के मुनिराज उनसे जेठाना में मिले। पूज्य गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. का उनसे पुराना घनिष्ठ परिचय और आत्मीयता थी। वहाँ सम्मेलन के एजेंडे की चर्चाएं हुई। लगभग चालीस-पचास विषयों को चिन्तन के लिए नोट कर लिया ताकि विषय बद्ध विचार चर्चा हो सके। उनमें संवत्सरी पक्खी की एकता, प्रतिक्रमण की समानता, फल वनस्पति की ग्राहयता-अग्राहयता, दीक्षार्थी की योग्यता, गुरुधारणा, आचार्यों का अधिकार क्षेत्र, फोटो, वस्त्र प्रक्षालन आदि मुख्य विषय थे।। युवाचार्य श्री जी ने श्री जवाहरलाल जी म. को प्रतिनिधि के रूप में शामिल होने के लिए रजामंद किया। वहाँ से 'खर्वा' गांव में शतावधानी श्री रत्नचन्द जी म. से मिलन हुआ। छोटी ब्यावर में कवि श्री नानकचन्द जी म., पूज्य श्री अमोलक ऋषि जी म., जैन दिवाकर श्री चौथमल जी म., श्री माणकचन्द जी म., श्री मणिलाल जी म. आदि मूर्धन्य मुनिराज मिले।

ब्यावर पहुँचे तो समाज का उत्साह चरम पर था। पर हुक्मीगच्छ का विवाद फिर उलझ गया। वापस खर्वा गांव में गए। पांच मेम्बरी कमेटी बनाकर उन्हें सम्मेलन के लिए मनाया गया।

चैत्र कृष्णा दसवीं संवत् 1989 (5 अप्रैल 1933) मंगलवार को 26 सम्प्रदायों के 238 साधुओं का अजमेर में हृदयहारी प्रवेश हुआ, जिसमें पंजाब के 25 मुनिराज थे। प्रतिनिधि संख्या पांच से चार कर दी गई अनुपात के सिद्धान्त पर पूज्य श्री मदनलाल जी म. पंजाब के दो परिवारों के प्रतिनिधि बने। पूज्यपाद श्री मयाराम जी म. तथा श्री लालचन्द जी म. के परिवार की तरफ से। लाखन कोठी, ममैयों का नोहरा वट वृक्ष के नीचे जमीन पर सभी साधु गोलाकार बैठे थे। प्रारंभ में श्रावक भी मीटिंग में बैठे बाद में केवल मुनि ही रह गए। सभी संघों के आचार्य वहाँ थे फिर भी श्री सोहनलाल जी म. को 'प्रधानाचार्य' कहकर सम्मान दिया। सम्मेलन के शांतिरक्षक (speaker) श्री गणी उदयचन्द जी म. नियुक्त हुए। सम्मेलन की कार्यवाही को हिन्दी में लिखने के लिए उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. व पूज्य गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. को अधिकार दिया गया। जिसे गुरुदेव जी ने अकेले खुद ही निभाया। गुजराती में लिखने का काम श्री सौभाग्य मुनि जी तथा श्री विनय ऋषि जी ने किया। कुल मिलाकर पंजाबी मुनियों का काफी योगदान रहा। पन्द्रह दिन तक सम्मेलन चला। चर्चाएं खूब चली, प्रस्ताव भी पास होते गए पर सारे संघ एक हो जाएं यह लक्ष्य पूरा नहीं हुआ। प्रबन्धकों ने मुनियों की, दर्शनार्थियों की भरपूर सेवा की। शहर से बाहर लोकाशाह नगर बसाया गया जो रात को बिजली की रोशनी से जगमग रहता था। समाज का दस लाख रुपया खर्च हुआ। दर्शनार्थियों की पूर्वानुमानित संख्या बीस हजार से पचास हजार हो गई। ऊँची आवाज वाले मुनियों के धुंआधार प्रवचन हुए। पंजाब के वक्ताओं में युवाचार्य श्री कांशीराम जी म. व युवा मुनि श्री मदनलाल जी म. को जनता बड़े चाव से सुनती थी। उन्नीस अप्रैल को सम्मेलन की पूर्ति होने जा रही थी। समाज सांस थामे बाहर प्रतीक्षारत था कि

कोई भव्य घोषणा होगी। श्रावक वर्ग सुन्दर भविष्य के प्रति आशावान था। साधु वर्ग संगठित होकर एक व्यवस्था अंगीकार करे ये बहुमत की भावना थी। पूज्य पाद उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. ने गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. से कहा– "आपकी आवाज ऊँची है अतः आज समापन समारोह में आप अपना वक्तव्य दें।" पूज्य गुरुदेव ने फरमाया– 'देखो! पन्द्रह दिनों से जो मैं साधुओं की कार्यशैली देख रहा हूँ उससे मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि हमने कोई ठोस काम नहीं किया है। केवल प्रस्ताव पास करके कागज काले किए हैं। मैं अपने सही विचार जनता के सामने रखूंगा, ऐसा न हो कि किसी को बाद मे बुरा लगे। उपाध्याय श्री जी सत्य को समझते थे पर इतनी साफगोई से कुछ संत खिन्न हो सकते थे अतः हंसकर बोले– "यदि यही कहना है तो रहने दे, किसी और की ड्यूटी लगा देंगे।

उस सम्मेलन में सैकड़ों साधु साथ रहे, साथ बैठकर वार्तालाप किया और साथ विहार भी हुए परन्तु संघैक्य का सपना सभी अपने दिलों में रखकर संतुष्ट हो गए।

समग्र भारत के साधु-साध्वियों में पूज्य गुरुदेव के संयम व प्रवचनों की विशेष पहचान बनी। उस सम्मेलन के दौरान 17 संतों का एक दर्शन प्रचारक मण्डल गठित किया था जिसका उद्देश्य था जैनत्व की आवाज को जन-जन तक पहुँचाना। उस मण्डल में पहला नाम था युवाचार्य श्री कांशीराम जी म. का और दूसरा था गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. का, शेष पन्द्रह प्रवक्ता बाद में।

उस सम्मेलन में ही पूज्य गुरुदेव जी म. ने जैनत्व के नूतन परिमार्जित एक चेहरे को देखा और उससे निकटता बनाई। वह चेहरा था श्री कवि अमर मुनि जी म. का। गुरुदेव जी म. को प्रतीत हुआ कि यह युवा मुनि बौद्धिक दृष्टि से विलक्षण है और नई पीढ़ी को प्रभावित करने की क्षमता रखता है। उसे उत्साहित और प्रोत्साहित करने का मन हुआ। संस्कृत के गहन अभ्यास के लिए अच्छे शिक्षकों की सेवा मिल जाय तो ये मुनि काफी निखर सकता है ऐसा उनका ख्याल बना। उन्हें संयम

प्रधान जीवन शैली पसन्द थी। पर विद्वान्, प्रवचनकार, स्वाध्यायशील संत भी उनकी रूचि में समाविष्ट थे। इसलिए कवि श्री अमर मुनि जी म. को अपनी मित्र मंडली में शामिल कर लिया। उनके माध्यम से उनके गुरुदेव श्री पृथ्वीचन्द जी म., उनके आचार्य श्री मोतीराम जी म. को भी विशेष सम्मान और समर्थन दिया। जैसे अपने पूज्य गुरुदेव श्री नाथूलाल जी म. तथा प्रगुरु श्री छोटेलाल जी म. वन्दनीय और अभ्यर्चनीय थे वैसे ही ये महापुरुष भी बन गए।

इससे पूर्व एक इलाके में रहकर भी दूरियां रहीं, एक शहर में रहे भी, पर अलग-अलग मकानों में ठहरे, पर अब बहुत कुछ बदल गया था। पूज्य गुरुदेव जी म. ने पुरानी रंजिशें, गिले-शिकवे, मनो-मालिन्य सब एक तरफ रख दिए और नए संबंधों की स्थापना में लग गए। पूज्यपाद उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. की ज्ञान गंभीरता के तो वे प्रारंभ से ही कायल रहे थे, अब कवि जी म. भी उस वर्ग में आ गए। एक तीसरे व्यक्तित्व के साथ भी उनका जुड़ाव हुआ। नाम था– आ. श्री हस्तीमल जी म.।

युवाचार्य श्री कांशीराम जी म. ने अपना अग्रिम चातुर्मास अजमेर का माना। उपाध्याय श्री आत्माराम जी म., गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. के चातुर्मास के लिए जोधपुर श्री संघ की पुरजोर विनती थी। उस विनती में आचार्य श्री हस्तीमल जी म. की मनोभावना भी निहित थी। रत्नवंश में सबसे कम आयु में आचार्य पद पर आरूढ़ होने वाले श्री हस्तीमल जी म. बहुत गंभीर, संयमी, विनयशील अध्येता मुनिराज थे। ये भी उस चातुर्मास में साथ रहे और बाबा पूर्णचन्द जी म. का चातुर्मास भी संयुक्त रूप से जोधपुर में ही हुआ। पूज्य गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. उनको 18 साल पूर्व उदयपुर चातुर्मास से जानते थे। सिंहपोल के विशाल स्थानक में इन सब महापुरुषों का चौमासा हुआ था। स्वाध्याय और सूत्रवाचना का दायित्व उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. वहन करते थे तो प्रवचन का करिश्मा पूज्य गुरुदेव दिखाते थे। मारवाड़ के सबसे बड़े क्षेत्र जोधपुर में साधारणतया पांच-दस हजार श्रोता प्रवचन सुनने को

एकत्रित हो ही जाते थे। पूज्य गुरुदेव की दहाड़ जब स्थानक के सामने वाली पहाड़ी दीवार से टकराकर प्रतिध्वनित होती थी तब सिंहपोल का जर्रा-जर्रा दहल जाता था। श्रोता वर्ग भावमग्न हो उस सिंह पुरुष की गर्जना सुनते रहते थे। श्रावक-श्राविकाओं का तकिया कलाम बन गया था– "पंजाबी शेर धड़ूक रह्यो है।"

18 अक्टूबर को कांफ्रेंस के गणमान्य नेता दर्शनार्थ और समाज के लिए मार्ग ग्रहणार्थ आए जिनमें दुर्लभ जी झवेरी, सुगन चन्द नाहर, गणेशमल बोहरा, धीरज भाई तुरखिया, आनन्दराज सुराना, वर्धमान पीतलिया, हीरालाल नांदेचा, जज सरदारमल छाजेड़ आदि प्रमुख थे। उस रोज प्रवचन में पूज्य गुरुदेव ने अपने विचार प्रकट किए थे कि संघ की संरचना के लिए हमें कुलस्थविरों तथा गणस्थविरों को एक करना होगा तथा समग्र समाज की श्रद्धाप्ररूपणा एक करनी होगी।

एक गंभीर घटना जिसे उपाध्याय जी ने रोचकता प्रदान की वह निम्न है– पूज्य गुरुदेव जी म. व श्री रामजीलाल जी म. व उपाध्याय श्री जी के शिष्य श्री हेमचन्द जी म. बाहर भ्रमणार्थ गए हुए थे। श्री हेमचन्द जी म. का वजन और कद बहुत अल्प होने से बिल्कुल बच्चे जैसे लगते थे। सूखी नदी के घाट से गुजर रहे थे, अचानक पीछे पहाड़ों पर वर्षा के कारण नदी में पानी आ गया। वेग तेज था पूज्य गुरुदेव तथा श्री रामजीलाल जी म. वेग से अप्रभावित रहे पर श्री हेमचन्द जी म. संभल नहीं पाए। उनके पैर उखड़ गए और पानी में बहने लगे। मामला गंभीर था फिर भी गुरुदेव ने हिम्मत और हौसला करके श्री हेमचन्द जी म. को पकड़ लिया। श्री रामजीलाल जी म. ने भी सहारा देकर उन्हें पानी से बाहर निकाला और धीरे-धीरे स्थानक पहुँच गए। मुनि जी सहमे हुए थे। पूज्य गुरुदेव जी म. ने उपाध्याय जी म. के समक्ष सारा घटना चक्र बयान किया। उपाध्याय जी ने गंभीरता को नया रूप देते हुए कहा– "हेम! अभी तो छठे ओर की वर्षा भी नहीं हुई जब वो होगी तो तेरी रक्षा कैसे होगी?" सब हंस पड़े और माहौल खुशनुमा हो गया।

चातुर्मास की पूर्ति होने पर महामंदिर पधारने का निर्णय हुआ। विदाई में विशाल जन समुदाय उमड़ा हुआ था। सबकी एक मांग थी पंजाबी शेर की एक दहाड़ और सुननी है। चलते-चलते गुरुदेव ने मांग पूरी की। प्रवचन के साथ एक जोशीला भजन भी सुनाया। जिसके बोल थे– 'वीर का संदेश'। महामंदिर में सात दिन लगा पाली की ओर विहार किया। आचार्य श्री हस्तीमल जी म. ने अपने दो मुनिराज– श्री भोजराज म. आदि– उपाध्याय श्री जी एवं गुरुदेव श्री जी की विदाई में पाली तक साथ छोड़ने भेजे। पाली में पूज्य श्री अमोलक ऋषि जी म. से मिलन हुआ लेकिन पाली पहुँचने तक पूज्य गुरुदेव को ज्वर हो गया था। ठीक हुए तो सफर की शुरूआत की और जयपुर जाकर ठहराव हुआ। वहाँ अनेक प्रमुख-प्रमुख सन्त मिले। शतावधानी श्री रतनचन्द जी म., आचार्य श्री अमोलक ऋषि जी म., पूज्य श्री कांशीराम जी म. व पूज्य गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. ने मिलकर शास्त्रों के उद्धार की विशाल योजना बनाई।

सन् 1934 का प्रारंभ हो चुका था। विहार के लिए दो टोलियां बनीं और दिल्ली की ओर चली। आ. श्री अमोलक ऋषि जी म. ठाणे सात एक टोली में और उपाध्याय श्री आत्माराम जी म., गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. व श्री रामजीलाल जी म. ठाणे सात दूसरी टोली में थे। जब नारनौल पहुँचे तो कवि श्री अमर मुनि जी म. स्वागत करने हेतु महेन्द्रगढ़ से चलकर नारनौल तक आए और साथ ही महेन्द्रगढ़ ले गए। पूज्य श्री आत्माराम जी म. व गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. को वहाँ एक कल्प (एक मास) ठहरना पड़ा। क्योंकि श्री कवि जी म. ने विहार करने ही नही दिया। संबंधों में प्रगाढ़ता पनपी। चलने लगे तो श्री कवि जी म. और उनके प्रिय शिष्य श्री चन्द जी म. को भी दिल्ली दर्शन करवाने के लिए साथ ले लिया। अब ठाणे सात से ठाणे नौ हो गए। पटौदी पहुँचने पर श्रावकों ने आग्रह किया कि अब यहाँ रुकना पड़ेगा पर मुनियों को विहार की जल्दी थी। विहार के दिन श्रावकों ने स्थानक के बाहर डेरा जमा दिया कि बाहर निकलने नहीं देंगे। सात

मुनिराज स्थानक के पिछले रास्ते से चुपचाप निकल गए तथा कवि जी म. व श्री चन्द जी म. रूके रहे। जब काफी देर हो गई तब कवि जी म. ने फरमाया कि बड़े म. तो जा चुके, हमें तो इजाजत दो। श्रावक दंग रह गए। फिर नौ मुनियों के लिए कुछ पथ्य पानी लेकर दोनों मुनियों ने रास्ते में संतों को पकड़ा और पेट भरा।

महरौली में श्री चन्द जी म. को हैजा हो गया। बड़ी मुश्किल से जान बची। अन्ततः पहुँचे चांदनी चौंक। पूज्यपाद गणावच्छेदक श्री छोटेलाल जी म. ठाणे बाईस के मंगल पावन-भव्य दर्शन किए। वहाँ पहुँचकर पूज्य गुरुदेव जी म. ने संबंधों के क्षितिज को अधिक विस्तीर्ण करने के लिए नया कदम उठाया। पूज्य गणावच्छेदक श्री छोटेलाल जी म.सा. से विनती की कि कवि अमर मुनि जी म. को पं. बेचरदास जी के द्वारा अध्यापन करवाने का प्रबंध करें। जैन विद्या के प्रकाण्ड विद्वानों में पं. बेचरदास जी का अग्रिम स्थान है। इतिहास के गहन ज्ञाता है। प्राकृत भाषा के अधिकृत वेत्ता हैं। मूर्तिपूजक सम्प्रदाय के होते हुए भी असंकीर्ण विचारों को पुष्ट करते हैं। पंडित जी के आवास की व्यवस्था समाज कर देगी तथा कवि जी म. अपने साथ चातुर्मास कर लेंगे। यद्यपि प्राचीन परम्पराओं के अनुसार ऐसा करवाना काफी कठिन था क्योंकि श्री कवि जी म. के संतों का बारादरी में चातुर्मास नहीं करवाया जाता था। उनकी सम्प्रदाय का पंजाब सम्प्रदाय के मुनियों के साथ आहार पानी वन्दनादि का संबंध नहीं था। श्री मयाराम जी म. के मुनि वैतनिक अध्यापन के विरूद्ध थे। इस तरह की विविध बाधाओं के बावजूद पूज्य गुरुदेव ने अपने बड़ों— पूज्य श्री छोटेलाल जी म. व श्री नाथूलाल जी म.— को इस कार्य के लिए तैयार कर लिया।

समन्वय के दौर में समाज को भी राजी करना सरल हो गया। पढ़ाई की व्यवस्था का निर्णय होने पर उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. ने भी चांदनी चौंक में रहकर श्री हेमचन्द जी म. को पंडित बेचरदास जी से प्राकृत व्याकरण पढ़वाने का मन बना लिया। पंडित जी आ गए और

अध्ययन चालू हो गया। कवि जी म. की प्रतिभा और लगन अद्भुत थी परन्तु अपने आप आहार पानी लाने की प्रक्रिया में काफी समय व्यतीत हो जाता था और पढ़ाई व्यवहित हो जाती। इस व्यवधान का समाधान भी पूज्य गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. ने ही निकाला। फिर बड़ों से विनती की कि श्री कवि जी म. व श्री चन्द जी म. का आहार पानी अपने ही मुनि ले आया करेंगे और ये अपने पात्रों में लेकर प्रयुक्त कर लेंगे। पूज्यपाद श्री छोटेलाल जी म. ने यह बात भी स्वीकार कर ली। अपने प्रेमपात्र कवि जी का अध्ययन निर्बाध करके पूज्य गुरुदेव को विशेष संतोष हुआ।

पंडित बेचरदास जी ने भगवती सूत्र की टीका का संपादन किया था अतः आगम विषय की चर्चाओं के लिए वे पूज्य गुरुदेव की ओर निहारते थे। वे पूज्य गुरुदेव के शास्त्रीय विश्लेषण, गहन अवगाहन तथा अटूट श्रद्धान से बहुत प्रभावित थे।

बड़ी व्यवस्थाओं के अलावा छोटे मुनियों की पढ़ाई के लिए श्री बाबूलाल शास्त्री की सेवाएं ली। जिन्होंने छोटे मुनियों को 'लघु सिद्धान्त कौमुदी' (संस्कृत व्याकरण) पढ़ाई।

चूंकि श्री गुरुदेव जी म. राष्ट्रीय उत्थान के प्रमुख वक्ता भी थे अतः उनके पास भारतीय स्वातंत्र्य के अग्रणी नेता भी आते रहते थे। जिनमें सरदार वल्लभ भाई पटेल, भूला भाई देसाई, आसिफ अली तथा जे.बी. कृपलानी का नाम उल्लेखनीय है। स्थानक में इन नेताओं के बार-बार आने से अंग्रेजी सरकार चौकन्नी हो गई। ऊपर से आदेश आए और एक खुफिया अधिकारी की वहाँ नियुक्ति हो गई। एक युवक संतों के पास प्रतिदिन आकर बैठने लगा। और अन्दर की जानकारी हासिल कर लूं इस आशय से पूज्य श्री छोटेलाल जी म. से कहने लगा– 'मुझे अपना चेला बना लो।' उन्होंने कहा– 'हमारे नियम बहुत कठिन हैं, तुम नहीं निभा सकोगे।' वह बोला– 'नहीं, मैं सब निभा लूंगा। आप बताओ क्या कठोर नियम है।' वे बोले– 'लोच करवाना पड़ता है।' वह बोला– 'कर दो।' पूज्य

श्री छोटेलाल जी म. ने समझाने के इरादे से उसकी मूंछ के दो चार बाल उखड़वा दिए। वह तो तिलमिला उठा। 'ऐसे कैसे होता है?' श्री छोटेलाल जी म. उसे ऊपर ले गए जहाँ एक मुनि का लोच हो रहा था। प्रत्यक्ष देखकर दंग रह गया। फिर उसने सच्चाई बताई कि मैं तो सी. आई.डी. इन्स्पेक्टर हूँ, अन्दर की बात लेने के लिए चेला बनना चाहता था, पर पूज्य गुरुदेव के दरबार में कुछ भी गोपनीय नहीं था।

उसी चातुर्मास में उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. को 'जैन धर्म दिवाकर' अलंकरण से मंडित किया गया। उस समारोह में समाज के विद्वद् वर्ग की उपस्थिति रही। 14 नवम्बर 1934 को बारादरी से विहार कर सदर पदार्पण हुआ। 17 दिसम्बर को जब उपाध्याय श्री जी ने रोहतक के लिए विहार किया तब पूज्य गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. ठाणे दो साथ छोड़ने रोहतक तक गए। बाद में पूज्य गुरुदेव ने हरियाणा का अवगाहन किया।

संवत् 1992 सन् 1935 का चातुर्मास हाँसी का हुआ। इस क्षेत्र का विकास चारित्र चूड़ामणि श्री मयाराम जी म. के कर कमलों द्वारा हुआ था।

चातुर्मास प्रारंभ होने से नौ दिन पूर्व पंजाब संघ पर भयंकर वज्रपात हुआ। महान् संयमी आचार्य श्री सोहनलाल जी म. आषाढ़ सुदी छठ के रोज स्वर्गस्थ हो गए। एक युग स्रष्टा पुरुष इतिहास का सृजन कर इतिहासगत हो गया।

हाँसी चातुर्मास में वहाँ का बुद्धिजीवी वर्ग पूज्य गुरुदेव के प्रवचनों में उपस्थित होता था। वकीलों का पूरा दल-बल सबसे पहले प्रथम पंक्ति में आकर बैठता था।

मुनियों में एक जनश्रुति है कि एक रात योगिराज श्री रामजीलाल जी म. स्थानक की बरसाती (स्थानक का सबसे ऊपर वाला कमरा) में पट्टे पर विश्राम कर रहे थे कि उन्हें अनुभव हुआ कि मुझे किसी ने धक्का दिया है। उठकर देखा तो कोई दिखाई नहीं दिया। आवाज सुनाई दी– "उठ, यह मेरा स्थान है, तू क्यों यहाँ सोया है?" महाराज

श्री बैठकर पाठ करने लगे। अगले दिन पूज्य गुरुदेव को घटना चक्र से अवगत कराया। उस रात वे स्वयं पट्टे पर आकर लेट गए। और उन्हें भी पिछली रात की तरह अनुभव हुआ। गुरुदेव ने पूछना शुरू किया— कि तू कौन है, मुनियों के साथ अभद्र व्यवहार क्यों कर रहा है? तो उसने बताया कि मैं इस जगह का मालिक था। मेरे विरोधियों ने मेरा कत्ल करके मुझे इसी जगह गाड़ दिया तथा मेरा इस स्थान से मोह है। गुरुदेव ने समझाया हमें तो कुल चार महीने यहाँ ठहरना है। अब तो तू मुनियों को साता प्रदान कर। तेरे अधिकार के बारे में मुनियों को पता नहीं था। आगे कभी अवसर हुआ तो ध्यान रखेंगे। तत्पश्चात पूर्ण शान्ति रही।

दस वर्ष पश्चात् सन् 1945 में हाँसी में चातुर्मास हुआ। तब उनके साथ छः शिष्य थे। तब प्रवेश से पूर्व आज्ञा ली गई कि कोई अदृश्य शक्ति हो तो उसकी आज्ञा है, अनुमति है। नए मुनियों को कष्ट मत देना।

इस चातुर्मास के अंतिम दिनों में एक भीषण वज्रपात और हुआ। दृढ़ अनुशास्ता गणावच्छेदक पूज्यपाद श्री छोटेलाल जी म. का दिल्ली चांदनी चौंक बारादरी में कार्तिक शुक्ल एकादशी 5-11-1935 के दिन स्वर्गवास हो गया। स्वर्गवास के समय आचार्य श्री अमोलक ऋषि जी म. भी मौजूद थे। श्री छोटेलाल जी म. बढ़ती रुग्णता से भांप गए थे कि जीवन की लौ कभी भी बुझ सकती है अतः चार माह पूर्व आलोचना क्षमापना करके निःशल्य निश्चिन्त हो चुके थे।

पूज्य श्री मदनलाल जी म. 22 वर्ष से उनके साए में साधना की गहनता प्राप्त कर रहे थे। उनके अनुशासन से कितने ही दोषों का संस्कार परिष्कार कर चुके थे। श्री मयाराम जी म. का संघ उनके दिशा-निर्देश से अपना मार्ग तय किया करता। आज एक गहरी शून्यता दिखाई दे रही थी। श्री मदनलाल जी म. ने अपने को संभाला। अपने अन्तरंग मित्र श्री रामजीलाल जी म. से मंत्रणा की। संघ के समक्ष दो मामले थे। पहला— पंजाब के नए आचार्य की घोषणा।

दूसरा– श्री मयाराम जी म. के परिवार की नूतन व्यवस्था की रचना करना। पांच साल के भीतर तीन गणावच्छेदक दिवंगत हो चुके थे। श्री जवाहरलाल जी म., श्री जड़ावचन्द जी म. तथा श्री छोटेलाल जी म.। परिवार के विस्तार को देखते हुए लगता था कि तीन गणावच्छेदक चुन लिए जाएं लेकिन एक सूत्रता कायम रखनी है इस दृष्टि से परिवार का एक मुखिया बनाया जाय, तो उचित लग रहा था। श्री मदनलाल जी म. तथा श्री रामजीलाल जी म. एक नेतृत्व के पक्षधर थे। और समग्र परिवार के नीति निर्धारक भी यही थे। अतः अपने परिवार के सभी मुनियों के साथ परामर्श करके आचार्य पद घोषणा से पूर्व निर्णय लेना जरूरी था। दोनों महापुरुषों ने विचार किया कि शांतात्मा श्री बनवारीलाल जी म. ऐसे महापुरुष हैं जो तीनों गणों के मुनियों को मान्य हो सकते हैं। उनका संयम और स्वभाव, स्नेह और प्रभाव सब कुछ विलक्षण है। इस विचार को कार्यरूप देने के लिए हाँसी से दिल्ली की ओर विहार किया। रोहतक में श्री बनवारीलाल जी म., तप. श्री फकीर चन्द जी म. तथा श्री वृद्धिचन्द जी म. से मिलन हुआ। विचारों को बल मिला। पूज्य श्री वृद्धिचन्द जी म. दिल्ली नहीं चल सके क्योंकि श्री प्रेमचन्द जी म. को कुतिया ने काट लिया था और गहरा घाव हो गया था। बाकी अन्य मुनि दिल्ली पधारे। श्री नाथूलाल जी म. ने भी श्री बनवारीलाल जी म. के नाम पर मोहर लगा दी। इस प्रकार तीन खण्डों में विभाजित परिवार एकछत्र की छाया में इकट्ठा हो गया। इस बात का सबको हर्ष था विशेषतः श्री मदनलाल जी म. को।

दूसरा प्रश्न नए आचार्य का था। वह पहले से ही निर्णीत प्रायः था। आचार्य श्री सोहनलाल जी म. के पश्चात् बागडोर संभालनी थी युवाचार्य श्री कांशीराम जी म. को।

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत

पंजाब के भावी आचार्य श्री कांशीराम जी म. का पदाभिरोहण समारोह फाल्गुन शुक्ला दूज 1992 (12 फरवरी, 1936) को होशियारपुर में होना था। पूज्य श्री कांशीराम जी म. की सिद्धान्त प्रियता से, दृढ़ता से समग्र भारत के साधु-साध्वी प्रभावित थे। तेईस साल से युवाचार्य के रूप में रहते हुए आचार्य जैसा गौरव प्राप्त कर चुके थे। उनके चादर समारोह में उपस्थित होने की दृष्टि से पूज्य गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. ने पंजाब की ओर कदम बढ़ाए। मूनक में आकर बिठमड़ा गांव के श्री भागमल जी को पूज्य श्री बनवारीलाल जी म. के शिष्य रूप में दीक्षित किया। वहाँ से लुधियाना का प्रोग्राम बनाया ताकि उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. तथा उनके वरिष्ठ मुनिराजों के दर्शनों का लाभ मिल सके और पारस्परिक चर्चा हो सके। संगरुर पहुँचे तो होशियारपुर का श्री संघ श्री बंशीलाल जी के नेतृत्व में चादर समारोह में पधारने की विनती लेकर आया। वहाँ जाना ही था अतः विनति को सम्मान दिया। लुधियाना पहुँचकर पूज्य श्री जयरामदास जी म., पूज्य श्री शालिग्राम जी म. तथा उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. से मधुर मिलन हुआ। उन्हें भी साथ ले, इकट्ठे जालंधर होते हुए होशियारपुर पदार्पण किया। तब तक शतावधानी श्री रत्नचन्द्र जी म. भी वहाँ पधार चुके थे।

भावी आचार्य श्री कांशीराम जी म. ने पूज्य श्री बनवारी लाल जी म. तथा गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. से संघ के प्रत्येक विषय पर चर्चा-वार्ता की। पूज्य गुरुदेव जी म. ने भी अपनी स्पष्ट राय दी। उन्होंने वहाँ पहुँचते ही दो अव्यवस्थाओं को दुरुस्त किया। युवाचार्य श्री कांशीराम जी म. अलग मकान में ठहरे हुए थे तथा उनके प्रमुख शिष्य श्री शुक्लचन्द जी म. अलग मकान में। इस निवास पार्थक्य से कार्य पद्धति

में संगति नहीं बैठ रही थी और अलग-अलग विचारों का संप्रसारण हो रहा था। तालमेल कम होने से खेमेबाजी बढ़ने के आसार बन रहे थे। पूज्य गुरुदेव ने तत्काल श्री कांशीराम जी म. से कहा– "पूज्य प्रवर! आपकी सन्निधि में आपके पास श्री शुक्लचन्द जी म. का होना परमावश्यक है।" बात जंची और तत्काल उन्हें उनके पास उसी मकान में रहने का फरमान जारी हो गया।

दूसरी बात यह थी कि पंजाब संघ के कुछ घरेलू विवाद लोगों की जुबान पर आ रहे थे तथा इतर संघों के साधु-साध्वी उनमें रस लेने लगे थे। शतावधानी श्री रत्नचन्द जी म. की यह भावना थी कि मैं इन मसलों को सुलझा दूँ। पूज्य गुरुदेव को यह बात गवारा नहीं हुई। हमारे घर के मसलों में बाहर का दखल तभी मंजूर होगा, जब मसले हम से हल नहीं होंगे। अतः उन्होंने शतावधानी जी म. को साफ-साफ शब्दों में निवेदन किया कि आपको हम अपना पंच चुनें तब कोई फैसला देने का आपका अधिकार है, उससे पूर्व नहीं। श्री रतनचन्द हरजस राय श्रावक ने गुरु म. का समर्थन किया और दख्लन्दाजी रुक गई। मसले अपने स्तर पर सुलझा भी लिए।

12 फरवरी का मंगल-प्रभात। चादर समारोह में साधु-साध्वियों की लम्बी कतारें। दस-बारह हजार की जनमेदिनी की श्रद्धासिक्त निगाहें। पूज्य गुरुदेव उठे और अपने भावी आचार्य के सम्मान में अपना भावनापूर्ण प्रवचन देने लगे। व्याख्यान क्या था? भावनाओं का ज्वार था, लफ्जों का उपहार था, अलंकारों का हार था। अपने हाथों में चादर को लिया, जनता को दिखाया। सिंह गर्जना करते हुए बोले– "ये गोवर्धन पर्वत है, इसका भार पूज्य श्री जी उठा रहे हैं। श्रीकृष्ण जी ने अपनी अंगुली पर गोवर्धन को उठाया था, साथ ही बालगोपालों ने अपनी-अपनी छड़ियां, लाठियां भी लगाई थी। आओ, हम भी आचार्य श्री जी के संघ भार उठाने में अपनी-अपनी क्षमताओं की छड़ियां और लाठियां लगाएं।" ऐसी उम्दा प्रस्तुति की कि जन-जन झूम उठा। आचार्य श्री जी इतने भावाभिभूत हो गए कि बोल उठे– 'आज मैं आचार्य पद की चादर बाद

में ओढूंगा, पहले मैं अपने इस संघ के महान् मुनिराज को 'व्याख्यान वाचस्पति' अलंकरण से विभूषित करूंगा। जनता को लगा आचार्य श्री जी ने हमारी भावनाएं पूर्ण की हैं।

स्थानकवासी जैन संघ में प्रथम बार किसी प्रवचनकार मुनि के साथ यह पद जुड़ा था। उस दिन के बाद मुनियों ने साध्वियों ने एवं सामान्य जनता ने उनको व्याख्यान वाचस्पति या संक्षेप में वाचस्पति कहना प्रारंभ किया पर उन्होंने अपने मुख से या पैन से इस विशेषण का प्रयोग नहीं किया, केवल मदन-मुनि कहकर अपना परिचय दिया।

आचार्य श्री का चादर समारोह भव्यता से सम्पन्न हुआ। होशियारपुर में ही आचार्य श्री कांशीराम जी म. ने महान् आगमज्ञ पूज्य श्री नाथूलाल जी म. को 'बहुसूत्री' पद से सुशोभित किया और श्री बनवारीलाल जी म. को सम्पूर्ण मयाराम गण का 'गणावच्छेदक' घोषित किया।

अगले कार्यक्रमों का निर्धारण उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. ने अपने हाथों में ले लिया। कहने लगे– 'स्यालकोट में पूज्य श्री लालचन्द जी म. की डायमण्ड जुबली मनाई जा रही है, मुझे वहाँ जाना है तो आपको भी चलना ही होगा। समाज की भी आग्रहपूर्ण विनती थी, उपाध्याय श्री जी का आग्रह था, श्री लालचन्द जी म. के प्रति लगाव था और स्वयं भी नया क्षेत्र देखने की इच्छा थी। अतः सहविचरण का निर्णय कर लिया। होशियारपुर से विहार होने ही वाला था कि जालंधर से महासती पार्वती जी म. का समाचार आया कि मैं व्याख्यान वाचस्पति जी म. के दर्शन करना चाहती हूँ। पंजाब की सर्वोच्च सम्मानित महासाध्वी की भावना को पूरा करना तो जरूरी ही था, इसलिए जालंधर आ गए। श्री पार्वती जी म. ने देखा कि पंजाब में अनुशासन पालने और पलवाने को तैनात एकमात्र संत हैं तो वो वाचस्पति जी म. ही है। विचारों का आदान-प्रदान हुआ। दोनों परस्पर बातचीत के सिलसिले में जुड़े। एक रोज श्री पार्वती जी म. ने कहा– "गुरुदेव! कुछ छोटी साध्वियों की शिकायत है कि श्री वाचस्पति जी म. हमें डांट देते हैं। क्या यह सत्य है?" वाचस्पति गुरुदेव बात को

समझ गए और पार्वती जी म. को समझाते हुए बोले– “आपने नियम बना रखा है कि आहार-पानी किस दिशा से लाना है, इसकी आज्ञा साध्वियों को प्रतिदिन गुरुदेवों से लेनी है। अब इनसे पूछो क्या उन्होंने यह नियम पाला? क्या ये इस तरह की आज्ञा लेकर जाती हैं?” श्री पार्वती जी म. ने सम्बद्ध साध्वियों से पूछा तो वे उत्तर नहीं दे सकीं। इस अनुशासन उल्लंघन से वे क्षुब्ध हुईं और स्वयं डांटने लगी। पूज्य गुरुदेव से कहा– ‘आपको डांटना ही चाहिए था। मैं शिष्याओं के नहीं, अनुशासन के पक्ष में हूँ।’ वाचस्पति गुरुदेव को संतुष्टि हुई कि कम से कम कोई यथार्थ को समझता है।

श्री पार्वती जी म. से सांघिक चर्चा करके कपूरथला पधारे। वहाँ जाते ही श्री रामजीलाल जी म. को बुखार हो गया अतः गति अवरूद्ध हो गई। कुछ दिन में तन्दरूस्ती मिली। चलने की सोच ही रहे थे कि रोहतक से अमींलाल जी म. का पत्र आ गया कि स्यालकोट डायमण्ड जुबली के आयोजन में बिल्कुल नहीं जाना। बड़ों की आज्ञा थी। तत्काल अपनी समस्त योजनाओं को, ख्वाबों को निरस्त किया और वापसी का मन बना लिया। स्यालकोट में आयोजन के सूत्रधार को अपनी विवशता तथा रोहतक में “बड़ों की जो आज्ञा” की स्वीकृति भिजवा दी। फिर लक्ष्य बनाया मूनक को। मार्ग चुना सुल्तानपुर, जीरा, फरीदकोट, भटिण्डा, मानसा और बुढलाडा का। महावीर जयन्ती का प्रोग्राम बुढलाडा में करके उस श्रद्धापूर्ण मण्डी में नवोत्साह का संचार किया।

वहीं पर संगरूर के श्रावक बाबू खूबचन्द जी वाचस्पति गुरुदेव के चरणों में उपस्थित हुए। वाचस्पति गुरुदेव उनके स्वभाव और गौरव से भलीभांति परिचित थे। संगरूर राजदरबार में दीवान का दर्जा था। जैनत्व की भावना से भरपूर थे। उनकी इच्छा थी कि संगरूर की समग्र जनता जैन संस्कारों को समझे और अपनाए। ये कार्य वाचस्पति गुरुदेव ही कर सकते थे अतः चातुर्मास की विनती लेकर आए थे। उन्हें पता था कि संगरूर में दस-बारह जैन घर हैं और वाचस्पति जी म. का चातुर्मास

मिलना भी सरल नहीं है। फिर भी भावना रखी कि संवत् 1993 सन् 1936 का चातुर्मास आप श्री संगरूर में करने की कृपा करो। वाचस्पति गुरुदेव कुछ सकुचाए और बोले– 'चौमासे में कितना धर्म-ध्यान तप करवा दोगे?'

बाबू जी बड़े गहरे शख्स थे। बोले– 'संगरूर छोटा क्षेत्र है। मेरा एक घर है। आपकी कथा में पांच भाई-बहन हो जाएंगे और संवत्सरी पर दो पौषध, मेरा और पत्नी का। इससे ज्यादा जो होगा सब आपका करिश्मा होगा। हमारी तो ताकत इतनी ही है। आपका मन तैयार हो तो कृपा कर दो। वाचस्पति गुरुदेव समझते थे कि श्री खूबचन्द जी श्रावक कहकर नहीं, करके दिखाने वाले श्रावक हैं। अतः गुरुदेव बोले– "हम तैयार हैं पर आखिरी मोहर मूनक में लगेगी। पर एक बात की ओर ध्यान जरूर दिलाऊँगा कि सेवा में समानता रखना, फर्क नहीं। हरियाणवी, पंजाबी, ग्रामीण, शहरी, परिचित अपरिचित में अन्तर मत करना। तड़क-भड़क भले ना हो पर भेदभाव का बचाव हो।"

श्रावक जी संतुष्ट हुए और मूनक में जाकर सन् 1936 का संगरूर का चातुर्मास घोषित हो गया।

पूज्य गुरुदेव श्री जी ने आचार्य श्री कांशीराम जी म. के हृदय में जो स्थान बनाया था उसकी झलक उनके उन पत्रों में मिलती है जो उन्होंने पदग्रहण के पश्चात् लिखे थे। व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव के नाम लिखे एक पत्र में उन्होंने पंजाब साधु संघ व श्रावक संघ के मौजूदा हालातों से अपनी असंतुष्टि प्रकट की है और संकेत सा किया है कि मैं इस अव्यवस्था के कारण पंजाब छोड़कर राजस्थान की ओर जा सकता हूँ। आत्मीयता में ही ऐसे भाव प्रकट किए जा सकते हैं।

वाचस्पति गुरुदेव ने संगरूर चातुर्मास से पूर्व बांगर की भूमि में विशेष जागरण किया। यहाँ की सरल ग्रामीण जनता के वे मसीहा थे और श्री योगिराज जी हो तो सोने पे सुहागा। वाचस्पति गुरुदेव, श्री योगिराज जी म. तथा श्री भण्डारी जी म. की तिकड़ी जब विचरती थी तब इनके आत्मानन्द की सीमा नहीं रहती थी। व्याख्यान में साथ बैठते,

इकट्ठे बाहर जाते, आहार भी संयुक्त और उपवास भी संयुक्त। अद्भुत समय था वो। जिसकी यादें उनका हमेशा पीछा करती रही।

इस इलाके से वाचस्पति गुरुदेव की कई घटनाएं जुड़ी हुई है। जिनका स्थान व समय तो अज्ञात है पर वे रोचक है। अतः नमूने के तौर पर प्यारी लगेंगी।

1. पूर्वोक्त त्रिवेणी तथा श्री जसराम जी म. ठहरे हुए थे। एक आर्य समाजी भाई चर्चा करने आ गया। उसकी रुचि चर्चा में तो कम थी वितण्डावाद में ज्यादा। ईश्वर-वेद-यज्ञ आदि के मुद्दे प्रारंभ तो कर दिए पर सिद्ध कुछ न कर सका। जो उत्तर दिए वह सुन नहीं सका। बोलने की आदत थी। बोलता रहा-बोलता रहा। श्री योगिराज जी म. ने देखा-समय व्यर्थ कर रहा है। वाचस्पति गुरुदेव को संकेत करके उठाया और उनकी जगह श्री जसराम जी म. को बैठा दिया। खुद बाहर घूमने चले गए। श्री जसराम जी म. व आर्य-समाजी भाई आमने सामने हो गए। महाराज श्री जी ऊँचा सुनते थे अतः उसकी बात तो सुनी ही नहीं। ऊँची-ऊँची आवाज में सुनाने लगे, रुकने का नाम ही नहीं। शास्त्रार्थी तंग आ गया। घण्टा भर बाद वाचस्पति गुरुदेव लौटे। हैरान परेशान वह भाई बोला– 'महाराज आप तो चले गए और इनको बैठा गए। ये तो अपनी-अपनी ही सुना रहे हैं, मेरी तो सुन ही नहीं रहे हैं। वाचस्पति गुरुदेव ने हंसकर कहा– 'शास्त्री जी, आप भी अपनी-अपनी ही सुना रहे थे, मेरी तो आपने सुनी ही नहीं।' शास्त्री शर्मिन्दा होकर चला गया। वाचस्पति गुरुदेव ने श्री योगिराज जी म. से कहा– 'आपकी समझदारी काम आ गई।'

2. एक हृष्ट-पुष्ट युवा जाट आर्य समाज के नवोन्माद में वाचस्पति गुरुदेव से बहस करने आ पहुँचा। तर्क कम, आग्रह ज्यादा। उत्तर नहीं सूझते तो बौखला जाता। बौखलाहट में वह सीमा लांघने लगा। गाली-गलौज तक आ गया। वाचस्पति गुरुदेव की शांति का नाजायज फायदा उठाने लगा। फिर तो मारपीट की धमकी तक देने लगा। श्री योगिराज जी म. कुछ देर तक तो देखते रहे फिर उन्हें ही बीच में आना

पड़ा और आए भी एक कड़कते विद्युत्-प्रहार की तरह। युवक का हाथ पकड़कर बोले– "बात करनी है तो ढंग से कर वर्ना यहाँ से दफा हो जा। तू मुझे क्या समझ रहा है? हमें कोरा जैन साधु मत मान लेना, बड़ौदे का जाट भी हूँ। एक थप्पड़ लगा दिया तो कड़ियों तक जा लगेगा।" शेरों जैसी आवाज, रौबदार मुख मण्डल, मजबूत पकड़ देखकर सहम गया। चुपचाप बाहर चला गया। शायद वह शक्ति की भाषा ही समझता था, शांति की नहीं।

3. बड़ौदा गांव में वाचस्पति गुरुदेव का धुआंधार प्रवचन चल रहा था। सभा खचाखच भरी थी। श्रोता रसमग्न थे। पट्टे के बिल्कुल बगल में थांभू श्रावक सटा बैठा था। वाचस्पति गुरुदेव जोश में जिनशासन की रक्षा की आवाज लगा रहे थे। अचानक पट्टे का पांवा टूटने लगा। थांभू को प्रतीत हुआ कि पांवा टूट सकता है और पट्टा गिर सकता है। उसने उस पांवे की जगह अपना घुटना लगा दिया। ऊपर बैठे वाचस्पति गुरुदेव को महसूस भी हो गया कि पांवा टूट न जाए इसलिए थांभू ने घुटना लगाया है। उन्होंने उससे कहा– "थांभू गोड़ा (घुटना) कितनी देर लगाए रखेगा?" पर थांभू कब टलने वाला था, बोला– "गुरु महाराज! बस बोलते जाओ आपकी आवाज नहीं रुकनी चाहिए। मैं तो घंटा, दो घंटे यूं ही थामे रखूंगा, आप अपनी कथा चालू रखें।" भक्ति की शक्ति, शक्ति रूप भक्ति का दिग्दर्शन कराता है यह प्रसंग।

4. एक बार अमृतसर के कुछ श्रावक वाचस्पति गुरुदेव के दर्शनों के लिए बड़ौदा गांव में आए हुए थे। एक मुनि गर्म पानी के दो पात्र (एक जोड़) घर से लाए। पानी का रंग मटमैला था क्योंकि गांव के लोग तालाब के पानी को गर्म करके स्नान आदि कार्य में लेते थे। उसे ही संत लोग प्रासुक और ग्राह्य मानकर लाते थे। श्रावकों ने सोचा कि शायद चाय है ऐसा लाल-लाल पानी कभी देखा नहीं था। शंकित से भाव में पूछने लगे– 'गुरुदेव, इतनी चाय पी लोगे?' वाचस्पति गुरुदेव ने हंसते हुए कहा– 'इतनी नहीं पीएंगे तो बांगर में प्रचार कैसे करेंगे?' फिर उन्हें गर्म पानी और चाय का फर्क समझाया। अमृतसर वाले तो सोचते ही रह गए।

बांगर में धर्म की छटा बिखेरकर संगरूर की ओर चले। उनके साथ थे तपस्वी श्री फकीरचन्द जी म. तथा भण्डारी श्री बलवंत राय जी म.। संगरूर से पहले उपली गांव में ठहरे। रात को ही वर्षा आरंभ हो गई। सूर्योदय हो गया। दोपहर के बारह बज गए तब जाकर वर्षा रुकी। संगरूर वाले सुबह से ही स्वागत के लिए प्रतीक्षारत थे। पूरा दरबार, शहर के प्रतिष्ठित नागरिक तब तक खड़े ही रहे। पूज्य गुरुदेव का शाहाना प्रवेश करा के बाबू खूबचन्द जी ने अपनी श्रद्धा और क्षमता का प्रथम परिचय दे दिया। प्रवचनों का समय दोपहर का रखा गया। संगरूर चातुर्मास में शहर का हर प्रतिष्ठा प्राप्त व्यक्ति वाचस्पति दरबार में हाजिर हुआ। राज्य शासन में ऊँचा ओहदा होने से श्री खूबचन्द जी ने राज्य के कनिष्ठ वरिष्ठ सभी कर्मचारियों को गुरुदेव से सम्पर्क कराया। संगरूर के राजा को केवल इसलिए नहीं बुलाया क्योंकि उन्हें कानों से सुनाई नहीं देता था।

संवत्सरी महापर्व पर हजार से ऊपर पौषध हुए, जिसमें पांच सौ पौषध दर्शनार्थियों ने बाहर से आकर किए शेष स्थानीय जनता ने। दो पौषधों का आश्वासन देने वाले श्रावक खूबचन्द को वाचस्पति गुरुदेव ने अपने दिल में बसा लिया, यह मानकर कि ये समाज-हितैषी और काम पर विश्वास रखने वाला श्रावक है।

कुछ झलकियां संगरूर चौमासे की–

1. सैशन जज श्री सीताराम जी गुरुदेव के व्याख्यानों के इतने मुरीद बने कि बड़ी से बड़ी व्यस्तता की परवाह नहीं करते और प्रवचन में अवश्य उपस्थित होते थे।
2. एक सिक्ख महिला प्रतिदिन आकर संगत के जूते-चप्पल पहले तो तरतीब से रखती, फिर रूमाल से उन्हें साफ करती। अन्य व्यक्ति जब मना करते तो वह कहती कि ये हमारे रब्ब हैं, इनके भगत रब्ब के बन्दे हैं और मैं उन बन्दों की बन्दगी कर रही हूँ।
3. सभी कौमों के लोग प्रवचन में आते थे। एक सिक्ख महिला ने देखा कि भीड़ की अधिकता से गर्मी, उमस बहुत हो जाती है। नियमों

से वह अनभिज्ञ थी। सोचने लगी– सत्संगियों की गर्मी का उपाय करूं। हाथ के कुछ पंखे ले आई। प्रवचन चालू हो गया। भीड़ बढ़ चुकी थी और पंखे भी बंट गए थे। गर्मी से राहत पाने वास्ते लोग पंखे झलने लगे। सामान्य श्रोतागण भी इतने जानकार नहीं थे। वाचस्पति गुरुदेव नए-नए भक्तों को यथार्थ का बोध कराते हुए बोले– “भाईयों, बहनों, आज तो कमाल हो गया, लोग संतों की कथा को भी हवा में उड़ाने लगे हैं।” लोगों ने सहमकर पंखे नीचे रख दिए, फिर गुरुदेव ने जैन मुनियों की सभा की मर्यादाएं समझाई और लोगों की समझ में आई।

4. नहरी विभाग के नाजिम श्री शिवनारायण जी जैन धर्म के कट्टर विरोधी थे। पागल हाथी के पैरों तले कुचलकर मरना मंजूर, पर जैन स्थान पर नहीं जाना, यह मानसिकता रखते थे। परन्तु जन-जन के कण्ठ से वाचस्पति गुरुदेव के प्रवचनों का स्तुतिगान सुना तो वे भी नहीं रुक पाए। दर्शन करने, प्रवचन सुनने आए। सामान्य सनातन बन्धु की तरह फल-फूल, मिठाई साथ ले आए और गुरुदेव के पट्टे पर चढ़ाने लगे। समझदार श्रावकों ने बड़े सहज ढंग से उनको रोका और समझाया कि जैन संत चढ़ावा नहीं लेते। वे प्रवचन सुनने बैठ गए। पूज्य गुरुदेव का विषय भी यही था कि प्रभु और गुरु के चरणों में हमें क्या भेंट चढ़ानी चाहिए? श्री शिवनारायण जी इतने प्रभावित हुए कि प्रतिदिन प्रवचन में आते और औरों को भी लाते। परम भक्त बन गए। अपने सरकारी काम से कहीं बाहर जाते और उन्हें पता लग जाता कि यहाँ पर वाचस्पति गुरुदेव जी म. विराजमान हैं तो पहले दर्शन-प्रवचन का लाभ लेते फिर अपने काम को सरअंजाम देते।
5. देश में एक विषय विशेष चर्चा में था कि क्या तड़पती हुई गाय या सामान्य पशु को शान्तिपूर्ण ढंग से मृत्यु दिला दी जाय तो यह धर्म है या पाप। इस चर्चा के पीछे कारण यह बना कि गांधी जी के आश्रम में एक गाय भीषण पीड़ा से तड़फ रही थी, उपचार से लाभ

नहीं हुआ। गांधी जी उसकी पीड़ा देख नहीं सके, जहर का इंजेक्शन लगवाकर उसे शांत करवा दिया। इसके बाद यह विवाद सारे देश में फैल गया कि ऐसा करना ठीक है या गलत? एक वकील साहब इस सवाल को प्रकारान्तर से पूज्य गुरुदेव से पूछने लगे– "मान लो मेरा कुत्ता बीमार है, दर्द से कराह रहा है, मैं उसका दर्द देख नहीं सकता। यदि उसे गोली से मार दूँ तो उसे दर्द से भी छुटकारा मिल जाएगा और मुझे बेचैनी से।" पूज्य गुरुदेव जी ने उसे अहिंसा के कई पक्ष समझाए पर वह मानने को तैयार नहीं। अंततः गुरु म. ने कहा– "वकील साहब बुरा नहीं मानना, आपका लड़का ऐसे ही तड़फने लगे तो क्या करोगे? वकील– 'उसे हम हस्पताल ले जाएंगे, आखिरी सांस तक बचाने का प्रयास करेंगे।' पूज्य गुरुदेव ने फरमाया– 'तो क्या बेचारे कुत्ते के लिए गोली का ही ईलाज है? कुत्ते को मारकर भी अहिंसक कहलाने का अधिकार मांगते हो। ये द्विरूपता धर्म में नहीं चलती। पुत्र और पशु दोनों को समान मानो। वकील साहब गुरुदेव के तर्क से कायल हुए।

संगरूर में नए संगों को (पत्थरों को) तराश कर हरियाणा की ओर कदम बढ़ाए। नारनौल जाने का लक्ष्य चुना। क्योंकि वहाँ वाचस्पति गुरुदेव के नूतन मित्र कवि अमर मुनि जी म. के गुरुवर श्री पृथ्वीचन्द जी म. का आचार्य पद समारोह होना था। उस समारोह की सफलता और भव्यता वाचस्पति गुरुदेव के पदार्पण पर निर्भर थी। कवि जी म. के घर में खुशी का प्रसंग हो और वाचस्पति गुरुदेव न जाएं यह संभव ही नहीं था। मूनक, जीन्द व रिंढाणा फरसते हुए रोहतक पधारे। नारनौल का शिष्ट मण्डल समारोह में पधारने की विनति लेकर आया। वाचस्पति गुरुदेव तथा योगिराज जी म. वहाँ पहुँचने का निर्णय कर चुके थे अतः विनति स्वीकृत हुई।

रोहतक में ही पूज्यपाद, व्याख्यान वाचस्पति, गुरुदेव के जीवन में एक नूतन अध्याय का उद्घाटन हुआ। मदीना खानदान के वरिष्ठ सुश्रावक श्री जग्गूमल जी ने गुरुदेव से निवेदन किया कि मैं दीक्षा लेना चाहता हूँ।

वाचस्पति गुरुदेव उनसे, परिवार से, स्वभाव से भलीभांति परिचित थे। पिता थे श्री चिरंजीलाल जी पर चाचा माईधन के गोद चले गए थे। पढ़ाई बहुत कम थी, व्यावहारिक ज्ञान बहुत अधिक। ग्यारह वर्ष की आयु में विवाह हो गया था। तीन पुत्र थे, वकील श्री चन्दगी राम जी, व्यापारी श्री मिट्ठन लाल जी तथा मास्टर श्री श्यामलाल जी। तीस वर्ष की आयु में पत्नी का देहांत होने पर आजीवन ब्रह्मचर्य पालन का व्रत ले लिया था। रात्रिभोजन, कच्ची-पक्की वनस्पति का त्याग था। सामायिक संवर के अलावा समाज सेवा में अहर्निश जुटे रहते थे। उन्होंने अपने बारे में कुछ और भी बताया कि "दीक्षा का मन तो पहले भी था, पर परिवार को पांवों पर खड़ा करने की जिम्मेदारी पूरी करनी थी। दूसरे, गोद लेने वाले चाचा माईधन जी आज्ञा देने को तैयार नहीं थे। अब उन्होंने किन्हीं कारणों से गोदनामा कैंसिल कर दिया है अतः मुझे आत्म निर्णय का अधिकार मिल गया है। तीसरा कारण, मेरा बड़ा पोता सुदर्शन लाल भी दीक्षा लेने का मन रखता है। मेरी दीक्षा से उसे आज्ञा मिलने में आसानी रहेगी। मेरी 51 साल की उम्र हो गई। उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. से प्रतिक्रमण सीख चुका हूँ। घर में खुद मुख्त्यार हूँ, किसी से आज्ञा लेने को बाध्य नहीं हूँ।"

वाचस्पति गुरुदेव श्री जग्गूमल जी के निवेदन से विचारमग्न हो गए। आयु के गणितानुसार आठ-नौ वर्ष बड़े, वृद्ध को दीक्षा देकर क्या मैं इसके साथ न्याय कर पाऊँगा। इसकी सेवा का दायित्व कौन लेगा? क्या यह मेरी तरह लम्बे विहार कर पाएगा? विचार आगे बढ़े कि इस उत्तम संकल्प को पूरा करने में मदद करनी चाहिए। वर्तमान में इसे सेवा की आवश्यकता नहीं है। जब तक जरूरत पड़ेगी तब तक इसका पौत्र दीक्षित हो चुका होगा। एक और पुराना भाव प्रकट हुआ। मेरा इरादा था कि या तो मैं अपने राजपुर परिवार के किसी युवक को शिष्य बनाऊँगा, नहीं तो किसी उम्र रसीदा बुजुर्ग व्यक्ति को अपना प्रथम कृपा पात्र बनाना चाहूँगा। सारी भावनाएं पूर्ण होते देख वाचस्पति गुरुदेव ने दीक्षा देने की अनुमति दे दी। और फाल्गुन तक पास आने का संकेत कर दिया।

रोहतक में ही खेवड़ा के श्रावक चातुर्मास की विनती लेकर आए। यमुना तट पर बसे खेवड़ा गाँव में जैनों के पर्याप्त घर थे। यातायात का कोई साधन नहीं था। तांगा या पैदल का प्रयोग था। वाचस्पति गुरुदेव के पारिवारिक बन्धु मोलड़मल जी थे तो राजपुर के, पर खेवड़ा में गोद आ गए थे। वे भी चातुर्मास का दबाव बना रहे थे। पूज्य गुरुदेव ने आश्वासन दे दिया।

पूज्य गुरुदेव दादरी होकर महेन्द्रगढ़ फिर नारनौल पधारे। इस इलाके में पूज्य श्री मनोहर दास जी म. की सम्प्रदाय के मुनियों का प्रभाव था। अजैन लोग भी उन पर श्रद्धा रखते थे। महेन्द्रगढ़ के सेठ श्री ज्वाला प्रसाद सुखदेव सहाय जी उनमें प्रमुख स्थान रखते थे। नारनौल पहुँचकर वाचस्पति गुरुदेव ने आचार्य पद समारोह का अधिकांश कार्यभार अपने कंधों पर ले लिया। उसी समय श्री पृथ्वीचन्द जी म. के संघ में गणी शामलाल जी म. के शिष्य श्री हेमचन्द जी की दीक्षा घोषित हुई और तभी वाचस्पति गुरुदेव की निश्राय में श्री जग्गूमल जी आ गए और उनकी दीक्षा का भी निर्णय हो गया। चूंकि जैन समाज में दीक्षा एक साहसिक कदम माना जाता है, इसी कारण इस कदम को उठाने वाले से तथा उठवाने वालों से नाना प्रकार के प्रश्न किए जाते हैं। श्री जग्गूमल जी के संबंध में वृद्धावस्था और भी बड़ा प्रश्न था। वाचस्पति गुरुदेव ने दीक्षा (श्री जग्गूमल जी) के विषय में श्री गोकुलचन्द जी नाहर से विचार विमर्श किया और उनसे पूछा– 'आपकी क्या विचारधारा है। तब उन्होंने कहा– 'दीक्षा देने में तो कोई ऐतराज नहीं है पर ये आप अच्छी तरह सोच लो कि समय आने पर आप इनकी सेवा भी कर दोगे या नहीं। आज दीक्षा देकर कल उपेक्षित कर दो, ऐसा न हो।' वाचस्पति गुरुदेव ने कहा– "श्रावक जी, खूब सोचकर ही मन बनाया है। इसकी सेवा में कोई कमी नहीं आने दूँगा। दूसरी बात यह कि ये तो हमारे लिए कल्पवृक्ष सिद्ध होगा। इसकी उपेक्षा कौन कर सकता है?" श्री गोकुल चन्द जी गुरुदेव की बात सुनकर निश्चिन्त हो गए। बोले– 'इनके छोटे पुत्र मा. शामलाल जी को मैं अच्छी तरह से जानता हूँ। उनकी ओर से कोई

समस्या नहीं आएगी।" कुछ कानूनी बाधाओं के निराकरण के लिए श्री गोकुलचन्द जी ने एक अर्जीनवीस को बुलवाकर एक अर्जी लिखवा दी, श्री जग्गूमल जी के दस्तखत करवा लिए। कोर्ट में पेश करके अदालती अधिकार ले लिए कि अभ्यर्थी को आत्म निर्णय की स्वतंत्रता है।

संवत् 1993 माघसुदी त्रयोदशी (23 फरवरी, 1937) के रोज श्री पृथ्वीचन्द जी म. के आचार्य पद समारोह के साथ-साथ श्री जग्गूमल जी की दीक्षा हो गई और वाचस्पति श्री मदनलाल जी म. अपनी दीक्षा के 24 वर्ष बाद गुरुपद के अधिष्ठाता बने।

वाचस्पति गुरुदेव ने श्री पृथ्वीचन्द जी म. के पारिवारिक मुनियों को साग्रह समझाया कि आपके संघ में आचार्य पद की घोषणा हो चुकी है और श्री पृथ्वीचन्द जी म. आचार्य पद को ग्रहण कर चुके हैं, इसलिए इस भव्य मौके पर 'उपाध्याय पद' की भी घोषणा हो जाए। श्री अमर मुनि जी इस पद के सर्वथा योग्य हैं। मुनि मण्डल सहर्ष तैयार हो गया तो गुरुदेव ने कवि जी म. को मनाकर 'उपाध्याय' पद से व उस संघ के वरिष्ठ मुनिराज श्री शामलाल जी को 'गणी' के पद से सुशोभित करवाया। इस तरह कार्यक्रम बड़ी भव्यता के साथ सम्पन्न हुआ। और उस भव्यता के स्रष्टा कहलाए वाचस्पति गुरुदेव श्री मदनलाल जी महाराज।

समारोह के पश्चात् कुछ दिनों के लिए समीपवर्ती कुछ क्षेत्रों की स्पर्शना की। वाचस्पति गुरुदेव, श्री योगिराज जी म., श्री कवि जी म. तथा श्री प्रेमचन्द जी म. (कवि जी म. के पारिवारिक) ठाणे चार खेतड़ी, सिंघाना इसलिए गए क्योंकि इस सम्प्रदाय के पूर्वजों की कर्मभूमि थी, वहीं बाघौर का किला भी था।

नारनौल वापस लौट आए। दिल्ली को ध्येय बनाकर विहार किया। मुनि समुदाय विशाल था। आचार्य श्री पृथ्वीचन्द जी म., श्री वाचस्पति गुरुदेव जी म. आदि ग्यारह मुनिराज थे। रिवाड़ी, कासन, गुड़गांवा का मार्ग अपनाया। रिवाड़ी में श्री जग्गूमल जी म. के छोटे सुपुत्र मास्टर शामलाल जी तथा बड़े पौत्र श्री सुदर्शन लाल जी उपस्थित

हुए। परिवार वालों की सहर्ष अनुमति और उपस्थिति के अभाव में ली गई दीक्षा का कुछ मलाल दिलों में था। उसे जाहिर भी करना था, दर्शन लाभ भी लेना था। वाचस्पति गुरुदेव ने मा. शामलाल जी को समझाया तो मान गए। पर सुदर्शन लाल जी अपने बाबा के विरह को सहन नहीं कर पा रहे थे। अतः उनकी पीड़ा निरन्तर आंखों से बरस रही थी। 14 वर्षीय युवक के करुण रुदन को न देखा जा सका और न रोका जा सका था। वाचस्पति गुरुदेव ने श्री जग्गूमल जी म. को संकेत कर कहा कि इस बालक को समझाओ। उन्होंने पोते की मनोभावना को मोड़ देते हुए कहा– "सुदर्शन, तू रो क्यों रहा है? तेरा मार्ग साफ करने के लिए मैं साधु बना हूँ। तेरी दीक्षा की भावना है। मैं घर में रहता तो तुझे दीक्षा की आज्ञा मैं नहीं देता, लेकिन अब वो दिक्कत नहीं रहेगी। तेरे लिए दोनों रास्ते खुले है। घर में रहना हैं, तो पिताजी हैं दीक्षा लेनी हो तो मैं हूँ।" उनके इस तर्क ने माहौल ही बदल दिया। पूर्ण संतुष्टि और प्रसन्नता के साथ रिवाड़ी से विदा हुए।

रिवाड़ी में वाचस्पति गुरुदेव को जैनों की साम्प्रदायिक संकीर्णता का दर्शन पहले भी हुआ था और अब भी कुछ ऐसा ही हुआ। ला. मक्खन लाल मुंशीराम जैन के मकान में ठहरे थे। पीछे ही एक दिगम्बर जैन मंदिर था। वहाँ एक ब्रह्मचारी जी ठहरे हुए थे। श्वेताम्बर मुनि यहाँ क्यों आए और ठहरे। इसी दुर्भावना के वशीभूत हो वे बहुत सारे दिगम्बर घरों में गए तथा महिलाओं को नियम करवा आए कि श्वेताम्बर साधुओं को आहार पानी नहीं देना। गोचरी के लिए गए संतों को काफी असुविधा हुई, फिर भी जैनेतर घरों से आहार मिल गया। शाम को ब्रह्मचारी जी ने और भी उग्रता दिखा दी। कुछ छोटे-छोटे नादान बालकों को सिखा दिया और वे बच्चे संतों पर कंकर-पत्थर फेंकने लगे। जैसे तैसे उस परीषह को संतों ने सहा और आगे विहार कर दिया। गोकुलनगर, खलीलपुर होते हुए पाटौदी पहुँचे। बस्ती मण्डी और शहर दो

हिस्सों में बसी हुई थी। वाचस्पति गुरुदेव श्री योगिराज जी म., श्री कवि जी म. ठाणे छः तो मण्डी में रुके बाकी पांच मुनिराज शहर में। दिन भी खूब लगे और ठाठ भी खूब। वहाँ की श्रद्धा को देखते हुए गणी शामलाल जी म. का आगामी चातुर्मास वहाँ का मंजूर हुआ। फरुखनगर होकर कासन में पदार्पण हुआ। श्री पृथ्वीचन्द जी म. तथा कवि जी म. पहले आकर ला. मनोहरलाल के मकान में ठहर चुके थे। वाचस्पति गुरुदेव को उन्होंने बताया कि कासन में आर्य समाज की ओर से जैन धर्म के विरुद्ध लम्बे अर्से से विद्वेषपूर्ण प्रचार किया जाता रहा है। जैनों को शास्त्रार्थ की चुनौतियां मिलती रहती हैं। पर इधर से कोई प्रत्युत्तर नहीं मिल पाया तो इनके हौंसले बढ़ गए है। अब आप आए हो तो इसका स्थायी ईलाज कर दो। वाचस्पति गुरुदेव तैयार थे, तुरन्त सारे कस्बे में डंके की चोट पर मुनादी करवा दी कि किसी भाई को जैन धर्म के बारे में चर्चा या शास्त्रार्थ करना हो तो वह व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलाल जी म. से सरेआम कर सकता है। कस्बे की गली-गली में बात फैल गई पर कोई भी माई का लाल इतनी हिम्मत नहीं जुटा सका। महावीर जयन्ती का आयोजन भी हुआ और लगभग एक महीने का प्रवास रहा। क्षेत्र के कुछ परिवार आर्य समाज को अपना चुके थे उन्हें पुनः प्राचीन जैन धारा में प्रवेश दिलाया। गुड़गावां छावनी फरसते हुए दिल्ली की ओर उन्मुख हुए।

मार्ग में एक गांव घटोरनी की घटना है। प्रतिदिन की भांति दो मुनि श्री बलवंत राय भण्डारी जी म. तथा श्री चन्द जी म. ने गोचरी के लिए झोलियां उठायी। तुरन्त वाचस्पति जी म. व कवि जी म. बोले– "झोलियाँ हमें दो, आज हम आहार लाकर मुनियों को खिलाएंगे।" संतों ने तहत कहकर झोलियां दे दी। किसी दिगम्बर जैन घर में सर्वप्रथम पहुँचे। गृहस्वामी बिदक गया। आहार तो क्या देता, लकड़ी उठाकर मारने दौड़ा। एक सभ्य जैन का असभ्य व्यवहार देख दोनों मुनि चकित हो गए। उसे समझाने का प्रयत्न किया तो उल्टा उछलने

लगा। अन्तराय समझ वापस लौट आए। छोटे संतों को सम्मान देते हुए बोले– "जिसकी जो विद्या है उसी को जंचती है। लो संभालो अपनी झोलियां। लघु मुनियों ने पुनः तहत किया, आहार लाकर अपनी विद्या का हुनर दिखाया।

दिल्ली चांदनी चौंक पहुँचने पर श्री जग्गूमल जी म. की दीक्षा को लेकर ला. माईधन जी आ गए। कहने लगे– 'मेरी आज्ञा के बिना आपने इसे कैसे दीक्षा दे दी? मैं इसका बूढ़ा पिता हूँ। मेरा कानूनी हक है।' पूज्यपाद गुरुदेव श्री ने उसे खरी-खरी सुनाई। 'लाला जी यह आपका पुत्र कहाँ रहा? आपने अपनी मर्जी से इसका गोदनामा खारिज किया है। जरा से स्वार्थ में आपने इसे बेदखल कर दिया और आज अपना हक मांगने आए हो।' ये भी एक संयोग था कि माईधन जी द्वारा लिखे गए कागज पत्र उपलब्ध हो गए। जब उन्हें उनके सामने रखा गया तो वे शान्त हो गए और सन्तुष्ट हो घर लौट गए।

श्री जग्गूमल जी म. की दीक्षा के संबंध में इधर-उधर से इतना दुष्प्रचार किन्हीं तत्वों ने किया कि रोहतक में विराजमान मुनियों के मन में भी भ्रांतियों का कोहरा जमा होने लगा। उसको दूर करने वास्ते चातुर्मास से कुछ दिन पूर्व श्री योगिराज रामजीलाल जी म., श्री भण्डारी बलवन्त राय जी म. हलालपुर गांव से लंबे-लंबे विहार करके रोहतक पहुँचे तथा संदेहों का कोहरा छितर गया। इतने दिनों पूज्य वाचस्पति गुरुदेव पूज्य श्री जग्गूमल जी म. के साथ हलालपुर गांव में ही विराजमान रहे तथा ग्राम जागरण का अभियान चलाया।

श्री योगिराज जी म. जब रोहतक पधारे तब उनके सम्पर्क में बावरा मोहल्ले का एक पच्चीस वर्षीय होनहार युवक रामकृष्ण आया। वैराग्य भाव पुराना था पर विवाह करवाना पड़ गया था। पत्नी का देहांत हो गया तो वैराग्य को क्रियात्मक करने की उमंग पैदा हो गई। पिता श्री दौलतराम जी माता श्री पिस्तो देवी सनातन धर्मी थे। पर जब वह अपनी भावनापूर्ति के लिए श्री योगिराज जी के पास खेवड़ा में आने लगा तब उनके कान खड़े हुए और उन्होंने उसकी दीक्षा का कड़ा विरोध किया।

श्री जग्गूमल जी म. के पौत्र श्री सुदर्शन लालजी भी पूज्य गुरुदेवों के दर्शन करने तथा वैराग्य को प्रकट करने समय-समय पर खेवड़ा आते रहे पर उन्हें इतना विरोध नहीं झेलना पड़ा।

खेवड़ा हरियाणा के खादर संभाग का प्रमुख केन्द्र बन गया। ग्रामीण परिवेश होते हुए भी स्थानीय समाज ने सेवा के अद्भुत कीर्तिमान स्थापित किए। उसी साल (संवत् 1994 सन् 1937) आचार्य श्री कांशीराम जी म. का चातुर्मास दिल्ली के सदर बाजार में था। उनके चरणों में जो भी श्रावक आता उसकी जुबान पर एक ही वाक्य होता था कि मैं खेवड़ा से आ रहा हूँ या मैं खेवड़ा जा रहा हूँ। जन-जन के लिए खेवड़ा एक तीर्थभूमि बन गया था। क्योंकि वहाँ पर वाचस्पति गुरुदेव चातुर्मासरत थे। आचार्य श्री जी को वाचस्पति गुरुदेव के सर्वहृदय साम्राज्य के विस्तार और सघनता के प्रत्यक्ष दर्शन पहली बार हुए थे। साधारण मानव की भाषा समग्र औपचारिकताओं की पर्तों को उतारकर ऐसी शब्दावली का प्रयोग कर देती कि सुनने वाले ठिठक भी जाते तो रीझ भी जाते। उदाहरणार्थः– "हमारे आचार्य तो खेवड़ा में हैं।" स्वयं आचार्य श्री इस वाक्य का आनन्द लिया करते। खेवड़ा में दर्शनार्थियों के दैनिक आंकड़ों का कोई लिखित प्रमाण नहीं मिलता पर संवत्सरी महापर्व पर दो हजार दर्शनार्थियों का आना और अधिकतर का पौषध करना तत्कालीन समाचार पत्रों ने स्वीकृत किया है।

श्री रामकृष्ण जी एवं उनका परिवार दीक्षा के मुद्दे पर दो विपरीत ध्रुवों पर बैठे थे। उनको जिद्द थी कि दीक्षा लेनी है कुछ हो जाय। परिवार को जिद्द थी कि दीक्षा की आज्ञा नहीं देनी है चाहे कुछ भी हो जाय। श्री रामकृष्ण जी खेवड़ा आते घरवाले खींचकर ले जाते। चातुर्मासान्त में वाचस्पति गुरुदेव ने परिवार वालों से कहा– "यहाँ से हम पंजाब जाने का भाव रखते हैं, इसलिए आप अपने बच्चे को घर ले जाओ। हम इससे कोई सम्पर्क नहीं रखेंगे। अगर फिर भी यह घर से भागकर कहीं चला गया तो हम जिम्मेदार नहीं होंगे और अगर हमारे

पास आएगा तो हम बार-बार आपको खबर देने को बाध्य नहीं होंगे।” परिवार वाले अपने बालक को जबरदस्ती ले गए।

पूज्य गुरुदेवों का शाहाना विहार हुआ। पुरखास पधारना था क्योंकि पूज्यपाद बहुसूत्री श्री नाथूलाल जी म. पिपलीखेड़ा से पुरखास पधारे थे तो श्री प्रेमचन्द जी म. जीन्द से। पूज्यपाद श्री वृद्धिचन्द जी म. के देवलोक गमन के कारण श्री प्रेमचन्द जी म. शोक से मुक्त नहीं हो पाए थे पर श्री नाथूलाल जी म. वाचस्पति गुरुदेव जी म. तथा योगिराज जी म. से मिलकर गुरु वियोग की पीड़ा का दंश दूर हुआ।

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

विश्व मंच पर आर्य आचरण का प्रचार-प्रसार जिनके जीवन का ध्येय हो, जिनकी प्राण ऊर्जा धर्मोन्नति के लिए उफन रही हो, जिनका अन्तरतम जैनत्व के विकास के सपने ले रहा हो, उन्हें विश्राम कहाँ, लघुसीमाएं कहाँ तथा बाधाएं क्या?

मुनि मिलन के मधुर मौके पर वाचस्पति गुरुदेव ने अपने भावी कार्यक्रम की रूपरेखा तय करते हुए फरमाया कि इस साल पंजाब का सुदूरवर्ती एरिया फरसने का मन है। लंबे-लंबे विहार करने पड़ेंगे। इसलिए जो दीर्घ विहार और तज्जन्य परीषहों को झेलने का भाव रखता हो वह साथ चले, शेष मुनिगण इधर ही अपनी विहार यात्राओं का आनन्द लें।

वाचस्पति गुरुदेव, श्री योगिराज जी म. व श्री भण्डारी जी म. की त्रिपुटी में वाचस्पति गुरुदेव के गुरुभ्राता स्वामी श्री फूलचन्द जी म. सम्मिलित हुए। करनाल, कुरुक्षेत्र उगाला मुलाना में धर्म का उद्योत करते हुए सढौरा में पदार्पण हुआ। छोटा सा क्षेत्र पूज्य गुरुदेव को पसन्द आया। रौनकों की बहारें थी पर एक कमी उन्हें बहुत खली। क्षेत्र में एक-जुटता का अभाव था। बिरादरी के चार घर स्थानक में पैर नहीं धरते थे। साधु-साध्वियों के प्रति श्रद्धालु थे पर समाज से कटे हुए थे। वाचस्पति गुरुदेव की धारणा थी कि सामाजिक प्रेम के बिना सेवाभक्ति, सामायिक संवर आदि क्रियाएं महज दिखावा है। उन्होंने साधुओं की एकता एवं श्रावकों की एकता को सदा तरजीह दी थी। विचार बनाया कि इन घरों को समाज की धारा से अभिन्न करूं। प्रवचन-प्रवाह बहने लगा। पृथक्भूत घरों में गुरु दर्शनों की भावना उत्पन्न होने लगी। संत आहार पानी के लिए घरों में

गए तो भावना और पुष्ट हुई। उन घरों में से एक भाई बल्लन आने लगा। पूज्य गुरुदेवों ने शेष व्यक्तियों को आने की प्रेरणा दी तो कहने लगा– "गुरुदेव हमारे मुखिया तो ला. कुन्दनलाल जी हैं, वही फैसला करेंगे। हाँ, उनकी धर्मपत्नी आपके चरणों में आती है। मैं कोशिश कर सकता हूँ पर बात बननी मुश्किल है। समाज हमारे साथ संबंध तोड़े हुए है और हमने समाज के साथ तोड़ रखा है।" वाचस्पति गुरुदेव ने सारी स्थिति का मंथन किया और आशा के साथ बढ़ते रहे। बल्लन ने ला. कुन्दन लाल जी से पूज्य गुरुदेव की भावना समझाते हुए बात की पर वह टस से मस नहीं हुआ।

अन्ततः गुरुदेव ने कुन्दनलाल की धर्मपत्नी से बातचीत की। प्रसंगवश उसे समझाया कि समाज व्यक्ति से ऊपर होता है। हर खुशी ग़म के अवसर पर समाज की आवश्यकता पड़ती है। कल तुमने अपने पुत्र-पुत्रियों के रिश्ते नाते भी करने हैं, बिना ब्रादरी के अच्छे रिश्ते मिलने कठिन होते हैं। अभी समाज से जुड़ो वर्ना ऐसा भी वक्त आ सकता है तुम जुड़ना चाहोगे पर कोई तुम लोगों की जात भी नहीं पूछेगा। तीर निशाने पर जा लगा। श्राविका ने घर जाते ही पतिदेव को बुला लिया और साफ-साफ कह दिया कि अपने हितैषी गुरुदेव आए हैं उनकी कृपा लेनी हो तो स्थानक में आना-जाना शुरू कर दो, वर्ना अच्छा नहीं होगा। घरवाली का डण्डा काम आ गया। लाला, वाचस्पति गुरुदेव की शरण में आ गए और उनके समर्थक भी आ गए। वाचस्पति गुरुदेव ने ससम्मान समाज से समझौता करवा दिया। गिले-शिकवे दूर हो गए। प्रेम की वीणा के स्वरों की गूंज शहर भर में सुनाई देने लगी। स्थानीय दिगम्बर समाज के कर्णधारों को भी अपनी सामाजिक टूटन का सामना करना पड़ रहा था। उन्हें लगा कि श्वेताम्बरों की तरह हमारी समस्या का समाधान व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलाल जी म. कर सकते हैं। अधिकारी वृन्द श्री चरणों में आया और निवेदन करने लगा कि गुरुदेव हमारे विभाजन का भी निपटारा आप कर सकते हैं। आप बिखरे हुए घरों को जोड़ने में माहिर हो, कुछ कृपा करो। वाचस्पति गुरुदेव का तो यह ध्येय ही था। अतः तत्काल तैयार हो गए। मंदिर के प्रांगण में प्रवचन

करने की स्वीकृति दे दी। जिम्मेदार लोगों ने हर घर में निमंत्रण भिजवा दिया कि कल पूज्य गुरुदेव का मंदिर में प्रवचन होगा। लगभग सारा समाज उपस्थित हो गया। पूज्य गुरुदेव ने प्रेम की वो रस धारा बहाई कि दिलों की हर कदूरत-नफरत दूर हो गयी। सबको गले मिलवा दिया। प्रवचन के दरम्यान ही पूज्य गुरुदेव को ज्ञात हो गया कि असंतुष्ट गुट का एक मुख्य घर हाजिर नहीं हुआ। सोचने लगे कि एक ही व्यक्ति इस नई तैयार की गई एकता को छिन्न-भिन्न न कर दे। उसे भी मुख्यधारा से जोड़ना जरूरी है। इसी ध्येय से उन्होंने घोषणा कर दी कि कल का प्रवचन भी इसी प्रांगण में होगा। योजना कामयाब रही। पूज्य गुरुदेवों का पुण्यातिशय, समाज प्रमुखों का प्रयास काम आया और अगले दिन छूटा हुआ परिवार भी प्रवचन में हाजिर हो गया। उसने भी प्रवचन गंगा में डूबकर अपनी कालिमा धो ली और समाज का अंग बन गया। जैन समाज के दोनों वर्ग खुशी से झूम उठे। शहर भर में एक ही चर्चा थी कि प्रेम के देवता वाचस्पति गुरुदेव के हाथों समाज के निर्माण का भागीरथ कार्य हो रहा है। हर गली कूंचे में यही चर्चा प्रसृत होने लगी।

सनातन धर्म समाज के श्री बलदेव प्रसाद, माधोराम आदि पांच मुख्य नेता वाचस्पति गुरुदेव की सेवा में उपस्थित हुए और अपनी समाज की दुर्व्यवस्था का बयान दिया। और विनती करने लगे कि हमारे समाज की धड़ेबन्दी को भी मिटाओ। वाचस्पति गुरुदेव का उत्तर था कि हम तो सभी समाजों में एकत्व, भ्रातृभाव का संचार करना चाहते हैं। आप प्रवचन का स्थान तय कर लो, हम आएंगे और प्रेमभाव की स्थापना करेंगे। सनातन घरों में हलचल मच गई सबको आशा जग गई कि यही एक मौका है कि हम इकट्ठे हो सकते हैं अतः सब गुट प्रवचन में हाजिर हो गए। समाजोत्थान की तड़फ से भरे जोशीले व्याख्यान ने, सिंह पुरुष की गर्जना ने, दीर्घकाल से तंद्रा में पड़े, गुटबंदियों में फंसे दिलों को हिलाकर रख दिया। सिरे से सिरे मिले, गले से गले मिले, दिल से दिल मिले और तीन घंटे के अथक प्रयास के बाद सनातन समाज की फिरकेबाजी भी जाती रही और परस्पर प्रेम का कलरव गूंज उठा। वहीं सढौरा में जमींदारों की एक छोटी कौम थी मघ राजपूत। वे भी

अन्दरूनी पार्टीबाजी से संत्रस्त थे। उनके नेतृत्व को भी वाचस्पति गुरुदेव में आशा की किरण नजर आई। अग्रणी लोग पूज्य श्री जी के चरण सरोजों में आए और कौमी एकता के लिए प्रार्थना की। वाचस्पति गुरुदेव उनके ठिकाने पर भी पहुँचे और उन्हें गले मिलवाकर एकता का निर्माण किया। कुल दस दिन के लघु प्रवास में वाचस्पति गुरुदेव ने सढौरा का कायाकल्प कर दिया।

आगे कदमों की गति शहजादपुर अम्बाला होते हुए बनूड़ तक ले चली। उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. की दीक्षास्थली बनूड़ लघुक्षेत्र था पर आपसी वैमनस्य की जड़ें वहाँ उस समय गहराई में जा चुकी थी। दो घर समाज से ऐसे कटे हुए थे मानों अछूत हों। न उन्हें समाज से सरोकार था, न समाज को उनसे। वाचस्पति गुरुदेव ऐसी सामाजिक स्थितियों से आहत और व्यथित होते थे। अपनी व्यथा को प्रकट करते हुए गुरुदेव ने समाज को ललकारना शुरू कर दिया। समाज का भावुक और चिन्तनशील तबका इस विषमता के निराकरण के लिए एकत्रित हुआ। बात सिरे तक लगने लगी थी कि कुछ भावुक बहनों ने हंगामा कर दिया। किसी परिवार के लिए 'चूहड़े चमार' शब्द का प्रयोग कर दिया। मामला फिर तूल पकड़ गया। वाचस्पति गुरुदेव ने उन बहनों की उग्र और तुच्छ भाषा के लिए उन्हें जमकर लताड़ा और उन बहनों को माफी मांगनी पड़ी, तब जाकर हो हल्ला शांत हुआ। समाज की उलझी गुत्थी सुलझी।

रूठे सजन मनाईये जो रूठें शत बार।
रहिमन पुनि-पुनि पोईये टूटे मुक्ताहार।

सबको मनाना वाचस्पति गुरुदेव का काम था और इस काम के लिए उनके पास कला थी। खरड़-नालागढ़ होकर गुरुकुल पंचकूला अधिवेशन पर जैन समाज को मार्ग दर्शन देना उनके मुख्य लक्ष्यों में एक था। उत्तर भारत में प्राचीन पद्धति से जैन शिक्षा देने वाली एक मात्र संस्था थी गुरुकुल पंचकूला। यहाँ लौकिक और धार्मिक शिक्षा का सुन्दर प्रबंध था।

गुरुकुल पंचकूला आ. श्री सोहनलाल जी म. के प्रशिष्य तथा श्री शिवदयाल जी म. के शिष्य श्री धनीराम जी एवं श्री कृष्णचन्द्र जी के मानस मंथन की उपज थी। इसकी स्थापना 8 वर्ष पूर्व सेठ श्री ज्वाला प्रसाद जी ने 21 फरवरी 1929 के दिन की थी। श्री धनीराम जी एवं श्री कृष्णचन्द्र जी को आचार्य श्री सोहनलाल जी म. से गुरुकुल स्थापना की अनुमति इस शर्त पर मिली थी कि वे दोनों मुखवस्त्रिका व रजोहरण रूप मुनि वेष का त्याग करें फिर समाज से चन्दा व जमीन के लिए गुहार लगाएं तथा गुरुकुल संचालन में सक्रिय हिस्सा लें। जमीन तो उनको एक भक्त महिला कृपीदेवी ने दान में दे दी। शिवालिक पहाड़ियों की सुरम्य तलहटी में मीलों-मीलों जमीन उसने शिक्षा प्रसार के लिए गुरुकुल के नाम कर दी।

वाचस्पति गुरुदेव सहित पंजाब के सभी प्रमुख मुनिराज गुरुकुल के उत्थान हेतु प्रयत्नशील थे, ताकि जैनों की अगली पीढ़ी संस्कारवान बने। समाज के सहयोग से संस्था चलती है। अतः अधिवेशन पर मुनियों के पदार्पण से प्रवचन से समाज की सहभागिता बढ़ेगी इस दृष्टि से वाचस्पति गुरुदेव वहाँ पधारे ही, उपाध्याय श्री आत्माराम जी म., पंजाब केसरी श्री प्रेमचन्द जी म. भी उपस्थित हुए। सभा की अध्यक्षता कन्हैया लाल भण्डारी ने की। लगभग समग्र उत्तर भारत का प्रतिनिधित्व गुरुकुल में हुआ। हरियाणा के बच्चे भी गुरुकुल में पढ़ रहे थे जिनमें रिण्ढाणा वाले श्री बद्रीप्रसाद जी के दो सुपुत्र श्री प्रकाश चन्द्र एवं श्री रामप्रसाद जी भी अपना भविष्य निर्माण कर रहे थे। गुरुदेव के कारण हरियाणा के श्रावक भी विशाल संख्या में मौजूद थे। जब वाचस्पति गुरुदेव ने समाजोत्थान की गुहार लगाई तो सारी सभा दान के लिए मचल उठी। बनवासा गांव जो कि रिंढाणा गांव के पास है, वहाँ से आई एक वृद्धा (श्री प्रकाश जी व श्री रामप्रसाद जी की पोषिका चाची) ने अपने कान का जेवर उतार कर स्टेज पर रख दिया। फिर तो किसी ने कंगन, किसी ने पाजेब, किसी ने कुछ सबने अपनी क्षमता से बढ़कर दान दिया कि प्रबन्धकों को गिनना और बताना कठिन हो गया। गुरुकुल

पंचकूला सदा ही वाचस्पति गुरुदेव व उपाध्याय श्री आत्माराम जी का आभारी रहा है।

गुरुकुल अधिवेशन पर वाचस्पति गुरुदेव के अग्रिम चातुर्मास संवत् 1995 सन् 1938 के लिए रावलपिण्डी श्री संघ ने विशेष आग्रह किया। कुछ-कुछ मन तो गुरुदेव जी म. का भी था पर मन कुछ स्यालकोट का भी था। अतः रावलपिण्डी वालों को ये कहा कि पहले स्यालकोट जाने का भाव है वहाँ श्री गोकुल चन्द्र जी म. से परामर्श करके फिर विचार करेंगे। पिण्डी वाले आश्वस्त होकर गए।

पंचकूला में उसी समय रोहतक से श्री रामकृष्ण जी भी आए थे और उन्हें ले जाने के लिए उनके पिता श्री दौलतराम जी भी आ गए। बार-बार के आवागमन से परेशानी बढ़ रही थी। अतः वाचस्पति गुरुदेव ने श्री दौलत राम जी से कहा– "इसे कुछ दिन हमारे पास रहने दो, यहाँ कुछ पढ़ाई कर लेगा। अभी हमारा दीक्षा देने का इरादा नहीं है।" पिता विवश था मन मारकर चला गया।

शिमला के श्रावक श्री विलायती राम जी ने विनती की कि गुरुदेव पंचकूला से शिमला ज्यादा दूर नहीं है। आप जैसे संयमी, प्रभावशाली मुनिराजों का पदार्पण हमारे क्षेत्र के लिए पुण्यवर्धक होगा।

उपाध्याय श्री जी म. प्रकृति प्रेमी, एकान्त रसिक स्वभाव के होने से शिमला जाने के इच्छुक थे। कुछ मुनियों को हिल स्टेशन का आकर्षण था अतः शिमला का मन बन गया। कालका, धर्मपुरा होते हुए सोलन पधारे। वहाँ के राजा को ज्ञात हुआ कि मेरे शहर में उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. जैसे ज्ञानी तथा श्री मदनलाल जी म. जैसे व्याख्यानी महापुरुष पधारे हैं तो उसके मन में दर्शनों की तथा धर्मचर्चा की भावना जागृत हुई। आया। वार्तालाप भी किया तथा जैन साधुओं की जीवनचर्या एवं जैनों के वैज्ञानिक चिन्तन से अत्यधिक प्रभावित हुआ।

दूसरी तरफ एक आर्य समाजी भाई आया। आया तो वह धर्मचर्चा के लिए था, पर धीरे-धीरे चर्चा की बजाय छींटाकशी तक पहुँच गया। जैन संतों के सर्वप्रमुख चिन्ह मुखवस्त्रिका का विरोध करने लगा। तर्क

दिया कि "ईश्वर को मुख ढकना पसन्द होता तो होठों के आगे खाल जैसी कोई चीज लटका देता। चूंकि ईश्वर ने कोई चीज नहीं लटकाई इसलिए आप जो ये कपड़ा लटकाते हो यह ईश्वर की मर्जी के खिलाफ है। वाचस्पति गुरुदेव ने पूछा– "तुम यह जनेऊ (यज्ञोपवीत) धारण करते हो क्या यह ईश्वर को अभीष्ट है? यदि ईश्वर को यह धर्म चिन्ह हर मानव के शरीर पर अभीष्ट होता तो कोई तीन नाड़ियां या लकीरें जन्म के समय ही निर्मित कर देता। चूंकि किसी के शरीर पर तीन लकीरें नहीं है अतः मान लेना चाहिए कि जनेऊ धारण करना ईश्वर की इच्छा और आज्ञा के विरूद्ध है।" उत्तर अकाट्य था इसलिए बेचारा अपना सा मुंह लेकर चला गया।

सोलन से शिमला के बीच दो पड़ाव करने थे। पहला पड़ाव रायबहादुर श्री जोधासिंह जी की कोठी पर किया। दूसरा पड़ाव एक धर्मशाला में होना था पर प्रबंधकों ने रुख ही नहीं जोड़ा। ठण्डा इलाका, ठण्डा मौसम। स्थानाभाव में रात काटनी कठिन थी। सन्त पशोपेश में थे। अचानक धर्मशाला वालों के पास ला. विलायती राम जी का फोन आया कि हमारे गुरुदेव जी पधारें तो अच्छी तरह कमरों की व्यवस्था कर देना। सारा स्टाफ हरकत में आ गया। पूरी भावना से ठहरने का प्रबंध किया। श्रावक जी ने अपने कर्त्तव्य का निर्वाह कर गुरु भगवंतों को साता पहुँचाई।

अंग्रेजी शासन की ग्रीष्म कालीन राजधानी शिमला पहुँचकर मुनियों को भी बड़ा अच्छा लगा। पर्वतों की नैसर्गिक सुषमा खुलकर निहारी। रहने को माल रोड पर गैण्डामल हेमराज की कोठी भी थी पर गिरजाघर में ठहरना उचित लगा। बड़े-बड़े चार कमरे साफ हो गए जो रहने के लिए पर्याप्त थे पर प्रवचनों के लिए तो और बड़ी जगह की आवश्यकता पड़ी। आर्य समाज का हाल मांग लिया। एक सप्ताह तक प्रवचन चले तो हाल खचाखच भर गया। वाचस्पति गुरुदेव का अंदाजे बयां ही जादू भरा था। उन्होंने ब्रिटिश नीतियों की धज्जियां उड़ानी शुरू कर दी। उनमें देशभक्ति का जज्बाती मादा था। जिन्दगी भर खादी पहनी। नरम दल और गरम दल के देशभक्त जवानों को

राष्ट्रीयता के रंग में रंगा करते। शिमला में तो ये हाल था कि उनके प्रवचनों में दुनिया ही टूट पड़ी। सरकारी तंत्र के कान खड़े हो गए। एक जगह पर इतनी अधिक भीड़? रविवार के दिन सी.आई.डी. के पन्द्रह-बीस आदमी सादी वर्दी में रिपोर्ट लेने आ गए। गुरुदेव के स्थायी श्रोताओं में से एक हवलदार ने उन्हें देख लिया। उसने वाचस्पति गुरुदेव से निवेदन किया कि आप ऐसा कोई वक्तव्य न दें जिससे कि हम सरकारी नौकरों पर यहाँ आने में पाबंदी लग जाय और आर्य समाज के प्रबंधकों पर आंच आए।

वाचस्पति गुरुदेव उस रोज भी बरसे और खूब बरसे पर उनका एक भी शब्द ऐसा नहीं था जिसे सी.आई.डी. वाले पकड़कर कुछ कार्यवाही कर सकें। सभी लोग बैरंग लौट गए।

शिमला में जैन परिवार थोड़े थे और वे भी बिखरे-बिखरे दूर-दूर। मुनियों को आहार पानी की असुविधा तो हुई। एक दिन दो मुनि अलग-अलग दिशा में आहार लेने गए। एक झोली जल्दी आ गई। उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. ने कुछ संतों को आहार देकर उदर तृप्ति करवा दी। बाकी संत प्रतीक्षारत रहे। काफी देर बाद दूसरी झोली आई पर बिल्कुल खाली। बाकी संत ताकते रह गए। परन्तु संतोष का आहार करके मन को तृप्त कर लिया। भरपेट संतों ने भूखे संतों का भरपूर मजाक किया। हंसते-हंसते फाका करने वाले फकीरों का दिन गुजर गया।

श्री रामकृष्ण जी का आग्रह बढ़ रहा था कि मुझे शीघ्र दीक्षा दें। वाचस्पति गुरुदेव उलझन में थे। परिवार अपनी जगह ठीक है और वैरागी अपनी जगह। कानूनी अड़चनों की आशंका थी। अन्ततः उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. से परामर्श किया कि क्या करना उचित है? उन्होंने फरमाया कि रामकृष्ण जी की भावना को पूर्ण करना ही चाहिए। पर उसके लिए कुछ एहतियात बरतने होंगे। ऐसी जगह दीक्षा दो जहाँ कोर्ट-कचहरी के झमेले ना खड़े हो। इसके लिए नालागढ़ उपयुक्त स्थान रहेगा। रियासत होने से वहाँ अंग्रेजी कायदे कानून लागू नहीं होते। बात व्यवहारिक थी। दीक्षा का निर्णय कर लिया। एक रजिस्टर्ड पत्र वैरागी

के घर शिमला से ही भिजवा दिया। जिसमें लिखवा दिया कि "हम नालागढ़ की ओर जा रहे हैं, चैत्र सुदी तेरस, संवत् 1995 (9 अप्रैल 1938) के दिन श्री रामकृष्ण जी को दीक्षा देने का भाव है। उस दिन तक आप नहीं आए तो हम मानेंगे कि आपकी आज्ञा है। उससे पहले दिन तक लड़का आपका है, आप इसे मनाओ, समझाओ, घर ले जाओ, आपका अधिकार है। उस दिन यह दीक्षा हमारे पास लेना चाहेगा तो हम स्वतंत्र हैं।"

वाचस्पति गुरुदेव का सपना था कि मैं अपने प्रिय सखा रामजीलाल जी का शिष्य बनाऊँगा। श्री जग्गूमल जी म. को अपना प्रथम शिष्य केवल वार्धक्य के कारण बनाया। युवा शिष्य तो अब बनना था। अतः उन्होंने योगिराज जी से कहा— ये शिष्य आपकी निश्राय का बनेगा। वे तो अपने आराध्य की इच्छा के अनुरूप चलने व ढलने में ही अपनी पूर्णता मानते थे। अतः 'तहत' कही और निश्चिन्त हो गए।

शिमला से नालागढ़ का रास्ता टूटू, कुनिहार, रामशर होकर लिया। टूटू में रात्रिकालीन धर्मसभा में वहाँ की आर्य समाज सभा का एक मुखिया भाई आया हुआ था। प्रवचन सुना तो दंग रह गया। अन्य श्रोता चले गए वह रुका रहा। मन के भाव प्रकट करते हुए बोला— 'गुरु म. हमारे समाज में आपके धर्म के बारे में जो भ्रांतियां फैलायी हुई हैं वे सब निराधार व असत्य हैं। आपके उपदेश मानवता व राष्ट्र के उत्थान के वास्ते होते हैं। आपसे मेरी प्रार्थना है कि आप यहाँ कुछ दिन और ठहरें, आस-पास के इलाके में घूमें। मैं गांव-गांव में आपके साथ रहूँगा। पूरा प्रबंध करूंगा। आपके उपदेशों से हजारों लाखों लोगों का जीवनोद्धार होगा। पूज्य गुरुदेव जी म. मन ही मन पुराने आर्य समाजी भाईयों व इस भाई की विचार व व्यवहार की तुलना करने लगे वो कैसे थे? यह कैसा है? मन तो बना कि मानव कल्याण का समुचित अवसर है, पर नालागढ़ में महावीर जयन्ती मनाने की घोषणा कर चुके थे। उसको भी निभाना जरूरी थी। अतः उस भाई की भावनाओं की प्रशंसा करते हुए विहार करना पड़ा और पथरीले, उबड़ खाबड़ रास्तों से नालागढ़ पहुँच गए।

उस युग के महानतम् सन्तों के दर्शन, महावीर जयन्ती का आयोजन और उसी दिन दीक्षा की पूर्ण संभावना, तीन खुशियां नालागढ़ वालों को मिली तो फूले नहीं समाए। तैयारियां पूरी करनी थी। यद्यपि दीक्षा का आयोजन संदिग्ध था कि कहीं वैरागी का पिता उसे घर ले गया तो क्या होगा? परन्तु समाज को गुरुओं पर, गुरुओं को दीक्षार्थी पर तथा दीक्षार्थी को अपने संकल्प पर भरोसा था। अतः सभी निःशंक होकर आगे बढ़ते रहे।

दीक्षार्थी श्री रामकृष्ण ने वहाँ के नाजिर से भी बात कर ली और अपनी सारी स्थिति स्पष्ट कर दी। नाजिर ने कहा– 'तुम निश्चिन्त रहो, मैं कोर्ट से आज्ञा दिलवा दूँगा तथा मैं स्वयं दीक्षा का दायित्व संभालूंगा।' कुछ जरूरी कागजात भी तैयार कर दिए और श्री रामकृष्ण जी काफी निश्चिन्त हो गए।

महावीर जयन्ती से एक दिन पूर्व वैरागी के पिताजी आए। संतों ने अपनी स्थिति फिर समझा दी कि आप अपने पुत्र को प्यार से, फटकार से कैसे भी समझाओ, हमें कोई एतराज नहीं है। समीपवर्ती ला. बाबूराम जी के मकान पर पिता पुत्र को भेज दिया। दिन भर दोनों एक दूसरे को समझाते रहे परन्तु कोई नहीं माना। आखिरकार जब रामकृष्ण ने कोर्ट के कागज दिखाए तब पिता को चुप रहना पड़ा। पूज्य गुरुदेव के पास आकर इतना ही कहा– "आपको जो करना हो करो, मैं तो जा रहा हूँ।" शब्दों में क्षोभ था पर उसका कोई समाधान नहीं था।

दीक्षा को सफल भी बनाना था। समाज प्रमुख ला. देशराज जी फग्गूशाह एवं चुन्नी लाल जी ने दीक्षा की बातचीत में तथा तैयारी में विशेष हिस्सा लिया था। जैन समाज का नालागढ़ दरबार से गहरा नाता था। इसलिए राज्य की अधिकतर सामग्री समाज को सहजता से उपलब्ध हो गई। काफी फौज, फौजी घोड़े (रिसाले) एक हाथी, छत्र, चंवर आदि सब शासन ने हाजिर कर दिए। इसलिए दीक्षा की धूम ज्यादा हो गई। दीक्षा पाठ पढ़ाया उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. ने, सर्वाङ्गीण दायित्व रहा वाचस्पति गुरुदेव का एवं शिष्य बने श्री योगिराज रामजीलाल जी म. के।

दीक्षा के अवसर पर नालागढ़ के मंत्री कुंवर श्री सुरजीत सिंह भी उपस्थित हुए तथा उन्हें उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. द्वारा लिखित साहित्य उपहार में दिया।

दीक्षा के तुरन्त बाद पूज्य गुरुदेव के शरीर के कई भागों में चम्बल के दाग उभर आए। विहार की जल्दी थी। एक वैद्य को दिखा दिया। वह बोला– 'पेट की कब्ज के कारण ऐसा हुआ है।' उसने पेट साफ करने के लिए 'जमाल घोटा' दे दिया। जिस कारण गुरुदेव को दस्त लग गए। कमजोरी बढ़ गई, शरीर में गर्मी बन गई लेकिन फिर भी विहार किया क्योंकि करना ही था। शरीर पर अतिरिक्त दबाव बना और रोपड़ पहुँचते-पहुँचते दिक्कत बढ़ गई। वहाँ एक मुसलमान हकीम को बुलाया, उसने ठण्डी तासीर की दवा दी और रोग शान्त हुआ।

तीन माह से कम समय हाथ में था और लक्ष्य था सुदूर स्यालकोट और रावलपिण्डी का। मार्ग में कितने ही जैन क्षेत्र भी थे, वहाँ रुकना भी अनिवार्य था। पर वाचस्पति गुरुदेव की इच्छाशक्ति किसी बाधा को बाधा नहीं मानती थी। उपाध्याय श्री जी विहार कर गए लुधियाना की तरफ। वाचस्पति गुरुदेव चले होशियारपुर की तरफ। ददियाल गांव भी देखा जिसे शत-प्रतिशत शाकाहारी बनाने का श्रेय श्री नीलोपद जी म. को जाता है। उनकी कृपा को नमन करते हुए होशियारपुर पधारे तो एक सप्ताह का समय लग गया। उस क्षेत्र की गरिमा के अनुसार आवश्यक भी था। तब तक गर्मी ने यौवन का चोगा पहन लिया था। सुबह से ही सूर्य तपने लगता था और धूं-धूं करती हुई लूएं रोम-रोम को झुलसा देती पर उस महामहिम गुरुदेव की गति को कौन रोक सकता था। साथी मुनि तो उनके उत्साह से ही ऊर्जित हो जाते थे। किसी को पता नहीं होता कि गुरुदेव आज कहाँ है और कहाँ होंगे? वैशाख के उत्तरार्ध में जब रेत अंगारों की तरह तपती थी तब भी गुरुदेव का काफिला सुबह 15-16 किमी. व शाम को 6-7 किमी. का सफर तय कर लेता था। आहार मिल गया तो वाह-वाह, नहीं मिला तो भी वाह-वाह। प्रासुक पानी की उपलब्धि भी अग्नि परीक्षा से कम नहीं होती थी। सुनसान इलाका, वृक्षों की

छाया, तारों की चादर, सपाट भूमि पर भूमि सम्राट् विश्राम किया करते थे। **"महीरम्या शय्या, विपुलमुपधानं भुजलता"** वाला योगी ही अपनी योगनिद्रा का आनन्द लेता था। होशियारपुर से आगे का सारा इलाका उनके लिए अपरिचित तथा नया था, मगर समग्र जैन समाज उनकी महिमा-गरिमा से परिचित थी।

मुकेरियाँ लघुक्षेत्र उनके चार दिन पाकर कृत-कृत्य और धन्य हो गया। यद्यपि उनकी मांग ज्यादा थी। वहाँ से चलने पर हर स्थिति नई-नई लगी। श्रावक ही नहीं, वेशभूषा, खानपान तथा बोली भी भिन्न मिली। जैन तो अल्प थे ही, हिन्दुओं की संख्या भी कम थी। सिक्ख या मुस्लिम प्रजा का बाहुल्य था। शाकाहारी घरों की जानकारी के लिए किसी विज्ञ सहायक की आवश्यकता महसूस होने लगी। तभी पसरूर से ला. अमरनाथ जी आ पहुँचे जो आचार्य प्रवर श्री कांशीराम जी म. के भतीजे थे। आचार्य श्री जी ने राजस्थान से उनके पास संदेश भिजवाया था कि वाचस्पति जी महाराज पधार रहे हैं। सेवा शुश्रूषा का पूरा ध्यान रखें। उनका संकेत ही आदेश था। उस श्रावक ने निर्दोष सेवा का लाभ लिया। गुरुदासपुर होते हुए कलानौर, फिर नारोवाल फरसा, जहाँ जैनों के 18 घरों में 12 मूर्तिपूजक व 6 स्थानकवासी थे। उनको तृप्त कर अभियान बढ़ा किला शोभासिंह होकर पसरूर की ओर। पसरूर आचार्य श्री कांशीराम जी म. की जन्मभूमि थी। पसरूर, कसूर, गुजरांवाला, स्यालकोट, रावलपिण्डी, लाहौर आदि उत्तरी पंजाब के नामचीन क्षेत्र थे। यहाँ जैन परिवार पर्याप्त संख्या में थे पर मुनियों के निरन्तर विचरण से वंचित रहा करते। क्योंकि उन तक पहुँचने में मुनियों को काफी परीषहों का सामना करना पड़ता था। जैन तो सिक्ख और मुस्लिमों के समुद्र में टापू की मानिन्द थे। हिन्दू भी अल्पमत से संतुष्ट थे। जैनों का समृद्धि अनुपात अपेक्षाकृत ऊँचा था। परन्तु इसी समृद्धि ने प्रायः सभी समाजों को विभाजित कर रखा था। आपसी बिखरावों से हैरान-परेशान सामान्य जन को आशा थी कि वाचस्पति गुरुदेव ही इस इलाके के इस अभिशाप को धो सकते हैं। ये एकता के पुजारी हैं, एकत्व की स्थापना भी करेंगे। आगामी चातुर्मास का समय थोड़ा ही

शेष था पर स्थान निर्णय नहीं किया था। स्यालकोट और रावलपिण्डी में से एक जगह की भावना और संभावना थी। स्यालकोट में विराजमान श्री गोकुलचन्द जी म. ने वहाँ की समाज को आश्वस्त कर दिया था कि वाचस्पति जी म. का चातुर्मास यहीं का होगा, वे मेरी बात टालेंगे नहीं। जबकि रावलपिण्डी श्री संघ गुरुकुल पंचकूला में अपनी विनति कर चुका था और माने बैठा था कि हमें ही चातुर्मास मिलेगा।

स्यालकोट के प्रमुख नेता श्री मोतीशाह जी पहले ही श्री चौथमल जी म. की विनति कर चुके थे, पर उनका चातुर्मास सपने में भी संभव नहीं था, परन्तु अध्यक्ष के लिए पीछे हटना भी शक्य नहीं था। अतः वह वाचस्पति गुरुदेव की विनति करने नहीं गया। लेकिन अभी तो गुरुदेव पसरूर ही पहुँचे थे, स्यालकोट अभी दूर था। पसरूर पहुँचे ही थे कि रावलपिण्डी समाज का टेलिग्राम आया कि वाचस्पति गुरुदेव के आगमन की सूचना दो, तभी उत्तर पहुँच गया कि गुरुदेव पसरूर पधार गए हैं। उसी दिन 25-30 भाई चरणों में उपस्थित हो गए। रावलपिण्डी वालों की विशुद्ध भावना और साग्रह विनती को देखते हुए वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया कि तुम्हारा ध्यान रखूंगा, परन्तु एक बार श्री गोकुलचन्द जी म. के दर्शन करने हैं। पसरूर वालों ने पांच दिनों तक सिंह पुरुष की गर्जनाएं सुनीं। चले स्यालकोट की ओर। प्रवेश के समय निराला ही नजारा था। 7-8 सौ भाई स्वागत मे खड़े थे। नारों से गगन गूंज उठा। युवकों को जाने क्या हो गया था, क्या मिल गया था? वहाँ का कण-कण पुलकित था क्योंकि सबके दिलों के बादशाह ने वहाँ की धरती पर चरण रखे थे। सबकी एक ही भावना एक ही आवाज कि चातुर्मास लेना है, रौनकें दिखानी है। वाचस्पति गुरुदेव ने सर्वप्रथम श्री गोकुलचन्द जी म. के दर्शन किए।

जनता की भावना थी कि सार्वजनिक प्रवचन हो, ताकि सभी जातियों को जैनों के गौरव का ज्ञान हो।

आर्य समाज हाई स्कूल के विशाल मैदान में प्रवचनों की व्यवस्था हो गई। घर-घर में दीवाली और शादी का सा माहौल था। बहनें जेवरों से सजधज कर प्रवचन सभा में आती। अद्‌भुत रंग बिखरने लगा। लेकिन

दो दिन बाद वातावरण में भय और आशंका घुस गई। किसी शरारती सिक्ख जवान ने कुछ जैन महिलाओं को देखकर कह दिया कि यदि एक भावड़ी का हाथ काट दिया जाय तो सारी उम्र गुजारा हो जाय। बहनें घबरा गईं। अपने घरवालों को बात कही। उन्होंने बात समाज तक पहुँचा दी। प्रमुख व्यक्तियों ने निर्णय कर लिया कि कल से बहनें प्रवचन में नहीं जाएंगी, केवल पुरुष वर्ग ही जाएगा। बात वाचस्पति गुरुदेव तक पहुँची तो फरमाने लगे कि उपद्रवियों से डरकर बहनों पर ये अंकुश नहीं लगाना। हाँ, वे सादगी से आएं, ये हिदायत अपने घरों में दे दो। पर समाज के अग्रणी व्यक्ति भय से मुक्त नहीं हो सके। उनकी सोच बनी कि हमारी महिलाएं सार्वजनिक स्थान पर आएंगी ही नहीं। फिर वाचस्पति गुरुदेव ने कहा कि प्रवचन स्थानक में ही करूंगा, सार्वजनिक स्थान पर नहीं और फिर ऐसा ही होने लगा।

वाचस्पति गुरुदेव ने पहले दिन ही श्री गोकुलचन्द जी म. से चातुर्मास विषयक मंत्रणा की। उन्होंने बताया कि यहाँ की 99 प्रतिशत जनता चातुर्मास के लिए उतावली है पर एकाध मुखिया लोग राजनीति कर रहे हैं। उनकी मंशा है कि वाचस्पति जी म. बिना विनती की औपचारिकता के स्वयं घोषित कर दें कि मैं चातुर्मास करना चाहता हूँ। जिससे नेताओं की नाक बची रहे। पर गुरुदेव उस चाल में फंसने को तैयार नहीं हुए अतः प्रथम प्रवचन में रावलपिण्डी का चातुर्मास मंजूर कर दिया। सारा स्यालकोट स्तब्ध रह गया। युवकों को लगा कि हमारे साथ अन्याय हुआ है। उनको अन्दर की बात का पता ही नहीं था। अतः समाज और युवकों में ठनने लगी। पूर्व से विवाद ग्रस्त समाज में और नया विवाद ना खड़ा हो इसलिए विहार का मन बना लिया। श्री गोकुलचन्द जी म. से सलाह की और शाम के विहार की घोषणा कर दी। विहार में अधिकतर समाज के लोग विशेषतः युवक दूर तक छोड़ने आए। 6-7 किमी. पर पड़ाव किया, मंगल पाठ सुनकर एक बार तो श्रावक चले गए पर प्रतिक्रमण के पश्चात् 40-50 हैरान व परेशान युवक आ गए। विनती क्या थी, हो हल्ला सा हो गया। सबकी एक ही मांग थी कि हमारा कसूर क्या था? तब वातावरण की

गर्द को साफ करने वास्ते वाचस्पति गुरुदेव बोले– "मैं तो चातुर्मास करने के वास्ते तैयार हो जाता पर आपके नेताओं की राजनीति के कारण चौमासा बदला है, मगर अब इन बातों को दोहराने की कोई आवश्यकता नहीं है। शांत रहो।" युवक तो शांत होने के बजाय और आग्रही हो गए। शोर-शराबा बढ़ गया। तब गुरुदेव ने उन्हें डांटा– "मेरे पास बैठना है तो कन्ट्रोल में रहो। रात को ऊँची आवाज में बोलना निषिद्ध होता है, अब मैं कुछ नहीं कहूँगा।" उदास निराश युवक वापस चले गए। पहुँचते ही सतीश जैन के नेतृत्व में युवकों ने घंटी बजवा दी अर्थात् तत्काल समाज की मीटिंग बुलवाई। बड़ों को खूब लताड़ा और उन्हें विवश किया कि विनति करनी पड़ेगी और मनवानी पड़ेगी। उन्हें भी समाज की माननी पड़ी। प्रातः वाचस्पति गुरुदेव तो विहार की तैयारी कर रहे थे, उतनी देर में जत्थे के जत्थे उनके दरबार में हाजिर हो गए। गलती के लिए माफी मांगने लगे। पूज्य गुरुदेव ने समझाया मैं कोई नाराज नहीं हूँ, पर अब पिण्डी वालों को जुबान देकर मुकरूंगा नहीं। स्यालकोट वाले धरना देकर बैठ गए। श्रावक सिव्वामल बोला– 'मैं यहाँ दरवाजे पर लेट जाऊँगा। कोई बाहर नहीं जाएगा।' वाचस्पति गुरुदेव उलझन में फंस गए। तीनों सहवर्ती मुनियों को संकेत किया अलग-अलग बाहर निकलो और विहार करो। और श्रावकों से कहा– 'तुम भी बैठो, मैं भी बैठा हूँ। माहौल को बदलने की कला उनके पास थी। हंसी-विनोद का प्रसंग प्रारंभ कर दिया। काफी देर हो गई, श्रावक थक से गए। इधर-उधर देखा, शेष तीनों सन्त तो है ही नहीं। पूज्य गुरुदेव अकेले ही है। अब उन्हें अहसास हुआ कि वह तो विहार कर गए। अब क्या किया जा सकता था। सबको झुकना पड़ा। वाचस्पति गुरुदेव भी इस झमेले से आजाद होकर अपने गन्तव्य की ओर बढ़े। झामकी गांव पहुंचे जहाँ 3-4 जैन परिवार थे। वहाँ किसी ने बता दिया कि डस्के होकर वजीराबाद जाओ तो कुल सफर 24-25 किमी. पड़ेगा। अगले रोज का सफर छोटा करने के इरादे से शाम को 4 बजे भीषण गर्मी में विहार कर दिया। सूर्य छिपते-छिपते सुनसान जंगल में पहुँचे और डेरा

जमा लिया। कुछ दूरी पर सपेरों की बस्ती थी। उन्हें मालूम हुआ कि कुछ मुंह पट्टिए इधर ठहरे हैं। वे अपने गुरु को लेकर वाचस्पति गुरुदेव के चरणों में आ गए। दर्शन कर सपेरों का गुरु बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने बताया कि इस जगह पर सांप बहुत हैं, आप हमारे साथ गांव में चलो हम पूरा प्रबंध कर देंगे। गुरुदेव ने समझाया कि सूरज छिपने के बाद जैन संतों का आहार और विहार बन्द हो जाता है। फिर वार्त्तालाप बढ़ा। प्रेम बन गया। उन्होंने विनती की हमें कुछ ज्ञान सुनाओ। वाचस्पति गुरुदेव एवं श्री योगिराज जी म. ने लयबद्ध हो भजन गाना शुरू कर दिया। सपेरे भी मस्ती में आ गए, वे अपनी बीन बजाने लगे। नीरव नभ को चीरती हुई भजन की तरंगे गांव की गलियों तक गूंजीं तो सैकड़ों आदमी इकट्ठे हो गए। फिर वाचस्पति गुरुदेव ने आहार शुद्धि और जीव रक्षा का मंगलमय उपदेश दिया।

अगले दिन दो जमींदार स्वेच्छा से अगले गांव तक छोड़ने चले। 14 किमी. चले तब गांव आया। वहाँ एक अरोड़ा भाई से पूछा कि वजीराबाद कितना है तो उसने बताया कि यहाँ से 12 मील अर्थात् 18-19 किमी. आगे है। तब तक गर्मी बढ़ चुकी थीं। इतना लंबा सफर उस रोज तय करना संभव प्रतीत नहीं हुआ अतः वहीं रुक गए। कुछ शाम को, कुछ अगले दिन रास्ता काटने का मन बनाया। जबकि रावलपिण्डी वालों को संकेत मिल चुका था कि आज वजीराबाद पहुँच सकते है। वहाँ के श्रावक आकर मुनियों को ढूंढेंगे तो परेशान होंगे यह भी गुरुदेव के मन में चिन्ता थी। पर अभी तो दिन काटने का सवाल था। पूछताछ की तो ज्ञात हुआ कि 30-40 परिवार हिन्दुओं के हैं, बाकी सिक्ख हैं। पूज्य गुरुदेव सीधे गुरुद्वारे में गए। ठहरने की जगह सहर्ष मिल गई। घरों में धोवन पानी का स्वरूप समझाया तो निर्दोष पद्धति से मिल गया। एक प्रेमी भाई ने घरों से आहार दिलवा दिया। वहाँ से शाम को विहार कर 7-8 किमी. का सफर तय किया। जंगल में पड़ाव डाला। कुछ देर बाद वहाँ पर दो मुसलमान जवान आए, पूछने लगे– 'कौन हो? ऐसी असुरक्षित जगह पर क्यों ठहरे हो?' गुरुदेवों ने अपनी मस्ती का जुबानी और रूहानी का परिचय दिया।

उधर रावलपिण्डी वाले भाई हैरान और परेशान थे। उन्होंने एक जिम्मेवार भाई को वजीराबाद भेजा था, उसने सारा शहर छान मारा पर गुरुदेव नहीं मिले। वापस पहुँचकर समाज को बताया तो सब घबरा गए। उन्होंने स्यालकोट वालों को तार देकर खबर मंगवाई कि गुरुदेव कहाँ हैं? उन्होंने पूर्व सूचना मुताबिक तार दे दिया कि वजीराबाद। असमंजस की स्थिति बन गई। अगली सुबह काफी लोग वजीराबाद आए। गुरुदेव तब तक पहुँचे नहीं थे। श्रावकों ने तलाशना शुरू किया। सूरज काफी चढ़ चुका था। जब वाचस्पति गुरुदेव पहुँचे तथा और किसी से जगह मांगकर ठहर गए। गर्म पानी की जरुरत थी। मुनि एक आटा मशीन वाले के यहाँ गए जहाँ गर्म पानी निकलता था। तीनों मुनिराज खड़े थे तो रावलपिण्डी वालों को दिखाई दिए और उनकी सांस में सांस आई। फिर गुरुदेव के चरणों में आए और पिछली परेशानी की दास्तानें सुनी व सुनाई। स्यालकोट भी कुशलता का तार दे दिया। उस दिन जगह-जगह से 50-60 भावड़े एकत्रित हो गए। निर्णय किया कि कुछ भाई विहारों में साथ रहेंगे। ड्यूटियां बांट ली। अगला पड़ाव चिनाव नदी पर डाला। दस-पन्द्रह भाई हर पड़ाव पर साथ रहे।

एक शाम विहार किया। सुनसान इलाका था। एक बंगला था। मालिक से आज्ञा मांगी, उसने इस आधार पर मना कर दिया कि नीचे फर्श पर सांप बहुत निकलते हैं। कुछ अनिष्ट हो गया तो सारी प्रजा उसे ही पकड़ेगी। वे मकान के ऊपरी हिस्से में होने से सर्पों के प्रकोप से बच जाते हैं दूसरे उनके पास रोशनी का भी प्रबंध होता है तथा उनके पास सर्प का प्रतिकार करने की पूरी छूट है, जबकि संतों के पास यह सब कुछ नहीं होता। पूज्य गुरुदेव ने उन्हें बड़ी मुश्किल से मनाया। सर्प वाले भवन की शरण ली। सुखद बात यह रही कि किसी प्रकार का उपद्रव खड़ा नहीं हुआ। जेहलम में पब्लिक लाईब्रेरी में ठहरे और सार्वजनिक प्रवचन दिया।

रोहतास पहुँचने से पूर्व एक दो जगहों पर तो दो-तीन सौ भाइयों ने दर्शनों का लाभ भी लिया। रोहतास शहर का प्रवेश उल्लासमय था। इस उल्लासवृद्धि का मुख्य कारण था वहाँ विराजित श्री

खजानचन्द जी म., श्री प्रेमचन्द जी म. तथा श्रमण श्री फूलचन्द जी म.। महान् संयमी श्री खजानचन्द जी म. गुरुदेव से दीक्षा पर्याय में बड़े होते हुए भी अगवानी में आए। श्री फूलचन्द जी म. ने जैनत्व की प्रारंभिक शिक्षा गुरुदेव से ही ली थी, अतः वे गुरुदेव के प्रति गहन कृतज्ञना का भाव रखते थे। वहाँ एक सप्ताह तक धर्म देशना का प्रवाह चला। पूज्य श्री खजानचन्द जी म. की मांगलिक सुन रावलपिण्डी के लिए मंगल प्रस्थान किया। लालमूसा पड़ाव पर एक बाबा के डेरे में ठहर गए। प्रासुक पानी की उपलब्धि समस्या सी बनी। धोवन पानी कोई समझता नहीं था। गर्म पानी ग्रीष्म ऋतु में सहजता से निर्दोषता से मिलता नहीं था। सोचा रेल के इंजन से गर्म पानी सहजता से मिलेगा। तीन संत रेल के टाईम पर स्टेशन पर गए। स्टेशन का अधिकारी यू.पी. की तरफ का था। उसने निवेदन किया कि इतनी भंयकर गर्मी में गर्म पानी कैसे पीओगे? मेरे घर पर बर्फ का ठण्डा पानी है, वह ले लो। तब संतों ने सप्रेम बताया कि जैन मुनि इस तरह का पानी ग्रहण कर सकते हैं, इस तरह का नहीं। अधिकारी बड़ा प्रभावित हुआ और श्रद्धापूर्वक जलदान का लाभ लिया।

रावलपिण्डी निकट आ रही थी और संत भी उत्साहित थे। मगर जो उत्साह बाढ़ा गांव में दृष्टिगोचर हुआ वह विरल था। उस गांव में दीवान चन्द जैन का इकलौता जैन परिवार था। मगर बाढ़ा में जब-जब संत आते तो उसके मन की तरंगें अमाप हो जाती, वह रावलपिण्डी वालों को विशेष निमंत्रण देकर बुलाता था। उसकी सोच थी कि बड़े शहरों में तो साधु-साध्वी दीर्घकाल तक ठहरते हैं, वहाँ के श्रावक अपने सहधर्मी भाईयों की सेवा का लाभ लेते ही रहते हैं, मुझे तो कभी कभी ही, वह भी एक दिन के लिए मौका मिलता है, अपने भाईयों की सेवा किसी पुण्यात्मा को ही मिलती है। पिंडी वाले उसकी सेवा लेने दलबल सहित आते थे। उस बार भी आए। खात गांव में अगला दिन काटा तो रात बिताई तारों की छांव मे। शान्त निर्जन वन प्रान्तर में।

रावलपिण्डी वाले बेचैन हो रहे थे कि कब गुरुदेव पधारेंगे। शाम को ही एक सौ पचास के लगभग युवक चल दिए और वाचस्पति गुरुदेव के

विश्राम स्थल पर पहुँच गए। क्या उल्लास था। पहुँचते ही अहमहमिका पूर्वक लिपट गए चरणों में, फिर हंसी-खुशी के दौर, फिर अट्टहास से हल्ला गुल्ला। उल्लास प्रिय होते हुए भी पूज्य गुरुदेव सोचने लगे कि इनके उत्साह को कैसे झेलूंगा। अगली सुबह सूर्योदय के साथ ही विहार हुआ। प्रवेश का समय प्रातः सात बजे का था। पर चुंगी पर पहुँचते ही जोरदार वर्षा प्रारंभ हो गई। दो घंटे तक आसमान खूब बरसा। गर्मी धुल गई। हवाएं शीतल हो गई। ठण्ड एकदम इतनी ज्यादा हो गई कि संतों को गर्म चादरें निकालनी पड़ी। दो घंटे की देरी और वर्षा के बावजूद समाज का उत्साह फीका नहीं पड़ा। हर्षोल्लास के साथ प्रवेश हुआ। रावलपिण्डी का वह चातुर्मास वाचस्पति गुरुदेव की चातुर्मासिक सूची में चिन्हित और अंकित रुप से माना गया।

प्रवेश पर उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. का प्रेमपूर्वक लिखा गया प्रेमपूर्ण पत्र मिला, जिसमें उन्होंने अपनी आत्मीयता को उंडेल रखा था।

रावलपिंडी में वाचस्पति गुरुदेव ने प्रवचन का समय प्रातः छः बजे से सात बजे का निर्धारित किया। क्योंकि अधिकांश परिवारों का व्यापार कैंट एरिया में था, उन्हें जल्दी जाना होता था। आठ से नौ के समय में कुछ परिवार के सदस्य प्रवचनों से वंचित रहते। सबको यह व्यवस्था रास आई। ला. पिंडीदास, मुंशीराम, शादीराम जी जैसे युवकों ने वाचस्पति गुरुदेव से उत्तराध्ययन, उपासक दशांग जैसे उपयोगी आगम भी पढ़े। सभी मुनियों के संयमी जीवन और मधुर-व्यवहार की स्थानीय जनता पर दीर्घकालीन छाप पड़ी।

पूज्य गुरुदेव का दो-दो बार प्रवचन चला, प्रातः और रात को। गुरु और शिष्य के संवाद को सुनने के लिए रात को इतनी भीड़ उमड़ती थी कि जितनी दरियां बिछती सब थोड़ी रह जाती थी।

वाचस्पति गुरुदेव का अपने मित्र मंडल से पत्रादि के माध्यम से निरन्तर संबंध बना रहा जैसा कि श्री कवि अमर मुनि जी म. के माधुर्य पूर्ण पत्र से अवगत होता है।

चातुर्मास भव्यता से सम्पन्न हुआ। परिणति से कुछ दिन पूर्व तत्रत्य समाज ने निवेदन किया– 'गुरुदेव सर्दी आ चुकी है, रास्ते में अनुकूलता

कम है। अभी तीन चार माह यहीं विराजो और हमें धर्मलाभ दो। यहाँ अधिकतर मुनिराज गर्मी से दो-तीन माह पूर्व आ जाते हैं और सर्दी के बाद विहार करते हैं, हमें पूरा साल सा मिल जाता है। आप भी कृपा करो। वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया कि हम तो बिना कारण कल्प से एक दिन भी अधिक नहीं ठहरेंगे। मार्गशीर्ष बदी एकम को विहार होगा। श्रावक भी इतना संपर्क होने पर जान ही चुके थे अतः आग्रह करने का अर्थ ही नहीं रहा।

विदाई के समय अनेक भक्तों ने अपने-अपने ढंग से अपने अनुभवों की अभिव्यक्ति दी। समाज के प्रधान श्री नानकशाह ने कहा– 'मेरी जिन्दगी का पहला चौमासा है, जिसमें हमको पंचायत नहीं बुलानी पड़ी। प्रायः सभी चौमासों में हमें संतों के आपसी मनमुटाव, टकराव दूर करने के लिए पंचायतें करनी पड़ती थी। मगर इस चातुर्मास में हमें ऐसा कोई मौका नहीं मिला।'

वाचस्पति गुरुदेव मुनि परिवार को तथा श्रावक वर्ग को प्रेमसूत्र में बांधना जानते थे। संवत् 1995 सन् 1938 का चातुर्मासिक विहार सानन्द सम्पन्न हुआ।

नोटः रावलपिंडी चातुर्मास तक वा. गुरुदेव के चरित्र का बहुल अंश उनकी डायरी के आधार पर लिखा है। सन् 1932 तक की घटनाएं उनकी लेखनी से निसृत हुई हैं। बाद के छः वर्ष की घटनाएं पूज्य श्री भण्डारी जी म. ने संकेत मात्र ही लिखी हैं। उसके पश्चात् का क्रमिक वर्णन नहीं मिलता। अन्यान्य स्रोतों की प्रमाणिकता को जांचकर प्रस्तुत होगा अग्रिम वृत्त।

वयं रक्षामः

चातुर्मास के अनन्तर विहार क्षेत्र प्रायः परवर्ती पंजाब ही रहा जैसे कि कसूर, पसरूर, गुजरांवाला, स्यालकोट और जम्मू। गुजरांवाला क्षेत्र उन्हें अधिक भाया क्योंकि वहाँ के श्रावक वर्ग में निश्छल सेवाभक्ति देखी और उत्साह भी पर्याप्त।

वहाँ भी सार्वजनिक प्रवचन शृंखला चली। जैन अजैन जो भी उनके प्रवचन में आ गया वही उनका दीवाना बन गया। ऐसा ही एक प्रेमी भक्त फलों का थैला भरकर लाया और भीड़ को चीरता हुआ आगे बढ़ा और वाचस्पति गुरुदेव के पट्टे पर रख दिया। जैन मुनि फलों को छूते भी नहीं हैं। यह नियम जिन्हें पता था वे श्रावक घबराए और हड़बड़ाहट में ऊँचे स्वर में बोलने लगे। वह भावुक व्यक्ति कुछ समझ पाए इससे पूर्व ही वाचस्पति गुरुदेव ने सभा को शान्त किया। फिर उसे समझाया कि जैन मुनि न तो किसी प्रकार का फल लेते हैं और ना ही फूल और न ही उन्हें स्पर्श करते हैं। अर्थात् इस तरह की भेंट वे स्वीकार नहीं करते हैं।

अपनी भूल समझकर उस व्यक्ति ने अपना थैला उठाया, सबका भार दूर हुआ।

अग्रिम चातुर्मास गुजरांवाला का निश्चित करके गुरुदेव उस इलाके को सींचने लगे और अधिक सिंचन, अवगाहन का भाव था कि मध्य पंजाब की ओर से एकदम पुकार आ गई कि आपको आना पड़ेगा। रायकोट क्षेत्र की सुरक्षा का सवाल है। लुधियाना के निकट रायकोट में डेढ़ सौ के लगभग स्थानकवासी परिवार थे। दस-पन्द्रह श्वेताम्बर मूर्तिपूजक। पंजाब में श्वेताम्बर स्थानकवासी परिवार 'ढंढेरे' कहलाते हैं तथा मूर्तिपूजक 'पंजेरे'। 'ढूंढिया' शब्द ढंढेरा, पूजक शब्द पुजेरा

बन गया। मूर्तिपूजक परिवार मूलतः तो वे भी स्थानकवासी ही थे पर कभी असामाजिक असंतोष के कारण गुरु धारणा बदल ली थी। उन्हीं दस-पंद्रह परिवारों– जिसमें पांच भाई सम्मिलित थे– के साथ मिलकर स्थानकवासी संघ में सेंध लगाने की योजना बना ली थी। सारे परिदृश्य को समुचित समझने के लिए रायकोट विवाद का इतिहास निहार लें।

ला. नत्थूराम, जंगीराम, विलायतीराम आदि पांच भाईयों की दुकानों का ऊपरी भाग स्थानक के रूप में प्रयुक्त होता था। चातुर्मास, आवास हर काम वहीं होता था। इसलिए दीर्घकाल से प्रयुक्त होने के कारण वह स्थान प्राईवेट सम्पत्ति न रहकर सामाजिक धरोहर बन गई थी। परिवार भी समय-समय पर कह चुका था कि ये समाज की जगह है। लेकिन जब समाज ने उसका कब्जा लेकर नए सिरे से उसके निर्णाण की भावना जताई, तब परिवार की ओर से बहानेबाजी व आनाकानी प्रारंभ हो गई। इस कारण समाज और उनके बीच दूरियां बढ़ने लगी। पंजाब के प्रमुख श्रावकों ने अनेक बार मध्यस्थता कर मामला सुलझाने का प्रयास किया। एक मीटिंग चल रही थी, लाहौर के प्रसिद्ध श्रावक रलाराम जी जज आए हुए थे। उन्होंने कानूनी ढंग से मामले को लेना शुरू कर दिया। परन्तु समाधान नहीं हुआ। कुछ खीज गए। और उस परिवार पर कटु टिप्पणी कर दी जिससे पांचों भाई आहत और क्षुब्ध हो गए और धमकी दे दी कि हम धर्म बदल लेंगे। वैसे तत्र विराजित श्री खड़ग चन्द्र जी म., श्री जीवाराम जी म. तथा श्री बेलीराम जी म. के प्रति उनकी गहन आस्था थी। वे भी इस परिवार के प्रति विशेष कृपावान थे। उनकी दृष्टि में परिवार का पक्ष समुचित, समाज का पक्ष अनुचित था। इसलिए उन्होंने पांचों भाईयों को धर्म छोड़ने की धमकी देने के बावजूद रोका नहीं, टोका नहीं और समझाया नहीं। बात यहाँ तक पहुँच गई कि पुराने मूर्तिपूजक परिवार इन भाईयों से आ मिले और इन्हें आचार्य श्री बल्लभ विजय जी म. के पास ले गए और चातुर्मास की विनती कर आए। प्रभावशाली आचार्य के आने से अन्य स्थानकवासी परिवारों का परिवर्तन भी संभावित लगने लगा और फिर समाज में हड़कम्प सा मच

गया। साधारण मानव के लिए स्थानक की निराकार उपासना की अपेक्षा मंदिर की साकार पूजा सरल होती ही है। अतः स्थानकवासी परिवारों के टूटने का खतरा बढ़ गया। वैसे भी पंजाब के तीन कोट मतलब रायकोट, फरीदकोट और स्यालकोट निशाने पर थे। पहला नम्बर रायकोट का था। लगने लगा एक कोट टूटा तो और भी टूट जाएंगे। पंजाब की बिरादरियों ने फिर बड़ी मीटिंग बुलाई। पांचों भाईयों ने फिर एक दाव चला। कहने लगे यदि रायकोट की समाज दस हजार रुपये दे दे तो हम अपनी जगह दे देंगे। समाज में इतना सामर्थ्य नहीं था कि तत्काल प्रबंध कर सके। तभी मलेरकोटला के श्राावक काबलीमल अपनी तरफ से दस हजार रुपये देने को तैयार हो गए। इस पर प्रतिपक्षी वर्ग मना कर गया। उन्हें तो रायकोट वालों से दस हजार रुपये चाहिए, बाहर वालों से नहीं। मीटिंग अनिर्णय में ही खत्म हो गई।

अब विचार बना कि आ. श्री विजयवल्लभ म. के साथ पंजाब केशरी श्री प्रेमचन्द जी म. कई बार लोहा लेते रहे हैं। अतः उनका चातुर्मास रायकोट में करवा लिया जाय ताकि समाज की सुरक्षा बनी रहे। लेकिन इस बार वो भी मैदान में आने को इच्छुक नहीं थे। उन्होंने अपना चातुर्मास पटियाला का मान लिया था। अतः कैंसिल करना नहीं चाहते थे। समाज की बढ़ती चिन्ता उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. के सामने आई। उन्होंने बताया कि वर्तमान परिस्थितियों में व्याख्यान वाचस्पति जी म. ही समाज की रक्षा कर सकते हैं और विवादों को टाल भी सकते हैं। मैं उनको रायकोट चातुर्मास करने के लिए लिख देता हूँ। आप उनकी सेवा में जाओ। समाज को आशा की किरण दिखाई दी। समाज के प्रमुख व्यक्ति उनके चरणों में पहुँचे। सारी स्थिति स्पष्ट की। उपाध्याय श्री जी का अधिकृत पत्र दिया। वाचस्पति गुरुदेव ने कहा– "मैं समाज के हित में रायकोट चातुर्मास के लिए तैयार हूँ। पहले तुमको गुजरांवाला श्री संघ से अनुमति लेनी होगी क्योंकि मैं वहाँ का चातुर्मास घोषित कर चुका हूँ। दूसरे, चातुर्मास में कवि अमरमुनि जी भी साथ रहें तो अधिक सुविधा रहेगी। और मोर्चा तो मैं संभाल लूंगा लेकिन

यदि प्राचीन टीका ग्रंथों चूर्णिकाओं के संदर्भों को लेकर विवाद शास्त्रार्थ की नौबत आ गई तो कवि जी म. अधिक अधिकार व प्रामाणिकता के साथ उत्तर दे सकते हैं। वाचस्पति गुरुदेव की स्पष्ट विचार धारा से श्रावक वर्ग को प्रबल हौंसला मिला। गुजरांवाला श्री संघ के आगे झोली फैलाकर उनसे चातुर्मास मांगा। श्री संघ ने आगन्तुक बन्धुओं का मान रखा तथा समाज रक्षा के निमित्त अपने हाथों भरी थाली रायकोट के हाथों में दे दी। उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. ने कवि जी म. के साथ संयुक्त चातुर्मास की अनुमति तो दे दी परन्तु कवि जी म. को इस काम के लिए रजामंद करने की जिम्मेवारी वाचस्पति गुरुदेव पर ही डाल दी। वाचस्पति गुरुदेव को अपने प्रगाढ़ मैत्री संबंधों पर विश्वास था कि कवि जी म. इस काम के लिए मान जाएंगे। रायकोट चातुर्मास का निश्चय करके वाचस्पति गुरुदेव ने मध्य पंजाब में आने का कार्यक्रम भी बना लिया। कसूर होकर पहले फिरोजपुर फिर फरीदकोट फरसा। फिरोजपुर में श्री जग्गुमल जी म. के सुपौत्र श्री सुदर्शन लाल जी वैराग्य भावना लेकर चरणों में आए। वाचस्पति गुरुदेव ने घर पर सूचना भिजवा दी। परिवार वाले आए और आग्रह करके वापस ले गए।

उन्हीं दिनों बड़ौदा के दो युवक 32 वर्षीय श्री रणसिंह जी तथा 25 वर्षीय श्री शिवचन्द जी (श्योचन्द्र जी) दीक्षा का संकल्प लेकर आए हुए थे। श्री रणसिंह जी सूझबूझ के धनी तथा श्योचन्द्र जी सामान्य प्रकृति के थे। बड़ौदा की माटी से श्री योगिराज जी म. जन्में थे तथा उसी माटी के ये दो लाल थे। अतः स्वाभाविक ही था कि शिष्य भी उन्हीं के बनते। वाचस्पति गुरुदेव ने विचार विमर्श करके दीक्षास्थल फरीदकोट तथा दीक्षा दिवस वैशाख शुक्ल सप्तमी 1996 का दिन चुन लिया। फरीदकोट पधारते ही क्षेत्र खुशी से झूम उठा तथा दीक्षा कार्य धूमधाम से सम्पन्न हुआ।

फिर पूज्य गुरुदेव चले लुधियाना की ओर उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. की सेवा में। जहाँ जेठ मास की भीषण गर्मी में भी शीतल बयार बहती रही। उस समय लुधियाना में चालीस मुनिराज एकत्रित हो गए।

बिना किसी घोषित समारोह के सम्मेलन सा हो गया। श्री शालिग्राम जी तथा श्री आत्माराम जी म. के स्थिरवास का सिंघाड़ा, श्री पृथ्वीचन्द जी म., गणी श्री श्यामलाल जी म. का दूसरा, पंजाब केसरी श्री प्रेमचन्द जी म. का तीसरा, वाचस्पति श्री मदनलाल जी म. तथा श्री योगिराज जी म. का चौथा, श्री रामसिंह जी म. तथा नौबतराय जी का पांचवां तथा श्री खजानचन्द जी म. का छठा सिंघाड़ा। यों लगने लगा कि पंजाब सम्प्रदाय का शीर्ष नेतृत्व किसी विशेष मंत्रणा के लिए आया हो। चर्चा का मुख्य केन्द्र रायकोट का भविष्य और उस श्री संघ के भविष्य के रखवाले वाचस्पति जी म. को ही बनाया। गर्मी की तीव्रता के कारण एक माह लुधियाना में ही गुजारा। आतप निवारण के अनूठे उपाय खोजने में श्री खजानचन्द जी म. विशेष रूचि लेते थे। पानी को ठण्डा करते रहते, संतों की तृषा मिटाते रहते। पंसारी के यहाँ से गूंद कतीरा लाकर भिगोते दोपहर बाद दूध मिलाते, लस्सी बनाकर पिलाते ताकि लूओं का प्रकोप न हो।

उन दिनों की एक घटना है— एक संत पानी लेने किसी के घर पर गए। वहाँ विवाह की तैयारी के लिए घी गर्म किया हुआ था। घी की मात्रा अधिक थी। देने वाले किसी सदस्य को तथा लेने वाले मुनिराज को पता नहीं था। अतः पानी समझकर पात्र भरवा लिया। स्थानक में आने पर यथार्थ का भान हुआ। अब प्रयोग की समस्या थी। श्री खजानचन्द जी म. ने स्वयं सारी जिम्मेवारी ली। किसी दुकान से भुने हुए चने बड़े पात्र में भरवा लाए। किसी अन्य स्थान से बूरा ले आए। भूने चनों को कूटकर बारीक बेसन बना लिया। फिर सारा घी और बूरा मिलाकर लड्डू बना लिए। 40 संतों में सब खप गया। लाई हुई वस्तु काम में आ गई और संतों का मुंह मीठा करवाने का पुण्य भी अर्जित कर लिया।

लुधियाना में ही आचार्य श्री पृथ्वी चन्द्र जी म. से वाचस्पति गुरुदेव ने कहा कि कवि जी म. का चातुर्मास रायकोट में हमारे साथ करा दो।

नोटः ऊपर लिखित तथ्य तथा कुछ अग्रिम जानकारियां श्री श्रीचन्द जी म. के प्रकाशित जीवन चरित्र तथा कुछ अप्रकाशित कागजों से ली गई है।

उनका ठाणे आठ से जगरावाँ में चातुर्मास घोषित हो चुका था। श्री पृथ्वी चन्द्र जी म. को उनकी आवश्यकता भी थी पर वाचस्पति जी म. के प्रेमपूर्ण निवेदन को वो टाल नहीं सके और समाजहित में श्री कवि जी म., श्री चन्द जी म. को अर्पित कर दिया। चूंकि आचार्य श्री पृथ्वीचन्द जी म. का चातुर्मास जगरावाँ निर्धारित हुआ था। अतः सभी मुनिराज पहले तो जगरावाँ ही गए। फिर श्री कवि जी म. तथा श्रीचन्द जी म. को लेकर रायकोट के लिए प्रस्थित हुए। 26 जून 1939 की शाम को पांच बजे ठाणे नौ को ठाणे छः ने विदाई दी। बड़ों का आशीर्वाद और शिक्षापुंज ले अपने पथ को मंगलमय बनाया। विदाई देने वाले थे पूज्य श्री पृथ्वीचन्द जी म., श्री प्रेममुनि जी म., श्री अमोलक चन्द जी म., श्री हेमचन्द जी म. तथा श्री विजय मुनि जी म. तथा विदाई लेने वाले थे श्री वाचस्पति जी म., श्री योगिराज जी म., श्री कवि जी म., श्री भण्डारी जी म., श्री प्रेममुनि जी म., श्री श्रीचन्द जी म. तथा नवदीक्षित श्री रामकृष्ण जी म., श्री रणसिंह जी म. तथा श्री श्योचन्द जी म.। रात्रि पड़ाव डाला नहर के पुल पर सरकारी रेस्ट हाउस में। वहाँ के बड़े अफसर वाचस्पति जी म. के चरणों में धार्मिक जिज्ञासा लेकर आए और परम संतुष्ट होकर गए।

प्रातः साढ़े तीन बजे ही लुधियाना और जगरावाँ के श्रावक आ पहुँचे। 27 तारीख को किसी ग्राम में निवास हुआ जहाँ रायकोट वालों का तांता लग गया। स्थानीय निरंकारी महात्मा ने आहारादि दिलवाने में दिलचस्पी ली, पर अनुकूलता कम बन पाई। हाँ, उसने धर्म चर्चा काफी की। एक बात पर सहमति कम बनी कि जैन धर्म शूद्रों को साधुत्व का अधिकार क्यों देता है? वाचस्पति गुरुदेव की बातों का वह उत्तर तो नहीं दे पाया, पर पूर्व धारणाएं भी नहीं बदल पाया।

28 तारीख को बसिया में ठहरे। रायकोट वाले मेहर सिंह की वहाँ दुकान थी। अतः उसने विशेष सेवा लाभ लिया। शाम को विहार कर वनभाग में पड़ाव किया। कुछ रायकोटी भाई भी वहीं पर रुके। अगली सुबह तो बहुत अद्भुत थी। दोनों सभाएं अपनी-अपनी पोशाकों में

झण्डे लेकर पहुँच गई। 6 बजे चले। मार्ग में श्री जीवाराम जी म. तथा श्री बेलीराम जी म. अगवानी में स्वल्प पेय आदि लेकर पहुँचे जिसे तुलसीराम लोढा के बाग में प्रयुक्त किया। शहर में प्रवेश के समय तो जनसमुदाय सुविशाल हो गया। हिन्दुओं की छत्तीस कौमों के अलावा सिक्ख और मुस्लिम समुदाय भी प्रचुरता में शामिल हुआ। स्थानक में श्री खड़गचन्द्र जी म. के दर्शन किए। वाचस्पति गुरुदेव ने प्रवचन दिया। स्थान की अल्पता के कारण श्री हुक्मचन्द रोशनलाल लोढा के मकान पर ठहरे। अगले रोज रतन देवी जी म. का पदार्पण हुआ। उनका भी यहीं चातुर्मास निश्चित हुआ था। लौंद का साल होने से चौमासा पांच माह का था अतः जुलाई से ही चातुर्मास शुरू हो गया। आसमान में रिमझिम वर्षा शुरू हो गई।

इस चातुर्मास के बारे में वाचस्पति गुरुदेव की विचारधारा बिल्कुल स्पष्ट थी कि दोनों समाज शांति के साथ रहें। कोई किसी के विरूद्ध कार्य न करे। मैं अपनी समाज के लिए तो कटिबद्ध हूँ पर समीपवर्ती समाज का अहित नहीं करूंगा। तथा न किसी को अपनी सामाजिक अखण्डता को छिन्न-भिन्न करने की अनुमति दूँगा। इसलिए उन्होंने अपनी समाज को पूरी तरह से ताकीदी कर दी कि किसी भी प्रकार की निरर्थक चर्चा में रूचि नहीं लेनी। सामायिक संवर करो, धर्म-ध्यान सीखो, प्रातः सायं दोनों समय के प्रवचनों का लाभ लो। टीका-टिप्पणी वाद विवाद में उलझने की कोशिश बिल्कुल नहीं करनी। श्री कवि जी म. का भी यही दृष्टिकोण था। प्रवेश के अगले रोज ही वाचस्पति गुरुदेव को आचार्य वल्लभ विजय जी म. बाहर मिल गए और गुरुदेव ने खुद पहल करके उनसे प्रेमालाप किया। वे भी आह्लादित हुए।

वाचस्पति गुरुदेव ने अपनी नीति को स्पष्ट करते हुए कहा कि "हम और आप दोनों भगवान महावीर के अनुयायी हैं अतः भाई-भाई हैं। आप अपनी विधि से धर्म क्रियाएं कराएं और हम अपने ढंग से। न हम आपका खण्डन करेंगे और न आप हमारा। खण्डन के दो ही मुद्दे हैं, हमारे लिए मूर्ति और आपके लिए मुंह पट्टी। उन विषयों को न

आप छूएं और न हम। यदि कहीं से कोई चर्चा सुनने में आए तो हम एक दूसरे से पूछवा लें और तथ्य का निर्णय कर लें, तत्काल प्रतिक्रिया न करें।" श्री वल्लभ विजय सूरी जी म. इस स्वस्थ चिन्तन से प्रभावित भी हुए और सहमत भी और विश्वास दिलवाया कि ऐसा ही होगा। इस पहली मुलाकात से सारे चातुर्मास की भूमिका का निर्माण हो गया। पांच महीने तक किसी प्रकार की खराबी की नौबत नहीं आई। जन सामान्य की आशंकाएं निर्मूल हुई।

संवत्सरी के बाद किसी विघ्न तोषी व्यक्ति ने आ. श्री वल्लभ विजय सूरी जी म. के नाम से वाचस्पति गुरुदेव के पास एक पत्र भिजवा दिया जिसमें उन्हें शास्त्रार्थ के लिए चुनौती दी थी। वाचस्पति जी म. निर्णय कर चुके थे कि पूरी जांच पड़ताल के बगैर कोई प्रतिक्रिया नहीं करनी। अतः उन्होंने एक विश्वस्त और आधिकारिक भाई के हाथों वह पत्र आ. वल्लभ विजय जी म. के पास भिजवाकर पुछवाया कि क्या यह शास्त्रार्थ का निमंत्रण आपकी ओर से है? आचार्य श्री जी पत्र को देखकर चिन्तित हुए। अपने मुनियों की मीटिंग बुलाई और पूछा कि क्या किसी ने ये पत्र भिजवाया है। अधिक पूछताछ से ज्ञात हुआ कि एक लघुमुनि के दिमाग की उपज है। उन्होंने उस मुनि को डांटा और वाचस्पति गुरुदेव के पास संदेश भिजवाया कि इस पत्र को रद्द कर दो। मेरी ओर से ऐसी कोई उकसाहट की वारदात नहीं होगी। मामला शांत हो गया।

कवि अमर मुनि जी म. को पंजाब के श्रावकों में वाचस्पति गुरुदेव ने पहचान दी और उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. से निकटता बनवाई।

विक्रम संवत् 1996 सन् 1939 का रायकोट का चातुर्मास धूम-धाम से पूरा हुआ। आशंकित हृदय निःशंक हुए। संघ के सेक्रैटरी बाबू मदन गोपाल द्वारा प्रकाशित 'रायकोट चातुर्मास' पुस्तिका के अनुसार वाचस्पति गुरुदेव के प्रवचनों का लाभ अजैनों ने, सिक्खों ने विशेषतया लिया। पूज्य गुरुदेवों ने उपासक दशांग का सकडाल अध्ययन, अनाथी मुनि, चन्दन बाला चरित्र, शालिभद्र चरित्र, सुदर्शन चरित्र ये पांच आख्यान सुनाए। सकडाल अध्ययन तो तीन माह तक चला। श्री नेकचन्द जी म.,

श्री श्योचन्द जी म. तथा साध्वी श्री अमरावती जी ने तपस्या में ऊँचे कदम बढ़ाए। श्री योगिराज रामजीलाल जी म. ने दो बार 21-21 आयम्बिल किए। सामायिक के पाठ सिखाने में भी श्री योगिराज जी म. ने रूचि ली। कवि जी म. ने स्थानीय युवकों को हिन्दी भाषा सिखाई। पर्यूषणों में जो धर्म-ध्यान हुआ वह अवर्णनीय था। आठ दिन का अखण्ड पाठ, वाचस्पति गुरुदेव द्वारा अन्तगढ़ की वाचना तो कवि जी म. द्वारा कल्पसूत्र की वाचना की गई।

वाचस्पति गुरुदेव के कान में पीड़ा होने से विहार दस-बारह दिन स्थगित करना पड़ा। ग्यारह दिसम्बर को विदाई सभा हुई। चार अभिनन्दन पत्र दिए गए। दो बजे श्री खड्गचन्द्र जी म. की आज्ञा से हजारों की जनमेदिनी के साथ विहार हुआ। बसियां रुके, फिर जगरावाँ में आचार्य श्री पृथ्वीचन्द्र जी म. को नमन किया। पुनः चल दिए लुधियाना, जहाँ संघ के, श्रद्धालुओं के केन्द्र उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. विराजित थे। रायकोट, जगरावाँ के अतिरिक्त पटियाला में चातुर्मास करने वाले पंजाब केशरी श्री प्रेमचन्द जी म. भी पधार गए। बहुसूत्री श्री नाथूलाल जी म. का आगमन भी काफी आह्लाद कारी रहा। स्वागतों का भव्य कार्यक्रम हुआ। कोतवाली के खुले मैदान में सार्वजनिक प्रवचन होने लगे। आनन्द उल्लास के उन मीठे लम्हों में गम की घड़ी भी आई जब उपाध्याय श्री जी के गुरुदेव पूज्य श्री शालिग्राम जी म. दिवगंत हो गए। मुनिमण्डल ने उन्हें श्रद्धाओं का अर्घ्य अर्पित किया।

जालंधर में विराजमान महासाध्वी प्रवर्तिनी श्री पार्वती जी म. भी उन दिनों काफी अस्वस्थ थीं। उन्हें अपने विषय में आभास सा होने लगा कि देह यात्रा पूर्ण होने वाली है। अतः लुधियाना समाचार भिजवाया कि कुछ मुनिराज मुझे दर्शन दे जाएं। तब पूज्यपाद बहुसूत्री श्री नाथूलाल जी म. की निश्राय में कुछ मुनिराज जालंधर गए और उनकी भावनाएं साकार की।

लुधियाना से उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. आदि बाईस मुनिराजों का काफिला माच्छीवाड़ा पहुँचा। वहाँ शिखरचन्द नामक नगूरा गांव

निवासी ब्राह्मण युवक की दीक्षा पौष माह में हुई। उसे पूज्यपाद योगिराज जी म. का शिष्य घोषित किया गया। वाचस्पति गुरुदेव का सपना साकार हो गया कि मैं अपने प्राणप्रिय सखा श्री रामजीलाल जी म. के चार समर्थ सेवाभावी शिष्य बनाऊँ, तदनन्तर अपने लिए किसी योग्य शिष्य को तैयार करूं।

प्रकृति उस भविष्य निर्माण के लिए पूरी तरह तैयारी कर रही थी। माच्छीवाड़ा दीक्षा के प्रसंग पर गुरुकुल पंचकूला का संचालक गण पुनः विनती लेकर उपस्थित हुआ कि आप श्री अधिवेशन पर पधारें जिसके अध्यक्ष पटियाला के नामवर श्रावक अच्छरुमल बनने वाले हैं। सकल मुनि मण्डल ने अधिवेशन पर पहुँचने की स्वीकृति प्रदान कर दी। लाला अच्छरुमल ने साथ ही साथ विनती कर दी कि महावीर जयन्ती पटियाला की कृपा करें और वह भी मंजूर हुई। दोनों कार्यक्रम भव्यता के साथ सम्पन्न हुए।

पटियाला में आयोजित महावीर जयन्ती से सम्बद्ध एक प्रसंग— यह प्रसंग मथुरा देवी जी म. के जीवन चरित्र से लिया गया है लेकिन वहाँ सन् 1941 लिखा है, होना चाहिए 1940। सत्य अन्वेषणीय रहेगा।

महावीर जयन्ती पर बहुसूत्री श्री नाथूलाल जी म., वाचस्पति गुरुदेव जी म., योगिराज जी म., कवि जी म., पंडित श्री शुक्ल चन्द्र जी म. आदि मूर्धन्य मुनिराज उपस्थित थे। ब्रादरी में उमंग अपार थी। नाटक मण्डलियां बुलाई हुई थीं। व्यापक स्तर का कार्यक्रम था। पूज्य श्री नाथूलाल जी म. इतने आडम्बरों के पक्ष में नहीं थे पर वे संतों और संघ के उत्साह को भंग भी करने को तैयार नहीं थे। एक संतुलन सा बना रहे यह उनकी मंशा थी। अपने मन की बात वहाँ पधारी हुई साध्वी श्री मथुरादेवी जी म. को कही। वे वाचस्पति गुरुदेव जी म. के पास गई और पूज्यपाद गुरुदेव श्री नाथूलाल जी म. की मनोभावना बताई। वाचस्पति गुरुदेव ने सब प्रमुख मुनियों से परामर्श करके निर्णय लिया कि प्रवचन स्थल कसेरा चौक में है। वहीं पर रात भर रूकेंगे और धर्मसभा को संबोधित करेंगे। यह नहीं कि स्थानक से ही रात को प्रवचन सभा

में जाएं और प्रवचन करके रात में ही स्थानक में वापस आ जाएं। इससे श्रावकों ने जो व्यापक प्रबंध किया है उसकी सुरक्षा रहेगी तथा हमारी संयम मर्यादा अक्षुण्ण बनी रहेगी। उन्हें अपने पूज्य गुरुदेवों की प्रसन्नता सबसे महत्वपूर्ण रही थी। उस समय धर्मसभा में प्रकाश की व्यवस्था नहीं की जाती थी। महावीर जयन्ती का मर्यादापूर्ण और भव्य समारोह पूर्ण कर सारा मुनिसंघ नाभा व मलेरकोटला होते हुए अहमदगढ़ मण्डी पहुँचा। नाभा में श्री रामस्वरूप जी म. से मधुर मिलन हुआ तो मलेरकोटला में श्री नारायणदास जी म. के मुनि परिवार से। विहारों का आनन्द दायक पहलू ये भी था कि कई स्थानों पर रातें तरुओं के नीचे व्यतीत की। नदी-नहरों के तटों पर भी रात्रियापन के अवसर आए।

अहमदगढ़ मण्डी में श्री कुन्दनलाल जी म. के दर्शन कर गुजरवाल भी पधारे। छोटा क्षेत्र, मुनिराज बड़े, रौनक और भक्ति बेशुमार थी। वाचस्पति गुरुदेव ने नोट किया कि वहाँ का मुख्य श्रावक मेलाराम दर्शन करने नहीं आया। जानकारी की तो मालूम हुआ कि पिछले कुछ अरसे से तेरापंथ के प्रभाव में आकर स्थानक आने से कतराने लगा है। वाचस्पति गुरुदेव ने सोचा कि उसकी शंकाओं का समाधान अवश्य होना चाहिए। वह तभी संभव होगा जब वह आएगा। वाचस्पति गुरुदेव ने समाज की स्थिति उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. के सामने प्रकट की। उपाध्याय श्री जी बोले— बस इतनी सी बात, भक्त आ जाएगा। कुछ देर पश्चात् मेलाराम जी की धर्मपत्नी दर्शन करने आई। उपाध्याय श्री जी ने धर्मपत्नी से कहा कि सेठ नहीं आया? श्राविका ने कहा— 'गुरु म. अभी आएगा।' उपाध्याय श्री जी निश्चिन्त हो गए। श्राविका ने घर जाते ही चूल्हा चौका बन्द कर दिया। लाला जी से कहा या तो दर्शन करने जाओ नहीं तो खाना पीना ठप्प। श्रावक जी दौड़े-दौड़े स्थानक आए। सब गुरुदेवों को भावपूर्वक वन्दना की। वाचस्पति गुरुदेव ने प्रेमपूर्वक उसकी समस्याओं का शंकाओं का निराकरण कर दिया और सामाजिक टूटन को थाम लिया। बाद में वाचस्पति गुरुदेव ने उपाध्याय श्री जी से पूछा— 'हजूर ये जादू कैसे हुआ?' उपाध्याय श्री ने हंसकर उत्तर दिया— 'वाचस्पति

जी, इन भावड़ों की लगाम इन भावड़ियों के हाथ में होती है, मैंने इसकी घरवाली की ड्यूटी लगा दी और यह तत्काल चला आया।

वाचस्पति गुरुदेव इस घरेलू राज को पाकर मन ही मन मुस्कुराते रहे।

उस वर्ष वाचस्पति गुरुदेव का चातुर्मास पटियाला होना था। वहाँ जाने से पूर्व लुधियाना पधारना भी जरूरी था। उस समय लुधियाना मुनियों के लिए केन्द्रभूत था। उपाध्याय श्री जी पहले वहाँ अपने गुरुदेवों की सेवा में रहे थे। अब भी वहाँ रुकने का मन था। लुधियाना में लगभग एक मास तक ठहरना हुआ। उसी दौरान जैन कन्या विद्यालय का उद्घाटन हुआ तथा मुख्य मुनियों ने उस अवसर पर उद्बोधन दिए।

इसके पश्चात् वाचस्पति गुरुदेव चले पटियाला को उच्चता प्रदान करने।

पटियाला चारित्र चूड़ामणि श्री मयाराम जी म. की दीक्षा-स्थली थी। अग्रवाल व ओसवालों का संयुक्त समाज था एवं अग्रणी श्रावकों का ठिकाना था। वाचस्पति गुरुदेव जब भी पधारते तो नई चेतना जाग जाती थी और अब तो चातुर्मास मिला था। जैन-अजैन सभी बन्धु गुरुदेव के प्रवचन के दीवाने थे। वाचस्पति गुरुदेव इस साल अपने पावन गुरुदेव श्री नाथूलाल जी म. की ठण्डी छाया के नीचे चातुर्मास करने जा रहे थे। ये उनके लिए अतिरिक्त आनन्द का कारण था। बहुसूत्री जी म. का अपने होनहार शिष्य के प्रति गहन स्नेहभाव था। उनकी उपलब्धियों से उनका मन प्रसादमय बन जाता था। जब वाचस्पति जी म. प्रवचन फरमा रहे होते थे तो वे कभी गैलरी में, कभी जीने में बैठ जाते तथा प्रवचन सुनकर आह्लादित होते रहते थे। कोई उनसे विनती करता कि आप श्री जी व्याख्यान के पट्टे पर पधारा करो तो वे फरमाते कि मैं पट्टे पर बैठूंगा तो मदन खुलकर नहीं बोलेगा, उसे मेरा संकोच रोक देगा। उसकी स्वाभाविक तर्ज और गर्ज प्रभावित हो जाएगी जिससे न मुझे मजा आएगा और न ही श्रोताओं को। लेकिन इसका प्रवचन मैं छोड़ नहीं सकता इसलिए ओट में बैठकर सुन लेता हूँ। अपने सुयोग्य शिष्य

के प्रति वात्सल्य के उत्कर्ष को देख साधु और श्रावक भाव विभोर हो जाते थे।

वाचस्पति गुरुदेव के प्रवचनों की जन ग्राह्यता इतनी थी कि अजैन बन्धुओं की ये मांग रहती थी कि इनके प्रवचन प्रकाशित हो जो मन के तिमिर को विध्वंस करें। एक सनातन भाई ने इसी भावना से ओत-प्रोत होकर उर्दू भाषा में प्रवचनों का संग्रह प्रकाशित करवाया। तथा कुछ चुनिंदा प्यारे-प्यारे भजन भी प्रकाशित करवाये।

कुछ मुस्लिम बन्धु भी वाचस्पति गुरुदेव के सम्पर्क में आए। जैन उपासना पद्धति से प्रभावित होकर उन्होंने सामायिक के पाठ याद किए और मुंहपत्ती लगाकर सामायिक करने लगे थे। पटियाला में वाचस्पति गुरुदेव को सर्वोत्कृष्ट उपलब्धि हुई उत्कृष्ट शिष्य की। श्री जग्गूमल जी म. के पौत्र श्री सुदर्शन लाल जी वैरागी रूप में आए। वैसे तो बाबा जी म. की दीक्षा के बाद वे रह-रहकर गुरु चरणों में आते रहे पर परिवार वालों की अनुमति न होने से वापस जाना पड़ जाता था। घर जाकर मन नहीं लगता था। घर का, ननिहाल का दबाव बढ़ जाता। कभी रोहतक में बाबू जी के साथ कोर्ट में मुंशी गिरी कर लेते, कभी चाचा जी के पास दिल्ली रहने लगते, कभी नजफगढ़ में नाना की दुकान पर बैठ जाते पर मन तो गुरु-चरणों में होता।

इस बार पटियाला आकर उन्होंने श्री बाबा जी म. से कहा कि मैं घर वापस नहीं जाऊँगा। आपको मेरी मदद करनी पड़ेगी। आप घरवालों को कुछ कहो तो बात बने। गुरुदेव तो कुछ कहेंगे नहीं, ये पिताश्री जी को मना नहीं कर पाएंगे, क्योंकि उनका प्रारंभ से ही मान करते हैं। सख्ती से कुछ कहते नहीं हैं। अब आप ही निर्णायक कदम उठा सकते हो। श्री जग्गूमल जी म. ने भी सोच लिया कि फैसला लेना ही पड़ेगा। कुछ दिन बाद जब परिवार वाले श्री सुदर्शन लाल जी को लेने पटियाला आए तब बाबा जी म. बीच में आ गए। कहने लगे– "तुम इसकी दुर्गति क्यों कर रहे हो? यह मेरी सेवा करेगा। मेरा भी इस पर अधिकार है, केवल तुम्हारा नहीं। जहाँ इसका मन

करे, रहे, फिजूल में परेशान मत करो।" बाबा जी म. के कड़े रुख के आगे परिवार निहत्था हो गया और इस तरह श्री सुदर्शन लाल जी को वाचस्पति गुरुदेव के चरणों में धर्माभ्यास, ज्ञानाभ्यास आगमार्जन का अवसर मिल गया। तथा वाचस्पति गुरुदेव को सुन्दर भविष्य का मधुर आश्वासन।

अपनी प्रखर प्रतिभा, विनयवृत्ति, शालीन शिष्टाचार से वैरागी ने सबका मन मोह लिया। पूज्यपाद श्री नाथूलाल जी म. उससे अत्यन्त प्रसन्न रहते। शास्त्रीय प्रशिक्षण, विवेक, यतना की बारीक धारणाओं का निषेचन करने लगे। नव विरक्त भी उनके प्रति नत-प्रणत हो आत्मोन्नति की शिक्षाएं ग्रहण करके प्रमुदित होता। वाचस्पति गुरुदेव को अतीत और भविष्य के इस मंगल मिलन से आत्यन्तिक संतुष्टि होती।

वैरागी जी ने अनुभव किया कि पूज्य गुरुदेव का जीवन बहुलतया सामाजिक, सार्वजनिक और सामुदायिक है। दिनभर नए-नए आगन्तुक उन्हें घेरे रहते हैं। संघ समाज के मसले सुनना और उन्हें समाहित करना उनकी खूबी है। परन्तु रात्रि के समय वे पूर्णतः अध्यात्मयोग की तह में निमग्न हो जाते थे। आवश्यकतम नींद लेकर दो बजे के करीब शय्या त्याग देते तथा आगमों के परावर्तन अनुप्रेक्षा में लीन हो जाते। उनकी आत्मानुभूति का स्तर अत्यन्त गहन होता था। वे स्वयं कई बार स्वीकार करते थे कि मैं तो रात की कमाई खाता हूँ। **"या निशा सर्व भूतानां तस्यां जाग्रति संयमी।"** संवत् 1997 सन् 1940 का चातुर्मास उद्दीप्त ढंग से सम्पन्न कर वाचस्पति गुरुदेव ने पंजाब का गहन अवगाहन किया। वैरागी श्री सुदर्शन लाल जी उनकी पावन कृपा को पाकर विकसित होते रहे। उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. से मिलन-सहविचरण होता रहा।

अग्रिम चातुर्मास निर्धारित किया अहमदगढ़ मण्डी का और पूज्यपाद बहुसूत्री जी म. व बाबा श्री जग्गूमल जी म. ने चुना धुरी को। दोनों ही निकटवर्ती क्षेत्र होने से दूरी भी नहीं रही और दो क्षेत्र होने से धर्माराधन का लाभ भी मिल गया।

अहमदगढ़ जैनों की दृष्टि से बड़ा क्षेत्र नहीं माना जाता था, पर जैनेतर समाज में जैन साधुओं के प्रति अच्छी श्रद्धा भावना थी। श्री कुन्दनलाल जी म. का विशेष प्रभाव व अनुभाव था। वाचस्पति गुरुदेव के प्रति संघ की अनन्य निष्ठा थी। चातुर्मास के पहले दिन से सार्वजनिक प्रवचनों की धारा बहने लगी। उनकी धर्म परिषद् को देखकर लगता था कि यहाँ जैनों के कई हजार घर होंगे। सनातन, सिक्ख, आर्य समाजी, हिन्दू सभी भाई एकात्म भाव से उनके चुम्बक में खिंचे चले आते। इस बढ़ती हुई धर्म प्रभावना से कुछ असहिष्णु व्यक्ति मन ही मन घबराए। उन्हें लगा यह जैन गुरु सैकड़ों ही सनातन घरों को जैन बना डालेगा। इससे हमारी संख्या अल्प हो जाएगी। इस काल्पनिक भय के निराकरण का उन्हें एक ही विकल्प सूझा कि ऐसा कोई जुगाड़ करें कि जिससे सामान्य जनता उनके धर्म से नाराज हो जाए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वे लोग बाहर से कुछ प्रचारकों को अहमदगढ़ मंडी में ले आए। स्थानक के नीचे उनका मंच लगवा दिया। विशेष प्रयास करके श्रोता एकत्र कर लिए गए। रात का समय था। वाचस्पति गुरुदेव स्थानक की चौथी मंजिल पर विश्राम की तैयारी में थे तभी उनके कानों में सभा को संबोधित करने वाले प्रचारकों के शब्द पड़े। 'कानपुर में एक बूचड़खाना है, जिसमें प्रतिदिन हजारों गाएं काटी जाती हैं, उस कारखाने का मालिक एक जैन उद्योगपति है। ये शब्द गुरुदेव के सीने में तीर की तरह चुभने लगे। उन्हें लगा कि यह वक्ता 'जैन' शब्द का प्रयोग किसी घृणित उद्देश्य से कर रहा है। यह जैन समाज, जैन गुरु और जैन धर्म को' गोघातकों के साथ जोड़कर घृणा का भाव पैदा करना चाहता है। इसका उत्तर इसी समय ही देना चाहिए। उसी समय खड़े हो लिए, स्थानक की चौथी मंजिल से ललकार लगाई– "इस सभा का सभापति कौन है?" शेर की दहाड़ थी, मण्डी के कोने-कोने में जा टकराई। जैन भाई भी इकट्ठे हो गए। सभी सन्न, वक्ता मौन, सभापति भयभीत हो गया। फिर सिंह गर्जना हुई "जिस वक्ता ने ये बात कही है, वह इस बात का प्रमाण दे या अपने शब्द

वापस ले, क्षमा मांगे, वर्ना सभा नहीं चलने दी जाएगी।" सभापति ने वक्ता को संकेत किया, उसने क्षमा मांगी और अपने शब्द वापस लिए तथा सभा को आगे चलाया। अगले रोज वह प्रचारक अहमदगढ़ मण्डी से चला ही गया। वाचस्पति गुरुदेव सब धर्मों का आदर करते थे पर अपने धर्म के लिए मरते थे। किसी प्रकार का विवाद पैदा करना उनका ध्येय नहीं था। विवादों को समाप्त करने की भावना रखते थे। इसी वास्ते वे तीन दिन के लिए समीपवर्ती गांव छपार में चले गए और वहाँ मेला लगा दिया। अहमदगढ़ पधारे तो पूर्ववत् बहारें आ गई।

इधर वैरागी श्री सुदर्शन लाल जी वाचस्पति गुरुदेव के चरणों में ज्ञानाभ्यास करके परिपक्व होते जा रहे थे। ज्ञान पिपासा तीव्र थी और गुरुदेवों से तृप्त भी हो रही थी। वाचस्पति गुरुदेव ने उनके लिए व्यवस्था बना रखी थी कि सप्ताह में छः दिन अहमदगढ़ मण्डी में रहकर ज्ञानार्जन करना तथा एक दिन धूरी जाकर बहुसूत्री जी म. व बाबा जी म. की चरण सेवा करना। इस तरह उन्होंने संयम साधना के उच्च सोपानों पर आरोहण किया। योगिराज श्री रामजीलाल जी म. के सुशिष्य श्री रामकृष्ण जी म. के लिए भी अध्ययन हेतु भरपूर प्रयास जारी रखे।

तत् त्वमसि श्वेतकेतो

व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव ने गहन दृष्टि से देखा कि वैरागी सुदर्शन लाल जी आयु विद्या संयम-साधना विनय आदि हर पहलू से निष्णात हो चुका है तो उन्होंने दीक्षा के लिए उपयुक्त अवसर समझा। कई क्षेत्रों की विनती थी पर बाबू श्री खूबचन्द्र जी ने अपनी प्राचीन सेवाओं के आधार पर संगरूर के पक्ष में फैसला करवा लिया। समग्र उत्तर भारत में इस घोषणा का स्वागत हुआ। वाचस्पति जी के चरणों में सुयोग्य युवक दीक्षित हो इस बात की खुशी पूज्य श्री मयाराम जी म. के परिवार में, उपाध्याय श्री आत्माराम जी के कुल में तथा श्री कवि जी म. के गण में विशेष रूप से हुई। दीक्षा का दिन निर्धारित हुआ माघ सुदी दूज संवत् 1998 (18 जनवरी 1942) वाचस्पति गुरुदेव ने कवि जी म. को पहले सूचना दे दी थी और यह भी कहा था कि आपके यहाँ अभ्यासरत वैरागी कस्तूरचन्द जी को भी साथ ही दीक्षित कर लें। उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. के कुल में भी श्री स्वरूपचन्द जी की दीक्षा साथ में होने का निर्णय हो गया।

संगरूर की पंचायती धर्मशाला में उत्तर भारत के मूर्धन्य तैतीस मुनिराज इस आयोजन की सफलता के लिए पधारे। जिनमें बहुसूत्री श्री नाथूलाल जी म., गणावच्छेदक श्री बनवारीलाल जी म., उपाध्याय श्री आत्माराम जी म., आचार्य श्री पृथ्वीचन्द जी म., गणी श्री शामलाल जी म. तपस्वी श्री पन्नालाल जी म. का नाम शीर्ष स्थान में था। सबकी सेवा और स्वागत का दायित्व वाचस्पति गुरुदेव तथा योगिराज जी के कन्धों पर था। श्री खूबचन्द जी की व्यवस्था बड़ी शालीन और उच्चस्तर की थी। दीक्षा महोत्सव की सफलता के लिए राजघराने से हर कीमती समान सहज रूप से उपलब्ध हो गया। वाचस्पति गुरुदेव का मानस

आडम्बरों की चहल पहल से असंपृक्त जिनशासन के समुत्थान और दीक्षार्थियों के कल्याण चिन्तन में ही निमग्न रहा। दीक्षा से एक दिन पूर्व वर्षा ने बाधा डाली पर समय पर मौसम साफ हो गया। सबने गुरुदेव का आभार माना। दीक्षा का समग्र कार्यक्रम निर्विघ्नता से सम्पन्न हुआ। तीन दीक्षार्थियों में श्री सुदर्शन लाल जी. का स्वलिखित भाषण अधिक जानदार और शानदार रहा। इसलिए श्री वाचस्पति गुरुदेव को अधिक बधाईयां मिली। दीक्षा पाठ उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. ने पढ़ाया। दीक्षा के पश्चात् वाचस्पति गुरुदेव ने अपने नूतन मुनिराज को आज्ञा प्रदान की कि आज प्रतिक्रमण के पश्चात् बहुसूत्री श्री नाथूलाल जी म. तथा उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. की वैयावृत्य करनी है तथा उनसे जीवनोपयोगी शिक्षापाथेय भी ग्रहण करना है। पूज्यपाद श्री नाथूलाल जी म. ने ऋषि याज्ञवल्क्य की भांति नवदीक्षित श्री सुदर्शन मुनि जी म. को श्वेतकेतु की तरह आत्मा का विशेष बोध प्रदान किया तथा कहा– "हे मुने! तू तो वह परम ज्योति है जिसने अनन्त को आलोकित करना है।" उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. ने भी गुरुभक्ति के अनमोल सूत्रों से सद्यः दीक्षित मुनिराज की सज्जा की। वाचस्पति गुरुदेव अपने नए मुनि के उच्च चिन्तन, उत्तम व्यवहार से बेहद प्रभावित हुए और उनको यही निर्देश दिया– "सुदर्शन मुनि तू समग्र संघ का साधु है, केवल मेरी आज्ञा और सेवा को प्राथमिकता नहीं देनी, श्री रामजीलाल जी म., श्री जग्गूमल जी म., श्री बनवारी लाल जी म. आदि जितने भी कुलवृद्ध हैं, सबकी सेवा करके तुझे आत्मलक्ष्य की ओर अग्रसर होना है।" उनकी शिक्षा और निर्देशों को पूर्ण करने में लीन हो गए पूज्यपाद गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म.।[1]

बड़ी दीक्षा का कार्यक्रम पच्चीस जनवरी को धुरी में रखा गया। जहाँ तीनों मुनिराजों को छेदोपस्थापनीय चारित्र का दान दिया गया।

1 पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. लेखक के आराध्य गुरुदेव थे अतः उनके लिए अगले पृष्ठों पर नाम लिखने की बजाय 'मेरे गुरुदेव, हमारे गुरुदेव या पूज्य गुरुदेव' इन शब्दों का प्रयोग किया जाएगा। जबकि चरित्र नायक श्री मदनलाल जी म. के लिए मुख्यतः 'वाचस्पति गुरुदेव या व्याख्यान वाचस्पति गुरु देव' इन शब्दों का। पाठक गण दोनों का संकेत स्पष्ट कर लें।

वहाँ से गणी शामलाल जी म. की टोली पटियाला की ओर तथा श्री बनवारीलाल जी म. मूनक की ओर चले। पूज्य श्री नाथूलाल जी म. भी चले तो पटियाला की ओर ही पर मन्दगति से। शेष मुनिवर्यों का चरण प्रपात लुधियाना की ओर हुआ।

सन् 1942 का वर्ष भारतवर्ष के लिए संघर्षों से भरा था। विश्वमंच पर तो दूसरा महायुद्ध चल रहा था। हिन्दुस्तान की जमीन पर 'भारत छोड़ो' आन्दोलन का जोर था। सरकार के दमन के कारण जगह-जगह उपद्रव और विध्वंस भी भयंकर हो रहे थे। उस वातावरण में भी वाचस्पति गुरुदेव की सिंहों जैसी चाल और दहाड़ बरकरार रही थी। उनके मस्तक के कपाल भाग पर "सिंह" का चिन्ह देखने का सौभाग्य उन मुनियों को मिला है जिन्होंने उनके बालों का लोच किया है। बाल हटने के बाद कपाल पर सिंह की आकृति बन जाती थी।

संवत् 1999 सन् 1942 का चातुर्मास वाचस्पति गुरुदेव का सढौरा का निर्धारित हुआ पर श्री नाथूलाल जी म. का मन किया कि माच्छीवाड़ा जैसे छोटे क्षेत्र को लाभ दूँ। आसपास विचरण की दृष्टि से बहुसूत्री जी म. खरड़ पधार गए। क्षेत्र भी छोटा, मकान भी सुविधा विहीन, मौसम भी गर्मी का, पर लोगों की भावना (विशेषतः मा. पन्नालाल जी की) का सम्मान करते हुए बहुसूत्री जी म. वहाँ ठहर गए। वहाँ जाने के बाद स्वास्थ्य शिथिल हो गया। चिकित्सा और सेवा के लिए अनुभवी मुनिराजों की आवश्यकता होते हुए भी उन्होंने वाचस्पति जी म. को इसलिए नहीं बुलाया कि कहीं उनकी विहार यात्रा में विघ्न ना आ जाए। अपनी सेवा के लिए नवदीक्षित श्री सुदर्शनमुनि जी को भेजने का समाचार प्रेषित कर दिया और यह भी कि स्वास्थ्य अनुकूल नहीं है।

वाचस्पति गुरुदेव को तत्काल भान हो गया कि मेरे गुरुवर को यदि सामान्य सी रुग्णता होती तो किसी को बुलाते ही नहीं। अब उन्होंने बुलाया है तो अवश्य ही गहरी मजबूरी होगी। अपने शिष्य श्री सुदर्शन लाल जी को बहुत-बहुत शाबासी दी कि हमारी बजाय तुझे याद किया है यह तेरा सौभाग्य है। तूने थोड़े ही समय में उनके दिल

में स्थायी स्थान बना लिया है। पूज्य गुरुदेव तो दोनों गुरुओं के आगे सिर झुकाए रहे।

वाचस्पति गुरुदेव सकल मुनिवृन्द के साथ खरड़ की ओर चल दिए। लंबे-लंबे विहार कर पहुंचे तो देखा कि स्थिति चिन्ताजनक है। गर्मी के कारण शरीर में व्याकुलता बढ़ रही थी। अन्तरात्मा में गहन शांति समाधि का साम्राज्य व्याप्त था।

उपचार के प्रति निरपेक्ष हो केवल अध्यात्म की उच्च श्रेणियों में रमण चल रहा था। शरीर का यंत्र क्रमशः गतिहीनता की ओर अग्रसर था। साधना मंत्र कण-कण में गुंजायमान था। कुछ दिन प्रतीक्षा की कि स्वास्थ्य में सुधार आ जाए पर जब प्रतीत हो गया कि यह सूर्य अस्तगत होने ही वाला है तो उन्होंने अपने लिए संथारे का प्रत्याख्यान कर लिया। वाचस्पति गुरुदेव, योगिराज जी म., अन्य वरिष्ठ मुनि, श्री जग्गूमल जी म., पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. उस अध्यात्म सूर्य की सांध्य आभा का दर्शन कर रहे थे। और ज्येष्ठ शुक्ला एकादशी संवत् 1999 (23 जून 1942) के रोज पूज्य प्रवर शान्तात्मा, बहुसूत्री श्री नाथूलाल जी म. संघ को अनाथ करके देवलोकों में प्रस्थित हो गए।

लघु मुनियों की स्थिति क्या थी? उस समय तो अचल, अटल हिमालय सरीखे वाचस्पति गुरुदेव भी पूरी तरह हिल गए। भावुकता आंखों से बरसने लगी, वाणी से फूटने लगी, छाती में धड़कने लगी। जिनकी गोद में अपनी जवानी को बच्चों की तरह गुजारा, अपने हर जोश को, तूफान को, जिनके भरोसे थामा और संभाला, जिनसे मां का दुलार, पिता का सहकार पाया था, उनका साया छूट चुका था। हृदय क्रन्दन कर रहा था। अपने वंश के लिए उनके मन में कितनी कल्पनाएं थी कि छोटे-छोटे मुनियों को पढ़ाऊँगा, यों सिखाऊँगा पर अभी तो पांच माह ही हुए थे, लाडले पोते की दीक्षा के और वे सबको मझधार में छोड़ चले। वा. गुरुदेव का मन उद्विग्न, खिन्न, उदास, भस्मसात् सा होता जा रहा था। देह संस्कार हो गया। श्रद्धांजलि सभा पूर्ण हो गई। अन्तरंग मित्रों के संवेदना पत्र आ गए पर वाचस्पति

गुरुदेव की उदासी नहीं टूटी। उनके आंखों के सूनेपन को निहार कर श्री योगिराज जी म. चिन्तित हो गए। उन्हें एकान्त में ले गए। उन्हें खुलकर बरसने दिया। उन्हें पता था कि जब तक ये रो नहीं लेते तब तक उदासी टूटेगी ही नहीं। **"शोक क्षोभे च हृदयं प्रलापैरवधार्यते।"** तीव्र शोक और क्षोभ की स्थिति में रुदन से ही हृदय को थामा जा सकता है। थोड़ी देर बाद श्री योगिराज जी म. बोले– "गुरुवर्य, आपको किस बात का बोझ है। वो हमें, आपको भरपूर करके गए हैं, मन को हल्का करो।" वा. गुरुदेव बोले– "रामजी, आज मुझे वाचस्पति, वाणी भूषण, गुरुदेव तथा पूज्य कहने वाले तो लाखों हैं पर 'मदन' कहने वाला कोई नहीं रहा।" श्री योगिराज जी म. ने चिन्तन का रुख मोड़ते हुए कहा– 'गुरुदेव! सारा मुनि संघ, सारा श्रावक संघ आपकी ओर ही निहार रहा है। आप धीरज धरोगे तो सब संभले रहेंगे, अन्यथा सब टूट जाएंगे। छोटे-छोटे मुनियों के चेहरे आपकी उदासी से कुम्हला रहे हैं। आप ही उन्हें खिलावट दो। पूज्य गुरुवर्य गए हैं पर फिर भी हमसे दूर नहीं है। वे बहुसूत्री थे, आगमों के पारगामी थे। स्वाध्याय में उनकी आत्मा बसी हुई थी। यदि हम भी अपनी जीवन शैली में स्वाध्याय को गहन रूप से स्थापित कर लेंगे तो वे हमारे अन्दर ही विराजित रहेंगे। आप उनकी याद में एक साल में पूरी आगम बत्तीसी की स्वाध्याय पूरी करने का संकल्प ले लें तो आपको एहसास हो जाएगा कि अपने गुरुवर अपने से दूर नहीं गए हैं।' वाचस्पति गुरुदेव पर इन विचारों ने संजीवनी का काम किया। उनकी उदासी टूट गई और जुट गए शास्त्र स्वाध्याय में। उस वर्ष बत्तीस आगमों की स्वाध्याय करके गहरा अन्तस्तोष प्राप्त हुआ और प्रतिवर्ष का यह क्रम बना लिया। किसी वर्ष अन्यान्य व्यस्तताओं के आधिक्य से बत्तीस आगमों की स्वाध्याय पूर्ण नहीं हो पाई तो ग्यारह अंग सूत्रों की स्वाध्याय तो तब भी नहीं छोड़ी।

श्री योगिराज जी म. का अन्तरंग साहचर्य पाकर फिर मन का पुष्प खिला और फिर अपनी ऊर्जा समाज निर्माण में लगा दी। पांच वर्ष पूर्व जिस सढौरा की चार समाजों का एकीकरण अपने हाथों से

किया था, उसी समाज को चार माह के लिए कृतार्थ करने पधारे तो लघु क्षेत्र का चप्पा-चप्पा नाचने लगा। पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. तो अपने प्रथम चातुर्मास में सेवा स्वाध्याय व समाधि में लीन रहे। वाचस्पति गुरुदेव उनकी अन्तर व बाह्य वृत्तियों से पूर्णतः सन्तुष्ट थे। उन्हें ऐसा सुयोग्य पात्र मिल गया था जिसमें सब कुछ उंडेला जा सकता था। जितनी बुद्धि की कुशाग्रता थी उससे अधिक थी हृदय की विनम्रता तो वाचस्पति गुरुदेव प्रसन्न क्यों नहीं होते? उन्हें अपने संघ के हर मुनि के विकास की चिन्ता रहती थी इसलिए श्री रामकृष्ण जी म. के लिए विशेष चेष्टा रखते थे। उन्हें पढ़ने व पढ़ाने में विशेष आनन्द आता था। प्रख्यात प्रवचनकार होते हुए भी नूतन ज्ञानार्जन का वे समय निकाल ही लेते थे। उनको वार्धक्य में भी 'तर्क संग्रह' 'प्रमाणनय तत्वालोक' जैसे दर्शन ग्रंथों का अध्ययन करने में संकोच नहीं था। घर में रहते हुए संस्कृत की 'कातंत्र व्याकरण' पढ़ी थी। फिर ढलती उम्र में पुनः सूत्र वृत्ति वार्तिक सहित याद करके रुपसिद्धियां की। हास-परिहास में निमग्न भी हो जाते थे तो दर्शन की वीथिकाओं में भी विचर लेते थे। आगमों का पारायण उनका पहला शौक था। इस वर्ष बत्तीस आगमों के पारायण के दौरान एक विचार उमड़ा कि आगमों के तलस्पर्शी विश्लेषण की पुनः आवश्यकता है। सूत्रों के अर्थ परमार्थ तक प्रवेश के लिए दिल्ली चांदनी चौंक के श्रावक श्री मोहनलाल जी का सान्निध्य लेने का मन भी हुआ। अपने प्रिय सखा श्री योगिराज जी म. से परामर्श किया तो उन्होंने सहर्ष अनुमोदना की। लक्ष्य तो तय हो गया कि अग्रिम चातुर्मास चांदनी चौंक हो जाए पर कुछ विचरण हरियाणा पंजाब का भी करना था। उसी क्रम में बलाचौर पधारे। प्रवचन पूरा हुआ था, वहाँ का एक श्रावक 'भगत रामचन्द्र' पौड़ियों से उतरते-उतरते ऊँची-ऊँची आवाज में बोलने लगा एक-दो-तीन-चार। सब लोग हैरान कि बिना प्रसंग के यह चार की संख्या क्यों दुहरा रहा है। फिर लोगों ने वाचस्पति गुरुदेव से कहा कि इसकी बातें कुछ रहस्यात्मक होती हैं। वाचस्पति गुरुदेव के अन्तर्मन में कुछ

झलका कि निकट भविष्य में मेरे लिए चार शिष्यों की संभावना बन सकती है। इस हल्की सी अनुभूति को स्मृति कोष में बन्द कर विहार यात्राएं प्रारम्भ कर दी। गुरुकुल पंचकूला में पदार्पण किया। चांदनी चौंक दिल्ली की समाज चातुर्मास की विनती लेकर दलबल के साथ हाजिर हो गई। ओसवालों के प्रमुख प्रतिनिधियों के अलावा अग्रवालों में ला. गूगनमल जी एवं श्री बद्रीप्रसाद जी शिष्ट मण्डल में शामिल थे। चातुर्मास की सामूहिक विनती के बाद श्री बद्रीप्रसाद जी ने एकान्त में श्री वाचस्पति जी म. से निवेदन किया कि मैं आजकल व्यापार तथा गृहकार्यों से निवृत्ति लेने की सोच रहा हूँ। दोनों बेटे प्रकाश व रामप्रसाद रिंढाणा-गोहाना-वनवासा आदि स्थानों पर रहकर समय यापन कर रहे हैं। मेरे परम मित्र नगूरा निवासी श्री श्रीराम जी भी वैराग्य भाव से पूर्ण हैं। आपकी कृपा हो जाय तो हम चारों आपके चरणों में दीक्षित हो सकते है। आप चांदनी चौंक में चौमासा कर लो तो बच्चों को दिल्ली बुला लूंगा और उन्हें भी आप से ज्ञान ध्यान संयम के संस्कार मिल सकेंगे। वा. गुरुदेव को भविष्य के क्षितिज पर उज्ज्वल स्वर्णिम रेखाएं दृष्टिगोचर हुई। चातुर्मास का निर्णय वहाँ का पक्का हो गया। नौ वर्ष के पश्चात् चांदनी चौंक का भाग्य सूर्य उदित हुआ था। उनकी प्रफुल्लता असीम थी। जिस दिन पधारे उस दिन दिल्ली का दिनकर विशेष लालिमा लिए उदित हुआ था। वाचस्पति गुरुदेव ने श्री बद्रीप्रसाद जी से कहा कि आपके दोनों सुपुत्र श्री प्रकाशचन्द्र और रामप्रसाद हमारे शिष्य श्री सुदर्शन मुनि जी के पास रहकर ज्ञान ध्यान भी सीखेंगे व संस्कारों को भी ग्रहण करेंगे। श्री बद्रीप्रसाद जी पूर्णतः सहमत थे। स्वयं वाचस्पति गुरुदेव भी मोहनलाल जी के साथ आगमों का अध्ययन विश्लेषण और मंथन करने में जुट गए। उनके प्रति पूर्ण विनय वृत्ति रखते, शास्त्राभ्यास के समय जमीन पर बैठते, पूरी चुस्ती और मुस्तैदी के साथ स्कूल के अनुशासित छात्र की मानिंद। इधर पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी म. संस्कृत भाषा के माध्यम से व्याकरण दर्शन तथा साहित्य का तलस्पर्शी अध्ययन कर रहे थे और उधर वाचस्पति

गुरुदेव आगमों का। उस चातुर्मास की अतिरिक्त विशेषता ये थी कि मयाराम गण के वरिष्ठ महामुनि श्री अमींलाल जी म. तथा श्री योगिराज रामजीलाल जी म. का समग्र शिष्य परिवार भी साथ था। कुल तेरह ठाणों का यह संवत् 2000 सन् 1943 का चातुर्मास चार दिनों की तरह व्यतीत हो गया जिसमें श्रावकों ने भी जी भरकर ज्ञान लूटा और साधुओं ने भी।

अगले चातुर्मास के लिए अनेकानेक आग्रह बढ़ने लगे थे पर रोहतक की ओर वाचस्पति गुरुदेव का झुकाव था और आश्वासन दे दिया परन्तु पूरा नहीं हो पाया। क्यों?... क्योंकि पंजाब आचार्य श्री कांशीराम जी म. का आदेश व निर्देश था कि आप 2001 संवत् अर्थात सन् 1944 का चातुर्मास दिल्ली ही करें। आचार्य श्री कई वर्षों से राजस्थान, गुजरात, मुम्बई की धरा को पावन कर रहे थे। पंजाब संघ की बागडोर वे कुछ प्रमुख साधु-साध्वियों को सौंपकर गए थे। सबने यथाशक्ति दायित्व का निर्वहण किया था। लेकिन साधु समाज में शिथिलता और श्रावक समाज में बिखराव बढ़ते जा रहे थे। आचार्य श्री जी उन बातों से चिन्तित थे। चिन्ता का दूसरा कारण उनका अपना गिरता हुआ स्वास्थ्य था। जब उत्तर भारत से निकले थे तब उनका शरीर कद्दावर हृष्ट-पुष्ट और तन्दरुस्त था, अब लौटे तो शरीर बिल्कुल निढ़ाल हो चुका था। अब तो लगता था कि शरीर साल-दो साल में ही जवाब न दे जाय। इसलिए वे संघ के भविष्य की सुनिश्चित रुपरेखाएं भी निर्मित करना चाहते थे।

आचार्य श्री कांशीराम जी म. वाचस्पति गुरुदेव की सिद्धान्त प्रियता, स्पष्टवादिता, संयम निष्ठा, प्रवचन प्रभावकता के तो शुरू से ही कायल थे पर आन्तरिक समस्याओं के समाधान के लिए उनसे कभी वार्तालाप नहीं किया था अतः घनिष्ठता नहीं थी। मुम्बई प्रवास के दौरान श्री शादीलाल जी ने आचार्य श्री कांशीराम जी म. को इस बात के लिए तैयार किया था कि आप व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलाल जी म. को अपने निकटवर्ती परामर्शकों में शामिल करो। पंजाब के हालात को सुधारने के लिए आचार्य श्री व

श्री मदनलाल जी म. को इकट्ठा एक मंच पर आना होगा। अब वह समय निकट आ रहा था कि दोनों महापुरुष एक जगह रहें। 6 वर्ष बाद आचार्य श्री जी वापस आ रहे थे। उत्तर भारत उनके स्वागत में पलक पांवड़े बिछाये हुए था। फरवरी के महीने में उनके दिल्ली आगमन पर उनका विशाल स्तर पर स्वागत करना था। सदर बाजार में गणी श्री उदयचन्द जी म. वार्धक्य के कारण विराजमान थे। वहीं आचार्य श्री जी को पहुँचना था। आचार्य श्री जी ने पंजाब के प्रमुख नेताओं को कह दिया था कि दिल्ली प्रवेश के समय श्री मयाराम जी म. के मूर्धन्य संत श्री वाचस्पति मदनलाल जी म. व पंजाब केशरी श्री प्रेमचन्द जी म. भी पधारें तो मुझे विशेष खुशी होगी। ये दोनों महामुनि पहले तो बड़ौदा (जीन्द के निकट) में इकट्ठे मिले फिर दिल्ली के लिए रवाना हो गए। जीन्द आकर श्री अमींलाल जी म. तपस्वी श्री निहालचन्द जी म. से मिले और कुल 16 मुनि हो गए। सभी दिल्ली पहुँचे क्योंकि आचार्य श्री जी का भावभीना स्वागत करना था। श्री रघुवर दयाल जी म. अगवानी में जा चुके थे। पं. श्री शुक्लचन्द जी म. भी आगे पहुँच चुके थे। श्री सुरेन्द्र मुनि जी म. भी आगे पहुँच चुके थे। नई दिल्ली के बिरला मंदिर में आचार्य श्री जी लगभग एक सप्ताह ठहरे। वहीं वाचस्पति गुरुदेव शिष्य मण्डली सहित दर्शन करने पहुँचे। आचार्य श्री जी को वन्दन किया तो वे भी अन्तर से आर्द्र हो गए। सुखसाता पृच्छा के बाद अन्तरंग बातें हुई। निर्णय यह हुआ कि 9 फरवरी को आचार्य श्री जी का दिल्ली सदर बाजार में भव्य प्रवेश होगा। 36-37 संतों का काफिला आचार्य श्री जी के पीछे-पीछे चल रहा था। उनकी पालकी को उठाने का पुण्य अर्जन पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी ने भी किया।

पंजाब के अधिकांश क्षेत्रों के भाई बहन उस अवसर पर उपस्थित हुए। जुलूस चलते-चलते तेलीवाड़ा में आकर रुका और वहीं एक विशाल धर्म सभा जम गई। मुनियों और श्रावकों में एक होड़ थी कि मैं आचार्य श्री जी के स्वागत में अपने भाव व्यक्त करूं। पूज्यपाद पंजाब केशरी प्रेमचन्द जी की कोशिश थी कि मैं अभिनन्दन पत्र का वाचन करूं।

अभिनन्दन दो ही पढ़ने थे एक मुनियों की ओर से दूसरा श्रावकों की ओर से। श्रावकों का अभिनन्दन पढ़ा श्री फूलचन्द जी ने।[1] अब बारी थी मुनियों की। जनता प्रतीक्षा कर रही थी कि देखो आचार्य श्री जी किस महामुनि को अपनी कृपा का पात्र बनाते हैं? तत्काल आचार्य श्री जी ने फरमाया कि वाचस्पति श्री मदनलाल जी म. अपना सम्मान पत्र पढ़ेंगे बाकी मुनिराज अपने-अपने अभिनन्दन पत्र मुझे बाद में सौंप देंगे। वाचस्पति गुरुदेव अपने संघाधिपति द्वारा दिए गए सम्मान से भावाभिभूत हो गए। आचार्य श्री जी ने जो गौरव प्रदान किया उसे अपने लिए महान् उपलब्धि मानते हुए विनम्र भाव से उन्होंने अभिनन्दन पत्र पढ़ा जिसे उन्होने अपने भावों से, अपने ही लफ्जों में गूंथा था। उस अभिनन्दन को सुनकर जनता जनार्दन के रोंगटे तो खड़े हो ही गए स्वयं आचार्य श्री जी भी भीग गए। उस अभिनन्दन में वाचस्पति गुरुदेव ने न केवल आचार्य श्री जी को महिमा मण्डित किया ही था, साथ ही मौजूदा चुनौतियों का सामना करने की पुरजोर विनती भी की थी।

अपने मयाराम परिवार की निष्ठा उन चरणों में अर्पित करते हुए विनम्र निवेदन किया था कि भगवान महावीर के चरित्र पक्ष को दृढ़ता प्रदान करें।

पंजाब केशरी जी म. का वक्तव्य भी जोरदार रहा। आचार्य श्री जी ने अपने उद्‌बोधन में जैन समाज को एक रहने की प्रेरणा दी।

स्वागत के कार्यक्रमों की पूर्ति के पश्चात् आचार्य श्री जी का चिन्तनीय बिन्दु आगामी नेतृत्व के चयन का था। वे चाहते थे कि कोई ऐसा चेहरा सामने आए जो सभी साधु-साध्वियों का श्रद्धेय भी हो तथा श्रावक संघों की एकता अखण्डता को बरकरार रखे।

कुछ दावेदार मुनिराज अपने पक्ष में अप्रत्यक्ष रूप से वातावरण बनाने का प्रयास करने लगे थे। श्रावकों के माध्यम से नाम उछलने भी लगे थे। जिससे आचार्य श्री समाहित होने की बजाय खिन्न होने लगे थे। उन्होंने

1 एक पुस्तक में उल्लेख है कि पंजाब सभा का अभिनन्दन रायसाहब टेकचन्द जी ने अगले दिन वाचन किया।

मन ही मन निर्णय लिया कि मैं व्याख्यान वाचस्पति जी से परामर्श करके कुछ हल निकाल लूं। इसलिए उन्होंने कहा— वाचस्पति जी, मुझे आपके साथ लम्बा वार्त्तालाप करना है। आपके सान्निध्य की मुझे विशेष आवश्यकता है। इसलिए आप इस साल का चातुर्मास दिल्ली में ही करें। आचार्य श्री जी के इस आदेश के कारण रोहतक का मंजूरशुदा चातुर्मास बदला और सदर बाजार दिल्ली को समर्पित हो गया। गणी उदय चन्द जी म. वहाँ स्थिरवास कर रहे थे। उनका सान्निध्य मिलना भी अतिरिक्त सौभाग्य की बात थी।

आचार्य श्री कांशीराम जी म. की वाचस्पति गुरुदेव से अन्तरंगता घनिष्ठता बढ़ती गई। एक दिन बोले— "मुझे आपके शिष्य सुदर्शन मुनि में संघ का भविष्य दिखाई दे रहा है। उसमें प्रतिभा, व्यवहारिकता, संयम, विनय एवं करुणा का सुन्दर मिश्रण है। यदि आप स्वीकृति दो तो उसे संघ का भार संभलवा दूँ।" वाचस्पति गुरुदेव उनकी कृपा का उपकार मानते हुए बोले— "भगवन्, दो वर्ष की दीक्षा पर्याय में उसे यह कांटों का ताज पहनाना उचित नहीं होगा। पंजाब संघ सुविशाल है। एक से एक महान् मुनिराज इसकी रक्षा कर सकते है। अतः यह विचार चलने लायक नहीं लगता, आप उस मुनि पर इतना विश्वास रखते हो, यही उसके लिए पर्याप्त है।" वार्त्तालापों के दौर समय-समय पर चलते रहते थे। आचार्य श्री जी कुछ नैराश्य का अनुभव कर रहे थे। एक दिन वाचस्पति गुरुदेव ने आचार्य श्री जी के सामने स्थिति स्पष्ट करते हुए कहा— 'आचार्य भगवन्, आज पंजाब संघ के सभी प्रमुख श्रावक खेमों में बंटे हुए हैं। वे आपके कार्य में सही सहयोग नहीं दे रहे। मेरे विचारानुसार आप किसी ऐसे श्रावक को नियुक्त करो जो निष्पक्ष रहकर आपकी विचारधारा पंजाब के मुनियों के पास ले जा सके तथा निष्पक्ष रहकर ही उनके विचार आपके सामने ला सके तथा जो अपने संघ के पहलुओं से वाकिफ भी हो।' आचार्य श्री जी को यह बात जंच गई। फिर समस्या आई उस व्यक्ति की जिसकी निष्पक्षता असंदिग्ध हो। उस व्यक्ति को लुधियाना पहुँचकर उपाध्याय श्री आत्माराम जी

म. के विचार लाने हैं, स्यालकोट से श्री गोकुलचन्द जी म. के, मूनक से श्री बनवारी लाल जी म. के तथा जालंधर से श्री राजीमती जी म. के विचार लाने हैं। वह व्यक्ति कौन हो सकता है? आचार्य श्री जी ने पूछा– 'आपकी नजर में ऐसा व्यक्ति कौन हो सकता है?' वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया कि श्रावक श्री खूबचन्द जी उन मानदण्डों पर खरे उतरते हैं। मैंने उन्हें काफी निकटता से देखा है। वह निष्पक्ष प्रवृत्ति का श्रावक है। आचार्य श्री जी उस नाम से तुरन्त सहमत हो गए। आचार्य श्री जी का आदेश मानकर वाचस्पति गुरुदेव ने बाबू खूबचन्द जी को बुलवाकर आचार्य श्री जी के हवाले कर दिया। आचार्य श्री जी ने श्रावक जी को अपनी सारी स्थिति समझाई और कहा कि आप पंजाब के मूर्धन्य मुनियों से वार्तालाप करो। मेरे विचारों से उन्हें अवगत कराओ तथा उनके विचार सुनकर मुझे रिपोर्ट दो। श्रावक ने निवेदन किया– "आचार्य भगवन् मुझे साधु-साध्वियों से सांघिक वार्तालाप करने का अधिकार पत्र अपनी ओर से दें तब मैं उनसे वार्तालाप कर सकूंगा, अन्यथा मैं उनसे किस हैसियत से वार्ता कर सकूंगा।" आचार्य श्री जी ने शुक्लचन्द जी से पत्र लिखाने को कहा। उन्होंने ला. कुंजलाल जी से कहा कि आचार्य जी के नाम से एक पत्र लिखकर तैयार करो। श्री कुंजलाल जी ने पत्र लिखा और आचार्य जी को दिखलाया। उन्होंने ठीक माना और यह भी कहा कि नीचे श्री गणी उदयचन्द जी म. को दिखलाओ। जब वह पत्र गणी जी ने पढ़ा तो कहने लगे कि अभी बहुत समय पड़ा है, अभी सम्मति मंगाने की क्या जरूरत है? जब जरूरत होगी तब मंगवा लेंगे। आचार्य श्री जी तक बात गई तो मौन हो गए। फिर रात को आचार्य श्री जी का व गणी जी का वार्तालाप हुआ। श्री गणी जी म. तब भी इस प्रक्रिया से सहमत नहीं हुए और आचार्य श्री जी को चुप रहना पड़ा। एक भव्य विचार अकाल में काल कवलित हो गया। एक बार वार्ता की यह गति रूकी तो रूकी ही रही पुनः चालू नहीं हो सकी।

एक दिन आचार्य श्री जी ने वाचस्पति गुरुदेव से कहा– "मदनमुनि जी, आप पंजाब संघ की बागडोर संभाल सकते हो। आप में हर तरह

की योग्यता है। आप मुझे वचन दो कि आप मेरी बात को ठुकराओगे नहीं।"

वाचस्पति गुरुदेव ने अपनी भावना स्पष्ट करते हुए कहा—"आचार्य भगवन्, मैं आपको इतनी जुबान दे सकता हूँ कि जब तक अखिल भारतीय श्रमण संघ नहीं बन जाता तब तक मैं पंजाब संघ के लिए अपनी सेवाएं देने को तैयार रहूँगा। मेरा असली सपना भारत भर के जैन संघों की एकता का है। मेरा चिन्तन और प्रयत्न उसी दिशा में लगा रहता है, तदपि मैं आपकी आज्ञा से बाहर नहीं हूँ।"

दिल्ली चातुर्मास करने और करवाने का जो लक्ष्य था वह तो हासिल नहीं हो सका पर वाचस्पति गुरुदेव को ये संतुष्टि थी कि आचार्य श्री जी का विश्वास अर्जित हुआ है।

गत वर्ष चांदनी चौंक के चातुर्मास में श्री बद्रीप्रसाद जी ने अपने पुत्रों सहित जो ज्ञानार्जन संयमाभ्यास की प्रक्रिया प्रारंभ की थी वह कुछ-कुछ सदर बाजार में जारी रही। न पूर्णतः जुड़ी, न पूर्णतः टूटी। पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी म. उस वर्ष बड़ौत में रहे। जहाँ पूज्य श्री मूलचन्द जी म. तथा बाबा श्री जग्गूमल जी म. की सेवा का कार्य उनको सौंपा गया था। उनके अभाव में श्री प्रकाशचन्द जी व रामप्रसाद जी की धार्मिक पढ़ाई का क्रम यथोचित ढंग से नहीं जुड़ा। लेकिन वे प्रतिदिन अपने दिनभर का भोजन टिफिन में ले आते और पूज्यपाद भण्डारी श्री बलवन्त राय जी के पास बैठे रहते और वे भी कुछ ना कुछ उनसे बातचीत कर लेते। कुछ ना कुछ याद करने के लिए बोल देते। इस तरह क्रम पूर्णतः टूटा भी नहीं।

उस वर्ष सदर बाजार का श्रावक संघ वाचस्पति गुरुदेव के प्रवचनों का मुरीद रहा ही, साथ ही उनकी समन्वय भावनाओं से उनके और अधिक निकट आया। चातुर्मास से पूर्व ही वाचस्पति गुरुदेव ने पं. श्री शुक्लचन्द जी म. से मिलकर समाज का पारस्परिक वैमनस्य विरोध मिटा दिया था। समाज में प्रेम की मंदाकिनी प्रवाहित की थी। पूरे चातुर्मास में उस प्रेम का संगीत बजता ही रहा। ये कृपा थी वाचस्पति गुरुदेव की।

उसी वर्ष आचार्य पृथ्वीचन्द जी म. अपने शिष्य कवि श्री अमर मुनि जी म. के साथ दिल्ली पधारे थे। आचार्य श्री जी के दर्शन और वाचस्पति गुरुदेव से मिलन उस आगमन का ध्येय था और उन्होंने भरपूर पूरा किया।

आचार्य श्री जी का एक मन और था कि मैं मूनक में विराजित गणावच्छेदक श्री बनवारीलाल जी से मिलूं, उनसे वार्तालाप करूं तथा उनके माध्यम से वाचस्पति गुरुदेव जी म. को संघ का नेतृत्व संभालने को तैयार करवाऊँ। जब विहार का समय आया तब उनकी पालकी उठाने वाले मुनियों ने उधर जाने में अपनी विवशता व्यक्त कर दी और आचार्य श्री जी का वह प्रयास भी अधूरा रह गया।

पूर्णमदः पूर्णमिदम्

सदर बाजार का चातुर्मास पूर्णता की ओर अग्रसर था। श्री बद्री प्रसाद जी ने निर्णय कर लिया था कि अब दोनों पुत्रों सहित शीघ्र ही दीक्षा ग्रहण करनी है। उनके साथी ला. श्रीराम जी का संकल्प ढीला पड़ गया। परन्तु चार संख्या की पूर्ति की संभावना फिर भी बन गई क्योंकि बड़ौत के निकटवर्ती गांव सिरसली निवासी श्री रामचन्द्र जी ने दीक्षा लेने की भावना व्यक्त कर दी। वे निवृत्ति का जीवन व्यतीत कर रहे थे। बारह व्रती थे। इनके बड़े भाई श्री हुकुमचन्द जी आ. श्री कांशीराम जी के कुल में दीक्षित थे। श्री रामचन्द्र जी की श्रावक वृत्ति काफी सादगी पूर्ण और दृढ़ता प्रधान थी, परन्तु स्वभाव की उग्रता अखरने वाली थी। उनके भाई श्री हुकुमचन्द जी की तीक्ष्ण प्रकृति से आचार्य श्री जी पहले ही खिन्न थे, अतः इन्हें दीक्षा देने का कतई मन नहीं था। परन्तु श्री बद्री प्रसाद जी उनके त्यागमय व्यवहार से पसीज गए। और वायदा कर दिया कि तू दीक्षा लेने का मन बना, आज्ञा का प्रबंध मैं करा दूँगा। यों चार दीक्षार्थी वाचस्पति जी के चरणों में दीक्षित होने को तैयार हो गए थे।

तभी वाचस्पति गुरुदेव को आ. पृथ्वीचन्द्र जी म. तथा श्री कवि जी म. का समाचार मिला कि नारनौल में एक वैरागी की दीक्षा होनी है। साथ ही निमंत्रण भी कि माघ सुदी पंचमी संवत् 2001 (18 जनवरी 1945) के दिन होने वाली उस दीक्षा पर आपको अवश्य पधारना है। वाचस्पति गुरुदेव ने उस दीक्षा का जिक्र बद्रीप्रसाद जी से किया। उन्होंने कहा— "गुरुदेव, हम भी उस अवसर पर दीक्षा ग्रहण कर लें, यह हमारी इच्छा है। साथ-साथ दीक्षा होने से आरंभ सभारंभ तथा खर्चे कम हो जाएंगे। पर हमारी दीक्षा की

घोषणा अभी मत करना, नहीं तो घर परिवार रिश्तेदारों के दबाव बढ़ जाएंगे। हम सही समय पर नारनौल पहुँच जाएंगे।

वाचस्पति गुरुदेव ने उनकी भावनाओं को सम्मान दिया तथा दीक्षाओं की कहीं चर्चा नहीं की। नारनौल के लिए मार्ग लिया रोहतक का। वाचस्पति गुरुदेव व श्री योगिराज जी म. का सशिष्य, ससंघ रोहतक पदार्पण पर तप. श्री निहालचन्द जी म. व गणी श्री शामलाल जी से मिलन हुआ। कुल ठाणे पन्द्रह हो गए और सभी नारनौल के लिए प्रस्थित हुए। कलानौर से दादरी के बीच एक मुस्लिम बहुल गांव में ठहरे थे। वाचस्पति गुरुदेव ने प्रवचन फरमाया तो कितने ही मुसलमानों ने मांस का त्याग कर दिया।

दादरी के स्थानक में तो रघुनाथ जी म. ठहरे हुए थे। इसलिए ये सब मुनि हीरालाल जी के दीवानखाने में ठहरे। महेन्द्रगढ़ पहुँचे ही थे कि कवि जी म. नारनौल से चलकर अगवानी में आ गए।

उन दिनों श्री श्रीचन्द जी म. के पास कीर्तिचन्द्र नामक वैरागी ज्ञानाभ्यास कर रहा था। उसे कहीं से पता चल गया कि वाचस्पति जी म. के पास दो छोटी आयु के बालक दीक्षा लेंगे। वह अपने गुरुदेव से आग्रह करने लगा कि 18 जनवरी को मुझे भी दीक्षा दे दो। परन्तु श्री श्रीचन्द जी म. तैयार नहीं हुए। जब उसकी कहीं दाल नहीं गली तो वह वाचस्पति जी म. के पास आकर मचल गया। वाचस्पति गुरुदेव ने आश्वासन दिया– 'तू घबरा मत, हम तुम्हारा काम बनवा देंगे।' बच्चा खुश हो गया। वाचस्पति गुरुदेव ने कवि जी म. को संकेत किया और इस संकेत मात्र से उसकी दीक्षा भी निश्चित हो गई।

इधर वाचस्पति गुरुदेव नारनौल पहुँचे उधर श्री बद्री प्रसाद जी अपनी कपड़े की दुकान अपने भाई दुलीचन्द को संभलवाकर दोनों पुत्रों सहित नारनौल पहुँच गए। श्री रामचन्द्र जी की आज्ञा प्राप्त करने के लिए इन्हें आचार्य श्री कांशीराम जी म. के पास विशेष रूप से जाना पड़ा और मनाना पड़ा और उन्हें भी बद्रीप्रसाद जी का मान रखने वास्ते न चाहते हुए मानना पड़ा। स्वयं वाचस्पति गुरुदेव भी रामचन्द्र जी

को दीक्षा देने को उत्सुक नहीं थे पर बद्रीप्रसाद जी ने उन्हें भी तैयार कर लिया, यह कहकर कि इसे संभालने की जिम्मेदारी मैं लेता हूँ। श्री बद्रीप्रसाद जी संकल्प के धनी हैं, ये वाचस्पति गुरुदेव भली-भांति जानते थे। पत्नी वियोग के समय दोनों पुत्र एक साल और छः दिन के थे। तब भी उन्होंने पुनर्विवाह नहीं करवाया था। दुनिया में रहकर भी रागभाव से दूर रहे थे। और आज पूरे व्यापार को ठुकराकर दीक्षित हो रहे थे। नारनौल का सौभाग्योदय हो रहा था। कहाँ एक दीक्षा की बात थी और अब छः दीक्षाओं का सुअवसर मिल रहा था। मुनियों के प्रवचनों ने जनता के उत्साह में ज्वार भर दिया। श्री पृथ्वीचन्द जी म. व वाचस्पति गुरुदेव के मुनि परिवार के अलावा तपस्वी श्री निहालचन्द जी म. भी सपरिवार दीक्षा पर विराजमान हुए। चूंकि तब तक पंजाब संघ में फोटोग्राफी पर प्रतिबंध नहीं लगा था अतः उस युग में यथासंभव फोटोग्राफी दीक्षा के मौके पर हुई। श्री बद्रीप्रसाद जी ने व श्री रामचन्द्र जी ने अपनी बड़ी उम्र के कारण सादा वेष रखा, परन्तु श्री प्रकाशचन्द जी, श्री रामप्रसाद जी, श्री कीर्तिचन्द्र जी व श्री दिनेश जी को शाही पोशाक पहनाकर हाथी पर बैठाकर सवारी के रूप में सारे शहर में घुमाया गया। दीक्षा समारोह की अध्यक्षता जीन्द के गुरुभक्त श्रावक सेठ श्री मनसाराम जी ने की थी। वैरागी दिनेश जी के गुरुदेव श्री अमोलक चन्द जी म. कहलाए, श्री कीर्तिचन्द जी के गुरुदेव श्री चन्द जी म. तथा शेष चारों के गुरुदेव थे वाचस्पति गुरुदेव श्री मदनलाल जी महाराज।

संसार में पूर्ण परिवार ने अध्यात्म और संयम के पुरोधा वाचस्पति गुरुदेव के परिवार को भी पूर्णता प्रदान कर दी।

समस्त हरियाणा उस दीक्षा को सुनकर स्तंभित रह गया था। इस परिवार के त्याग और वाचस्पति गुरुदेव के पुण्यातिशय की चर्चा चहुँ ओर दीर्घकाल तक होती रही।

वाचस्पति गुरुदेव ने अपने शिशु-शिष्यों श्री प्रकाशचन्द्र जी एवं श्री रामप्रसाद जी म. के कोमल कर अपने सुयोग्य शिष्य पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी के हाथों में थमा दिए और कहा कि इन दोनों का

शिक्षण प्रशिक्षण तेरे अधीन रहेगा। दोनों लघुमुनियों ने भी पूज्य गुरुदेव को प्रथम दिन से अपने हृदय में गुरुपद पर अभिषिक्त कर लिया। श्री बद्रीप्रसाद जी म. को पूज्य गुरुदेव ने अपने मन में पिता का दर्जा दिया और उन्होंने पूज्य गुरुदेव को संयम साधना के आदर्श साधक के रूप में दिल में बसाया।

दीक्षा के पश्चात् छब्बीस ठाणे हो गए। अधिकतर संत ढोसी, सिंघाणा तथा खेतड़ी फरसने गए और फिर नारनौल वापस आ गए। छब्बीस ठाणे महेन्द्रगढ़ पहुँचे।

अब अगला लक्ष्य था मूनक, जहाँ गणावच्छेदक श्री बनवारीलाल जी म. स्थिरवास कर रहे थे, उनका पावन आशीर्वाद नव दीक्षित मुनियों को दिलवाना था। उस क्रम में कलानौर में एक धर्मशाला में ठहरे। मुनियों की कई टोलियों का संयुक्त विचरण था। धर्मशाला के किसी एकान्त स्थान पर पुराने मटके पड़े हुए थे। किसी संत को चंचलता सूझी। कुछ साथी बनाए। मटके पर रबड़ चढ़ाकर बाजा बना लिया और लगे उसे बजाने। वे ग्रामीण वाद्य का आनन्द ले रहे थे। कुछ स्वर वाचस्पति गुरुदेव के कानों को टकराए। उन्होंने उस महफिल में उपस्थित और अनुपस्थित सब मुनियों को बुला लिया और किसी को धमकाने के बजाय पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी को जोरों से डांटने लगे। पूज्य गुरुदेव अन्दर से सहम गए कि मैं इस कार्य में प्रत्यक्ष परोक्ष किसी भी तरह शामिल नहीं हूँ तो मैं ही तर्जना का पात्र क्यों बन रहा हूँ। पर वाचस्पति गुरुदेव की डांट के आगे न ये बोले और न और कोई। बाद में वाचस्पति गुरुदेव ने पूज्य गुरुदेव को समझाया कि मुझे तेरी निरपराधता का पता है पर अन्य गण के मुनियों को कुछ कहता तो कोई रंजिश बना लेता पर तुझे डांटने से वे भी समझ गए तथा तेरे विषय में मुझे मालूम है कि तू गम खाना जानता है, इस डांट को झेल लेगा। परिणाम अच्छा आया। पुनः किसी ने उच्छृंखलता, चंचलता नहीं की।

संवत् 2002 सन् 1945 का चातुर्मास हाँसी का घोषित करके वाचस्पति गुरुदेव जी म., श्री योगिराज जी म. अपनी-अपनी सम्पूर्ण

शिष्य सम्पदाओं के साथ मूनक पहुँचे। पूज्य श्री गणावच्छेदक श्री बनवारी लाल जी म. के चरणों में अपने शिष्य सुमन अर्पित किए। उन्होंने भी उनके भावी जीवन के लिए आशीष वचन और शिक्षा वचन उंडेले।

मूनक में वाचस्पति गुरुदेव जी म. का स्वास्थ्य काफी शिथिल रहा। उधर आचार्य श्री कांशीराम जी म. अम्बाला पहुँचकर और ज्यादा अस्वस्थ हो गए। उनका पत्र आया "वाचस्पति जी म., मेरा शरीर क्षीण होता जा रहा है, जीवन का भरोसा नहीं है, आपसे मिलना चाहता हूँ।" वाचस्पति गुरुदेव का मन था कि आचार्य जी के दर्शन करूं मगर शरीर की शिथिलता के कारण विहार नहीं हो पाया। ऐसी आशंका भी नहीं थी कि आचार्य भगवन् की सेहत बहुत ज्यादा गिर चुकी है क्योंकि आचार्य श्री जी के शिष्य पंडित श्री शुक्ल चन्द जी म. को आचार्य श्री जी ने पटियाला की ओर विहार करवाया था। रोग की वृद्धि होती तो उनका अम्बाला से पटियाला जाना संभव नहीं था। कुल मिलाकर अम्बाला की ओर विहार नहीं हुआ। पर जब वाचस्पति गुरुदेव का स्वास्थ्य सुधरा तब अंबाला की तरफ विहार का मन बना। तब आचार्य श्री जी का दूसरा आदेश आया कि "आप श्री शांति स्वरूप जी को लेकर समाणा पहुँचें, इधर श्री शुक्लचन्द जी पटियाला से समाणा पहुँच जाएंगे वहाँ समाज की देखभाल करनी है।" समाणा में तेरापंथ के विद्वान् मुनि श्री चन्दनमल जी आए हुए थे। उन्होंने कुछ दया विरोधिनी प्ररुपणाएं फैलाकर स्थानकवासी संघ के कुछ सदस्यों को भरमाना शुरू कर दिया था। इससे सारा समाज चिन्तित हो उठा था कि कहीं हमारे कुछ घर भटक ना जाए।

उन मुनियों के साथ राजस्थान के कुछ विद्वान् श्रावक भी आए थे, वे भी स्थानकवासी संघ में सेंध लगाने में रूचि ले रहे थे और पर्याप्त प्रयास कर रहे थे। इस प्रक्रिया को रोकने के लिए वाचस्पति गुरुदेव एवं साथी संतों की आवश्यकता थी एवं समाज का भी विशेष आग्रह था। वाचस्पति गुरुदेव ने समय की पुकार सुनी और समाणा के लिए कदम

बढ़ा दिए। उनके आगमन की सूचना मात्र से ही श्री चन्दन मुनि जी एवं उनका विद्वान् गृहस्थ समुदाय समाणा से अन्यत्र चला गया। ये कहकर कि हमने शास्त्रार्थ करने के लिए कभी नहीं कहा। जब वाचस्पति गुरुदेव तथा सहयोगी मुनि वहाँ पहुँचे तब तक मैदान खाली हो चुका था।

आचार्य श्री कांशीराम जी म. की तबियत को लेकर सारा समाज चिन्तित था। गर्मी की भीषण लूओं के थपेड़े खतरा बढ़ा रहे थे। समाज का ध्यान अम्बाला की ओर लगा हुआ था। लेकिन ये क्या? अम्बाला की बजाय पसरूर से समाचार आ गया कि पूज्य तपस्वी श्री खजानचन्द जी म. का स्वर्गवास हो गया है। स्थानकवासी समाज स्तब्ध रह गया। आ. श्री कांशीराम जी म. ने उस दिव्य संत के वियोग में अन्तर्वेदना को शब्द दिए थे– "जाना तो मुझे था, चला गया वो।" सामान्य श्रावकों की दृष्टि में आचार्य श्री कांशीराम जी म. की गद्दी संभालने की वे क्षमता रखते थे। वो आशा तो रही ही नहीं अब तो अम्बाला से भी ऐसे वैसे संकेत मिलने लगे थे। वाचस्पति गुरुदेव का चातुर्मास हाँसी होना था, समय अल्प था, तदपि सोच रहे थे कि अम्बाला तक एक बार हो आऊँ। तभी आचार्य श्री जी का पत्र आया कि "मैं जा रहा हूँ, तुम नहीं आ सके। पंजाब तुम्हारे हवाले सौंप रहा हूँ।" और पत्र के तुरन्त बाद ही आघात भी आ गया क्योंकि जेठ बदी अष्टमी को आ. श्री कांशीराम जी म. का देवलोक गमन हो गया। वर्तमान में शून्यता छा गई और भविष्य अनिर्णय की काली चादर में लिपटा हुआ था। कुल डेढ़ महीने का समय चातुर्मास के लिए शेष था। मुनि मण्डल एकत्रित हो ये संभव नहीं रहा। सभी निर्णायक मुनि अपने-अपने चातुर्मास स्थलों की ओर विहार कर रहे थे। इसलिए वाचस्पति गुरुदेव भी हाँसी पधार गए। हाँसी वाचस्पति गुरुदेव का प्रिय क्षेत्र था। इस बार वाचस्पति गुरुदेव के छहों शिष्य भी साथ थे। यह उनके जीवन काल का एकमात्र चातुर्मास था जिसमें छः शिष्य साथ-साथ रहे हों। सर्व ज्येष्ठ जी जग्गूमल जी म. ने उस चातुर्मास मे अठाई तपस्या पांच बार की। शरीर की दुर्बलता बढ़ती जा रही थी पर आत्मबल का चमत्कार उन्होंने कर दिखाया। पूज्य गुरुदेव

श्री सुदर्शन लाल जी म. को वाचस्पति गुरुदेव प्रारंभ से ही परख रहे थे। उनमें प्रताप, प्रभाव, शासनोद्यत की संभावनाओं का अमित कोष समाविष्ट देखा था अब चाहते थे कि अपने इस कोहिनूर को तरास कर सबके समाने समाज के रंगमंच पर प्रदर्शित कर दूँ। हाँसी प्रवेश पर ही आदेश दिया– "सुदर्शन, अब तू कमा और खा।" अर्थात् प्रवचन करना प्रारंभ कर फिर यथा समय बाबाजी म. की सेवा में रहते हुए स्वतंत्र विचरण करना पड़ेगा। पूज्य गुरुदेव ने अपनी मूल प्रवृत्ति के अनुसार 'तहत्त' कहकर आदेश को स्वीकारा और पाला। वाचस्पति गुरुदेव ने उनके नैसर्गिक गुणों को, हुनर को निखार दिया। व्याख्यान के क्षेत्र में एक नया अवतार और प्रकट हो गया।

श्री बद्रीप्रसाद जी म. की कड़क संयम शैली सर्व विलक्षण थी। व्रत नियमों की सूक्ष्म स्खलना भी उन्हें सह्य नहीं थी। श्री प्रकाश चन्द्र जी म. लघुवय में भी प्रबुद्ध, अप्रमत्त एवं प्रतिभा सम्पन्न थे। श्री रामप्रसाद जी म. को वाचस्पति गुरुदेव जी म. ने **'सर्वशुक्ला सरस्वती'** के रूप में देखा। बात-बात मे समर्पण शालीनता एवं बौद्धि कता देखकर गुरु ने शिष्य को अपनी कृपा से ओत-प्रोत कर दिया।

हाँसी चातुर्मास का एक रिकार्ड खूब चर्चित रहा है कि संवत्सरी के दिन वाचस्पति गुरुदेव ने आठ घंटे प्रवचन किया। आठ दिनों तक तपस्या व कथा अबाध रूप से चलाते रहे। नवदीक्षित मुनिद्वय श्री प्रकाशचन्द जी म. व रामप्रसाद जी म. के अध्यापन का दायित्व पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. के सशक्त कंधों पर था।

श्री तपस्वी बद्रीप्रसाद जी म. का स्वास्थ्य अनुकूल नहीं रहा। उनकी बगल में जूएं हो गई थी। जिन्हें प्राचीन लोग 'जमजूं' कहते थे। लोक मान्यता यह भी थी कि ये निकट मृत्यु की सूचना देती हैं। श्री तपस्वी जी म. इस रोग से छः माह तक जूझते रहे। अन्ततः मनोबल से देह रोग पर विजय पाई।

दीक्षा के प्रारंभिक काल में पूज्य श्री रामप्रसाद जी म. आहार के मामले में काफी चयनशील थे। गिनीचुनी चंद सब्जियों ही खाते थे।

वे गोचरी में आ जाती तो आहार आराम से कर लेते अन्यथा भोजन करना मुश्किल हो जाता। झोली में सभी तरह के साग व्यंजन आते हैं। वे अपनी रूचि के लेते शेष अन्य संतों को दे देते। वाचस्पति गुरुदेव को यह चयनवृत्ति कुछ पसन्द नहीं आई क्योंकि साधु का आहार तो भिक्षाचर्या पर निर्भर है। भिक्षाजीवी को सर्वग्राही होना ही चाहिए। इस विचार से उन्होंने आहार आते ही वितरण से पूर्व सभी साग-सब्जियां एक बड़े पात्र में डालकर मिलानी शुरू कर दी। सभी संत उस मिली हुई पंचमेली सब्जी को सहजता से लेते पर श्री रामप्रसाद जी म. को मिलीजुली सब्जी लेना और खाना बहुत कठिन हो जाता। पर वे विवश थे, लेनी भी पड़ती, खानी भी पड़ती। कुछ दिन तक दिल भर आता और आंखें भी नम हो जाती। पर क्रमशः स्वाद पर विजय मिल गई और 'कुछ कुछ ही' से 'सब कुछ ही' पर आ गए। वाचस्पति गुरुदेव की युक्ति कामयाब रही।

हाँसी चातुर्मास में उन्हें हार्ट की कुछ दिक्कत भी बनी जो आगे के लिए ईशारा भर थी पर उन्होंने कोई चिन्ता नहीं मानी और अपना हर कार्य चुस्ती और मुस्तैदी के साथ जारी रखा।

एक हल्का सा रोचक आख्यान-वाचस्पति गुरुदेव की कृपा के पात्र धर्मशील श्रावक श्री भिखारी लाल जी एवं उनकी धर्मपत्नी दोनों अठाई तप को करने का लक्ष्य लेकर चले। भिखारी लाल जी को पंचोला पारणा पड़ा और श्राविका ने अठाई पूरी कर दिखाई। वाचस्पति गुरुदेव जी ने श्रावक जी से मजाक किया— "भिखारी लाल घरवाली से हार गया।" श्रावक भी विनोदी स्वभाव का था, बोला— गुरुदेव ठीक है मैंने थोड़ी तपस्या की अगले जन्म में औरत बनूंगा, यह ज्यादा कर गई यह मर्द बनेगी फिर भी हमारी जोड़ी बनेगी, कायम रहेगी यह बात पक्की है।

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः

उस वर्ष पंजाब मुनिसंघ में अनिश्चितता की स्थिति थी। आ. श्री कांशीराम जी म. के देवलोक गमन के पश्चात् संघ में भावी नेतृत्व के नाम पर चर्चाएं बहुत थी पर स्पष्टता बिल्कुल नहीं थी। कई मुनिराज अलग-अलग लाबियों के जरिए नाम उछलवाने लगे थे। वाचस्पति गुरुदेव पदलिप्सा से दूर थे। उन्होंने अखिल भारतीय स्तर पर मुनियों की एकता स्थापित करना ही अपना जीवनोद्देश्य बना लिया था। पंजाब संघ में वो अनुशासन को विशेष महत्त्व देते थे। इसके वैभव विकास से भी वे पराङ्मुख नहीं थे। उन्होंने पं. श्री शुक्लचन्द जी म. से पुछवाया कि आचार्य श्री स्वर्गवास से पूर्व कुछ कह गए हैं क्या? उन्होंने कहलाया— "पूज्य श्री जी संतों को कह तो गए हैं पर हम इस विषय में कुछ नहीं कहेंगे।"

जबकि अम्बाला में ही विराजमान श्री माणकचन्द जी म. ने पं. श्री शुक्लचन्द जी म. को बिना बताए गणी उदयचन्द जी म. व उपाध्याय श्री आत्माराम जी के पास यह समाचार भिजवा दिया कि आचार्य श्री जी पं. श्री शुक्ल चन्द जी म. को पद देना चाहते थे। इन परस्पर विसंवादित चर्चाओं से भ्रांतियां बढ़ती जा रही थी। श्री हरजसराय, कुंजलाल, शादीलाल जी आदि समाज प्रमुखों को पं. श्री शुक्लचन्द जी म. ने कहा कि गणी उदयचन्द जी म. तथा उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. जो निर्णय लेंगे वह सबको मान्य होना चाहिए। पूज्य गणावच्छेदक श्री बनवारी लाल जी म. ने भी पं. श्री शुक्लचन्द जी म. से पुछवाया था। हर ओर से श्री शुक्लचन्द जी म. पर दबाव पड़ रहा था कि आप श्री जी आचार्य श्री के प्रमुख संत हो, शिष्य हो

आप अपनी राय बताओ। अंततः उन्होंने कहा– “उपाध्याय जी और गणी जी जैसे दीर्घदर्शी, विद्वान्, विद्या वयोवृद्ध अनुभवी मुनिराजों के पथ प्रदर्शकत्व में व्याख्यान वाचस्पति, धर्मभूषण श्री मदनलाल जी म. संघ-संचालन के गुरुतर भार को भली-भांति वहन कर सकेंगे। अतः मेरी सम्मति में मदनलाल जी म. पूज्यपद स्वीकार कर लेवें तो उत्तम रहेगा।”

यह विचार श्री शुक्लचन्द म. का ही नहीं, पूज्य कांशीराम जी म. का है, ऐसा जन साधारण में संकेत गया और घोषणा की गई कि पंजाब का मुनिवृंद लुधियाना में एकत्रित हो। वाचस्पति गुरुदेव लुधियाना के लिए प्रस्थित हुए। मूनक में गणावच्छेदक पूज्य श्री बनवारी लाल जी म. के दर्शन करने थे। वहाँ पर ही अन्य आत्मीय मुनिराजों से मिलन हो गया। श्री अमींलाल जी म., श्री फकीरचन्द जी म., श्री रामजीलाल जी म. के अलावा पंजाब केसरी श्री प्रेमचन्द जी म. और पं. श्री शुक्लचन्द जी म. भी वहाँ पधारे हुए थे। श्री बनवारी लाल जी म. भविष्य के विषय में विशेष चिन्तनशील थे। उन्होंने वाचस्पति गुरुदेव को एकान्त में बुलाया और साफ-साफ कहा– “मदन मुनि जी, अम्बाला से जो पत्र आचार्य श्री जी का तुम्हें मिला है, वह दिखाओ।” पत्र प्रस्तुत कर दिया, पढ़कर बोले– “अभी इसे फाड़ दो” तत्काल वाचस्पति गुरुदेव ने फाड़ दिया। फिर आज्ञा दी– “लुधियाना जाओ तो कोई पद नहीं लेना, यदि पद लेना हो तो मेरे पास मत आना।” वाचस्पति गुरुदेव ने उनके चरण पकड़े और प्रार्थना की “आप मुझे लुधियाना तक के लिए ही नहीं जीवन पर्यन्त के लिए पद लेने का त्याग करवा दो।” श्री बनवारी लाल जी म. ने उन्हें छः शास्त्रीय पदों– आचार्य, युवाचार्य, गणी, गणावच्छेदक, उपाध्याय और प्रवर्तक– का सदा के लिए त्याग करवा दिया। फिर प्रसन्न होकर बोले– ‘अब लुधियाना जाओ, जो चाहोगे वही होगा।’ इन दो महापुरुषों के अलावा पद त्याग का पता किसी को नहीं लगा। काफी दिलों में यही कल्पना रही कि संघ की बागडोर व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलाल जी म. संभालेंगे। वाचस्पति जी म. लुधियाना पधार गए। अम्बाला के प्रमुख श्रावक श्री

लच्छीराम जी ने लुधियाना में वाचस्पति गुरुदेव से उस पत्र के बारे में पूछा जो आचार्य श्री जी ने उन्हें भिजवाया था। तब वाचस्पति गुरुदेव ने जवाब टाल दिया।

मुनियों की मीटिंग प्रारंभ हुई। वाचस्पति गुरुदेव के नाम को पेश किया जाने लगा तो उन्होंने खड़े होकर मना कर दिया कि मैं छः पदवियों का त्याग लेकर आया हूँ। मुनि मण्डल निःस्तब्ध रह गया। सब तरह से समर्थ मुनिराज जब पद के प्रति उपेक्षा भाव रखे हुए हैं तो अन्य अपने दावों को कैसे प्रस्तुत करते? सबने एक स्वर से फैसला लिया कि जिस नाम को वाचस्पति गुरुदेव जी म. पेश करेंगे, वह सबको मान्य होगा। क्योंकि ये बलिदानी और निःस्वार्थी महामुनि हैं। अलग-अलग स्वर एकस्वरता में बदल गए। विघटन का खतरा टल गया। वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया कि घोषणा का मुख्य अख्तियारनामा गणी उदयचन्द जी म. के पास है। मैं तो अपना विचार ही रख सकता हूँ। उपस्थित मुनियों ने मंजूर किया कि आप अपना विचार ही रखें। बाकी घोषणा का अधिकार गणी जी के पास है। वाचस्पति गुरुदेव ने नाम प्रस्तावित किया उपाध्याय आत्माराम जी का। 25 वर्षीय मैत्री को सिंहासनासीन करने का यह मंगल क्षण था, जिसे वाचस्पति गुरुदेव ने अपनी आस्थाओं से सजाया। कोई इस प्रस्ताव का निषेध करे ये तो उस माहौल में संभव ही नहीं था। पर कुछ ने मन ही मन सोचा जरूर कि उपाध्याय श्री जी तो ज्ञान के अर्णव हैं इन पर प्रशासन का भार डालना अनुचित है। ये चाक्षुष रोग से ग्रस्त होने के कारण विहार करने में अक्षम हैं। समाज में ऊर्जा संचार कैसे कर पाएंगे? पर मानसिक सोच अन्दर ही रही। होठों तक किसी ने नहीं पहुँचाई। इस प्रकार वाचस्पति जी के त्याग ने पंजाब संघ की एकता भी बचाई और उपाध्याय श्री आत्माराम जी म. को आचार्यत्व से मंडित भी करवाया। हाँ, उनका उपाध्याय पद पंजाब केशरी श्री प्रेमचन्द जी म. को अर्पण हुआ। पं. श्री शुक्लचन्द जी म. को युवाचार्य पद से नवाजा गया। मयाराम जी म. के परिवार में फिर दूसरा गणावच्छेदक

पद सौंपा गया श्री रामसिंह जी म. को। गणी जी म. की विरासत में गणावच्छेदक बने श्री रघुवर दयाल जी म.। श्री दौलत राम जी म., श्री अमरचन्द जी म. प्रवर्तक बनाए गए। महासती श्री राजीमती जी प्रवर्तिनी कहलायी। अछूते रहे वाचस्पति गुरुदेव, पर तत्र विराजित सौ साधु-साध्वियों के लिए श्रद्धेय बने।

वाचस्पति गुरुदेव सहित पंजाब के मूर्धन्य मुनिराजों ने जब श्री आत्माराम जी म. को 'आचार्य पद' की चादर ओढ़ाई तब समग्र पंजाब धन्य हो उठा था।

लुधियाना श्री संघ ने उस अवसर पर आचार्य श्री जी के अलावा एक अभिनन्दन पत्र और अर्पित किया था, वह था केवल व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. के सम्मान में।

आचार्य पद समारोह में बीस हजार के लगभग दर्शनार्थी उपस्थित थे। ऊँचे आसन पर आचार्य श्री आरुढ़ थे। जैसे ही 'आचार्य पद' की चादर लेकर वाचस्पति गुरुदेव खड़े हुए तभी आचार्य श्री जी ने संकेत किया– "वाचस्पति जी, भीड़ अधिक है, आप ध्वनि यंत्र में बोलें।" पंजाब के उन साधुओं की अन्तरंग इच्छा इस वाक्य में बोल रही थी जो ध्वनियंत्र के लिए लालायित हो रहे थे। वाचस्पति गुरुदेव ने आचार्य श्री जी से विनती की– "आप आचार्य हैं, आपकी आवाज भी ऊँची नहीं है तथा जनता आपके मुखारविन्द से कुछ शब्द सुनने की इच्छुक भी है। अतः आप ध्वनियंत्र में बोलना साधु मर्यादा के अनुकूल समझते हैं, तो स्वयं ध्वनि यंत्र का प्रयोग करते हुए घोषणा कर दें कि ध्वनि यंत्र में बोलना निर्दोष है तथा मैं इस आचार्य पद के प्रसंग पर अपने साधु संघ के लिए ध्वनि-यंत्र के प्रयोग की आज्ञा देता हूँ। आपकी घोषणा पर चलने वाला मैं पहला व्यक्ति होऊँगा।" आचार्य श्री जी फरमाने लगे– मैं क्यों दोष लगाऊँ? न आज्ञा दी और न कोई ध्वनि-यंत्र में बोला। चादर समारोह शान से सम्पन्न हो गया।

पद-त्याग की गूंज समग्र समाज में फैली और श्रद्धा का अभिषेक वाचस्पति गुरुदेव को अधिगत होता रहा।

चादर समारोह के अनन्तर उनके जहन में दो बिन्दु उभरे, पहला था लाहौर की बिरादरी के संघर्ष का समाधान तथा दूसरा था अमृतसर समाज के विघटन को मिटा संगठन की पुनः स्थापना। इस कार्य के लिए आचार्य श्री जी का आशीर्वाद लिया और अपने साथी श्री पं. शुक्लचन्द जी म. को साथ। श्री योगिराज जी म. का परामर्श तो संग-संग था ही। दूर की यात्रा पर चलने से पूर्व श्री मूलचन्द जी म., स्वामी श्री फूलचन्द जी म., बाबा श्री जग्गूमल जी म. तथा पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी म. ठाणे चार का चातुर्मास अहमदगढ़ मण्डी के लिए घोषित कर दिया। चार वर्ष की दीक्षा पर्याय में पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी म. को चातुर्मास का दायित्व देकर वाचस्पति गुरुदेव ने उन पर अपने विश्वास की मुहर लगा दी। वैसे अहमदगढ़ मण्डी में चातुर्मास ठाणे दो का ही रहा। क्योंकि श्री मूलचन्द जी म. तथा स्वामी श्री फूलचन्द जी म. को मूनक में गणावच्छेदक श्री बनवारी लाल जी म. के सान्निध्य में बुलवा लिया गया था।

लाहौर पहुँचना था अतः वाचस्पति गुरुदेव, युवाचार्य श्री शुक्लचन्द जी म. पहले अमृतसर विराजे। वहीं लाहौर ब्रादरी के दोनों गुट अलग-अलग आए और पधारने की विनती की। वाचस्पति गुरुदेव ने फरमा दिया कि पधारने का भाव है। पहले आने वाले ग्रुप ने प्रश्न किया कि आप कहाँ ठहरेंगे? स्थानक में या जैन हाल में? वाचस्पति गुरुदेव ने थोड़ी सपाट बयानी और निष्पक्षता से कहा— "तुम मेरे गुरु नहीं हो जो पूछो। मेरा जहाँ मन होगा ठहर जाऊँगा।" दूसरे गुट ने भी विनती और वही सवाल किया तथा वैसा ही उत्तर उन्हें भी मिला। समाज के अगुआ लोगों को विश्वास तो हो गया कि वाचस्पति जी म. न तो किसी के दवाब में आएंगे और न पक्ष में। समाधान तभी हो सकता था। Without fear and favour की छवि के कारण लोग उनके प्रति आस्थावान थे। लाहौर का मसला काफी उलझ चुका था। कोर्ट कचहरियों तक मामला जा चुका था। कुछ समृद्ध परिवारों ने शहर से बाहर नई कालोनी में जैन हाल बनाया था। सुविधापूर्ण होने से अधिकतर साधु वहीं ठहरने लगे थे। शहर का स्थानक उपेक्षा का

शिकार हो गया था। शहर में घर तो अधिक थे पर वे प्रवचन, दर्शन, सेवा से वंचित रहते। शहर और कालोनी के परिवारों में दूरियां पनपने लगी। कुछ लोगों ने राजनीति करके आपसी मतभेद भी बढ़ा दिया। बोलचाल बन्द, लड़ाई-झगड़े और कोर्ट केस हो गए। सभी खिन्न भी थे पर झुकने को कोई तैयार नहीं। वाचस्पति गुरुदेव अदम्य साहस लेकर लाहौर पधारे। वह स्थान गर्मी में ठहरने योग्य नहीं था, हवा का नामोनिशान नहीं। दिन भर संतों का पसीना बहता रहता। व्याख्यान में पसीने की नदियां सी बह जाती। पर वाचस्पति गुरुदेव तो समाज निर्माण के लिए पसीना ही नहीं अपना खून भी बहाना जानते थे। उनके प्रवचनों में दोनों गुट आने लगे। 15 दिन के प्रवचनों और व्यक्तिगत प्रयासों ने सब नफरतें विदा कर दी। श्री युवाचार्य जी म. का सहयोग काम आने लगा। सबने समर्पण कर दिया और कह दिया– "जैसा आप चाहो, वैसा हमें मंजूर है।" इतनी आस्था तैयार हो गई तो वाचस्पति गुरुदेव ने भाई को भाई से गले लगवाया और सामंजस्य बन गया। जहाँ तक कानूनी अड़चने थी उन्हें निपटाने के लिए अमृतसर से श्री हरजस राय जी, वकील परमानन्द जी को जिम्मेवारी दी गई। सारी समाज व्यवस्था को लिखित रूप दे दिया ताकि बाद में कोई मसला सिर ना उठाए। सद्भावना को स्थिर बनाने के लिए युवाचार्य का चौमासा उन्हें उपहार में दिया गया। लाहौर से अमृतसर के लिए चले। वहाँ संवत् 2003 सन् 1946 का चातुर्मास करना था तथा समाज का एकीकरण भी। जनता में आशा थी कि अब कुछ कलह शान्त होंगे। पूर्ववर्ती आचार्य श्री कांशीराम जी म. की इच्छा थी कि अमृतसर पहुँचकर सामाजिक क्लेशों का निराकरण करूं परन्तु वे अम्बाला से आगे नहीं बढ़ पाए थे। अब सबकी नजरें वाचस्पति गुरुदेव पर थी। उनकी सत्यता निष्पक्षता के सब कायल थे। आचार्य श्री सोहनलाल जी म. के बाद 11 साल तक किसी वटवृक्ष की छाया अमृतसर वालों को नहीं मिली थी, आज वो दिन आ गया था। वाचस्पति गुरुदेव एवं श्री योगिराज जी म. ठाणे नौ ने अमृतसर में चरण

धरे तो वहाँ का जर्रा-जर्रा नाच उठा था। चौरस्ती अटारी की स्थानक छोटी होने की वजह से लक्खीशाह के मकान को ठहरने के लिए चुना। जीवन और प्रवचन दोनों ने लोगों पर जादू का सा असर करना शुरू किया। जमी हुई बर्फ पिघलनी शुरू हो गई। जितना काम मुनियों के अधिकार क्षेत्र में आता था, वह काम वाचस्पति गुरुदेव करते रहे शेष कार्य श्री टेकचन्द जी फगवाड़ा वालों के सुपुर्द कर दिया।

कई बार वाचस्पति गुरुदेव को लगता कि हर काम परिणति पर है, फिर लगता कि लक्ष्य से दूर होता जा रहा है। गौर से स्थिति को निहारा। पता चला कि एक दो व्यक्ति हर सुलझती गुत्थी को कहीं ना कहीं उलझा देते हैं और निगाह में आ गया एक श्रावक। धर्म-ध्यान, त्याग, तपस्या, सेवा में अग्रणी मगर सामाजिक मुद्दों पर कुछ हठी, आग्रही और गुटपरस्त। वाचस्पति गुरुदेव ने उसका ईलाज ढूंढ लिया। उस श्रावक को पौषध की अठाई मौन सहित करने की प्रेरणा दे दी। वह भी तैयार हो गया। एक हवादार कमरे में खिड़की के आगे आसन लगवा दिया और दुनिया से दूर कर दिया। समाज के प्रमुख प्रबुद्ध लोगों को संकेत कर दिया कि इन आठ दिनों में समाज की समस्याओं का हल कर लो। आनन-फानन में मीटिंग बुला ली गई। मसले निपटाए जाने लगे। विवाद के केन्द्र में समाज और मित्र-मिलन के अधिकार थे। फैसला कर लिया कि साधु-साध्वियों के चातुर्मास आदि की विनती ब्रादरी के अधिकार में रहेगी। मित्र-मिलन सामाजिक कार्यों जैसे कि ब्याह शादी, जन्म-मरण आदि में अपनी शक्ति लगाएगा। वाचस्पति गुरुदेव की प्रेमपगी वाणी धारा ने सब दिलों को हमवार, समतल बना दिया।

हर विवाद को शालीनता से निपटाने में कुशल श्री टेकचन्द जी फगवाड़ा वालों को प्रधान पद तथा श्री शांतिलाल जी को मंत्री पद दिया गया। सकल समाज ने हर्ष व उल्लास के वातावरण में वाचस्पति जी का अहसान माना कि गुरुदेव आपकी कृपा से ही सारा काम बन गया। वाचस्पति गुरुदेव ने चुटकी लेते हुए कहा– "मैंने आठ दिन के

लिए शेर को पिंजरे में बन्द कर दिया था, नहीं तो अकेला शेर जंगल को दहला देता।" इस वाक्य के निहितार्थ को समझते देर न लगी और लोगों में देर तक अट्टहास गूंजता रहा।

आह्लाद के वातावरण में विषाद के भी क्षण आए। पूज्य योगिराज जी म. के चतुर्थ शिष्य श्री शिखरचन्द जी म. को बुखार हो गया। उस होनहार विनयशील युवा मुनि का बुखार धीरे-धीरे दिमागी बुखार (Meningitis) में परिवर्तित हो गया। पहले निदान नहीं हो पाया, बाद में उपचार।

एक रात स्थिति गंभीर हो गई। इंजेक्शन दवाई आदि के लिए उनसे निवेदन किया पर उन्होंने दृढ़ता से इंकार कर दिया। नवकार मंत्र तथा चार शरण का उच्चारण करते रहे। सागारी संथारा भी ले लिया। सूर्योदय से पूर्व ही एक निर्मल प्रकाश अस्त हो गया। श्री योगिराज जी म. का धैर्य और स्थैर्य फिर भी निष्प्रकंप रहा। वाचस्पति गुरुदेव का श्री शिखर चन्द मुनि से विशेष अनुराग था, अतः खेद भी विशेष ही हुआ।

पूज्य श्री योगिराज जी म. ने चातुर्मास में 51 दिन की तपस्या करके वातावरण को तपोमय बना दिया।

वाचस्पति गुरुदेव के जीवन का एक नूतन आयाम उस चातुर्मास में और उद्घाटित हुआ। वे अपने शिष्य के भी शिष्य बने। गत वर्ष हाँसी चातुर्मास में पूज्य गुरुवर श्री रामप्रसाद जी म. ने पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. से संस्कृत भाषा की प्रथम और महत्वपूर्ण पुस्तक 'लघु सिद्धान्त कौमुदी' का अध्ययन किया था। अपने प्रतिभा बल से उसके प्रत्येक सूत्र, वृत्ति, वार्तिक और साधनिका को उन्होंने अधिकृत कर लिया था। वाचस्पति गुरुदेव ने उनसे कहा– "इस साल तू मुझे पढ़ा" वे भी पढ़ाने को सन्नद्ध हो गए। दो वर्ष की दीक्षा पर्याय में शिष्य श्री रामप्रसाद जी म. ने अपने गुरुदेव को लघु सिद्धान्त कौमुदी पढ़ाई। उन्होंने सविनय पढ़ी। ज्ञान पिपासा की तृप्ति का वह दृश्य शिक्षा जगत् में चिरस्मरणीय रहेगा।

अमृतसर को ज्ञानामृत का पान करवाकर शेष पंजाब को अवगाहित करने का मन और बना। पंजाब भी उनकी पद चापों के लिए आकुल व्याकुल था। पुरजोर विनतियां आ रही थी। 8 वर्ष पूर्व रावलपिण्डी में चातुर्मास हुआ था। गुजरांवाला का चातुर्मास रायकोट के नाम हो गया था। स्यालकोट वालों ने अपने हक की याद दिलाई। वाचस्पति गुरुदेव भी चाहते थे कि मेरे लघु शिष्य श्री प्रकाशचन्द्र जी म. व श्री रामप्रसाद जी म. सुदूर पंजाब को देखें और मैं दिखाऊँ। अतः चातुर्मास के बाद रावलपिण्डी तक और फिर क्रमशः आगे जाने का मानसिक भाव बना लिया। अपनी भावी योजना का हल्का सा नक्शा लिखकर मूनक विराजमान पूज्य गणावच्छेदक श्री बनवारीलाल जी म. के चरणों में भिजवा दिया। उनकी आज्ञा और आशीर्वादों की याचना की। आशा के विपरीत पूज्यपाद श्री बनवारी लाल जी म. ने आज्ञा जारी कर दी।– "एक कदम भी आगे मत बढ़ना। शीघ्रातिशीघ्र मेरे पास लौट आओ।" अपनी विनयशील प्रकृति के अनुरूप ही उन्होंने मन के प्रतिकूल आज्ञा को भी हंसते-हंसते स्वीकार कर लिया। बने बनाए सारे कार्यक्रम रद्द कर दिए और चातुर्मास के पश्चात् दीर्घ विहार कर मूनक में आ चरण वन्दना की। पूज्य श्री गणावच्छेदक जी म. ने भी आशीषों की वर्षा करते हुए फरमाया कि आज्ञाराधना का आपको सुमधुर फल मिलेगा।

उसी साल वाचस्पति गुरुदेव जी म. ने श्री बनवारी लाल जी म. की सेवा के लिए पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. की ड्यूटी लगाई।

सन् 1947 का वर्ष प्रारंभ हुआ। देश की स्वतंत्रता निकट आ गई। लेकिन देश का विभाजन उस स्वतंत्रता के ऊपर अभिशाप बनकर आया। लाखों लोग बेघर हो गए। कत्लेआम चारों ओर मच गया। पाकिस्तान से हिन्दुओं का, सिक्खों का और जैनों का महापलायन Exodus हुआ। कुछ जैन मुनि पाकिस्तान वाले भाग में फंस गए। उन्हें वायुयानों से दिल्ली या अमृतसर आदि नगरों में लाया गया। उन विषम स्थितियों को अपनी आंखों से देखा तो वाचस्पति गुरुदेव ने

फरमाया– 'अच्छा हुआ कि हमने श्री बनवारी लाल जी म. की आज्ञा मानी और वापस आ गए। यदि हम उनसे ऊपर उठकर उधर चले जाते तथा चौमासा कर लेते तो न जाने कितनी मुसीबतें आती और किन परिस्थितियों से गुजरना पड़ता।'

आजादी के साल संवत् 2004 सन् 1947 का चातुर्मास वाचस्पति गुरुदेव ने जीन्द में किया। जीन्द में भी हिन्दू मुस्लिम दंगों का खतरा था। वहाँ के मुसलमानों ने ठान लिया था कि अगर हिन्दू हम पर हमला करेंगे तो हम भी उनको नहीं बख्शेंगे। उस समय वाचस्पति गुरुदेव ने सामान्य जनता में शांति और निर्भयता का संचार किया। "न किसी को डराना है, न किसी गलत तत्व से डरना है।" यह उनका जीवन सिद्धान्त था और यही नारा बनाकर जनता को थामा। **'न दैन्यं न पलायनम्।'** श्रावकों ने वाचस्पति गुरुदेव से विनती की कि स्थानक के आसपास, खासतौर पर पिछवाड़े में सारी मुस्लिम आबादी है अतः आप किसी सुरक्षित मकान में स्थानान्तरित हो जाओ। वाचस्पति गुरुदेव ने निर्भीकता के साथ कहा– "तुम अपनी सुरक्षा करो हम अपनी, अपने आप देख लेंगे।" साथ में पूज्य तपस्वी श्री बद्रीप्रसाद जी म. भी थे। उन्होंने तो साफ ही कहा– मैं दरवाजे पर बैठता हूँ, देखता हूँ, कौन संतों को तंग करेगा। वाचस्पति गुरुदेव ने महासती श्री सुन्दरी देवी जी म. के ठहरने की व्यवस्था मोहल्ले के बीच घर में करवा दी ताकि वे बाह्य घटनाओं और बातों से प्रभावित न हों। वाचस्पति गुरुदेव की कृपा रही कि समग्र जैन समाज और मुनिमण डल पर कोई आँच नहीं आई। मुस्लिम समाज में भी उनके नेताओं ने ये ताकीदी कर दी थी कि हमें अपनी सुरक्षा के प्रति सावधान तो रहना है पर जैन स्थानक की तरफ किसी को एक कंकर भी नहीं फेंकना है। वहाँ संत महाराज हैं वे सबके हैं। जैनों के हैं तो हमारे भी हैं तथा अन्य हिन्दू-सिक्खों के भी।

चरखी दादरी के निवासी एक राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता श्री हीरालाल जी चुनारिया जैन श्रावक थे। वाचस्पति गुरुदेव के विशेष भक्त थे। राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान जीन्द की रियासती सरकार ने उन्हें गिरफ्तार

कर लिया और जेल में डाल दिया। उन्होंने कैदी के लिए निर्धारित आवश्यकताएं मांगी तो उनको अधिकारियों ने नहीं दी। फलतः उन्होंने भूख हड़ताल कर दी।[1]

कई दिनों की भूख हड़ताल के बावजूद रियासती सरकार के कानों में जूं नहीं रेंगी। जेल अधिकारी घबरा गए कि इनके जीवन को कुछ हो गया तो शहर में बलवा हो जाएगा। वाचस्पति गुरुदेव को पता चला कि चुनारिया जी भूख हड़ताल पर हैं तो खुद दर्शन देने जेल में चले गए। अधिकारी वर्ग इतने महान् व्यक्तित्व वाले महापुरुष के आगमन से और स्तब्ध हो गया। लगा कि चुनारिया जी की मांगें अब तो माननी ही पड़ेंगी। अधिकारियों ने वाचस्पति गुरुदेव से निवेदन किया कि आप इनका अनशन खुलवा दो। वाचस्पति गुरुदेव ने स्पष्ट किया कि आप इनकी उचित मांगें पूरी कर दो, ये अनशन छोड़ देंगे। अधिकारियों को झुकना पड़ा। एकाध मांग अधिकारियों के दायरे से बाहर थी। उनके लिए वाचस्पति गुरुदेव ने चुनारिया को मना लिया। वाचस्पति गुरुदेव ने मंगल-पाठ सुनाया और आ गए। अधिकारियों ने चैन की सांस ली।[2]

अगला चातुर्मास संवत् 2005 सन् 1948 पुनः संगरूर वालों को प्राप्त हुआ। श्री खूबचन्द जी की श्रद्धा, सेवा और आराधना ने प्रमाणित कर दिया था कि भगवान भक्त के वश में होते हैं। अग्रवाल धर्मशाला में हुए उस चातुर्मास की शान ही निराली थी साथ में थे पूज्यपाद भण्डारी श्री बलवन्त राय जी म., सेठ श्री प्रकाशचन्द जी म. तथा गुरुदेव श्री रामप्रसाद जी म.।

संगरूर के निकटवर्ती क्षेत्र सुनाम में वाचस्पति गुरुदेव ने अपने युगप्रवर्तक शिष्य पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी म. का चातुर्मास करवाया था, जिसमें उन्होंने सुनाम का नवसृजन किया था।

---

1 यह प्रसंग 1947 से पूर्व का प्रतीत होता है मगर सही वर्ष अज्ञात होने से जीन्द चातुर्मास के बहाने लिखना पड़ रहा है।

2 बाद में श्री चुनारिया जी लोक सभा के एम.पी. बने थे तथा लोकसभा में भाषण देते-देते उनका देहान्त हुआ था।

चातुर्मास के तत्काल पश्चात् वाचस्पति गुरुदेव को मूनक पहुँचना था। वहाँ पूज्यपाद गणावच्छेदक श्री बनवारी लाल जी म. की चरम समाधि का वक्त चल रहा था। उन्होंने एक वर्ष से ठोस आहार छोड़ तरल पदार्थ अपनाया हुआ था। ये उनकी संलेखना थी, संथारे की पूर्व भूमिका थी। श्री मयाराम गण के अधिकृत महापुरुष एवं वाचस्पति गुरुदेव तथा श्री योगिराज जी म. के आराध्य देव श्री बनवारी लाल जी म. की वैयावृत्य में प्रतिवर्ष एक सशक्त समर्थ मुनि की नियुक्ति होती थी। इस वर्ष का सौभाग्य ले रहे थे तपस्वी श्री बद्रीप्रसाद जी म. और अब बाईस ठाणों से सभी प्रमुख मुनिराज हाजिर थे।

जनवरी 1949 के प्रथम सप्ताह में जैन कांफ्रेंस का एक शिष्ट मण्डल संघ एकता के प्रयासों के तहत भारत भ्रमण कर रहा था, जिसमें कुन्दनलाल फिरौदिया, चिमनभाई, चकूभाई शाह, न्यालचन्द सेठ आदि प्रमुख थे। दिल्ली में उन्होंने कवि जी म. से मुलाकात की। उनको जाना तो आचार्य आत्माराम जी म. के पास लुधियाना था। पर जब उन्हें ज्ञात हुआ कि वाचस्पति गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. एवं युवाचार्य श्री शुक्लचन्द जी म. मूनक में श्री बनवारी लाल जी म. के चरणों में आए हुए हैं तो शिष्ट मण्डल के आधे सदस्य मूनक और आधे लुधियाना के लिए चल दिए। श्री न्यालचन्द, कुंजलाल, धीरज भाई तुरखिया आदि लोग ट्रेन के जरिए जाखल पहुँचे। दोपहर को मूनक के लिए कोई सवारी नहीं मिली तो सभी सदस्य सात आठ किलोमीटर पैदल चलकर ही मूनक पहुँचे। जब वे पहुँचे तो युवाचार्य श्री शुक्लचन्द जी म. का विहार हो चुका था। शिष्ट मण्डल का वाचस्पति, गुरुदेव से जो वार्तालाप हुआ उससे सभी आगन्तुक अत्यन्त संतुष्ट हुए और उनके प्रति वाचस्पति गुरुदेव ने भी अच्छी भावना जताई।

एक दिन पूज्य श्री बनवारीलाल जी म. ने कहा– "वाचस्पति जी, मुझे संथारा करवा दो।" वाचस्पति गुरुदेव जी म. और योगिराज जी म. उनके चरण दबाने लगे और निवेदन भी किया प्रभो! अभी इतनी शीघ्रता ना करो। दृढ़संकल्पी महाराज श्री जी बोले– 'क्यों नश्वर शरीर से मोह

करते हो, मैंने इससे यथासंभव सार निकाल लिया है।' उनके अविचल निश्चय के आगे वाचस्पति गुरुदेव को अवनत होना पड़ा। उन्हें तिविहार संथारे का प्रत्याख्यान करवा दिया और संथारे के निर्णायक, सहायक रूप तपस्वी श्री बद्रीप्रसाद जी नियुक्त हुए, जिन्होंने अति तत्परता, अप्रमत्तता से अपना दायित्व निभाया।

वाचस्पति गुरुदेव ने जहाँ श्री बनवारीलाल जी म. को आध्यात्मिक पाथेय प्रदान किया वहीं अपने लिए पारलौकिक शास्त्रीय प्रमाण-पत्र प्राप्त कर लिया। अर्थात् उन्होंने अपने समस्त जीवन की विशुद्ध आलोचना श्री बनवारीलाल जी म. के आगे कर ली। जीवन के प्रत्येक पृष्ठ को उनके सामने खोलकर रख दिया। उनकी आलोचना सुनकर श्री बनवारीलाल जी म. ने कहा था— "इतनी विशुद्ध आलोचना मैंने जीवन में पहली बार सुनी है। कोई निकट भवी आत्मा ही ऐसी आलोचना कर सकती है।"

वाचस्पति गुरुदेव संथारासीन श्री गणावच्छेदक जी म. के पास बैठे रहते थे। एक दिन बोले— "पूज्य श्री जी, हमारा ध्यान रखना। हमें समय-समय पर संभालते रहना।" श्री गणावच्छेदक जी म. ने समझाया— "मदन जी! मेरा तुमसे संयम का नाता है। यदि तुम संयम में रहोगे तो मैं तुमसे दूर नहीं, यदि तुम संयम से दाएं-बाएं हुए तो मेरा तुमसे कोई नाता नहीं।" इस शाश्वत सिद्धान्त को वाचस्पति जी ने हृदयांकित कर लिया और आजीवन चर्चित और निर्वाहित रखा।

माघ बदी दूज संवत् 2005 को संथारा सीझ गया। पूज्य श्री जी देवलोकों में प्रयाण कर गए। मुनि वृन्द सहित समग्र समाज शोक में डूब गया। फिर भी उनकी हित शिक्षाओं का आलंबन ले शोक से बाहर आए तथा संघ निर्माण में जुट गए।

पूज्य श्री बनवारीलाल जी म. के संथारे के पश्चात् महासती श्री सुन्दरी देवी जी म. ने विनती की कि वैरागन शांति जी की दीक्षा करनी है। परिवार वाले उकलाना मण्डी में आपके सान्निध्य में दीक्षा करवाना चाहते हैं। वाचस्पति गुरुदेव श्री सुन्दरी जी म. के प्रति अत्यन्त कृपाशील

थे। अतः उनकी इच्छा स्वीकार की। श्री योगिराज जी म. के साथ उकलाना पधारे। वैरागन को दीक्षा पाठ पढ़ाकर महासती सुन्दरी जी के परिवार का विकास क्रम प्रारंभ किया। उकलाना से जीन्द की ओर कदम बढ़े जहाँ पूज्यपाद श्री अमींलाल जी म. विराजमान थे। जीन्द पहुँचने पर पता चला कि कवि श्री अमरमुनि जी म. रोहतक से जीन्द केवल वाचस्पति गुरुदेव से मिलने के उद्देश्य से आ रहे हैं। प्रिय मित्र के आगमन की सूचना से वाचस्पति गुरुदेव भी बैठे नहीं रह सके। तभी जीन्द से चले और 25 किमी. का विहार करके जुलाना पहुँचकर कवि जी म. का स्वागत किया। और साथ-साथ जीन्द लेकर आए। तब तक युवाचार्य श्री शुक्लचन्द जी म. भी आ गए। इस तरह मार्च के महीने में 27 मुनिराजों का सम्मेलन जीन्द में हो गया। श्री कवि जी म. को आगरा जाना था शेष ज्यादातर को लुधियाना की ओर।

इस बार वाचस्पति जी म. का ध्यान मलेरकोटला जैसे विशाल क्षेत्र की ओर गया। जहाँ हजारों की तादाद में स्थानकवासी परिवार बसते थे। मलेरकोटला पंजाब स्थानकवासी संघ के इतिहास निर्माण में केन्द्रीय भूमिका निभाता रहा है। इसलिए संवत् 2006 सनू 1949 का चातुर्मास वहाँ का तय हुआ। तथा उदीयमान मुनिराज श्री रामकृष्ण जी म. का गुज्जरवाल के लिए घोषित हुआ। मलेरकोटला वालों को एक मसीहा मिल गया था। सारा शहर उनका दीवाना हो गया था। उस साल वाचस्पति गुरुदेव ने कौम की रक्षा का जो बिगुल बजाया था, उसका खुलासा इस प्रकार है—

भावड़ा परिवार की एक लड़की जैतों से मलेरकोटला आ रही थी। मलेरकोटला में तैनात एक थानेदार उधर से आ रहा था। लड़की की सुन्दरता देख उसकी नीयत खराब हो गई। बहकाकर थाने में ले गया और उससे ज्यादती की। लड़की ने घर आकर सबको बताया। उन्होंने पंचायत इकट्ठी कर ली। सारा शहर उबल पड़ा। थाने को घेर लिया। थानेदार को थाने से बाहर घसीट कर उसकी पिटाई शुरू कर दी। पिटते-पिटते वह थानेदार मर गया। अब पुलिस को मौका मिल गया।

आम जनता को गिरफ्तार करना शुरू कर दिया। जनता में हड़कम्प मच गया। उस समय वाचस्पति गुरुदेव ने लड़की, उसके परिवार और जनता के हक में सरेआम प्रवचन दिए। ललकार सुनते ही मुर्दों में भी जान आ गई। वाचस्पति गुरुदेव ने कहा– "मां-बेटी-बहन की रक्षा के लिए जान भी देनी पड़े तो डरना नहीं है। जेल भर दो, सरकार को झुका दो। समाज की ताकत उभरकर आई और सरकार को झुकना पड़ा। हर गिरफ्तार आदमी रिहा हुआ और समाज का गौरव बहाल हुआ। वाचस्पति गुरुदेव ने देश-धर्म की अस्मिता को बचाया।

मलेरकोटला का चातुर्मास अपने उफान पर था और उधर गूजरवाल में श्री रामकृष्ण जी म. अस्वस्थ हो गए। उनकी सेवा में तैनात श्री श्योचन्द जी म. सामान्य सेवा के अतिरिक्त शेष कार्य वहन नहीं कर सकते थे। अतः वाचस्पति गुरुदेव ने श्री योगिराज जी से परामर्श करके मलेरकोटला से चातुर्मास में ही श्री रणसिंह जी म. को गुज्जरवाल भेजा ताकि रुग्ण मुनि की सार-संभाल के साथ समाज की देखभाल भी हो सके। उनके पहुँचने और हर काम संभालने के बावजूद तबीयत नहीं सुधरी तो वाचस्पति गुरुदेव ने स्वयं निर्णय लिया कि मैं मुनि जी की सेवा में जाऊँ और चिकित्सा करवाऊँ। चातुर्मास का भार श्री योगिराज जी म. के कंधों पर डाला और अपने युवा मुनि की सेवा के लिए गुज्जरवाल पहुँच गए। उनके पहुँचने पर श्री रामकृष्ण जी म. को कुछ राहत मिली, पर बीमारी उसी तरह बनी रही। वाचस्पति गुरुदेव ने सोचा गुज्जरवाल छोटा सा गांव है। यहाँ की अपेक्षा अहमदगढ़ में चिकित्सा की सुविधाएं ज्यादा हैं, इसलिए वहाँ स्थानान्तरित करना फायदेमंद रहेगा। श्री रामकृष्ण जी म. से पूछा तो वे चलने को तैयार हो गए। मुनि उन्हें डोली में बिठा कंधों पर उठाकर अहमदगढ़ लाए। वाचस्पति गुरुदेव की निगरानी में अच्छे से अच्छा उपचार प्रारंभ हो गया पर लाभ नहीं हो पाया। देसी, यूनानी, घरेलू, अंग्रेजी सब उपचार निरर्थक हुए। मंत्र, जाप-आदि के प्रयोग भी काम नहीं आए। चातुर्मास पूर्ण हुआ। रुग्णता कायम रही। श्री योगिराज जी म. भी पधार गए। पूज्य श्री रणसिंह जी

म. ने परामर्श दिया कि आप बड़े संत किसी बड़े शहर की तरफ पधारो, वहाँ कुछ उपचार का इंतजाम करो। हम धीरे-धीरे आ जाएंगे। वाचस्पति गुरुदेव वहाँ से आगे पधारे। बाद में कुछ दिनों के बाद श्री रामकृष्ण जी महाराज ने हौंसला किया और वे भी विहार कर सके।

सन् 1949-50 का समय पंजाब साधु—संघ में काफी उथल-पुथल का रहा। उस तूफानी समय में संघ की नैया को वाचस्पति गुरुदेव ने सबल खिवैय्या बनकर खेया था। आचार्य श्री आत्माराम जी म. साधु समाज के अधिनायक थे। श्रावक संघ का नेतृत्व श्री हरजसराय जी के सुयोग्य हाथों में था।

वे जैसे-जैसे साधुओं के करीब आते गए उन्हें कुछ काली भेड़ें Black sheep साधुओं में दिखाई दी। कई क्षेत्रों से साधुओं के चारित्र से सम्बद्ध, धन से सम्बद्ध किस्से शिकायतों के रूप में आने लगे। श्री हरजसराय जी को यह बहुत बुरा लगा। उन्होंने सोचा कोई सख्त अनुशासनात्मक कार्यवाही की जानी चाहिए। उन्होंने आचार्य श्री जी से बातचीत की। उन्होंने कहा—ठीक है, पर मैं वाचस्पति श्री मदनलाल जी म. से पूछता हूँ। सन् 1949 में उन्होंने वाचस्पति जी को लुधियाना बुलाया, सारी बातें सामने रखी। वाचस्पति गुरुदेव को सारी स्थिति ने हिलाकर रख दिया। आपसी मतभेद तो पहले भी होते थे पर ये तो चारित्रहीनता की सीमा थी। उन्होंने आचार्य श्री जी से कहा— कड़ा कदम उठाओ। आचार्य श्री जी बोले— आपकी छवि साधुओं में व श्रावकों में सुच्ची और सच्ची है, आप को ही कुछ समाधान करना है। दोषियों को सद्बुद्धि भी मिले और समाज की श्रद्धा भी कायम हो।

वाचस्पति गुरुदेव जानते थे कि काम जोखिम भरा है। दोषी व्यक्ति दोष मानेंगे नहीं। सख्ती से पूछताछ होगी तो नाराज होंगे। अपने पक्ष में लोगों का वर्ग जमा कर लेंगे। गुरुओं का पक्षपात उनकी ओर होगा। सीधे तौर पर मैं ही निशाना बनूंगा। इन सब दिक्कतों के बावजूद वाचस्पति गुरुदेव के लिए आचार्य श्री जी का आदेश भी मानना था,

समाज की रक्षा का सवाल था। इसलिए खतरों से खेलने के लिए रजामंद हो गए। आचार्य श्री जी को कह दिया– आपका हाथ हमारे ऊपर है तो हम तैयार हैं। 8-9 मई सन् 1949 के दिन साधु एकत्र किए। एक जाँच कमेटी नियुक्त की, जिसमें चार मुनि और पांच श्रावक सम्मिलित किए गए। चार मुनिराज थे– श्री नेकचन्द जी म., श्री शुक्लचन्द जी म., वाचस्पति गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. व श्री रघुवर दयाल जी म.। पांच श्रावक थे– त्रिभुवन नाथ जी कपूरथला, गण्डामल जी जंडियाला, रूपलाल जी पंचकूला, अच्छरूमल जी पटियाला तथा श्री हरजसराय जी अमृतसर।

इस कमेटी में भी मुख्य काम दो का ही था वाचस्पति गुरुदेव जी का व श्री हरजसराय जी का। दोनों ने गहन छानबीन की, सैंकड़ों प्रमाण जुटाए, गवाहियाँ ली। इस कमेटी ने पाँच साधुओं को साधु वेश के अयोग्य पाया। कुछ को प्रायश्चित का दोषी पाया गया और कुछ को निर्दोष भी। कमेटी ने अपनी सिफारिशें आचार्य श्री जी को दे दी तथा उन्होंने लगभग सभी सिफारिशें मानकर कार्यवाही कर दी। पंजाब में एक भूचाल सा आ गया। अपनी कार्यवाही की सच्चाई को सामान्य लोगों तक पहुँचाने के लिए एक लघु पुस्तिका 'एक पग' छपवाकर सर्वत्र प्रेषित की। भारत भर में इस साहसपूर्ण कार्य की अनुमोदना हुई। कांफ्रेंस के मुख्यपत्र 'जैन प्रकाश' ने 4-8-1949 तथा 15-9-1949 के अंकों में इस कदम के लिए खुलकर साथ दिया तथा शिथिलाचारियों को स्थानकों में न घुसने देने का सुझाव दिया।

वाचस्पति गुरुदेव ने ये कार्य आचार्य श्री जी के आदेश से किया था तथा निष्पक्ष होकर किया था। बिना प्रमाण के किसी को अपमानित सम्मानित करने का तो प्रश्न ही नहीं था पर अपराधियों का पूरा परिवार बागी हो गया। अपने समर्थकों का एक खासा बड़ा वर्ग लामबंद कर दिया। श्री कस्तूरचन्द जी म., श्री कपूरचन्द जी म., श्री अमृत कुमार जी म. आदि ने कमेटी की सिफारिशों और आचार्य श्री जी के फैसले को मानने से इंकार कर दिया। फलतः उन्हें भी संघ से निष्कासित करना पड़ा।

उस गुट ने कैथल में एकत्रित होकर नया संघ बनाया और नए आचार्य की घोषणा भी कर दी। पंजाब तथा शेष भारत में कमेटी और आचार्य श्री जी के विरूद्ध प्रचार अभियान चालू कर दिया। उसका परिणाम यह निकला कि कांफ्रेंस ने अपना पैंतरा बदल लिया। पंजाब संघ का विभाजन ना हो, अब ये रवैया अपना कर कांफ्रेंस का शिष्टमण्डल उत्तर भारत में आने लगा। आचार्य श्री आत्माराम जी म. ने कमेटी के मुनियों को लुधियाना में पुनः बुलाया और अप्रैल 1950 के प्रारंभ में सब एकत्र हो गए। जिसमें युवाचार्य श्री शुक्लचन्द जी म. तथा वाचस्पति गुरुदेव आदि सोलह मुनिराज थे। कांफ्रेंस के प्रतिनिधि भी आए जिनमें टी.जी. शाह, धीरज भाई तुरखिया आदि प्रमुख थे। उन्होंने पिछले फैसले वापस लेने पर जोर दिया पर आचार्य श्री जी व कमेटी वाले तैयार नहीं हुए। कांफ्रेंस वालों की एक बात मान ली कि 'एक पग' पुस्तक को आज के बाद प्रचारित-प्रसारित तथा प्रदर्शित नहीं किया जाएगा।

पंजाब के सभी संघों में ये धारणा व्यापक रूप से चर्चित हुई कि व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव मदनलाल जी म. की हिम्मत से यह सफाई अभियान सफल हो सका है।

इस तरह की वारदातें पुनः घटित ना हों इसके लिए मुनियों की मर्यादाएं निर्धारित करने की चर्चा आम हो गई। इसलिए कुछ प्रमुख मुनियों की मीटिंग जालन्धर में रखी गई। वहाँ बहुत सारे नियमोपनियम बनाए गए और घोषणा की गई कि जो इनका पालन नहीं करेगा उसके साथ श्रमणोचित संबंध नहीं रखा जाएगा।

जालंधर सम्मेलन से पूर्व ही व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव का आगामी चातुर्मास संवत् 2007 सन् 1950 का पटियाला का घोषित हो चुका था। परन्तु जालंधर में जब सम्मेलन चल रहा था और वाचस्पति गुरुदेव की वाग्गंगा अजस्र रूप से बह रही थी तब तत्र विराजित प्रवर्तिनी श्री राजीमती जी म. ने विनती की– गुरुदेव आप चार महीने के लिए जालंधर विराजो, हमारी सतियों को ज्ञान-ध्यान सिखाओ तथा हमें अपने प्रवचन पान करवाओ। वाचस्पति गुरुदेव श्री राजीमती जी म. का

गहनतम सम्मान करते थे। कहते थे कि ये उत्कृष्ट संयम का एक नमूना है। लघुकाया में एक महान् आत्मा है। साध्वी वेष में साधुओं के लिए वन्दनीया है। उनकी इच्छा स्वीकार करने योग्य है पर पटियाला संघ को जुबान दी जा चुकी थी। पटियाला संघ का क्या होगा? श्री राजीमती जी म. का संकेत पाकर जालंधर संघ हरकत में आ गया। वाचस्पति गुरुदेव पर चातुर्मास का आग्रह बढ़ाया। पटियाला समाज आया। महासती श्री राजीमती जी म. ने पटियाला वालों से झोली फैलाकर चातुर्मास मांग लिया। इतनी बड़ी साध्वी की भावना देखते हुए पटियाला वाले मौन हो गए और जालंधर वालों को छप्पर फाड़कर चातुर्मास मिल गया।

गणी श्री उदयचन्द जी म. के सुशिष्य श्री रघुवर दयाल जी म. उन दिनों जालंधर छावनी में विराजमान थे। उन्हें ज्ञात हुआ कि पूज्य वाचस्पति गुरुदेव जी म. जालंधर में चातुर्मास हेतु तैयार हो गए हैं तो उन्होंने भी इस भव्य अवसर का लाभ उठाना चाहा और वाचस्पति गुरुदेव जी म. से विनती की कि मेरे शिष्य श्री अभय मुनि जी आपके चरणों में रहकर आगमों का अध्ययन कर लेंगे। वाचस्पति गुरुदेव तो सदा ज्ञान दान के लिए तत्पर रहते थे। स्वीकृति प्रदान कर दी। उनके आने से जालंधर में ठाणे सात का चातुर्मास हो गया। चातुर्मास के प्रारंभ में ही वाचस्पति गुरुदेव ने अपने मुनियों को विशेषतः श्री रामप्रसाद जी म. को अलग बुलाकर कहा कि मैं अभयमुनि को आगम वाचना देने के लिए अपने पास रख रहा हूँ। इसलिए उसकी सुविधा और सम्मान का अधिक ध्यान रखूंगा, तुम्हारी उपेक्षा हो जाय तो ख्याल मत करना। वे ज्ञान पिपासुओं के लिए औघड़दानी थे। चार महीने तक श्री राजीमती जी की साध्वियों, श्री अभयमुनि जी को एवं अपने शिष्यों को ज्ञान का नवनीत बांटते रहे।

जहाँ ज्ञान लेना होता तो शीघ्र विनत हो जाते,
और ज्ञान देना होता तो धारा मुक्त बहाते।
नहीं कृपण कभी भी बने दान में, वे वदान्य जलधर थे,
वे धन्य-धन्य गुरुवर थे।

जालंधर वासियों के लिए यह चातुर्मास God Gift था जिसका उन लोगों ने जी भरकर लाभ उठाया। पाकिस्तान निर्माण के बाद सैकड़ों घर उधर से इधर आकर बसे थे और जमने की प्रक्रिया में थे।

जालंधर पुराने समय से अग्रणी क्षेत्र था। अब उसके विस्तार में वृद्धि भी हो गई थी। स्यालकोट आदि से आए परिवार और उनके युवक जो पहले चातुर्मासों से वंचित रहे थे, आज अपनी भावनाओं की पूर्ति का अवसर देख बाग-बाग हो रहे थे।

वाचस्पति गुरुदेव ने उनकी भावनाओं को तथा भावी संभावनाओं को देखते हुए युवकों को एक जुट होने की प्रेरणा दी। और इस तरह पंजाब का पहला 'युवक मण्डल' गठित हुआ। उन युवकों में श्री विलायती राम जी के ऊपर वाचस्पति गुरुदेव ने अद्भुत कृपा बरसाई और वे पंजाबी भाषा में कविताएं लिखने लगे और क्रमशः उन्होंने पंजाब के प्रत्येक कार्यक्रम को सफलता प्रदान की तथा सामाजिक उत्थान व गुरुभक्ति के मामले में एक प्रभावशाली कलाकार साबित हुए।

सुश्रावक श्री केसरदास जी उस चातुर्मास में वाचस्पति गुरुदेव के काफी करीब आए। उनसे इतने प्रभावित हुए कि हमेशा के लिए उनके तथा उनकी मुनि परम्परा के परामर्शक बन गए। आचार्य श्री सोहनलाल जी म. ने उन्हें 13 वर्ष की आयु में ज्योतिष विद्या से संबंधित कुछ बहुमूल्य सामग्री प्रदान की थी और बाद में उन्होंने विकसित कर लिया था। वे कहते थे कि मैंने उसी चातुर्मास में वाचस्पति गुरुदेव को अपने गुरु के रूप में स्वीकार कर लिया था। उनसे कई बार विनती की थी कि आप मुझे गुरु धारणा करवा दो, परन्तु उन्होंने यह कहकर मना कर दिया कि अभी तुम मुझे देखो और मैं भी तुम्हें देखूंगा। जब जँचेगा तब गुरु धारणा करवा दूँगा। यह सौभाग्य एक साल बाद उदय में आया जब उन्होंने दिल्ली में सहर्ष गुरु धारणा करवायी। श्री केसरदास जी ने उस चातुर्मास में घटित एक घटना सुनाई थी– इनके परिचित एक भाई थे श्री ओमप्रकाश अरोड़ा। उनका इकलौता युवा पुत्र काफी बीमार था। उपचार का लाभ भी नहीं मिल रहा था। उसने केसरदास जी को उसकी

कुण्डली दिखाई। केसरदास जी को कोई आशा की किरण नजर नहीं आई। अरोड़ा जी मायूस हो गए। फिर भी बोले– कोई उपाय है क्या? केसरदास जी ने बताया– यदि किसी संत महात्मा की कृपा मिल जाय तो बात अलग है, अन्यथा काम बनना मुश्किल है। निराश ओमप्रकाश जी बोले– "मैं तो ऐसे किसी महात्मा को जानता नहीं हूँ। यदि आप जानते हो तो बता दो। उनको जो चढ़ावा चाहिए वो मैं अर्पण कर दूँगा।" श्री केसरदास जी ने कहा मेरे गुरुदेव तो व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. हैं, वे कोई चढ़ावा नहीं लेते। अरोड़ा जी को लेकर केसरदास जी स्थानक में आ गए। वाचस्पति गुरुदेव को बच्चे की सारी स्थिति समझाई तो गुरुदेव कुछ देर मौन रहे। फिर खिड़की से बाहर आकाश की ओर निहारा। दोपहर का समय था, सड़क तप रही थी, तो भी बोले– चलो अभी घर पर चलता हूँ। दोनों साथ-साथ चल दिए। घर जाकर मंगल पाठ तो सुना दिया पर कोई आश्वासन या संकेत नहीं दिया। चलने लगे तो अरोड़ा जी ने विनती की– 'गुरुदेव, कुछ लेते जाओ।' वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया– "आज मैं देने आया हूँ, लेने नहीं आया।" उनके लिए यही पर्याप्त था। वाचस्पति गुरुदेव स्थानक में आ गए। कुछ ही दिनों में घर के चिराग की मुस्कान वापस लौट आई। उसके साथ सारे घर की भी।

जालंधर वासियों से सन् 1950 में नाता जुड़ा तो स्थायी हो गया। वाचस्पति गुरुदेव एवं जालंधर वाले एक दूसरे को समझ चुके थे, एकमेक हो चुके थे।

चातुर्मास पूर्ण कर होशियारपुर, टाण्डा, मुकेरियां को धर्मलाभ देते हुए बटाला में पदार्पण किया। किसी भी जैन मुनि का बटाला में प्रथम आगमन हुआ। स्वतंत्रता पूर्व यह समग्र इलाका जैन संतों से पूर्णतः अछूता था। अब पठानकोट-जम्मू मार्ग बनने से बटाला की संभावना बन गई। पाकिस्तान से निकलकर कुछ जैन परिवार भी बस गए थे। नारोवाल के श्रावक श्री पंजूशाह भी उनमें शामिल थे। उन्हीं की भावना को बल देने वास्ते वाचस्पति गुरुदेव ने इधर कदम बढ़ाए थे। वहाँ ऐसा

रंग लगा कि एक-एक दिन बढ़ते-बढ़ते पूरे 17 दिन लग गए। एक बार जो उनके प्रवचन सुन लेता कितने कितने और लोगों को लेकर आता। शहर भर में ख्याति फैल गई। स्थानीय आर्य समाज के लोगों ने दर्शन प्रवचन का लाभ लिया तो उनके मुरीद बन गए। विनती करने लगे कि आर्य समाज मंदिर में आपके प्रवचन होने चाहिए। गुरुदेव तैयार हो गए। साथ ही फरमाया कि 'महावीर जयन्ती' का पर्व निकट आ रहा है, उसका आयोजन भी आपको ही करना है। आर्य समाज ने सहर्ष स्वीकृति प्रदान की। संभवतः ये पहली और इकलौती घटना है, जब आर्य समाज ने अपने मंच पर, अपने बैनर तले महावीर जयन्ती मनाई, अन्यथा वहाँ घोर कटाक्षों ओर आलोचनाओं के अलावा अन्य कुछ न सुनाई देता था, न दिखाई देता था। यह वाचस्पति गुरुदेव के प्रवचनों का कमाल ही माना जाएगा कि उस साल आर्य समाज ने वीर निर्वाण पर्व भी अपने मंच से मनाया। कई वर्षों तक बटाला में जैनत्व का दीप जगमगाता रहा था।

संवत् 2008 सन् 1951 का चातुर्मास पुनः अमृतसर को मिला। 5 वर्ष पूर्व हुए चातुर्मास में समाज के बिखराव को एक रूपता में बदलना लक्ष्य था। इस बार धर्मप्रिय जनता में सामायिक उपवास पौषध आदि की रूचि जागृत करनी थी। समाज के हर बाल, वृद्ध, युवा को धार्मिक धारा में प्रवाहित करना तथा संस्कारवान बनाना था। इस उद्देश्य से वाचस्पति गुरुदेव ने अपनी समस्त ऊर्जा लगा दी। पूज्य श्री मूलचन्द जी म. की नेश्राय में श्री तपस्वी जी म. की त्रिवेणी जंडियाला गुरु में धर्म जागरणा करवाती रही। अमृतसर के प्रत्येक परिवार ने उस चातुर्मास में यह अनुभव किया कि हमारे ऊपर किसी करिश्माई संत की छाया है जो हमें हर मुसीबत की घड़ी से बचा लेगी।

उस चातुर्मास की कुछ झलकें:—

पालशाह, सत्यपाल जैन लक्शर कम्पनी वालों के भाई रणजीत सागर का जैन संतों तथा जैन स्थानक से कोई लगाव या श्रद्धा नहीं थी। वह आर.एस.एस. का कार्यकर्त्ता था। इससे उसकी मां खिन्न रहती

थी। उसने वाचस्पति गुरुदेव से विनती की कि इसे भी धर्म में लगाओ। स्थानक वासी समाज के अधिकतर युवक स्थानाक से जुड़ गए हैं मगर यह दूर रहता है। वाचस्पति गुरुदेव ने एक दिन उसे बुलाया। वार्त्तालाप हुआ। उसने कहा– मुझे ऐसी बात बताओ, जिससे मेरा विश्वास टिके। वाचस्पति गुरुदेव बोले– 'कापी पेंसिल ले ले और लिख ले।' वाचस्पति गुरुदेव उसके आगामी जीवन के बारे में बोलते गए और वह लिखता गया। उसे वाचस्पति गुरुदेव ने जो जो लिखवाया, वही उसके जीवन में घटित हुआ। इस प्रकार वह वाचस्पति गुरुदेव से एवं जैनत्व से स्थायी रूप से जुड़ गया।

संवत्सरी पर्व पर पौषधों की बहार थी। सारा स्थानक तपस्वियों से खचाखच भरा था। उस साल की संवत्सरी पर बहुत गर्मी रही। अधिकतर का बुरा हाल रहा। रात की घुटन गर्मी और भूख ने नए-नए पौषध करने वालों को हिला दिया। वाचस्पति गुरुदेव ने नए अभ्यासियों को बुलाकर कहा– "हमारे पट्टों के पास आकर बिस्तर लगा लो।" अधिक संतप्त लोगों ने वैसा ही किया। रात को ठण्डी-ठण्डी हवा चली और पौषध साता पूर्वक पूरा हो गया।

अमृतसर के मंत्री श्री शांतिप्रकाश जी का अनुभव– "मुझे महाराज श्री जी की चरण सेवा का दो चातुर्मासों में मौका मिला। एक बार उनके दांत बहुत खराब हो गए, दर्द बढ़ गया। एक दिन व्याख्यान के बाद सेवाभावी डा. मानकसिंह के पास ले गया। डा. साहब ने दांत देखे और देखते-देखते सात दांत निकाल दिए। हिदायत दी कि नरम और पतले हलवे के सिवाय कुछ नहीं खाना। यह बात मेरे सिवाय किसी और को पता नहीं थी। मैंने ग्यारह बजे श्री भण्डारी जी से विनती की कि आहार को चलो। उन्होंने म. श्री से कहा कि शान्ति आहार की विनती कर रहा है। यद्यपि म. श्री जी के दांतों से खून आ रहा था। उस दिन कुछ खाया भी नहीं था, फिर भी उन्होंने कहा– 'ये विनती कर रहा है इसके घर आहार को नहीं जाना, बाकी कहीं भी जाओ।' उनके ये शब्द, त्याग और चारित्र का उद्‌घोष मेरे कानों में आज भी गूँजते हैं।" उसी

चौमासे के दौरान भारत-पाक संबंधों में गिरावट आई। युद्ध का माहौल बनने लगा। पाकिस्तान के प्रधानमंत्री लियाकत अली ने मुक्का तानकर हमले की धमकी दे डाली। फौजें सरहद तक बढ़ने लगी तो निकटवर्ती अमृतसर में दहशत का वातावरण बनने लगा। लोग जान माल की रक्षा के लिए दिल्ली या अन्य शहरों की तरफ बसने के लिए जाने लगे। वाचस्पति गुरुदेव निर्भीक रहे और लोगों को निर्भीक बनाते रहे। उन्होंने कहा– "कहाँ जा रहे हो? फिर वापस आना पड़ेगा।" अधिकांश लोगों ने वाचस्पति गुरुदेव का सहारा लिया और डटे रहे। कुछ भयभीत लोग चले गए। लियाकत अली का मुक्का फुस्स हो गया। युद्ध का डर खत्म हुआ। घर छोड़कर गए लोग वापस आ गए। चातुर्मास तक बड़ी लहर बहती रही। वाचस्पति गुरुदेव के रूप में क्षेत्रवासियों को बड़ा अवलम्बन मिल चुका था।

समानी वः आकूतिः
समानि हृदयानि वः

अखिल भारतीय स्तर पर मुनिसंघ की एकता की स्थापना करना व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव का पुराना सपना था। उसके लिए वे अपने समग्र जीवन को आहूत करने को तत्पर रहते थे। उनकी इस भावना का पूर्ण होने का समय निकट आ रहा था। चातुर्मास से पूर्व एक योजना बनाई गई थी कि भारत के कुछ दिग्गज मुनि मिलकर आगमों के पाठों का शुद्धीकरण और एकीकरण करने के लिए संयुक्त चातुर्मास करें, वह योजना क्रियान्वित नहीं हो सकी तो बृहत् साधु सम्मेलन बुलाने की आवाजें बुलंद हुई। उन्नीस वर्ष पूर्व अजमेर में जो साधु सम्मेलन हुआ था उसमें अनेक सम्प्रदायों का पारस्परिक परिचय तो हो गया था, मगर सम्प्रदायों का एकीकरण नहीं हो पाया था। लेकिन इस बार कांफ्रेंस कुछ मजबूत होकर चली थी। उनके प्रयासों का प्रारंभिक परिणाम यह निकला था कि कई स्थानों पर प्रान्तीय मुनि सम्मेलन हुए थे। जैसे कि राजस्थान के सत्रह सम्प्रदायों में से नौ ने ब्यावर में सम्मेलन किया और उन नौ में से पांच ने अपना अलग-अलग अस्तित्व छोड़ 'वीर वर्धमान श्रमण संघ' ऐसा संयुक्त सम्प्रदाय बना लिया था। श्री आनन्द ऋषि जी म. को अपना आचार्य मान लिया था।

गुजरात की सम्प्रदायों ने सुरेन्द्र नगर में सम्मेलन किया था। पंजाब में पहले से एक ही सम्प्रदाय थी और इसके मुनियों के सम्मेलन प्रायः होते ही रहते थे।

ऐसे आशा वर्धक वातावरण में अगले वर्ष के लिए बृहत्-साधु-सम्मेलन की घोषणा हुई थी। सादड़ी में विक्रम संवत् 2009 वैशाख शुक्ल 3 से

13, सन् 1952, 27 अप्रैल से 7 मई तक 11 दिवसीय मुनि सम्मेलन सबके लिए नई चेतना का संवाहक बन रहा था। वाचस्पति गुरुदेव का मन्तव्य था कि सब सम्प्रदायें दूसरी सम्प्रदायों की अच्छाई को अपनाएं, कमी को छोड़े। एक संगठन का एक आचार्य हो तथा नई दीक्षाएं उसी एक आचार्य की कहलाएं। गुरु और आचार्य एक हों, भिन्न-भिन्न नहीं। वाचस्पति गुरुदेव सम्मेलन में शामिल होने के लिए खूब उत्साहित थे। एक बार पंजाब के प्रमुख मुनियों का एकत्रीकरण और विचार विमर्श भी आवश्यक समझते थे। इसीलिए 16 दिसम्बर 1951 को लुधियाना में मुनि मिलन किया। वाचस्पति गुरुदेव, पंजाब केशरी श्री प्रेमचन्द जी म., युवाचार्य श्री शुक्लचन्द जी म., श्री रघुवरदयाल जी म., श्री विमल मुनि जी म. आदि 40 मुनिराज तो पंजाब संघ के थे तथा श्री पन्नालाल जी म., श्री चन्दनमुनि जी म. ठाणे तीन समविचारक थे।

सादड़ी पहुँचकर संघ एकता का क्या प्रारूप प्रस्तुत किया जाय इस विषय में चिन्तन चला। दो धाराएं उभरकर आई। एक धारा थी कि भारत की सभी सम्प्रदायें एक संघ में विलीन हो जाएं और उस नवीन संघ का एक आचार्य नियुक्त हो। जैसे कि भारतीय शासन प्रणाली में पटेल ने सभी रियासतों का विलय करवा दिया और सबके ऊपर प्रधानमंत्री का चयन हुआ। उसकी रीति नीति के अनुसार राष्ट्र का निर्माण होता है।

दूसरी विचारधारा थी कि मौजूदा सभी सम्प्रदाएं अपना-अपना अस्तित्व कायम रखें, हर आचार्य अपने-अपने संघ की सुरक्षा करे पर सब आचार्यों के ऊपर एक प्रधानाचार्य बना दिया जाए जो एक जैसी समाचारी, एक जैसी श्रद्धा प्ररुपणा देकर सब संघों की समानता को बनाए रखे जैसे कि अमेरिकी शासन व्यवस्था में सभी States अपने-अपने कानून बनाने में स्वतंत्र हैं पर अंतर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय मामलों में राष्ट्रपति के अधीन हैं। वाचस्पति गुरुदेव यूनाईटेड स्टेट्स जैसी व्यवस्था मुनि एकता के संदर्भ में चाहते थे। पर लुधियाना में

एकत्रित मुनि पहली धारा के पक्षधर अधिक थे। इसलिए वाचस्पति गुरुदेव भी तदनुसार ही मान गए। सर्व सम्मति उन्हें प्रिय थी अतः नीति बना ली एक संघ एक आचार्य बनाना है।

वाचस्पति गुरुदेव का एक विचार और था कि मुख्य सम्मेलन से पूर्व देश के पांच-सात प्रमुख मुनिराज कहीं मिलें, ताकि सम्मेलन का एजैण्डा तैयार हो जाय और सम्मेलन का कीमती समय विवादों में समाप्त होने से बच जाय। उनके इन विचारों का समर्थन कांफ्रेंस के पदाधिकारियों ने 'जैन प्रकाश' में किया।

आचार्य श्री आत्माराम जी म. ने पंजाब संघ की ओर से चार प्रतिनिधि नियुक्त किए। जिन्हें पंजाब का पक्ष प्रस्तुत करने का अधिकार दिया गया। व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलाल जी म., पंजाब केशरी श्री प्रेमचन्द जी म., युवाचार्य श्री शुक्लचन्द्र जी म., प्रसिद्ध वक्ता श्री विमल मुनि जी म.।

मुनियों में जैनत्व के समुत्थान की इतनी लगन थी कि मार्ग की बाधाओं शारीरिक कष्टों की परवाह नहीं की। पद छोड़ने, आग्रह त्यागने, परस्पर मिलने का जज्बा उन्हें सादड़ी की ओर धकेल रहा था।

वाचस्पति गुरुदेव को सादड़ी जाने से पूर्व एक काम और करना था। उन दिनों पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी म. बाबा जी म. की सेवा में कोल्हापुर रोड दिल्ली में विराजमान थे। उन्हें अपैण्डिसाइटिस की परेशानी काफी अर्से से चल रही थी। उसका आप्रेशन जरूरी हो गया था। कष्ट बढ़ने पर बाबा जी म. की सेवा में रुकावट का खतरा था। अतः वाचस्पति गुरुदेव ने निर्णय कर लिया था कि सादड़ी जाने से पूर्व आप्रेशन करवा देना जरूरी है। दिल्ली आ रहे थे। मार्ग में गन्नौर में श्री अमींलाल जी म. के दर्शन किए और सम्मेलन के लिए मंगल आशीर्वाद लिया। 2 मार्च 1952 को वाचस्पति गुरुदेव का कोल्हापुर रोड दिल्ली में प्रवेश था। प्रवेश पर कांफ्रेंस के पदाधिकारी श्री चुनीलाल कामदार, धीरज भाई तुरखिया, अमरचन्द बरसोटा, जवानमल पूनमिया, हरजसराय आदि भी सम्मिलित हुए। प्रवेश के बाद वे युवाचार्य श्री शुक्लचन्द जी

म. के पास गए। पुनः वाचस्पति गुरुदेव के पास आए और कार्यक्रम के बारे में पूछा। वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया– "मेरा सादड़ी पहुँचने का पूरा भाव है। अभी मुझे अपने शिष्य का आप्रेशन करवाना है। अतः होली तक दिल्ली रुकूंगा, फिर विहार होगा।" इस तरह सम्मेलन के लिए कुल सवा महीने का समय शेष रह जाएगा। चार सौ मील का सफर सिर पर होगा। वार्धक्य तन पर, गर्मी यौवन पर होगी मगर सब आश्वस्त थे कि वाचस्पति गुरुदेव अपने लक्ष्य को तय करने के बाद अधूरा नहीं छोड़ते। इसलिए कांफ्रेंस वाले चले गए। सब्जी मण्डी में ही वाचस्पति गुरुदेव ठाणे 11, पंडित शुक्लचन्द जी म. ठाणे 6, श्री भागमल जी म. ठाणे 3, श्री पन्नालाल जी म., श्री सुशील मुनि जी म. ठाणे 3 का भी मिलन हुआ।

पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी म. के आप्रेशन के बाद डाक्टरों ने हिदायत दी कि 5-6 महीने अधिक वजन नहीं उठाना, तीव्रश्रम से बचना है। अर्थात् विश्राम करना है। श्री बाबा जग्गूमल जी म. की सेवा का समग्र कार्य पूज्य गुरुदेव करते थे। अब किसी अन्य मुनि की आवश्यकता आवश्यक हो गई। वाचस्पति गुरुदेव ने एक ऐसे सेवाव्रती मुनि की नियुक्ति की, जिसके विषय में कल्पना करना भी शक्य नहीं था। उन्होंने फरमाया कि भण्डारी श्री बलवन्त राय जी म. सेवा में रहेंगे। श्री भण्डारी जी म. वाचस्पति गुरुदेव से नाखून-मांस की तरह जुड़े हुए थे। 16-17 साल से सेवा में निरन्तर रहकर उनके वे अविभाज्य अंग बन चुके थे। देह शुश्रूषा का प्रत्येक कार्य श्री भण्डारी जी म. के हवाले होता था। दवाई-पानी, वस्त्र-पात्र, कागज-पन्ने, सिलाई-धुलाई आदि ऐसा कोई कार्य नहीं था जो पूज्य श्री भण्डारी जी के हाथों न होता हो। वाचस्पति गुरुदेव को अपनी आवश्यकताओं का खुद पता नहीं होता था। श्री भण्डारी जी म. उनकी एक-एक मिनट की जरूरतों को देखते थे। वाचस्पति गुरुदेव के साथ रहने वाले छोटे-बड़े संतों की सेवा करते थे। अन्य गण-गच्छ के साधु मिलते तो उनकी सेवा का भी ध्यान रखते थे। भारत भर के संत जहाँ वाचस्पति गुरुदेव को याद करते थे श्री

भण्डारी जी म. को भी साथ साथ याद करते थे। वाचस्पति गुरुदेव ने पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी म. की साता अनुकूलता के लिए श्री भण्डारी जी म. को छोड़ दिया। यह एक विलक्षण कुर्बानी थी। पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी ने बहुत निवेदन किया कि आपका स्वास्थ्य अनुकूल नहीं है, इलाका नया है, गर्मी का मौसम है, लम्बा सफर है, भीड़ भाड़ का आलम रहेगा। आप श्री जी, श्री भण्डारी जी म. को साथ ले जाओ पर उन्होंने तो फैसला कर ही लिया था।

अपनी टोली में श्री मूलचन्द जी म., स्वामी श्री फूलचन्द जी म. एवं श्री रामचन्द्र जी म. को शामिल कर चल दिए। साथियों के लिहाज से अत्यन्त कमजोर टीम के बावजूद अपने दुर्दम्य साहस का दामन पकड़कर सादड़ी की ओर कदम बढ़ाए। कवि श्री अमर मुनि जी म. राह में मिल गए। श्री सुशील मुनि जी म. हमसफर, हमजोली बनकर चलते रहे। श्री सुशील मुनि जी म. की हंसमुख प्रकृति वातावरण को आह्लादमय बनाए रखती थी। जैसा कि वाचस्पति गुरुदेव सहित बहुसंख्यक मुनियों को ब्यावर में प्रवेश करना था। श्री चन्द जी म. ठाणे 2 पहले से ही वहा 'कुन्दन भवन' में ठहरे हुए थे। जब अगवानी के लिए चलने लगे तो सोचा कि मुनियों के लिए कुछ शीतल पेय ले चलूँ। किसी गृहस्थ के घर से शरबत की बोतल मांगी। गृहस्थ के घर बोतल में शरबत थोड़ा ही बचा था, उसी बोतल को लेकर आगे पहुँच गए। बोतल श्री सुशील मुनि जी ने देखी तो बोले– "तपस्वी जी (श्रीचन्द जी म.) रुई की एक फुरैरी भी साथ ले आते। गीली करके सबके गले में लगा देते। मुंह भी मीठा हो जाता और बचत भी पूरी होती।" मौके की टिप्पणी पर जोरदार ठहाका लगा और उसकी गुदगुदी कई दिनों तक कायम रही।

सादड़ी पहुँचते-पहुँचते गर्मी का बहुत बुरा हाल हो चुका था। छोटे से कस्बे में 40-50 हजार की जनता के लिए 11 दिनों तक सुविधापूर्ण प्रबंध करना दुःसाध्य कार्य था। 22 सम्प्रदायों के 341 मुनिराज और 62 साध्वियों की निर्दोष आवास आहारादि की व्यवस्था बनाना भी सरल नहीं था। पर आयोजकों की ध्येय निष्ठा और सेवा भावना के आगे कुछ

भी असंभव नहीं था। सबके मन में एक ही लगन थी कि हमारे पूज्य मुनिराज अपनी-अपनी संप्रदायों को तोड़ें, पदों को छोड़ें, प्रेमसूत्र को जोड़ें तथा एक संघ, एक आचार्य की व्यवस्था बना लें। मुनिवृन्द भी एक सूत्रता के लिए कमर कसे हुए थे लेकिन हजारों वर्षों पुरानी समस्याओं का समाधान होना भी जटिल कार्य था। उन समस्याओं का वर्गीकरण करके पांच शीर्षक दिए जा सकते है। 1. सचित्त और अचित्त वस्तुओं का निर्णय 2. तिथि निर्णय 3. संवत्सरी की एकरूपता 4. प्रतिक्रमण में ध्यान की संख्या 5. आचार्य पद पर सर्वमान्य मुनिराज की नियुक्ति। इन प्रश्नों पर सर्वसम्मति होने की संभावना नहीं थी। कारण? कहीं अभिमान तो कहीं अज्ञान तो कहीं अपने-अपने हित। सचित्त अचित्त की समस्या में प्राचीन उलझनें केले, अंगूर और इलायची को लेकर थी तो नवीन उलझन ध्वनियंत्र संचालन में प्रयुक्त बिजली या बैटरी को लेकर उलझ गई थी। आचार्य पद की समस्या भी छोटी नहीं थी। क्या सभी आचार्य अपना पद छोड़कर एक संत को अपना आचार्य मान लेंगे? क्या अपने शिष्यों सहित अपने को भी उस नूतन आचार्य का शिष्य समझ लेंगे? जिन संघों में सदियों से टकराव चलता आया है, उनसे अपनापन जोड़ पायेंगे? इत्यादि चुनौतियों का सामना करने के लिए 27 अप्रैल 1952 दोपहर तीन बजे लौकाशाह जैन गुरुकुल के सेन्ट्रल हाल में 53 प्रतिनिधि मुनिराज गोलाकार रूप मे बैठ गए। सर्वप्रथम सभा के सम्यग् संचालन के लिए सभापति (शांतिरक्षक—Speaker) की नियुक्ति का सवाल था। सभापति वह हो जो धीरता-वीरता गंभीरता से 11 दिनों के लिए वक्ताओं को नियंत्रित व अनुशासित रख सके। सबने एक स्वर से यह दायित्व व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. को सौंपा। यद्यपि सम्मानार्थ पूज्य श्री गणेशीलाल जी म. को भी यह गौरव दिया परन्तु कार्य वाचस्पति गुरुदेव जी म. को ही करना था।

हिन्दी की रिपोर्ट लिखने का भार श्री आईदान जी म. पर था तथा गुजराती में लिखने का श्री चंपक मुनि जी म. पर। यद्यपि गुजरात

सम्प्रदायों में से केवल बरवाला सम्प्रदाय के दो ही मुनि सम्मेलन में हाजिर हुए थे।

सभा के सम्यक् संचालन के लिए वाचस्पति गुरुदेव ने व्यवस्था दी कि प्रतिनिधि मुनियों के अलावा अन्य मुनि बैठक में बैठकर कार्यवाही देख और सुन सकेंगे पर बोलेंगे नहीं। श्रावकों में कांफ्रेंस के प्रधान श्री कुन्दन मल फिरौदिया तथा मंत्री धीरज भाई तुरखिया बैठ सकेंगे तथा पालनपुर की श्राविका केसरबाई।

प्रस्तावों को सर्वसम्मति या तीन चौथाई बहुमत से पास होने पर ही मान्य किया जाएगा।

बैठकों का एजेण्डा तैयार करने के लिए 15 मेम्बरी कमेटी बना दी। जिसमें पूज्य श्री आनन्द ऋषि जी म., कवि जी म., श्री हस्तीमल जी म. के साथ वाचस्पति गुरुदेव को भी शामिल किया गया। उन पर चौतरफा जिम्मेदारियों का बोझ आ गया। मीटिंगों का एजैण्डा तैयार करवाना, वक्ताओं को समय देना, कब टोकना, कैसे बढ़ते विवाद, शोर को थामना, पंजाब के प्रतिनिधि की हैसियत से अपने विचार भी प्रस्तुत करना आदि।

वाचस्पति गुरुदेव ने प्रारंभ में ही स्पष्ट कर दिया कि अब तक हम कितने ही परस्पर विरूद्ध सोचते, बोलते, दिखते रहे हों पर आगे से हमें अपनी आकृति-प्रकृति-भाषा और हृदय समान रखने हैं। अगले दिन 28 अप्रैल को सर्वसम्मति से ये निर्णय ले लिया कि सभी मुनिराज (प्रतिनिधि) अपनी-अपनी सम्प्रदायों का तथा पदवियों का त्याग करते हैं और एक संघ बनाकर एक आचार्य बनाएंगे। उस निर्णय ने मुनियों के गौरव को शिखरारुढ़ कर दिया।

29 तारीख को प्रातः काल की बैठक में संघ का नाम 'श्री वर्धमान स्थानकवासी श्रमण संघ' स्वीकृत हुआ। आचार्य की सहायता के लिए मंत्रीमण्डल की स्थापना का प्रस्ताव भी पारित हुआ। मंत्रीमण्डल का कार्यकाल तीन वर्ष का रखा गया।

भारतीय प्रशासन से कुछ समानताएं ली गई। कुछ प्रान्तीय पद्धतियाँ

रखी गई। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जैसे रजवाड़ों-रियासतों का विलय हुआ, ऐसे ही सम्प्रदायों के विलय पर विचार हुआ। प्रधानमंत्री की सहायता के लिए मंत्रीमण्डल बना, ऐसे ही आचार्य की सहायता के लिए मंत्रीमण्डल का प्रस्ताव आया। मंत्रीमण्डल का कार्यकाल यहाँ पांच वर्ष का न मानकर तीन वर्ष का रखा गया। प्रधानमंत्री 5 वर्ष के लिए होता है, पर आचार्य जीवन पर्यन्त रहेंगे, यह निर्णय लिया गया।

30 तारीख को संवत्सरी का मुद्दा गर्माया। बहुमत था कि हर हाल में 50वें दिन संवत्सरी हो पर संघ की एकता बनी रहे इस भावना से एक दो संघ को मान, सम्मान देते हुए तय हुआ कि लोंद के महीने में 80वें दिन संवत्सरी मना ली जाएगी। पक्खी की चर्चा चली तो गर्मा-गर्मी हो गई। फैसला होता नजर नहीं आया तो गुरुदेव ने सभा को शान्त किया और फैसला लिया कि इसके समाधान हेतु आठ साधुओं की कमेटी बना देते हैं जो एक साल के अन्दर ठोस कार्य करेगी और अपनी रिपोर्ट आचार्य को पेश कर देगी।

प्रतिक्रमण के संदर्भ में निर्णय दो मई को हुआ। पक्खी, चौमासी, संवत्सरी पर प्रतिदिन की तरह एक ही प्रतिक्रमण होना चाहिए और पाँचवे आवश्यक, ध्यान के समय देवसी रायसी के चार, पक्खी के आठ, चौमासी के बारह तथा संवत्सरी के बीस लोगस्स होंगे।

एक विषय चर्चित हुआ दीक्षार्थी के संदर्भ में। वाचस्पति गुरुदेव ने राय दी कि सभी शिष्य आचार्य के नाम के हों। अन्य किसी साधु को अपना शिष्य बनाने का प्रावधान न हो। इस मन्तव्य पर अधिकतर संत सहमत नहीं हुए। अपने को, अपने वर्तमान शिष्यों को, भावी दीक्षार्थियों को आचार्य को सुपुर्द करने को कोई तैयार नहीं हुआ। अतएव ये प्रस्ताव बनाना पड़ा कि आचार्य या दीक्षा-मंत्री की आज्ञा से किसी भी सुयोग्य साधु को गुरु बनने का अधिकार है। हाँ, अगले सम्मेलन पर इस विषय पर पुनर्विचार का आश्वासन सबने दिया।

असली विषय का निर्णय करने का समय आ रहा था वह था निर्मित होने वाले श्रमण संघ का आचार्य नियुक्त करना। सामान्य

जनता की रूचि इस विषय में बहुत ज्यादा थी। वे केवल परिणाम पर नजर टिकाए हुए थे। मुनियों को विचारना था कि संघ के रथ को जो पूरी ताकत के साथ आगे खींच सके ऐसे महान् व्यक्तित्व को प्रस्तुत किया जाय। वाचस्पति गुरुदेव तथा पंजाब के सभी संतों ने आचार्य श्री आत्माराम जी म. का नाम प्रस्तुत किया। उन्होंने अपने आगम लेखन से जिन शासन की महान् सेवाएं की हैं इसलिए यह अधिकार उन्हें दिया जाय। श्री सौभाग्यमल जी म. इस मसले पर पंजाब के साथ थे। परन्तु आचार्य श्री हस्तीमल जी म. सहित राजस्थान के अधिकतर प्रतिनिधियों का विचार था कि पूज्य श्री आत्माराम जी म. आंखों की विवशता के कारण विहारादि करने में समर्थ नहीं है तथा नए बने संघ का नेतृत्व गतिशील एवं कर्मठ संत को सौंपना जरूरी है। अतः 'आचार्य' पद श्री गणेशीलाल जी म. को दिया जाय। दोनों पक्षों की दलीलें सही थी। पुनः विचार आया कि श्री आत्माराम जी म. को 'सम्माननीय आचार्य' बना दें तथा श्री गणेशीलाल जी म. को 'अधिकृत आचार्य'। जैसे कि भारतीय संविधान में राष्ट्रपति का पद सम्मान के लिए है, प्रधानमंत्री का पद अधिकार के लिए है। ऐसे ही दो आचार्य बना लिए जाएं। परन्तु 'दो आचार्य' शब्द ने दुविधा खड़ी कर दी। समाज दो आचार्य प्रणाली को समझ नहीं पाएगी। इसलिए फैसला लिया कि श्री आत्माराम जी म. को आचार्य का संबोधन दिया जाय और श्री गणेशीलाल जी म. को 'उपाचार्य' कहा जाय।[1]

पूज्य श्री आत्माराम जी म. स्वयं सादड़ी में उपस्थित नहीं थे। उनकी ओर से प्रतिनिधि वाचस्पति गुरुदेव थे। अतः उनके संबंध में जो भी निर्णय लेना था वह वाचस्पति गुरुदेव एवं सहवर्ती प्रतिनिधियों को लेना था।

---

1 यदि उस समय सम्माननीय पदधारी महापुरुष के लिए संघाधिपति, गणाधिपति आदि शब्द का व्यवहार किया जाता तो भ्रांति के लिए अवकाश नहीं रहता। जैसे कि भारतीय संविधान निर्माताओं ने राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री पदों का प्रयोग किया। उपाचार्य से ध्वनि निकलती है आचार्य से छोटा। जैसे राष्ट्रपति से छोटा उपराष्ट्रपति और प्रधानमंत्री से छोटा उपप्रधानमंत्री। सन् 1952 में उपाचार्य का अर्थ छोटा आचार्य नहीं था।

मगर पूज्य श्री गणेशीलाल जी म. तो सम्मेलन पर मौजूद थे। पद लेने या न लेने का फैसला वे खुद ही करने वाले थे। वे संघ का नूतन भार लेने से इंकार कर गए। श्री कवि जी म., मरुधर केसरी श्री मिश्रीमल जी म. ने बहुत प्रार्थना की पर वे टस से मस नहीं हुए। एक दो दिन का समय लेकर मामले को टालने लगे। चिन्ता और संकट की बात थी। अगर सुयोग्य आचार्य आगे नहीं आएगा तो संघ कैसे चलेगा? अंततः बड़े-बड़े संत एकत्रित हुए। आधी रात के बाद, रात्रि-प्रतिक्रमण से पूर्व उनके कक्ष में पहुँचे और विनती, दबाव, आग्रह, दुहाई हर प्रकार से उन्हें घेर लिया और उनको हाँ करनी पड़ी। 5 मई को प्रातःकालीन बैठक में निर्णय लिया कि श्रमण संघ के सत्ताधिकार सम्पन्न उपाचार्य (आचार्य) श्री गणेशीलाल जी म. होंगे। उनको चादर 7 तारीख को अर्पित की जाएगी और आचार्य श्री आत्माराम जी म. की चादर पंजाब के प्रतिनिधि मुनिराज ले जाएंगे और यथासमय अर्पण करेंगे।[1]

चादर समारोह से पूर्व सभी साधु-साध्वी आचार्य जी को हस्ताक्षर सहित प्रतिज्ञा पत्र अर्पण करेंगे कि मैं आचार्य श्री जी की आज्ञा में रहकर समाचारी का पालन करूंगा। 5 तारीख को ही 16 मंत्रियों का चयन किया गया जो आचार्य (उपाचार्य) की सहायता करेंगे। ये सब व्यवस्थाएं चूँकि केन्द्रीय स्तर पर निर्धारित की गई थी। प्रान्तीयता का कोई अवकाश इसमें नहीं रखा गया था। इसलिए सर्वत्र संतुष्टि का वातावरण बनता गया।

वैशाख शुक्ला त्रयोदशी संवत् 2009 (7 मई 1952) प्रातः 11 बजे सभी सम्प्रदायों के आचार्यों, उपाध्यायों एवं प्रवर्तकों ने अपने-अपने त्यागपत्र दिए और नए संघ में विलय की घोषणा की। सभी प्रतिनिधि मुनिराजों ने मिलकर श्री गणेशी लाल जी म. को 35-40 हजार जनता के बीच आचार्य पद की चादर अर्पित की। पूज्य श्री गणेशीलाल जी म. सहित सभी ख्यातनामा मुनियों ने संक्षिप्त उद्बोधन दिए। वाचस्पति

---

1 पूज्य श्री शुक्लचन्द जी म. उस चादर को पंजाब में लाए थे और आचार्य श्री जी को अर्पित की थी।

गुरुदेव के उद्बोधन का सारांश था– "संवत् 1988 में आचार्य श्री जवाहरलाल जी म. साहब पंजाब पधारे थे। मैं ज्येष्ठ मास की भीषण गर्मी में उनकी सेवा में श्रमण संघ के गठन की भावना लेकर उपस्थित हुआ था। संवत् 1990 में आचार्य श्री सोहनलाल जी म. के कहने से अजमेर में साधु सम्मेलन हुआ था, पर सफलता नहीं मिल पाई। तत्पश्चात् श्री रामचन्द्र जी म., पूज्य श्री कांशीराम जी म., पूज्य दिवाकर जी म. ने इसे क्रियान्वित करने का प्रयत्न किया। आज वह शुभ दिन आया है कि हम श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रमण संघ के रूप में सूत्रबद्ध हुए हैं। हमने दस दिन में वो काम किया है जो सैकड़ों हजारों वर्षों में नहीं हुआ था। हमने जो भी किया सर्वसम्मति से और हृदयपूर्वक किया है। एक आचार्य, एक श्रमण संघ व एक समाचारी का हम सर्वस्व अर्पण करके पालन करेंगे। हमने आचार्य श्री आत्माराम जी, उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म. जैसे सेना नायक पाए हैं, हम सैनिक की तरह इनकी आज्ञा को शिरोधार्य करेंगे।"

कांफ्रेंस के प्रमुख श्री कुन्दनलाल फिरौदिया बम्बई विधान सभा के स्पीकर रह चुके थे। वहाँ की कार्यवाही का उन्हें व्यक्तिगत अनुभव था। जब उन्होंने 11 दिनों तक वाचस्पति गुरुदेव का सभा संचालन देखा तो दंग रह गए थे। बार-बार उनके कौशल का बखान करते रहते थे।

सम्मेलन समिति ने एक पुस्तिका छपवाई, उसमें छः मुनियों को सम्मेलन की सफलता का श्रेय दिया गया था। उन छः नामों में पहला नाम व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव का था। नाम क्रमशः यों दिए गए थे– शांतिरक्षक श्री मदनलाल जी म., पूज्य श्री गणेशीलाल जी म., उपा. कवि अमर मुनि जी म., श्री मिश्रीमल जी म. पंडित श्री सौभाग्य मल जी म. तथा मरुधर केसरी श्री मिश्रीमल जी म.।

पूज्य श्री गणेशीलाल जी म. से वाचस्पति गुरुदेव का परिचय तो अजमेर सम्मेलन पर ही हो गया था, पर अब प्रगाढ़ता बन गई।

कांफ्रेंस के सभी पदाधिकारी वाचस्पति गुरुदेव से बेहद प्रभावित थे। सभी मुख्य मुनिराज यह मानते थे कि वाचस्पति जी में संघैक्य की

प्रबल भावना है। वाचस्पति गुरुदेव चाहते थे कि सभी निर्णायक मुनिराज सादड़ी में एकत्र हैं अतः मुख्य-मुख्य विषय अभी निर्णीत कर लिए जाएं। आगामी सम्मेलन के लिए टालना उन्हें अच्छा नहीं लग रहा था। जैसे कि 'एक आचार्य एक शिष्य परम्परा' को वे मूर्त रूप देना चाहते थे, पर यह बात सिरे नहीं चढ़ सकी। दो आचार्यों का होना भी उन्हें नहीं जंचा पर विश्वास के भव्य वातावरण में अनिष्ट की आशंकाएं दब गई।

फिर भी कुल मिलाकर सम्मेलन सफल काफी सफल रहा और वाचस्पति गुरुदेव समग्र परिणाम से संतुष्ट थे।

सम्मेलन के बाद भी वाचस्पति गुरुदेव कवि जी म. के साथ कुछ दिन रुके क्योंकि कवि जी म. के दो संत अस्वस्थता के कारण सादड़ी से पीछे ही रह गए थे। उनकी प्रतीक्षा करनी थी। पूज्य श्री आनन्द ऋषि जी म. भी दो संतों के आने तक रूके रहे। उनके आने के बाद विहार किया। परन्तु कवि जी म. व वाचस्पति गुरुदेव वहाँ कुछ दिन और रूके। वहाँ से सभी संत राणकपुर मंदिर देखने गए।

भारत में यह आम धारणा लोगों में बनी कि व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. कुर्बानी करने में आगे और पद लेने में पीछे रहते हैं। ये अनुशासन व प्रेम तथा नवीनता और प्राचीनता के सेतु हैं।

पंजाब का बच्चा-बच्चा इस बात का शुक्रगुजार था कि वाचस्पति गुरुदेव के बलबूते पर ही पंजाब को आचार्य पद नसीब हुआ है। उन सब स्तुतिगानों से असंपृक्त वाचस्पति गुरुदेव अपने कार्यों की संरचना में संलग्न थे।

सम्मेलन के बाद गर्मी की तीव्रता एकदम बढ़ गई। पंजाब तक वापिस आने का न समय शेष था, न ही स्वास्थ्य ठीक। अग्रिम चातुर्मास की योजना बनानी थी। कवि जी म. आगे बढ़कर बोले, इस बार संयुक्त चातुर्मास करना है। 13 वर्ष पहले रायकोट में इकट्ठा चौमासा था। उसके बाद केवल सह विचरण हुआ है, सह चातुर्मास नहीं। वाचस्पति गुरुदेव तैयार हो गए। कवि जी म., श्री विनय मुनि जी म., सरोज मुनि जी म. ये तीन मिलने से ठाणे 7 की टोली बन गई। निर्णय हुआ

कि गुजरात के समृद्ध शहर पालनपुर में चातुर्मास करेंगे। श्वेताम्बर मूर्तिपूजक विद्वान् संत श्री पुण्य विजय जी का भी आग्रह था कि श्री वाचस्पति जी और कवि जी की जोड़ी पालनपुर में चातुर्मास करे। यद्यपि सादड़ी सम्मेलन में गुजराती साधु-साध्वी नगण्य संख्या में ही आए थे परन्तु समाजें बहुल संख्या में आई थी। पालनपुर की प्रसिद्ध श्राविका केसर बाई को बैठकों में शरीक होने का गौरव मिला था। वह भी चातुर्मास के लिए उत्सुक थी।

मेवाड़ से गुजरात का जो रूट लिया था उस सारे इलाके को गोड़वाड़ कहते हैं। जहाँ श्वेताम्बर मूर्तिपूजक परिवार हजारों-हजारों की तादाद में है। वाचस्पति गुरुदेव लाटारा-लुणावा होकर बीजापुर पधारे। जंगल के मध्य में 'राता महावीर जी' मंदिर था। जो दसवीं सदी का निर्मित माना जाता है। उसको देखने का मन था इसलिए सुनसान बियावान में ही रात कटी। पर्वतों वनों को लांघकर सिरोही स्टेट में पहुँचे। जैन धर्मशाला में रूके। मूर्तिपूजक साधुओं का विशाल समूह वहाँ रहता था पर घोर उपेक्षा का शिकार था। खरैड़ी गांव में मूर्तिपूजक श्वेताम्बर मुनियों ने बड़ी आत्मीयता दिखाई। उस शाम पहाड़ी की तलहटी का आनन्द लिया। वहाँ से चार मील सीधी चढ़ाई की। नक्की झील के बगल से होते हुए दिलवाड़ा (माउण्ट आबू) पहुँचे और वहाँ तीन दिन लगाए। वहाँ से अचलगढ़ के मंदिर भी देखने गए। आबू रोड होकर गुजरात में प्रवेश करना था। बार्डर का इलाका था। एक शाम यह सोचकर विहार कर दिया कि चार मील तक कोई पड़ाव मिल जाएगा परन्तु चार-चार मील तक कोई पड़ाव नहीं मिला। पानी चुकाया। भीषण जंगल। रात होने लगी। कहीं ठहरने का निश्चय किया। नीम के पेड़ के नीचे जगह साफ कर आसन लगा लिए। सूर्यास्त होते ही कुछ आदमी उधर से गुजरे। कहने लगे– "यहाँ कहाँ ठहर गए? यहाँ तो रात को नाहर (शेर) आता है।" वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया–अगला पड़ाव तो चार मील आगे है। रात को हमें सफर नहीं करना, हम तो यहीं ठहरेंगे। लोग अपने रास्ते चले गए।

संतों ने एक निरवद्य उपाय किया। अपने सोने के स्थान के चारों ओर सूखी लकड़ियां, टूटी टहनियां जो वहाँ पड़ी थी, डाल ली। यों समझो कि बाड़ सी, आड़ सी बना दी। दैवसिक प्रतिक्रमण स्वाध्यायादि के बाद वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया कि सब निश्चिन्त होकर सो जाओ मैं जागूंगा। भगत शिवचन्द जी जो कई सालों से वाचस्पति गुरुदेव के साथ-साथ रहता था, उसने जागने की भावना जताई तो वाचस्पति गुरुदेव ने इंकार कर दिया। वाचस्पति गुरुदेव जागते रहे, स्वाध्याय का आनन्द लेते रहे। एक कुत्ता पिछले गांव से साथ आ गया था वह आधी रात को एकदम घबरा गया और संतों के बीच आकर दुबक गया। वाचस्पति गुरुदेव भी चौकस हो गए। तभी शेर आ गया। उस आड़ या बाड़ के चारों ओर घूमने लगा, वाचस्पति गुरुदेव देखते रहे। संतों को जगाया नहीं, मौका भी नहीं था। शेर को कुत्ते की गंध आ रही थी पर वह उस सीमा के अन्दर तक नहीं आया। कुछ देर चक्कर लगाकर चला गया। प्रातः वाचस्पति गुरुदेव ने संतों को बताया कि शेर आया था। उत्सुक संतों ने कहा— हमें भी जगा देते। वाचस्पति गुरुदेव ने कहा— जगाने का मौका नहीं था, किसी भी तरह की आहट या हलचल से अनर्थ हो सकता था। सूर्योदय के बाद शेर के पदचिन्हों को देखकर संतों ने शेर देखने का शौक पूरा किया।

पालनपुर चातुर्मास में वाचस्पति गुरुदेव एवं श्री कवि जी म. दोनों ने गुजराती संस्कृति भाषा-भूषा-भोजन-भावनाओं का विशेष अध्ययन किया। विचार बन रहा था कि गुजरात का व्यापक भ्रमण कर लें और यहाँ के जनमानस में उत्तर भारत की नव्य भव्य छवि अंकित करें। साथ ही साथ नव निर्मित श्रमण संघ के प्रति रूचि पैदा करें। श्री पुण्य विजय जी म. का पुरजोर आग्रह था कि अहमदाबाद आकर शास्त्र भण्डार का अवलोकन करें। उनकी भावनाओं को सम्मान देने का प्रश्न भी था। लेकिन श्रमण संघ के आचार्य श्री गणेशीलाल जी म. की पुकार पर उन्हें वापस मुड़ना पड़ा। आचार्य श्री गणेशीलाल जी म. ने संघ भार लेने के तुरन्त बाद ये महसूस करना शुरू कर दिया कि पुरानी समस्याएँ

तो ज्यों की त्यों बरकरार हैं, नई समस्याएं और सिर उठाने लगी हैं, उनके समाधान के लिए उन्होंने चातुर्मास के डेढ़ महीने बाद पौष सुदी नवमी के दिन मंत्रीमण्डल की मीटिंग की घोषणा कर दी। पालनपुर में विराजमान वाचस्पति गुरुदेव एवं कवि जी म. को मंत्री न होते हुए भी 'विशेष आमंत्रण' के तौर पर आने को कहा। इन्होंने खबर दी कि डेढ़ माह के स्वल्प समय में सोजत पहुँचना संभव नहीं है अतः हम नहीं आ सकते। दूसरे, हमें पाटन तथा अहमदाबाद भी जाना है। आचार्य श्री गणेशीलाल जी म. इनकी अनुपस्थिति को नहीं झेल सकते थे। इसलिए मंत्रीमण्डल की तारीख आगे बढ़ाकर माघसुदी दूज की कर दी। कांफ्रेंस का डेपुटेशन भी विनती लेकर 31 अक्टूबर को पालनपुर पहुंच गया और सोजत आने का फैसला करना ही पड़ा।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि

सोजत में मंत्रीमंडल का सम्मेलन होना था, जिसमें सचित्ताचित्त निर्णायक समिति के 9 सदस्य, तिथि निर्णायक समिति के 8 सदस्य और मंत्रीमंडल के 16 सदस्य तो पदेन आमंत्रित थे। श्री कवि जी म. अपने गुरुदेव के स्थानापन्न थे। वाचस्पति गुरुदेव को निमंत्रण इसलिए दिया था क्योंकि संघ और संयम के प्रति उनकी प्रतिबद्धता अतिगहन थी। तीसरे आमंत्रित थे बहुश्रुत श्री समर्थमल जी म., जिन्होंने सादड़ी में आने से इंकार कर दिया था तथा जो श्रमण संघ में शामिल भी नहीं हुए थे। सोजत में उनसे भी सीधी बातचीत हो जाएगी इस आशा से उन्हें भी बुलाया था। संघ के कार्य को अधिमान देते हुए वाचस्पति गुरुदेव पालनपुर से सोजत के लिए चले। मार्ग लिया डीसा धनेरा का।

कवि जी म. का स्वास्थ्य ठीक न होने के कारण विहार चार दिन विलम्ब से हुआ। सारा रास्ता रेतीला, कंटीला और कच्चा था। तपागच्छीय परिवारों की बहुलता थी। कहीं-कहीं लोकागच्छीय भी थे। उस इलाके में भी सादड़ी सम्मेलन की खुशबू पहुँच चुकी थी। रात डीसा से दो मील आगे नदी तट पर बने नागा बाबाओं के शिव मंदिर में बिताई, प्राकृतिक सौन्दर्य की छटा गजब की थी। वहाँ से चार मील दूर बालीवाड़ा में गए। स्थानकवासियों के 5-6 घर थे। संत गोचरी के लिए किसानों के घरों में भी जाना चाहते थे पर जैनों ने जाने नहीं दिया। क्योंकि इससे जैनों का अपमान होगा। इस इलाके में स्थानकवासी साधु आते ही नहीं थे। लोगों को नवकार मंत्र भी अच्छी तरह से याद नहीं था। सब जनता अशिक्षित थी और मजा ये कि वाचस्पति गुरुदेव ने ऐसे ही एक गांव 'नागफना' में महावीर-दीक्षा-कल्याणक मनाया। पहले सब मुनियों ने मधुर समवेत स्वर से 'महावीराष्टक' पढ़ा

फिर ग्रामीण लोगों को भगवान महावीर का जीवन सुनाया। शहरों से भी ज्यादा मजा आया। रेती और कांटों का परीषह झेलते-झेलते धनेरा पहुँचे तो सब संत थककर चूर हो चुके थे। राहगीरों के कदम फिर राहों पर पड़े। चार मील चले नैना गांव आया। गुजरात छूटा और राजस्थान की सीमा में प्रवेश हुआ। 35 मील का रास्ता क्या था बस तौबा-तौबा। सांचौर पहुँचे, वहाँ सौ, सवा सौ घर थे। साधु-साध्वियों के दर्शनों के लिए सालों तक तरस जाते थे। कुल चार दिन रुककर उनकी भावनाओं को सम्मान दिया। आगे 25 मील 'जाब' तक का रास्ता रेत और कांटों के कारण अति दुर्गम था। दोनों महापुरुषों के पैर लड़खड़ाने लगे। दोनों को बुखार था पर सोजत की पुकार खींचे जा रही थी। जाब में 50 जैन घर थे पर अशिक्षा के कारण जैनत्व क्षीणता की ओर अग्रसर था। पूरे इलाके में जैनों की पर्याप्त संख्या थी। कहीं-कहीं तो सात सौ घरों की संख्या थी। परन्तु वे अपने आगे 'जैन' की बजाय 'महाजन' लगाते थे। जाब से दिन निकलते ही चल दिए। पर ठण्डी रेत ने दम निकाल दिया। फिर भी बाली मोरसम होते हुए बागौड़ा पधारे। वहाँ जालौर के सेठ, पंडित पूर्णचन्द हक के साथ उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म. का संदेश लेकर आए हुए थे। उनके धूलि धूसर शरीर को देखकर पता चला कि यह भी संतों की तरह धूल फाँकते हुए आए हैं। उन्होंने बताया कि कुछ मंत्रीमंडलीय मुनिराजों की टोली सोजत से काफी दूर है। उपाचार्य और प्रधानमंत्री श्री आनन्द ऋषि जी म. का मन है कि कुछ मुनिराज समय पर नहीं भी पहुँचें तो भी वे अपना काम प्रारंभ कर देंगे। हाँ, सेठ पुखराज जी यह देखकर हैरान हुए कि वाचस्पति जी कवि जी युगल, पदाधिकारी न होते हुए भी सोजत की ओर निरन्तर गतिमान हैं। खुराणा पूणा गांवों के मध्य की दूरी विकट नहीं, अति विकट थी। मनोबल न होता तो तन जवाब दे जाता। सभी मुनियों का साहस गजब का था पर वार्धक्य को देखते हुए गुरुदेव का साहस अधिक माना गया। उन्होंने मुम्बई श्री संघ की पुरजोर विनती ठुकराई। पं बेचरदास जी, जय भिक्खू जी का अहमदाबाद आने का आग्रह दरकिनार किया।

'जैन' के संपादक रतिभाई की भावना, श्री पुण्यविजय जी का पाटन भण्डारों को देखने का अनुरोध उपेक्षित किया ताकि स्थानकवासी समाज की गुत्थियां सुलझ सके। यायावरों का पड़ाव सोरऊ गांव में हुआ। स्थानकवासी घर 4-5, मूर्तिपूजक चालीस। मूर्तिपूजक तीन थुई, चार थुई के संघर्ष के कारण विभाजित थे पर स्थानकवासियों के प्रति दोनों ही भक्तिमय थे। श्री माणिक विजय और लक्ष्मी विजय दो मंदिर वाले सिघाड़ों से मिलन हुआ।

एक टोली अगले रोज दूर तक छोड़ने आई। 6 दिसम्बर को जालौर पहुँचे। 160 मील का रास्ता पार हो चुका था। रास्ते के खट्टे अनुभव भुलाए, मधुर अनुभव स्मृति में बसाए वाचस्पति गुरुदेव कुछ राहत सी महसूस करने लगे। जालौर में इतिहासविद् श्री कल्याण विजय जी म. से मधुर मिलन हुआ। निशीथ भाष्य के उनके पास कुछ नोट्स थे, वे लिखे। और वहाँ का शास्त्र भण्डार देखा। फिर चले मोकलसर, सिवाणा-लूणी नदी पार की। जोधपुर आ गया। वहाँ सादड़ी का सकारात्मक परिणाम ये दिखाई दिया कि सम्मेलन से पूर्व वहाँ अलग-अलग सम्प्रदायों के 27 धर्म स्थान थे पर अब वे एक ही खाते में आ गए थे।

सिंहपोल में श्री प्यार चन्द जी म. ठाणे 36 से मिलन हुआ। सरदारपुरा में श्री सुजानमल जी म. ठाणे 3, श्री ताराचन्द जी म. ठाणे 5 से मिले। सुविशाल क्षेत्र होते हुए भी कुल 15-20 दिन लगे। अग्रिम चातुर्मास की विनतियों का दबाव बढ़ गया। पर अभी उस विषय में सोचने का मौका ही नहीं था। आगे चले तो पाली आकर थकान मिटाई। वहीं शार्दूल सिंह जी म. ठाणे 26 मिले और अब निकट था सोजत। प्रवेश के समय दो सौ साधु और इतनी ही साध्वियां विराजमान थीं। गौतम गुरुकुल में अधिकतर व्यवस्था की गई थी।

17 जनवरी 1953 के प्रवेशोत्सव पर उपस्थित कुछ मुख्य मुनियों के नामः-

उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म., प्रधानमंत्री श्री आनन्द ऋषि जी म., सहमंत्री श्री हस्तीमल जी म., श्री प्यारचन्द जी म., व्याख्यान वाचस्पति

श्री मदनलाल जी म., कवि श्री अमर मुनि जी म., श्री पुष्कर मुनि जी म., श्री शुक्लचन्द जी म., श्री शेषमल जी म., श्री कस्तूरचन्द जी म., श्री पूर्णमल जी म., श्री मिश्रीमल जी म., पं. श्री समर्थमल जी म., श्री जीतमल जी म., श्री मांगीलाल जी म., मरुधर केसरी श्री मिश्रीमल जी म., प्रचार मंत्री श्री प्रेमचन्द जी म. आदि-आदि। श्री सौभाग्यमल जी म. अभी गन्तव्य से दूर थे।

सोजत में वाचस्पति गुरुदेव को वही दायित्व दिया गया जो सादड़ी में दिया गया था। अर्थात् शांतिरक्षकता Speaker-Ship. उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म. ने अपने प्रथम उद्‌बोधन में एक बात स्पष्ट कर दी कि "मैं अस्वस्थ हूँ। मुझे अपने कार्य में किसी सुयोग्य सहायक की आवश्यकता है। वाचस्पति गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. एक अनुभवी व्यक्ति हैं। अतः ये मेरे 'सहायक कार्य संचालक' रहेंगे। सम्मेलन 14 दिन चला। प्रातः 9 बजे से 10.30 बजे, मध्याह्न 1 बजे से 3 बजे तक आचार्य श्री जी की अध्यक्षता तथा वाचस्पति गुरुदेव के शांतिरक्षकत्व में मंत्रीमण्डल, दोनों समितियां और विशेषामंत्रित मुनिराज चर्चा करते रहे, पर ठोस परिणाम कुछ नहीं निकला। वाचस्पति गुरुदेव को कोफ्त भी महसूस होने लगी। 9 माह पुरानी पदत्याग की भावनाएं अब प्रकारान्तर से पदलिप्सा में बदलने लगी थी। उनकी पूर्ति के लिए नए-नए ढंग ईजाद किए गए। केंद्रीय मंत्रियों के साथ-साथ प्रान्तीय मंत्री या मंत्रियों का गठन भी कर दिया। वाचस्पति गुरुदेव ने अपना दर्द एक वाक्य में प्रकट किया– "सोजत में हम एक कदम पीछे हटे हैं।" श्री कवि जी म. ने इस वक्तव्य को यों मोड़ दिया– 'कभी युद्ध के मैदान में सेना को पीछे भी हटना पड़ता है ताकि आगे तेजी से हमला किया जा सके।' वाचस्पति गुरुदेव ने जो कहना था कह दिया अब कोई उसको कैसे भी ढाले या बदले। दूसरी नकारात्मक स्थिति ये रही कि बहुश्रुत श्री समर्थमल जी म. की हर बात को वहाँ काटा गया और उस काम में अग्रणी रहे श्री कवि जी म.। चूंकि श्री समर्थमल जी म. श्रमणसंघ में शामिल नहीं हुए थे इसलिए अधिकतर मुनिराजों का समर्थन कवि जी म. के

साथ रहता। भले ही कटुता कभी नहीं बनी मगर जिस लक्ष्य से मुनियों को एकत्रित किया था वह तो पूरा ही नहीं हुआ। शास्त्रीय मुद्दे ज्यों के त्यों लटके रह गए।

कांफ्रेंस का अधिकारी वर्ग सम्मेलन से पूर्णतः संतुष्ट था। उन्होंने जो-जो अधिकृत वक्तव्य जारी किया उसमें सम्मेलन को सफल बताया। 81 वर्षीय श्री पूर्णमल जी म. की कठोर चर्या का उल्लेख हुआ कि वे मुंहपत्ती लगाने वाले भाईयों से ही बोलते हैं, अन्य से नहीं। वाचस्पति गुरुदेव के लिए लिखा कि "ये श्री कवि जी म. के सखा और प्रेरक हैं, कवि जी अर्जुन हैं तो वाचस्पति गुरुदेव कृष्ण हैं। पूर्व सम्मेलन में भी ये शांतिरक्षक रहे हैं और अब भी। ये सम्प्रदायवाद और मतवाद के झगड़ों से ऊँचे उठे हुए हैं। उनका व्यक्तित्व ऐसा है कि जिस पर हर कोई अपनी श्रद्धा और विश्वास रखता है।"

सोजत सम्मेलन में 33 विषय चर्चित हुए। 25 प्रस्ताव प्रकाशनीय माने गए। उन 25 में से तीन प्रस्तावों के जरिए वाचस्पति गुरुदेव जी म. का धन्यवाद किया गया था। 1. व्याख्यान वाचस्पति जी म. ने उपाचार्य जी म. के सहायक के रूप में काम करके बैठकों को सफल बनाया। 2. गुजरात का कार्यक्रम रद्द करके सोजत पधारने की कृपा की। 3. उनकी व्यवस्था का ही सुमधुर परिणाम था कि बैठकों में दर्शक साधु-साध्वी उपस्थित भी रहे और मौन भी रखा।

30 जनवरी को सम्मेलन की पूर्ति हर्षोल्लास के साथ हुई। मगर जो प्रश्न सादड़ी में लटक गए थे वे अभी भी उत्तर की बाट जोह रहे थे। चर्चा चलाई गई कि क्या ही अच्छा हो कि जिन शासन के 6 महारथी मुनिराज एक ही जगह पर संयुक्त चातुर्मास करें तथा सभी विवादों का समाधान ढूंढें। आचार्य श्री गणेशीलाल जी म. इस विचार से सहमत थे तथा ये चाहते थे कि सर्वप्रथम विषयों से संबद्ध शास्त्रीय सामग्री का संग्रह हो जाय, जिससे चातुर्मास के दौरान वार्तालाप में सुविधा रहे। 6 महारथियों में आचार्य श्री गणेशीलाल जी म., व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलाल जी म., कवि श्री अमर मुनि जी म., सहमंत्री श्री हस्तीमल जी

म., प्रधानमंत्री श्री आनन्द ऋषि जी म. तथा पंडित श्री समर्थमल जी म. को रखा गया। संयुक्त चातुर्मास होगा ही तथा कहाँ होगा यह निर्णय नहीं हो पाया। इसलिए वाचस्पति गुरुदेव ने दिल्ली, पंजाब की वापसी का मन बना लिया। उधर पंजाब केसरी श्री प्रेमचन्द जी मुम्बई जाने की तैयारी में थे। वाचस्पति गुरुदेव की सेवा के लिए राजस्थान प्रवास पर आए स्वामी श्री फूलचन्द जी म. श्री रामचन्द्र जी म. का मन भी मुम्बई दर्शन का हो गया। विनती की "हम भी श्री प्रेमचन्द जी म. के साथ मुम्बई भ्रमण कर आते हैं।" वाचस्पति गुरुदेव ने तत्काल स्वीकृति दे दी। यद्यपि पूज्य श्री भण्डारी जी म. के अभाव में सेवा कार्य काफी शिथिल हो चुका था। इन दो के जाने से क्या प्रतिकूलता आ सकती है, ये भी वो जानते थे। लेकिन उनके मन में उठी उमंग को दबाना उन्हें अच्छा नहीं लगा। स्वयं कष्ट सहने की कोई चिन्ता नहीं की। सहर्ष दोनों को प्रेमचन्द जी म. के हवाले कर दिया और अपने को कवि जी म. के मुनियों के भरोसे। जब वाचस्पति गुरुदेव जयपुर के लिए चले तो पहले ब्यावर में कुन्दन भवन में रुके। वहाँ जोधपुर का श्री संघ चातुर्मास की विनती लेकर आया, पर इंकार कर दिया। क्योंकि अभी तक अन्य चार महारथियों की स्वीकृति तो मिली ही नहीं थी। यात्रा क्रम फिर चालू हो गया। ब्यावर से अजमेर वहाँ से किशनगढ़ फिर जयपुर की डगर पकड़ी। वाचस्पति गुरुदेव, श्री कवि जी एवं सभी संत परासौली गांव में ठहरे हुए थे कि जोधपुर श्री संघ फिर हाजिर हो गया तथा कहने लगा कि चारों महारथियों के चातुर्मास की स्वीकृति मिल गई है अब आप दोनों को भी चातुर्मास अवश्य करना होगा।

सांघिक एकता को पुष्ट करने का सवाल था। वाचस्पति गुरुदेव मना नहीं कर सके। और उसी गांव से वापस मुड़ने का निर्णय कर लिया। जयपुर जाने की भी क्या आवश्यकता थी?

नए सिरे से विहारों की रूपरेखा निर्धारित की। अजमेर पहुँचे। वाचस्पति गुरुदेव ठाणे 4 लाखन कोठी में रुके। कवि जी म. ठाणे 3 लोढ़ों की धर्मशाला में। वहाँ से चलकर पुष्कर, मेड़ता, पीपाड़ आदि

फरसे। मुनि मिलते रहे छूटते रहे। पीपाड़ में विशाल शास्त्र भण्डार देखा तो मुनि वृन्द चकित हो गया। वहीं श्री बख्तावरमल जी म. ठाणे 5 मिले।

'सेठों की रीयां' होते हुए जोधपुर महामंदिर पधारे। आचार्य श्री गणेशीलाल जी म., प्रधानमंत्री श्री आनन्द ऋषि जी म., सहमंत्री श्री हस्तीमल जी म. से मिलन हुआ। विशाल जुलूस के साथ 'सिंहपोल' की स्थानक चातुर्मास स्थली में प्रवेश हुआ। श्री बहुश्रुत समर्थमल जी म. बाद में पधारे।

सिंहपोल में 6 महारथियों सहित 28 मुनिराज तथा 62 साध्वियां थीं। सोजत सम्मेलन पर ही आचार्य श्री गणेशीलाल जी म. ने विवादित विषयों पर शास्त्रीय धारणाओं को संकलित करने के लिए निर्देश दिया था। पर चातुर्मास प्रवेश तक ऐसा नहीं हुआ। उस चातुर्मास में प्रतिदिन मुनि मण्डल बैठता था, चर्चा प्रारंभ होती थी और दिशा कहीं और खुल जाती थी। आगमिक प्रमाण दिए जाते तो कहीं न कहीं से खण्डित हो जाते। पारस्परिक सौहार्द, प्रेम, रौनकों, प्रवचनों की लहर आदि सब कुछ उच्चस्तरीय रहा पर चातुर्मास के पीछे जो ध्येय था वह पास फटकने नहीं पाया। वाचस्पति गुरुदेव को इस बात की मानसिक खिन्नता थी। कभी-कभी उन्हें लगता कि मेरे साथी कवि जी म. अपनी विद्वत्ता के बल पर निर्णय में बाधक बन जाते है। पर अपनों की बातें सह्य हो जाती हैं। कांफ्रेंस वाले अन्दर खाने संतुष्ट थे या नहीं यह कहना कठिन है पर 'जैन प्रकाश' में तो बढ़ चढ़कर लिखते ही थे। उन्होंने लिखा 'जोधपुर चातुर्मास जैन इतिहास का स्वर्ण पृष्ठ होगा। संगठन के प्रति जो उच्च भावना व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलाल जी म. व कवि श्री अमरचन्द जी म. अपने दिलों में लिए बैठे हैं उसके प्रति श्रोताओं का दिल सहज ही झुक जाता है।'

संगठन के महान् हिमायती व्याख्यान वाचस्पति श्री जी के दिल में जो दर्द तमन्ना और जोश है उसकी झलक "श्रमण संगठन की नींव मजबूत करने में अगर किसी श्रमण के बलिदान का मौका आया तो

मैं वह पहला व्यक्ति होऊँगा जिसे अपने जीवन की बाजी लगा देने में हिचकिचाहट नहीं होगी।” ये शब्द दिलों में कंपकपी पैदा कर देते हैं। वे अपने हृदय की व्यथा को छिपाकर नहीं रखते। उन्होंने एक प्रवचन में कहा— ‘सादड़ी में हमने जो काम किया वह अभूतपूर्व था। संगठन के प्रति हमारा आगे कदम था। परन्तु सोजत में हमारा जोश ठण्डा पड़ गया। वहाँ हमने एक कदम पीछे रखा। हमारी शक्तियों का एकीकरण न करके विभिन्नीकरण (विकेन्द्रीकरण) Decentralization कर दिया है।

जोधपुर में ही यह निर्णय भी किया गया कि दो साल बाद फिर बृहद साधु सम्मेलन बुलाया जाय तथा अधूरे मसलों को सुलझाया जाय।

चातुर्मास पूर्ति पर सभी मुनि विशाल जुलूस के साथ बाल मंदिर में पधारे, फिर महा मंदिर। जयपुर के लिए मेड़ता और फुलेरा का रास्ता लिया। जयपुर से पहले जोबनेर ठहरे। 2 जनवरी 1954 के दिन वहाँ के ठाकुर प्रवचन सुनने आए। उन्होंने रुकने की बहुत विनती की पर वाचस्पति गुरुदेव को आगे की शीघ्रता थी। जयपुर के बाद वाचस्पति गुरुदेव और श्री कवि जी म. के सिंघाड़ों ने अलग-अलग रूट लिया। वाचस्पति गुरुदेव जी म. एवं श्री मूलचन्द जी म. ठाणे दो अलवर की ओर, जब कि श्री कवि जी म. ठाणे 5 दिल्ली की ओर। अलवर पहुँचते-पहुँचते श्री मूलचन्द जी म. के पैरों में काफी छाले पड़ गए और उनसे चलना कठिन हो गया। हर काम की जिम्मेवारी वाचस्पति गुरुदेव के ऊपर थी। तभी वाचस्पति जी की सेवा में श्री बद्रीप्रसाद जी की त्रिवेणी दिल्ली से अलवर पहुँच गई और वाचस्पति गुरुदेव की चरण सेवा का लाभ लिया। श्री मूलचन्द जी म. को विश्राम दिलाने हेतु 15 दिन अलवर ठहरे। बाद में दिल्ली की ओर बढ़े। गुड़गावां में कवि जी म. से पुनः मिलन हुआ। वाचस्पति गुरुदेव के परम भक्त बाबू हेमचन्द जी एम.एल.ए. का आग्रह हुआ कि मेरे नव निर्मित आवास पर चरण टिकाएं। वाचस्पति गुरुदेव उनके घर गए। घर पर कपड़े के कई थान रखे थे। आग्रह किया कि आप कपड़ा ले लो। वाचस्पति गुरुदेव ने आवश्यकतानुसार एक छोटा सा टुकड़ा ही लिया। बाबू जी बहुत दुःखी

हुए कि मेरी भावना पूरी नहीं हुई। पर वाचस्पति गुरुदेव अधिक लेते भी कैसे? बाद में बाबूजी ने बताया कि मेरे यहाँ से एक बार एक और मुनि कपड़े का पूरा थान ले गए थे तब भी मुझे ख्याल हुआ था तथा वाचस्पति गुरुदेव ने नहीं के बराबर लिया तब भी दुःख हुआ। पर एक में श्रद्धा घटी और एक में बढ़ी।

गुड़गावां से चिराग दिल्ली आए और महावीर जयन्ती का भव्य अतिभव्य कार्यक्रम हुआ। दिल्ली के भक्तगणों का तांता लग चुका था। दोपहर 1.30 बजे से 4.30 बजे तक प्रोग्राम चला। प्रारंभ में कुछ सामाजिक और राजनीतिक हस्तियों के संबोधन हुए। डा. युद्धवीर सिंह एम.एल. ए., रत्नकुमार 'रत्नेश', गुलाबचन्द लोढा, श्री हेमचन्द एम. एल.ए. के नाम उल्लेखनीय रहे। बाद में मुनियों के उद्‌बोधन हुए। श्री विनय मुनि जी म., श्री रामप्रसाद जी म. तथा श्री त्रिलोकचन्द जी म. के पश्चात् वाचस्पति गुरुदेव ने भावपूर्ण प्रवचन दिया। ला. विलायतीराम जी की अध्यक्षता तथा श्री रतन लाल पारख की मेहनत ने उस कार्यक्रम की शान बना दी। वाचस्पति गुरुदेव वहाँ से सीधे सदर बाजार की स्थानक में पधार गए। यद्यपि पूज्यपाद श्री बलवन्त राय भण्डारी जी म., श्री बाबा जग्गूमल जी म. एवं पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. चांदनी चौंक में इंतजार कर रहे थे, पर वाचस्पति गुरुदेव की धुन तो निराली ही होती थी। चांदनी चौंक में खबर पहुँची कि वाचस्पति जी म. चुपचाप सदर की स्थानक में पहुंच चुके हैं तो पूज्य श्री भण्डारी जी म. का मन मचल उठा कि अभी मैं अपने भगवान के चरणों में जाऊँ। हनुमान को राम से बिछुड़े दो साल हो चुके थे। अब दो पल भी भारी हो गए। चल दिए दर्शन करने और अपने आराध्य की पसंदीदा वस्तु साथ ले गए। दिल्ली के ओसवालों की रसोई का पसंदीदा आईटम 'दाल चावल माण्डिया' अपने भगवान को भोग लगवाकर भक्त हृदय को परम आनन्द की अनुभूति हुई।

25 अप्रैल 1954 को वाचस्पति गुरुदेव का सार्वजनिक प्रवचन हुआ जिसमें चांदनी चौंक से पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी

म. भी उपस्थित हुए थे। वाचस्पति गुरुदेव से पूर्व उनका प्रवचन हुआ। उस सभा में दिल्ली के गणमान्य महानुभाव भी आए हुए थे। मुख्यमंत्री श्री ब्रह्म प्रकाश जी चौधरी, उप मुख्यमंत्री श्री शिवचरण गुप्ता तथा कई एम. पी. भी। मुख्यमंत्री जी वाचस्पति गुरुदेव के प्रवचनों से बेहद प्रभावित हुए।

वहाँ से चांदनी चौंक पधारे तो वहाँ का कण-कण झूम उठा। 6 जून रविवार के रोज बारादरी में ही सार्वजनिक व्याख्यान रखा गया जिसका विषय दिया गया था— 'शांति का राजमार्ग'। अजैन श्रोता विशाल संख्या में हाजिर हुए। दिल्ली विधानसभा के स्पीकर श्री गुरुदत्त निहाल सिंह एवं डिप्टी स्पीकर श्री नूरूद्दीन भावुक होकर कहने लगे— 'इन संतों का त्याग सच्चा त्याग है। सिर पैर खुले रहते हैं वाहन का प्रयोग नहीं करते, पैसा पास नहीं, रात को खाना पीना नहीं। हम कोशिश करेंगे कि इनके प्रवचनों का बार-बार लाभ लें।'

वाचस्पति गुरुदेव का सन् 1954 का दिल्ली प्रवास जैन जागरण को अर्पित रहा। हर पंथ का, हर संस्था का हर व्यक्ति उनसे जुड़ा। 'जैन प्रकाश' में आचार्य, उपाचार्य, प्रधान मंत्री, प्रचार-मंत्री आदि के प्रवचनों की बजाय वाचस्पति गुरुदेव के प्रवचन ही प्रकाशित होते थे। राजनेताओं को गुरुदर्शन का लाभ दिलवाने में बाबू हेमचन्द जी M.L.A. व गुलाबचन्द जी लोढा अधिक रुचि लेते थे।

उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म. की जयन्ती पर वाचस्पति गुरुदेव ने जो भावोद्गार प्रकट किए थे, उन्हें 'जैन प्रकाश' ने मुख्य पृष्ठ पर प्रकाशित किया।

26 सितम्बर को 11 कलिंग रोड पर 'आल इंडिया महावीर जयन्ती कमेटी' की ओर से जैन विद्वानों की विशाल गोष्ठी का आयोजन हुआ था। जिसमें पंडित बेचरदास जी, पंडित हीरालाल, पंडित जुगलकिशोर दलसुख मालवणिया, नथमल टांटिया, कैलाशचन्द जी, महेन्द्र कुमार, कृष्ण चन्द्राचार्य, हरजसराय, भगवानदास गांधी, जिनेन्द्र कुमार, इन्द्रचन्द्र

शास्त्री, पृथ्वीचन्द्र आदि विद्वानों के अलावा समाज और राष्ट्र के विख्यात व्यक्तित्व भी शामिल हुए थे। जैसे कि सेठ अचलसिंह एम.पी., चंकूभाई, नेमीचन्द कासलीवाल एम.पी. रमापतसिंह, योगीलाल एम.पी. आदि। गुलाबचन्द जी मुख्य कार्यकर्त्ता थे। उन सब विद्वानों, राष्ट्रीय हस्तियों को वाचस्पति गुरुदेव तथा श्री विजयेन्द्र सूरी जी ने उद्‌बोधित किया था तथा विद्वत् परिषद् का लक्ष्य स्पष्ट किया था।

वाचस्पति गुरुदेव की हार्दिक इच्छा थी कि मैं सन् 1954 संवत् 2011 का चातुर्मास बाबा श्री जग्गूमल जी म., पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. सहित चांदनी चौंक में करूं। तथा अपने शिष्यों की आध्यात्मिक, वैयक्तिक प्रगति का अवलोकन करूँ। लेकिन उसी वर्ष राजस्थान के प्रान्त मंत्री श्री पुष्कर मुनि जी म. अपने पूज्य गुरुवर्य श्री ताराचन्द जी म. के साथ दिल्ली पधारे तथा उनकी भावना भी चांदनी चौंक में ही चातुर्मास करने की थी। अतः वाचस्पति गुरुदेव ने उनकी भावनाओं को सम्मान देने के लिए चांदनी चौंक उनके लिए छोड़ दिया और अपना चातुर्मास पुरानी सब्जी मण्डी कोल्हापुर रोड किया। ठहरना स्थानक में हुआ, प्रवचन हुए शोरा कोठी में जो कि गांधरा परिवार के विशाल परिसर में थी। उस चातुर्मास में रावलपिण्डी के परिवारों ने वाचस्पति गुरुदेव से विशेष ही लाभ लिया। इस चातुर्मास में वाचस्पति गुरुदेव ने अपने प्रतिभा सम्पन्न शिष्य पूज्य श्री रामप्रसाद जी म. को अध्ययन अध्यापन में विशेष प्रगति करवाई। उन्होंने विद्युत् के संबंध में अपने सांसारिक रिश्तेदार श्री धर्मवीर इलैक्ट्रिकल इंजीनियर से वैज्ञानिक जानकारी प्राप्त की तथा विद्युत् की सचित्ताचित्तता का स्पष्ट स्वरुप हासिल किया। अंग्रेजी भाषा में भी अधिक पैठ की।

सादड़ी सम्मेलन पर संतों के लिए जो नियमावली बनी थी, वाचस्पति गुरुदेव हर स्थान पर उसके पालन पर जोर देते थे। एक नियम बना था कि श्रमण संघ के साधु उसी स्थानक में ठहरे जिस पर ‘वर्धमान स्थानक वासी श्रमण संघ’ यह लेबल लगा हो। किसी सम्प्रदाय के साथ जुड़े नाम वाले स्थानक में नहीं ठहरना। साम्प्रदायिक नाम वाले स्थानक प्रायः

राजस्थान की तरफ ही थे, उत्तर भारत में नहीं। अतः यहाँ नाम लेखन में कोई असुविधा नहीं थी। फिर भी नियम का निर्वाह आवश्यक मानते हुए वाचस्पति गुरुदेव ने प्रधान श्री पन्नालाल जी, मंत्री श्री प्यारेलाल जी को संकेत कर दिया और उन्होंने अपने धर्मस्थान का नाम सादड़ी सम्मेलन के प्रस्तावानुसार लिखवा दिया।

वाचस्पति गुरुदेव की कृपा से वहाँ जैन युवक संघ का गठन भी हुआ। जिसके प्रधान श्री जिनेन्द्र जी एवं मंत्री श्री प्रेमचन्द जी बने।

25 अक्टूबर को आर्यपुरा सब्जी मण्डी में 'जैन यंग मेन्स एसोसिएशन' के तत्वावधान में वाचस्पति गुरुदेव तथा आचार्य विजयेन्द्र सूरी जी का संयुक्त व्याख्यान हुआ था। उस व्याख्यान से लौटते समय किसी ने अज्ञात रूप से भीड़ का फोटो लेते हुए वाचस्पति गुरुदेव का फोटो ले लिया और वह फोटो बहन नगीना जी चोरड़िया को मिल गया।

26 तारीख को श्रावक श्री गुलाबचन्द जी लोढा वाचस्पति गुरुदेव के चरणों में एक फ्रांसीसी महिला लुईस वैस को लेकर आए। ये महिला समानाधिकार आन्दोलन की लीडर थी। उनके साथ एक सांस्कृतिक मण्डल भी भारत दर्शन को आया था। अच्छी लेखिका होने से जैन जीवन शैली का अध्ययन करना चाहती थी। उस महिला का वाचस्पति गुरुदेव से दो घंटे तक वार्तालाप चला। दुभाषिये का काम श्री गुलाबचन्द लोढा ने किया। वाचस्पति गुरुदेव ने जैनत्व के विभिन्न पहलू समझाये जैसे कि ज्ञान दर्शन चारित्र के विषय में। अहिंसा की सूक्ष्मता, साधु श्रावक के नियमों की सीमा आदि। मैडम लूईस वैस वाचस्पति गुरुदेव के व्यक्तित्व और विचारों से गहराई से प्रभावित हुई। उन्हें वाचस्पति गुरुदेव ने श्री विजयेन्द्र सूरी[1] द्वारा लिखित, अंग्रेजी में अनूदित ग्रंथों को पढ़ने की प्रेरणा दी। मैडम लुईस वैस ने वाचस्पति गुरुदेव से एक निवेदन किया कि आप किसी कत्लखाने में पधारें तथा मारे जाते हुए पशुओं पर हाथ फेरें।

---

1 श्री विजयेन्द्र सूरी वाचस्पति गुरुदेव से सोजत में मिल चुके थे और दोनों एक दूसरे से प्रभावित थे।

उस समय आपके करुणापूर्ण चेहरे का फोटो खींचकर मैं विश्व भर में प्रसारित करना चाहती हूँ ताकि आपकी करुणा का दर्शन दुनिया कर सके। उस भावुक महिला की बात सुनकर वाचस्पति गुरुदेव मुस्कराए बिना नहीं रह सके। कहने लगे– दया और करुणा प्रदर्शन की चीज नहीं है। चित्र में दिखाने के लिए ओढ़ी हुई करुणा अभिनय मात्र होगी, वास्तविक नहीं।

वाचस्पति गुरुदेव ने उसे जैन साधुओं के प्रयोग में आने वाले उपकरण भी दिखलाए। जैसे कि रजोहरण, पात्र, पन्ने, पुट्ठे आदि। उस साक्षात्कार के पश्चात् वाचस्पति गुरुदेव पूज्य श्री रामप्रसाद जी के साथ टहलने लगे। श्रीमती लुईस वैस ने उनकी बिना जानकारी के उनका फोटो ले लिया और फ्रांस में जाकर **'India–the country and its traditions'** पुस्तक में **'Jain monks at Delhi'** शीर्षक से प्रकाशित करवा दिया। बाद में 25 व 26 तारीख वाले दोनों फोटो श्री गुलाबचन्द लोढा को हस्तगत हुए और उन्होंने उसका उपयोग किया।

फोटो के विषय में वाचस्पति गुरुदेव का दृष्टिकोण क्या था? सन् 1945 से पूर्व सम्पूर्ण मुनिसंघ में फोटो खिंचने पर पाबन्दी नहीं थी। इसलिए तब तक किसी ने फोटो खींच लिया तो मनाही नहीं की पर अपनी ओर से किसी को प्रेरणा नहीं दी। पर बाद में अपनी जानकारी में किसी को फोटो खींचने नहीं दिया। सादड़ी में तो यह प्रस्ताव पास ही हो गया और फोटो पर पूर्ण प्रतिबंध लग गया जिसका उन्होंने पूर्ण सावधानी से पालन किया।

उस वर्ष वाचस्पति गुरुदेव का ध्यान जैन समाज की गरिमा की ओर लगा रहा। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् धर्म निरपेक्षता या सर्वधर्म समभाव के नाम पर केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारों ने सभी धर्मों के पर्वों पर सार्वजनिक अवकाश घोषित कर दिए। हिन्दुओं के रामनवमी, कृष्ण जन्माष्टमी, मुसलमानों की ईद, सिक्खों के प्रकाश पर्व पर अवकाश मान लिए। बौद्धों की लघु संख्या के बावजूद बुद्ध जयन्ती की भी छुट्टी कर दी पर जैनों को महावीर जयन्ती की छुट्टी का उपहार नहीं मिला।

जबकि राष्ट्रीय विकास के हर चरण पर जैनों का योगदान कईयों की अपेक्षा बहुलतर रहा है। जैन समाज के प्रबुद्ध चिन्तक इस विषय में कुछ करना चाहते थे। उनकी नजर उस समय वाचस्पति गुरुदेव पर पड़ी। श्री गुलाबचन्द जी लोढा का मन था कि यदि वाचस्पति गुरुदेव राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद जी एवं प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल जी से मुलाकात कर इस विषय में कुछ कहें तो रास्ता खुल सकता है। यद्यपि लोढा जी का दोनों राष्ट्र पुरुषों से पुराना नाता रहा था पर इस विषय में तो किसी धर्म पुरुष की बात ही सुनी जा सकती थी। वाचस्पति गुरुदेव ने आचार्य विजयेन्द्र सूरी जी से सम्पर्क किया और 'आल इंडिया महावीर जयन्ती कमेटी' के बैनर तले 8 अक्टूबर वीरवार प्रातः 11 बजे राष्ट्रपति बाबू राजेन्द्र प्रसाद से मुलाकात की। राष्ट्रपति महोदय से मुगल गार्डन में डेढ़ घंटे वार्तालाप हुआ। कई मुनिराज और विद्वान् भी शिष्टमंडल में थे। पारस्परिक परिचय तथा साहित्य प्रदान हुआ। धार्मिक, सांस्कृतिक चर्चाएं चली। एक कलात्मक विनती पत्र दिखाया। जिसे देखकर राष्ट्रपति महोदय दंग रह गए। महावीर जयन्ती के अवकाश का मेमोरैण्डम भी दिया। मगर यह कार्य राष्ट्रपति के अधीन नहीं होता अतः कुछ कह नहीं पाए। लेकिन वे वाचस्पति गुरुदेव व मुनि मण्डल को छोड़ने बाहर तक आए। अगली योजना प्रधानमंत्री से मिलने की बनाई।

4 दिसम्बर 1954 प्रातः 9 बजे का समय मिला। इसलिए वाचस्पति गुरुदेव व मुनिवृन्द 3 तारीख शाम को नई दिल्ली में एक पुराने से स्कूल में ठहर गए ताकि समय पर भेंट हो सके। नेहरु जी को काफी बहुमूल्य वस्तुएं जिनका जैन संस्कृति और जैन संतों से नाता रहा है, दिखाईं। एक पैसे की गोलाई में 108 हाथियों का चित्र देखकर नेहरु जी भी चकित रह गए। वाचस्पति गुरुदेव ने कहा– 'पंडित जी अन्य धर्मों की तर्ज पर महावीर जयन्ती की छुट्टी का भी निर्णय कीजिए। तथा 1955 की महावीर जयन्ती के कार्यक्रम पर आकर महावीर जयन्ती की छुट्टी की घोषणा कीजिए। पंडित नेहरु जी ने अपनी पूर्वाग्रही प्रकृति के कारण अवकाश का आश्वासन नहीं दिया, बल्कि ये बहाना जरूर बनाया कि

देश को इस समय अवकाश की नहीं, श्रम की अधिक आवश्यकता है। अवकाशों से देश का विकास अवरुद्ध होता है।

फिर भी वाचस्पति गुरुदेव के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर उन्होंने ये अवश्य कहा कि मैं महावीर जयन्ती के कार्यक्रम पर अवश्य सम्मिलित होऊँगा। पंडित जी ने वाचस्पति गुरुदेव के दर्शन करने के लिए अपनी सुपुत्री इंदिरा जी को भी बुलाया। पूरे वार्तालाप के दौरान नेहरु जी पालथी मारकर बैठे रहे और गुरुओं का सम्मान करते रहे। विदाई से पूर्व फोटो सैशन का मौका आया तो वाचस्पति गुरुदेव और उनके मुनि बाहर निकल आए, बाकी ने वह औपचारिकता पूर्ण की व करवाई।[1] जैन समाज के उत्थान के लिए वाचस्पति गुरुदेव सर्वात्मना समर्पित रहते थे। यह पुनरुक्ति होते हुए भी दोष नहीं कहलाएगी। क्योंकि वे पुनः पुनः ही नहीं, हर समय इसी चिन्तन और प्रयास में लगे रहते थे। जोधपुर संयुक्त चातुर्मास में ये निर्णय हुआ था कि दो वर्ष बाद बृहद् साधु सम्मेलन किया जाएगा, जिसमें सादड़ी सम्मेलन की अधूरी योजनाओं को पूरा किया जाएगा। एतद् विषयक घोषणा हो गई कि अगला सम्मेलन 8 अप्रैल 1955 से भीनासर (बीकानेर के नजदीक) में प्रारम्भ होगा। प्रमुख पत्रिकाओं में सम्मेलन के लिए सुझाव और योजनाएं आने लगी। वाचस्पति गुरुदेव ने सोजत सम्मेलन पर जो टिप्पणी की थी, उसकी यथार्थता प्रबुद्ध लोगों को होने लगी। और यदा-कदा मुखर भी हो रही थी। श्री रत्नेश जी ने सम्पादक की हैसियत से 'जैन प्रकाश' में लिखा– सादड़ी सम्मेलन विचार प्रधान तथा सोजत सम्मेलन योजना प्रधान रहा। अब भीनासर सम्मेलन को निर्णय प्रधान बनाना है।

वाचस्पति गुरुदेव भी किसी ठोस निर्णय और पूर्ण एकता की भूख लिए राजस्थान की यात्रा के लिए कटिबद्ध हुए और कुछ चल भी

1 वाचस्पति गुरुदेव को दोनों राष्ट्र पुरुषों ने जो वचन दिया था कि हम महावीर जयन्ती के कार्यक्रम पर आएंगे, वो उन्होंने निभाया। 1955 की जयन्ती पर वे दोनों अनेक सांसदों के साथ उपस्थित हुए थे। यद्यपि वाचस्पति गुरुदेव वहाँ से विहार कर चुके थे पर आयोजकों ने वाचस्पति गुरुदेव का अहसान माना था।

दिए थे कि अचानक एक साल के लिए सम्मेलन स्थगित कर दिया गया। उन्होंने अपना रुख पंजाब की ओर कर लिया और संगरुर में चातुर्मास करने का मन बना लिया। तपस्वी श्री बद्रीप्रसाद जी की अस्वस्थता की वजह से गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी पंजाब में साथ-साथ नहीं जा सके। पूज्यपाद श्री भण्डारी जी म. व सेठ श्री प्रकाशचन्द जी म. उनके हमसफर बने। रोहतक में पूज्यपाद श्री अमींलाल जी म. के दर्शन हुए। तथा अपने प्रिय सखा श्री योगिराज जी म. से श्रमण संघ निर्माण एवं उत्तरवर्ती घटनाओं की चर्चा की। साथ ही चलते समय पंडित रणसिंह जी म. को अपने साथ लिया। ठाणे 4 से संगरुर का यह तीसरा चातुर्मास पूर्व कीर्तिमानों की तरह उत्तमोत्तम ऊँचाईयों पर आरुढ़ हुआ। त्याग, तपस्या धर्म ध्यान के खूब ठाठ लगे। भावी सम्मेलन के विषय में भी उनका आत्म मंथन जारी रहा। समाज के हालात कितने ही निराशाजनक रहे पर उन्होंने कभी भी ऊँचे सपनों को नहीं छोड़ा। उनकी सिद्धान्त निष्ठा निरन्तर कायम रही। संगरुर चातुर्मास का एक रोचक प्रसंगः—

संवत्सरी के पारणे पर वाचस्पति गुरुदेव को पाचन में दिक्कत आ गई। श्री भण्डारी जी म. से कहा— हकीम शांतिलाल से हाजमे के लिए चूर्ण ले आ। जब वो लेने गए तो हकीम जी ने पूछा-सादा चूर्ण दूँ या भावड़ों वाला दूँ? श्री भण्डारी जी म. ने दोनों में फर्क पूछा तो बताया जब भावड़े किसी बारात में जाते है तो आइटमें ज्यादा खानी होती हैं, उन्हें हजम करने वास्ते स्पेशल चूर्ण दिया जाता है। वे चूर्ण की चुटकी फांकते रहते हैं और माल खाते रहते है। श्री भण्डारी जी म. ने वही भावड़ों वाला चूर्ण ले लिया। बस चुटकी भर चूर्ण था। वाचस्पति गुरुदेव उसे देखकर बोले— इतने भर में क्या काम बनेगा? श्री भण्डारी जी म. ने कहा— हकीम जी ने कहा, यह भी बहुत है। वाचस्पति गुरुदेव ने चुटकी फाँक ली। थोड़ी देर में डकार आ गई। पेट हल्का हो गया और तब से भावड़ों वाले चूर्ण की प्रसिद्धि संतों में हो गई। एक आप बीती बात श्री संघनायक जी म. के माध्यम सेः—

हम कई वैरागी दिल्ली से संगरुर दर्शन करने गए थे। एक दिन दोपहर का भोजन लेकर गुरु-चरणों में जा रहे थे। रास्ते में हकीम श्री शांतिलाल जी की दुकान थी। शौक-शौक में दुकान पर रुक गए। एकाध चूर्ण चख लिया। वहाँ चूर्ण रगड़ा भी जा रहा था। मैं भी रगड़वाने लगा। देर हो गई। जब वाचस्पति गुरुदेव के चरणों में पहुँचे तो गुरुदेव ने देरी का कारण पूछा। हमने सारी बात बता दी। हमें खूब डांट खानी पड़ी। 'तुम यहाँ दर्शन करने आए थे या चूर्ण की दुकान खोलने। वैरागी बने हो तो चंचलता नहीं चलेगी।' गुरुदेव ने डांटकर कहा। हमने उनसे क्षमा मांगी तो प्रसन्न भी हो गए।

न कर्म लिप्यते नरे

सादड़ी, सोजत सम्मेलनों तथा जोधपुर संयुक्त चातुर्मास में यह तय हुआ था कि दो वर्ष बाद बृहत् साधु सम्मेलन बुलाकर पुरानी समस्याओं का समाधान निकाला जाएगा। सन् 1955 के लिए घोषणा हो चुकी थी पर बाद में वापस ले ली गई। सन् 1956 के सम्मेलन के लिए विचार चर्चा चली तो उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म. ने फरमाया कि दो बार सम्मेलन मेरे सानिध्य में हो चुके, एक सम्मेलन आचार्य श्री आत्माराम जी म. के सानिध्य में होना चाहिए। कांफ्रेंस वालों को भी यह प्रस्ताव रुचिकर लगा और उन्होंने यह पास कर दिया। लुधियाना समाज को जब यह सूचना मिली तो उन्होंने सहर्ष सम्मेलन के लिए अपनी सेवाएं पेश कर दी। विधिवत् कांफ्रेंस को निवेदन किया कि सम्मेलन का मौका हमें मिलना चाहिए। कांफ्रेंस ने भी तत्काल अपनी स्वीकृति दे दी। कांफ्रेंस अध्यक्ष श्री चंपालाल जी बांठिया इस सिलसिले में सम्पर्क करने हेतु सक्रिय हो गए। उन्होंने कुचेरा पहुँचकर उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म. से पूछा "आप लुधियाना समय पर पहुंच जाओगे क्या?" तब उपाचार्य श्री जी ने कहा– "मेरी लुधियाना पहुँचने की पूरी इच्छा है पर इस समय घुटनों में तीव्र वेदना है तथा शरीर भी शिथिल चल रहा है, इसलिए निश्चयात्मक रूप से नहीं कह सकता। यदि किसी कारण मैं नहीं जा सका तो मेरी ओर से समर्थ मुनिराज अवश्य पहुँचेंगे।"

आचार्य श्री आत्माराम जी म. से जब इस विषय में परामर्श हुआ तो उन्होंने कहा– "आज तक सभी सम्मेलनों का संचालन उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म. ही करते आए हैं। उन्हें हर कार्यवाही का प्रत्यक्ष अनुभव है और संघ के सारे अधिकार भी उन्हें प्राप्त हैं। अतः सम्मेलन उनके ही सान्निध्य में होना चाहिए। मेरी शुभ कामनाएं वहाँ जरूर

पहुँचेगी। मूल लक्ष्य तो कुछ ठोस काम करने से है। वह काम हो गया तो मेरी भावनाएं भी साकार हो गई।"

ऐसी स्थिति में कांफ्रेंस के अधिकारियों ने पुनर्विचार किया और फैसला लिया कि सम्मेलन उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म. के नेतृत्व में बुलाया जाये क्योंकि वे ही सारी व्यवस्था के सूत्रधार हैं। अतएव उपाचार्य श्री जी से सम्मेलन का स्थान और समय घोषित करवाया। संवैधानिक व्यवस्था के अनुसार प्रधानमंत्री श्री आनन्द ऋषि जी म. ने घोषणा कर दी कि बीकानेर के समीप भीनासर में विक्रम संवत् 2012 के अन्त तक (मार्च 1956) सम्मेलन होगा। 10 नवम्बर 1955 को अध्यक्ष श्री चम्पालाल जी बांठिया, मोहन लाल चोरड़िया आदि शिष्ट जन लुधियाना आए। तब आचार्य श्री जी ने कहा– मैं तो असमर्थ हूँ। मैंने व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलाल जी म. को बुलाया हुआ है। उन्हें सम्मेलन पर भेजूंगा। साथ ही श्री प्रेमचन्द जी म., कवि जी म., और मुनि ज्ञान जी को भी भीनासर जाने की आज्ञा दूँगा।

समाज की एकता के लिए वाचस्पति गुरुदेव तो चिन्तनशील, प्रयत्नशील रहते ही थे। अतः संगरुर का चातुर्मास पूर्ण कर सम्मेलन विषयक चर्चा करने लुधियाना पधार गए। वहाँ आचार्य जी से व्यापक चर्चाएं होती रही। उसी दौरान 25 दिसम्बर 1955 के दिन शिष्ट मण्डल पुनः आया और विचार विमर्श करके विहार कराने का निर्णय ले लिया तथा ज्ञान मुनि जी म. को भेजने का भी मन बनाया। आचार्य श्री जी ने अपना प्रतिनिधित्व वाचस्पति गुरुदेव को दे दिया और फरमाया कि आपका प्रत्येक दृष्टिकोण मेरा ही दृष्टिकोण होगा। आप मेरी बात को सम्मेलन में अच्छी तरह प्रस्तुत कर सकोगे। इस बार कुछ नए मुनिराज सम्मेलन में पधार रहे थे। उनमें श्री ज्ञान मुनि जी म. का नाम प्रमुख रहा। वाचस्पति गुरुदेव भी अपने साथ गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. को ले जाना चाहते थे। उन्हें मूनक से अपने साथ लेना था। वाचस्पति गुरुदेव चाहते थे कि श्री प्रकाशचन्द्र जी म., श्री रामप्रसाद जी म. भारत भर के मुनियों से परिचित हो जाएं और अन्य संत इनकी प्रतिभा का

प्रत्यक्ष दर्शन करें। सोजत सम्मेलन पर कई प्रमुख मुनियों ने इनके ज्ञान-बल, प्रतिभा-शक्ति की चर्चा की थी, जबकि ये वहाँ पर उपस्थित भी नहीं थे। वाचस्पति गुरुदेव ने जब तपस्वी श्री बद्रीप्रसाद जी से भीनासर ले जाने की बात चलाई तब श्री तपस्वी जी म. ने प्रारंभ में तो आनाकानी की, पर अंततः रजामंद हो गए। इस प्रकार अपनी मजबूत टोली बनाकर दृढ़ इरादों के साथ वाचस्पति गुरुदेव भीनासर की ओर बढ़े। देह पर वार्धक्य का दबाव था पर समाज को एक खूबसूरत मोड़ पर लाने की तीव्र भावना ने सब दबावों को पीछे धकेल दिया।

श्री कवि अमर मुनि जी म. भीनासर सम्मेलन पर आने को उत्सुक नहीं थे पर वाचस्पति गुरुदेव के निर्देश को टाल नहीं सके और उन्होंने भी शामिल होने के लिए प्रस्थान कर दिया। उनका विचरण राजस्थान में ही चल रहा था अतः सम्मेलन पर पहुँचना कठिन नहीं था। वाचस्पति गुरुदेव का सफर लम्बा भी था और कठिनता पूर्ण भी। क्योंकि उकलाना हिसार से आगे का इलाका थली प्रान्त का आता है, जहाँ स्थानकवासी परिवार अल्प-अत्यल्प संख्या में कुत्रचित् ही थे। तथा सहवर्ती तेरापंथ के श्रावकों में उस युग में कुछ अनुदारता अधिक थी। पर वाचस्पति गुरुदेव ने राह की तकलीफों को कभी मन पर हावी होने ही नहीं दिया था। कई अप्रत्याशित अनुकूलताएं स्वतः बनती भी गई। जैसे कि एक वैष्णव भाई सुशील कुमार ने कई पड़ावों तक साथ-साथ विहार करवाए और घरों में निर्दोष गोचरी दिलवाने में सहयोग दिया।

एक मधुर प्रसंगः— एक छोटा सा 6-7 साल का बालक भुने हुए चनों की एक पुड़िया लेकर जा रहा था। उसने एक जगह बैठे मुनियों को देख लिया। न जाने उसे क्या सूझी वह वाचस्पति गुरुदेव के पास आया और वह पुड़िया उनके आगे रख दी। कहने लगा ये आपको लेनी पड़ेगी। समझाने पर भी नहीं माना। जिद्द पर अड़ गया। किसी प्रकार का दोष न होने से उसकी भावना पूरी करनी पड़ी। और वह खुश होकर नाचता हुआ चला गया। यहाँ यह भी ज्ञातव्य हो कि भुने हुए चने, बाजरे की खिचड़ी, मट्ठा-दूध वाचस्पति

गुरुदेव की मनपसन्द गिजा थे, जिनकी उपलब्धि उस युग में ग्रामीण परिवेश में सहज थी।

वाचस्पति गुरुदेव के चिन्तन धरातल पर सम्मेलन के कुछ साध्यबिन्दु उभरे थे।

1. एक आचार्य के अधीनस्थ सारे मुनिराज हैं पर एक आचार्य के शिष्य भी बनें।
2. सचित्ताचित्त का मसला सुलझे।
3. संवत्सरी की एकता पर सर्वानुमति बने।
4. ध्वनिवर्धक के प्रयोग अप्रयोग का स्पष्ट निर्णय हो।

इन मसलों पर अधिकांश बड़े मुनिराज चिंतित थे पर कोई समाधान नहीं हो पा रहा था क्योंकि पुराने आग्रह जो पूर्व सम्प्रदायों से मनों में जमे हुए थे, निकल नहीं पा रहे थे। लाउडस्पीकर का मसला दो ध्रुवों की टकराहट सा बन रहा था। कुछ नवोदित मुनिराज इसके प्रयोग को खुलवाने के लिए कटिबद्ध थे और अपने पक्ष में गृहस्थों की विशाल लाबी खड़ी कर ली थी। अन्य मसलों में श्रावकों का कोई दखल नहीं था। दूसरी तरफ 90% मुनिराज इसके प्रयोग के घोर विरोधी थे। कड़क मिश्री जी म. ने तो ऐलान कर दिया था कि जो श्रावक ध्वनिवर्धक का समर्थन करेगा उसको मंगलपाठ भी नहीं सुनाऊँगा। वाचस्पति गुरुदेव बढ़े जा रहे थे आगे। सोचते थे कि आचार्य श्री आत्माराम जी म. के व्यक्तिगत विचारों का मुझे प्रतिनिधित्व करना है और उनकी भावनाएं मुनि वर्ग तथा श्रावकों के सामने रखनी हैं। परन्तु मार्ग में पत्राचार के माध्यम से प्रतिनिधित्व आचार्य श्री जी के शिष्य श्री ज्ञान मुनि जी को प्राप्त हो गया। अतः वाचस्पति गुरुदेव निजी हैसियत से सम्मिलित होने जा रहे थे। 29 मार्च 1956 से सम्मेलन प्रारंभ होना था। मुख्य मुनिराज 15 दिन पूर्व नोखा पहुँच चुके थे। उन्होंने कुछ जरूरी काम वहीं निपटाने शुरू कर दिए। 16 मार्च से 23 मार्च तक 8 दिनों में जोधपुर चातुर्मास की कार्यवाही पर विचार हुआ। प्रधानमंत्री और मंत्रीमण्डल के प्रतिवेदन

को पढ़ा। प्रायश्चित की विधि क्या होनी चाहिए? उसका प्रारूप Blue Print तैयार कर लिया। वहाँ से संयुक्त रूप में चलकर देशनोक पहुँचे। मुनिसंख्या और बढ़ाई। कुछ बढ़ने वाली थी। देशनोक में 22 सिंघाड़ों के 52 प्रतिनिधियों का चयन हुआ। पूज्य आत्माराम जी म. के सिंघाड़ों में से पांच प्रतिनिधि चुने।[1] श्री कवि जी म. के आने में बिलम्ब रहा। देशनोक पहुँचने पर वाचस्पति गुरुदेव को ज्ञात हुआ कि वे उदयरामसर पहुँच चुके है। अपने लघु मुनियों को उनकी अगवानी में उदयरामसर भेजा। वे उन्हें देशनोक साथ लाए। वहाँ से बीकानेर प्रवेश हुआ वहाँ 135 मुनिराज और 147 साध्वियां एकत्रित हो चुके थे। बीकानेर में स्थिरवासी एक वृद्धा साध्वी की विनती आई कि पंजाब के जितने मुनिराज पधारे हैं मैं उनके दर्शन करना चाहती हूँ। वाचस्पति गुरुदेव ने उनकी भावनाओं का सम्मान करते हुए सभी मुनियों को साथ लिया और उनके आवास स्थल पर पहुँच गए। साध्वी जी म. गद्गद हो गई। लघु आयु के मुनियों— श्री सेठ प्रकाश जी म. गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. को देखकर तो बहुत ही विभोर हो गई। वाचस्पति गुरुदेव ने मंगल पाठ सुनाया और आ गए। उसी रात वह साध्वी दिवंगत हो गई। मानो दर्शनों की प्रतीक्षा में ही प्राण अटके हुए थे।

बीकानेर में भी प्रतिनिधि मुनियों की बैठकें शुरू हो गई। जिसमें दर्शक मुनियों को बैठने की अनुमति तो मिली हुई थी, पर बीच में बोलने की नहीं।

सम्मेलन पर आने वाले दर्शनार्थियों के आवास भोजनादि का प्रबंध बीकानेर में ही हुआ था। चारों ओर टेंट ही टेंट नजर आ रहे थे। पूरा एक नगर बसाया हुआ था। वहीं श्रावक सम्मेलन भी होना था। जिसकी अध्यक्षता विनयचन्द्र दुर्लभ जी झवेरी को करनी थी। रेगिस्तानी इलाके में पानी की व्यवस्था एक चमत्कार से कम नहीं थी।

---

1 पंजाब सम्प्रदाय यद्यपि भंग हो चुकी थी। पर प्रतिनिधियों का चयन अब तक पुरानी पद्धति से हो रहा था। वाचस्पति गुरुदेव जब लुधियाना से चले तब पूज्य श्री आत्माराम जी म. के प्रवक्ता के रूप में चले थे। अब वे समग्र पंजाब के प्रतिनिधियों में से एक थे।

बीकानेर से सभी साधु-साध्वियां पंक्तिबद्ध होकर भीनासर में 28 मार्च को पधारे। 29 मार्च चैत्र वदी तीज को सम्मेलन का विधिवत् प्रारम्भ हुआ। मंगलाचरण में पूज्य गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. ने राष्ट्र गान 'जनगण मन' की धुन पर 'शिवपुर पथ परिचायक जय हे।' गीत प्रस्तुत किया था। वहाँ उपस्थित सभी साधु-साध्वियों के लिए यह गीत नया था। गीत की प्रस्तुति इतनी उम्दा थी कि पूरे सम्मेलन काल में उसकी गूंज बनी रही। पूज्य म. श्री ने वह गीत किसी दिगम्बर पत्रिका से लिया था। उसके बाद तो यह संप्रदायातीत हो गया। उपाचार्य श्री जी ने साधु-साध्वियों को आहारादि विषयक असुविधा न हो, इस वास्ते गली मोहल्ले के हिसाब से पर्चियां बनवाकर दे दी थी। हर संत का अनुभव रहा कि किसी को परेशानी भी नहीं रही, निर्दोषता भी सुरक्षित रही।

साधुओं को पीने के लिए अधिकतर चावलों का माँड मिलता था। बर्तनों का धोवन या ठण्डा जल नहीं।

सम्मेलन प्रारंभ होते ही सभापति शान्ति रक्षक बनाने की बात चली तो गत सम्मेलनों की तरह वाचस्पति गुरुदेव पर आकर रुक गई। उन्होंने अपना दायित्व पूरी गंभीरता से स्वीकार किया परन्तु इस बार उन्हें प्रतिनिधि मुनियों में उत्साह की कमी खली। अधिकारों को छोड़ने के बजाय छोड़े अधिकारों की बहाली के प्रति उत्सुकता सी लगी।

सचित्ताचित्त के प्रसंग पर कुछ निर्णय लिया गया। बादाम, पिश्ता, नोजा, सफेद व काली मिर्च को सचित्त मानकर अग्राह्य घोषित किया गया। पपीता, खरबूजा, तरबूज, आम, संतरे की फांकें, केला, किशमिश आदि भी अग्राह्य ठहराए गए।

संवत्सरी विषयक निर्णय फिर टल गया और साधु तथा श्रावकों की संयुक्त कमेटी को इस विषय में एक साल के अन्दर निर्णय देने के लिए सुपुर्द कर दिया।

तीसरा मसला मंत्रीमण्डल के पुनर्गठन का था। पिछले मंत्रीमण्डल का कार्य पूरा हो चुका था। उनकी जगह नए चेहरों की तलाश भी करनी थी। पिछले मंत्रीमण्डल में 'उपाध्याय' पद नहीं था। उसकी पूर्ति

आवश्यक समझी। प्रधानमंत्री काल पूरा निभाने के बाद श्री आनन्द ऋषि जी म. को उपाध्याय पद से अलंकृत किया गया। साथ ही श्री कवि जी म., श्री प्यारचन्द जी म., श्री हस्तीमल जी म. को भी उपाध्याय पद से नवाजा गया।

प्रधानमंत्री पद के लिए नए सिरे से विचार मंथन चला। श्री कवि जी म. ने वाचस्पति गुरुदेव का नाम प्रस्तुत कर दिया। उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म. की भी गहरी इच्छा थी। अन्य प्रान्त के मंत्रियों का भी दबाव बनने लगा। अनुत्सुक थे तो स्वयं वाचस्पति गुरुदेव और उनका शिष्य वर्ग। वे नहीं चाहते थे कि कोई पद लिया जाय। वाचस्पति गुरुदेव ने सन् 1946 में आचार्य, उपाध्याय आदि शास्त्रीय पदवियों का त्याग कर दिया था। अन्य पदों के प्रति भी उनके मन में तनिक सा भी आकर्षण नहीं था। उनका जीवन-मंत्र था— संघोत्थान के लिए अपना कण-कण खपा दूँ पर अधिकार और पदों से दूर-दूरतर रहूँ। मगर उन जैसे निर्लेप महापुरुष पर भी संघीय मुनियों का इतना दबाव पड़ा कि उन्हें भी चुप रहना पड़ा। हर ओर से एक ही तर्क दिया गया कि यदि आप यह दायित्व नहीं लेंगे तो नव निर्मित श्रमण-संघ तितर-बितर हो जाएगा। इस अनिष्ट आशंका ने प्रधानमंत्री पद स्वीकार करने के लिए विवश कर दिया। उनके नीचे 13 मंत्री और बना दिए। पंजाब और पैप्सू का इलाका पंडित श्री शुक्लचन्द जी म. के हवाले किया तथा हरियाणा बांगर, जंगल देश, दिल्ली पंजाब-केसरी श्री प्रेमचन्द जी म. के।

भीनासर सम्मेलन में लाउडस्पीकर के मसले ने अधिक विक्षेप पैदा किया। कुछ संतों की प्रेरणा से सैंकड़ों युवकों ने अपनी कमीजों पर 'समय की मांग है, लाउडस्पीकर खोलो' के बैज लगा लिए थे। कुछ मुनियों ने अपने पुराने संबंधों की दुहाई देकर वाचस्पति गुरुदेव के अन्तेवासी पूज्यपाद श्री रामप्रसाद जी म. से समर्थन मांगा कि आप ध्वनियंत्र खोलने के पक्ष में आ जाओ। उन्होंने कहा— पहले बिजली की सचित्तता अचित्तता का निर्णय हो जाय, फिर ध्वनियंत्र की बात आगे जाएगी, उससे पहले नहीं।

वाचस्पति गुरुदेव इस विषय में संतुलन रखना चाहते थे। वे चाहते थे कि 90% मुनियों की भावना को अधिमान भी दिया जाय और 10% की बात भी सुनी जाय। उन्होंने अपना सारा जीवन जैनत्व के प्रचार प्रसार में लगाया था। अतः प्रचार-प्रसार के लिए ध्वनिवर्धक की उपयोगिता को समझते थे। साथ ही जानते थे कि जैनत्व की मूल भूमिका त्याग, तपस्या, साधना, सूक्ष्मतम अहिंसा पर टिकी हुई है। आचार पालन ही साधुत्व का प्रथम व अंतिम मानदण्ड है। अतः बिजली को सचित्त मानकर अन्य सभी उपकरणों पर शत-प्रतिशत प्रतिबंध लगाना चाहिए। अन्यथा सुविधावाद की आंधी में जैन साधुता का ढांचा बिखर जाएगा। मगर इस संतुलन को कोई भी पक्ष समझ नहीं पाया। ध्वनिवर्धक के समर्थक धीरे-धीरे विद्युत् संचालित हर उपकरण को खोलने की इंतजार में थे और विरोधी लाउडस्पीकर के नाम से बिदकते और बिफरते जा रहे थे। उनका सीधा सा फतवा था– जो एक बार लाउडस्पीकर में बोले उसको दीक्षाच्छेद का प्रायश्चित दिया जाय। दोनों पक्ष जोश में थे। कोई होश की भाषा न बोल रहा था न सुन रहा था।

श्री भागमल गैलड़ा, जो बहुत प्रबुद्ध श्रावक थे, उनकी उपस्थिति में गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. ने कवि श्री अमर मुनि जी म. से बिजली की सचित्तता के वैज्ञानिक और आगमिक प्रमाण प्रस्तुत किए। जिनका निराकरण कवि जी म. नहीं कर सके। ये दिगर बात है कि उन्होंने उन प्रमाणों को स्वीकार नहीं किया।

ध्वनियंत्र के विवाद ने इतना तूल पकड़ लिया कि सम्मेलन में एक अस्पष्ट शब्दावली और भावार्थ की दृष्टि से द्वयर्थी (Double meaning) प्रस्ताव पास कर दिया और दोनों पक्षों ने उसके भिन्न-भिन्न अर्थ निकाल लिए। प्रस्ताव की शब्दावली थी– "ध्वनिवर्धक यंत्र में बोलना मुनि परम्परा नहीं है। यदि अपवाद में बोलना पड़े तो उसका प्रायश्चित लेना होगा। किन्तु स्वच्छन्द रूप से ध्वनियंत्र का प्रयोग नहीं करना चाहिए।"

इस प्रस्ताव पर भी सर्व सम्मति नहीं हुई। उपा. श्री हस्तीमल जी म., श्री पन्नालाल जी म. तथा श्री नाना लाल जी म. तटस्थ रहे। श्री लालचन्द जी म. ने विरोध में वोट दिया। इस प्रस्ताव में कुछ अस्पष्टता रही। 1. अपवाद का स्वरूप नहीं बताया 2. प्रायश्चित की मात्रा नहीं बताई। 3. बोलने की परम्परा नहीं है तथा स्वच्छन्द प्रयोग नहीं करना चाहिए उसका कारण नहीं बताया।

ध्वनिवर्धक विरोधी वर्ग ने अर्थ निकाल लिया कि बिजली सचित्त है, इसलिए सामान्यतः बोलना मुनि परम्परा नहीं है। प्रायश्चित आता है, सचित्त होने के कारण। स्वच्छन्द प्रयोग नहीं करना, विद्युत् की सचित्तता की वजह से।

ध्वनिवर्धक समर्थकों ने अर्थ निकाल लिया कि अपवाद स्वरूप बोला जा सकता है।

श्रमण संघ के पदाधिकारियों के अधिकारों के विषय में चर्चा तो हुई पर निर्णय वही रहा जो सन् 1952 के सादड़ी सम्मेलन में लिया गया था। जैसे कि—

1. श्रमण संघ के एक आचार्य रहेंगे, जिनकी निश्राय में श्रमण-संघ के सब साधु-साध्वी रहेंगे।
2. आचार्य श्री यदि अतिवृद्ध हों अथवा कार्य करने में अक्षम हों तो मंत्रीमण्डल 'उपाचार्य' को नियुक्त करेंगे और उपाचार्य श्री जी आचार्य जी के सब अधिकार संभालेंगे।

[1] इसके अलावा नौ धाराएं और लिखी गई और अन्त में नोट लिखा 'जहाँ-जहाँ आचार्य शब्द है वहाँ-वहाँ आचार्य और उपाचार्य दोनों समझें।

एक आचार्य और एक शिष्य का प्रस्ताव सादड़ी की तरह भीनासर में भी अछूता रह गया।

4-5-6 अप्रैल को विनयचन्द्र जी की अध्यक्षता में श्रावक सम्मेलन भी हुआ। देश के गृहमंत्री श्री गोविंद वल्लभ पंत ने उसका उद्घाटन

1 उपाचार्य और मंत्रीमण्डल की नियुक्ति सन् 52 व 56 दोनों सालों में हुई। ये तथ्य प्रमाणित करता है कि आचार्य का उस समय नामांकन केवल गरिमा के लिए था न कि संघ संचालन के लिए।

किया था। श्रावक सम्मेलन के सैकड़ों प्रस्तावों में एक प्रस्ताव ध्वनिवर्धक का भी आ गया, जिसने उनके सम्मेलन का वातावरण खराब कर दिया। कुछ लोगों ने प्रस्ताव रख दिया कि "ध्वनियंत्र का उपयोग बहुजन संख्या के कारण आवश्यक हो गया है और श्रमण-संघ ने पास किया है कि ध्वनियंत्र में बोलना मुनि परम्परा नहीं है, यदि अपवाद में बोलना पड़े तो प्रायश्चित लेना होगा, पर स्वच्छन्दता पूर्वक प्रयोग न हो। इस प्रस्ताव को लक्ष्य में रखकर जिन संघों को ध्वनियंत्र का प्रबंध करना आवश्यक हो, वे कर सकते हैं।"

इस प्रस्ताव के बोलते ही जनता में हो हल्ला हो गया। लड़ाई-झगड़े की नौबत आ गई। वातावरण को शान्त करने के लिए मधुकर केसरी जैसे मुनिराज ने खुलकर कहा कि श्रमण संघ ने लाउडस्पीकर बिल्कुल नहीं खोला है। तब जाकर कुछ शान्ति पड़ी।

कुल मिलाकर भीनासर सम्मेलन भी उत्साहपूर्वक सम्पन्न हो गया। प्रधानमंत्री के तौर पर वाचस्पति गुरुदेव ने महावीर जयन्ती के उपलक्ष्य में प्रकाशित संदेश प्रसारित किया।

प्रधानमंत्री का दायित्व आते ही उनके पास भारत भर के साधु-साध्वियों के, कांफ्रेंस के पदाधिकारियों के, सामान्य जनता के पत्र आने शुरू हो गए। अपनी ओर से उत्तर देना, नए आदेश-संदेश जारी करना दुःसाध्य कार्य था। उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म. ने रास्ता बना दिया। पंडित लालचन्द मुणोत काफी अर्से से उपाचार्य जी के साथ रहकर पत्र-व्यवहार का कार्य करते थे। उनको वाचस्पति गुरुदेव के सान्निध्य में छोड़ दिया। वाचस्पति गुरुदेव एवं पूज्य श्री गणेशीलाल जी म. की निकटता बढ़ती गई। सादड़ी, सोजत, जोधपुर चातुर्मास के दौरान की आपसी नजदीकियाँ अब भीनासर आते-आते प्रगाढ़ हो गई थीं। दोनों में संयम और संगठन के प्रति एक जैसा जोश था। भीनासर सम्मेलन के पश्चात् दोनों महापुरुषों का थली प्रदेश में सह विचरण चला। अक्षय तृतीया का पर्व आया। गोगोलाव— एक छोटा सा गांव— उसे यह भव्य अवसर प्रदान किया। उस अवसर पर पूज्य आचार्य श्री आत्माराम जी म.

के प्रशिष्य श्री फूलचन्द जी 'श्रमण', श्री प्रेमचन्द जी म. भी उपस्थित हुए थे। ये ज्ञानध्यान के प्रति समर्पित, वाचस्पति गुरुदेव के प्रति श्रद्धावान मुनिराज थे। इनको दीक्षा से पूर्व जैन धर्म की ओर अग्रसर करने में, नवकार मंत्र, सामायिक के पाठ सिखाने में वाचस्पति गुरुदेव एवं श्री रामजीलाल जी म. ने प्रवृत्त किया था। अक्षय तृतीया पर कई बहनों के वर्षी-तप के पारणे हुए। पारणों के लिए गन्ने के रस की रस्म पूरी करनी आवश्यक मानी जाती है। गन्ना उस इलाके में होता नहीं, न ही कोल्हू आदि होते। इस कार्य की संपूर्ति हेतु सैकड़ों मील दूर इलाके से गन्ना मंगवाया गया। उसको छीलकर छोटी-छोटी पोरियां काटी गई। उन्हें ऊखली में डालकर कूटा गया, फिर निकले रस को छानकर तपस्विनी बहनों का पारणा करवाया गया। इतने बड़े ताम-झाम को देखकर कुछ मुनियों ने सोचा कि इस परम्परा को हल्का-फुल्का परिवर्तित किया जाय।

उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म. की हार्दिक इच्छा थी कि प्रधानमंत्री जी म. मेरे साथ चातुर्मास करें। उधर कांफ्रेंस के अध्यक्ष श्री विनयचन्द जी चाहते थे कि वाचस्पति गुरुदेव मेरे नगर जयपुर में करें। उन्होंने वाचस्पति गुरुदेव से भावपूर्ण विनती की। वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया– आप उपाचार्य श्री जी से अनुमति ले लो, मैं तैयार हूँ। अध्यक्ष जी ने उपाचार्य जी से अपनी इच्छा जतलाई तो वे टाल नहीं सके और विक्रम संवत् 2013 सन् 1956 का चातुर्मास लाल भवन जयपुर को मिल गया।

श्री कवि जी म. के विद्वान् शिष्य श्री विजय मुनि जी म. ने 23 मई 1956 के 'जैन प्रकाश' में वाचस्पति गुरुदेव के व्यक्तित्व पर एक शानदार लेख लिखा, जिसमें उनके बाह्य आभ्यन्तर चारित्र का श्रद्धापूर्ण, तर्क प्रधान चित्रण किया।

जयपुर पधारने के लिए मेड़ता ब्यावर अजमेर-किशनगढ़ का रास्ता लिया। मौसम में गर्मी की भीषणता थी। न वृक्षों की छाया, न पानी की निर्दोष उपलब्धि, धूं-धूं करती लूएं, लम्बे विहार, युवा वृद्ध सभी मुनि हैरान परेशान मेड़ता स्टेशन पर पहुँचे। स्टेशन मास्टर जैन श्रावक था।

उसने संतों की हालत देखी और भांप गया कि इन्हें लू लगी है। Sun-stroke हो चुका है। तुरंत गुरुदेवों के पास आकर विनती की, आपको तत्काल विश्राम और उचित पथ्य पानी की सख्त जरूरत है। वैसे तो शिकंजी अधिक उपयुक्त रहेगी, पर वो निर्दोष मिल सके संभावना कम है, पर आप मेरे घर चलें प्रासुक जल तो लें, संत गए। पानी के साथ उसके घर दही की मटकी भरी रखी थी। उसने सारी पात्र में उडेल दी। संत मना करते रह गए। उसने कहा गुरुदेव! ये मना करने का मौका नहीं है मेरे घर कोई कमी नहीं है। आप पधारें; लस्सी बनाकर पी लें, फिर विश्राम लें। मुनिराज उस श्रावक की सूझबूझ और सेवा भावना से अभिभूत हो गए। स्थान पर आकर लस्सी बनाई, पीने के बाद लू का प्रकोप टल गया।

वाचस्पति गुरुदेव ब्यावर पधारे। वहाँ की समग्र जनता प्रधानमंत्री के नाते पलक पांवड़े विछाए प्रतीक्षा में बैठी थी। लेकिन वाचस्पति गुरुदेव ने प्रवेश से पहले जानकारी ली क्या यहाँ की सभी स्थानकों का विलीनीकरण होकर 'वर्धमान श्रावक संघ' बन चुका है। पता चला कि सभी स्थानकें अपने पुराने सम्प्रदाय वाले नाम से काम कर रही है। चार साल में कोई चरण नहीं उठा कि सादड़ी सम्मेलन के अनुसार सम्प्रदायों के नाम वाली स्थानकों की जगह एक रूपता बनाई जाय। साम्प्रदायिक नाम वाली स्थानकों में श्रमण संघ के साधु-साध्वियों के ठहरने पर पाबंदी भी लगा दी थी फिर भी साधु-साध्वी ठहरते आ रहे थे। पर वाचस्पति गुरुदेव तो नियम-निर्माण और नियम पालन को बराबर महत्व देते थे। प्रधानमंत्री बनने पर तो जिम्मेदारी और बढ़ गई थी। इसलिए वे ब्यावर शहर के अन्दर किसी भी स्थानक में नहीं ठहरे अपितु शहर से बाहर दिगम्बर समाज की निसीयों में रुके और प्रवचन फरमाते रहे। सारा शहर प्रवचन सुनने वहाँ पहुँचता रहा। रौनकों के अम्बार लग गए। वाचस्पति गुरुदेव को असूलों से इधर-उधर करना किसी के बस की बात नहीं थी।

जैसे ही किशनगढ़ से वाचस्पति गुरुदेव का विहार हुआ, जयपुर के वृद्ध युवा सब हरकत में आ गए। श्रावक श्री गुमानमल जी चोरड़िया,

उग्रसेन बोथरा, स्वरूपचन्द नौलखा आदि का जत्था 35 मील पहले ही उपस्थित हो गया। वाचस्पति गुरुदेव ने 36 वर्ष पूर्व पूज्यपाद श्री छोटेलाल जी म. के चरणों में जयपुर में चातुर्मास किया था और इस साल श्रमण संघ के शिखर पुरुष बनकर चातुर्मास करने पधार रहे थे। 13 जुलाई को प्रातः 8.30 बजे भव्य प्रवेश हुआ। साधु-समाज, श्रावक-समाज के सामने जो जो चुनौतियां थी उनका जिक्र करके उन्होंने विशेष हिदायत दी कि प्रातः व्याख्यान तथा दोपहर की वाचना के अलावा साध्वियां हमारे साधुओं के स्थान पर आने का कष्ट न करें।

उन्होंने सम्पूर्ण श्रमण संघ के साधु-साध्वियों से अपील की कि हमारे साधु-साध्वियां एक स्थान पर अधिक संख्या में न ठहरे। दो-दो व तीन-तीन की टोलियों में गांव-गांव व नगरों में विचरे।

साधु-साध्वी श्रावकों के लिए जंगम ज्ञानशाला बनें, उन्हें धर्म सिखाएं। कांफ्रेंस के मंत्री धीरजभाई तुरखिया उस दिन विशेष रूप से आए थे। उन्होंने कहा कि भारतीय लोकतंत्र में जो स्थान पंडित नेहरु जी का है, श्रमण संघ में वही स्थान प्रधानमंत्री श्री मदनलाल जी म. का है। उनके नेतृत्व में श्रमण संघ व स्थानकवासी धर्म का उत्थान होगा।

चौड़े रास्ते पर स्थित लालभवन का कण-कण वाचस्पति गुरुदेव के चरणों की रज से धन्य हो रहा था। वहीं पर स्थविर श्री ताराचन्द जी म., मंत्री श्री पुष्कर मुनि जी म. एवं उनके शिष्य अपने गुरुवर की सेवा समाधि में लीन रहते थे। अतः प्रवचनादि का दायित्व वाचस्पति गुरुदेव के ऊपर था।

चातुर्मास में इस मुनिमण्डल से वाचस्पति गुरुदेव एवं अन्य संतों का आत्मिक प्रेमभाव रहा। एक दूसरे की भावनाओं को समझने का मौका मिला। बहुत करीब आए। श्री पुष्कर मुनि जी म. ने वाचस्पति गुरुदेव की नीतियों का खुला समर्थन किया।

आपसी लगाव का प्रमाण है कि चातुर्मास समाप्ति से दो दिन पूर्व महास्थविर श्री ताराचन्द जी म. को लकवे का प्रकोप हो गया। उन्हें जीवन का अंतिम छोर दिखाई देने लगा। तब उनके कहने पर

वाचस्पति गुरुदेव ने उन्हें संथारे का प्रत्याख्यान करवा दिया। सायंकालीन प्रतिक्रमण वाचस्पति गुरुदेव ने स्वयं सुनाया। बाद में प्रसन्न होकर बोले— 'मदनलाल जी, प्रतिक्रमण चोक्खो सुणायो।' उनके ये अंतिम शब्द वाचस्पति गुरुदेव के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन में इतिहास बद्ध हो गए। सूर्योदय से पूर्व उनका देहावसान हो गया। और्ध्वदैहिक क्रिया के पश्चात् श्रद्धांजलि सभा हुई।

वाचस्पति गुरुदेव निर्लेप भाव से अपना फर्ज अदा किए जा रहे थे। संवैधानिक सीमाओं के अन्तर्गत रहकर संघोत्थान की नित्य नूतन योजनाएं प्रदान कर रहे थे। उन्हें पद का आकर्षण नहीं था पर संघीय मुनियों ने दायित्व दिया तो निभाने में कोताही नहीं बरती। फिर भी कभी-कभी उन्हें प्रतीत हो रहा था कि मुनि संघ की दिशा बदलती जा रही है। संतों का एक वर्ग जो उनके सर्वाधिक निकट रहा था, अत्यन्त विश्वस्त और प्रभावित रहा था उसे उनका विशुद्ध जीवन सुहा नहीं रहा था। कुछ मुद्दे वाचस्पति गुरुदेव के सामने उभर कर आए।

1. आचार्य प्रवर श्री आत्माराम जी म. के अधिकारों और उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म. के अधिकारों में टकराव आने लगा है। प्रधानमंत्री दोनों की आज्ञा पालने के लिए बाध्य हैं। आचार्य जी के प्रति पुरानी निष्ठा, स्नेह संबंधों एवं आत्मीयता के कारण तथा उपाचार्य को पूरे मुनि संघ ने सत्ता प्रदान की थी इस कारण प्राचीन प्रेम और सिद्धान्त प्रेम का तालमेल टूटने के करीब है। काफ्रेंस ने पूर्व प्रधानमंत्री श्री आनन्द ऋषि जी म. के कार्यवाही लेखक श्री आईदान जी म. के रजिस्टर के आधार पर सम्मेलन की कार्यवाही छपवाई थी और छपने से पहले वाचस्पति गुरुदेव-नए प्रधानमंत्री जी को भी सरसरी तौर पर दिखाई थी। उस प्रकाशित कार्यवाही में आचार्य श्री जी के सम्बन्ध में यह नहीं छपा कि आचार्य जो-जो अधिकार उपाचार्य को देना चाहेंगे, देंगे, बाकी अपने पास रखेंगे। आचार्य श्री जी के पारिवारिक जनों ने आरोप लगाया कि नए प्रधानमंत्री जी ने आचार्य जी के अधिकार छीन लिए। जबकि यह विषय या तो आईदान

जी का था, या पूर्व प्रधानमंत्री का। कार्यवाही लेखक का यह कहना था कि यह विषय सभा में निर्णीत नहीं हुआ था इसलिए न रजिस्टर में लिखा और इसीलिए छपा भी नहीं। लेकिन बार-बार के प्रचार से पंजाब में यह भावना भर दी कि वाचस्पति जी महाराज आचार्य श्री जी के अधिकार छीन रहे हैं। साथ ही विद्रोह की भाषा के पत्र भी वाचस्पति गुरुदेव को दिए गए।

2. पंजाब के कई स्थानों पर संतों ने ध्वनिवर्धक यंत्र का प्रयोग किया। राजस्थान के साधुओं और श्रावकों ने पत्रों और पत्रिकाओं के जरिए प्रधानमंत्री जी से स्पष्टीकरण मांगा और अनुशासनात्मक कदम उठाने की अपील की। जब वाचस्पति गुरुदेव ने संबद्ध मुनियों से ध्वनि यंत्र के प्रयोग का कारण पुछवाया तो उन्होंने प्रधानमंत्री को चुनौती देनी शुरू कर दी और मनमानी का लाईसेंस लेना शुरू कर दिया। कईयों ने तो अपने प्रयोग पर आचार्य जी की मोहर लगने का दावा किया। वाचस्पति गुरुदेव ने आचार्य श्री जी के पास दो अगस्त को निवेदन पत्र लिखा कि आप इस विषय में कोई स्पष्ट निर्णय घोषित कर दें क्योंकि समग्र भारत की ओर से इस विषय में पूछताछ की जा रही है। मौजूदा अव्यवस्था दूर नहीं की गई तो मैं इस पद को छोड़ दूँगा। फिर भी अनिर्णय की स्थिति बनी रही।

3. वाचस्पति गुरुदेव ने भीनासर सम्मेलन के नियमों के सम्यक् पालन और जानकारी के लिए नौ नियमों की तालिका प्रसारित की थी। सब श्रावकों को निर्देश दिया था कि ये तालिका बोर्ड पर लिखवाकर स्थानक भवन में टांग दी जाय, जिससे संघ के भाई-बहन जानकारी हासिल कर सकें। श्रावक संघों ने वे बोर्ड तो तैयार कर दिए पर साधु-साध्वियों के एक वर्ग ने टांगने नहीं दिए, श्रावकों ने टांगे तो उतरवा दिए या स्थानक के उस स्थान पर रखवा दिए जहाँ किसी की नजर ही न जाए।

पुनः डेढ़ माह बाद वाचस्पति गुरुदेव ने सर्वजन हिताय 'आवश्यक सूचना' जारी करके पुछवाया कि निर्धारित नियमों का उल्लंघन क्यों किया जा रहा है? मगर यह निवेदन भी निरुत्तर ही रहा।

4. संभवतः आचार्य श्री के मानस में कहीं किसी ने संदेह पैदा कर दिया कि वाचस्पति जी म. आपके अधिकारों का हनन करना चाहते हैं या कर रहे हैं।

इन या इन जैसी अनेकानेक घटनाओं की पुनरावृत्ति ने वाचस्पति गुरुदेव को नए सिरे से सोचने के लिए बाध्य कर दिया। एक निर्लेप, निश्छल, निरभिमान, निर्भार, महामुनि ने 17 अक्टूबर 1956 को एक ऐतिहासिक दस्तावेज लिखा। जिसका नाम है 'त्याग-पत्र'। स्थान था— लाल भवन, चौड़ा रास्ता, जयपुर। काल था— चातुर्मास का उत्तरार्ध। साढ़े छः माह पुराने ओढ़े हुए एक पद को फटी चादर समझ तन-मन से उतार दिया। उस दस्तावेज के अल्फाजः—

"परम पूज्य आचार्य जी महाराज! आप संघ शक्ति के केन्द्र हैं, मूल स्रोत हैं। आपसे ही शक्ति पाकर हम लोग कार्यक्षम हो सकते हैं। पर इन दिनों श्रमण-संघ में जो समस्याएं पैदा होती हैं वे समाहित न होकर उलझ जाती हैं। समाज जितना शीघ्र समाधान की आशा रखता है उसे उतना ही निराश होना पड़ता है। सम्मेलन होते ही यह समस्या पैदा हुई कि ध्वनिवर्धक विषयक प्रस्ताव, जो सम्मेलन ने अस्पष्ट छोड़ दिया है, उसे स्पष्ट किया जाय। आप श्री जी को चाहिए था कि प्रस्ताव को अस्पष्ट देखते ही अध्यादेश निकलवाते कि प्रस्ताव अस्पष्ट है। या तो अमुक तिथि तक संघ के अमुक अधिकारी इसे सुलझा लें, नहीं तो उसके बाद मैं (आचार्य श्री जी) जो निर्णय दूँ सबको मान्य करना होगा। पर ऐसा न करके अपने शिष्य वर्ग को ध्वनियंत्र में बोलने की आज्ञा देकर संघ में अव्यवस्था पैदा कर दी। हमारे पास स्पष्टता के लिए कई मांगे आई। मैंने तो 2-8-56 के पत्र के द्वारा आप श्री जी के चरणों में प्रार्थना की कि या तो यह प्रस्ताव स्पष्ट होना चाहिए या मैं अपना पद छोड़ दूँगा। इस पर आप श्री जी ने कुछ ऊहापोह शुरू किया। मैं चाहता था कि यह कार्य जितना जल्दी आप श्री जी के हाथों से होगा, ठीक रहेगा। आचार्य जैसी सर्वोच्च सत्ता के हाथों से ही यह काम हो सकता था पर उस योजना को धीरज भाई द्वारा लाए गए घोषणा पत्र

ने निर्बल और असफल बना दिया। मैंने पुनः सोचा कि मामला कम से कम अधिकारियों द्वारा ही सुलझवाया जाय। अतः इस विषय में मत संग्रह करवाकर मांग की कि आपश्री उपाचार्य श्री जी से एकमत होकर निर्णय दें। पर अब तक उसका कोई उत्तर नहीं। अब दिनांक 2-8-56 के पत्र के उत्तर में मिला आश्वासन पूर्णतया समाप्त हो गया। अतः अपने पूर्व कथनानुसार मैं अपने पद से अलग हो रहा हूँ।

पद त्याग का दूसरा कारण यह है कि मुझे प्रधानमंत्री पद ग्रहण किए लगभग साढ़े 6 महीने होने जा रहे हैं। इस बीच मेरे ऊपर संघ ने जो उत्तरदायित्व डाला था, उसे निभाने का मैंने भरसक प्रयत्न किया। किन्तु साथ-साथ मैंने यह अनुभव किया कि आचार्य श्री जी जो संघ की सर्वोच्च सत्ता हैं, उनका रुख मेरे प्रति अविश्वास पूर्ण है और जब उच्चाधिकारियों के छोटे अधिकारियों के साथ संबंध अविश्वासपूर्ण हो जाते हैं तब नया काम कैसे हो सकता है? वे अपने आपसी अविश्वास में उलझ जाते हैं। दो व्यक्तियों के पारस्परिक कटु संबंधों की क्षति पूरे संघ को उठानी पड़ती है। भीनासर सम्मेलन के बाद आप श्री के हृदय में बिठाया गया कि मैंने दूसरी धारा प्रकाशित क्यों नहीं करवाई? मैं स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि प्रधानमंत्री को सम्मेलन की कार्यवाही जो सर्वसम्मत थी, जिस रुप में मिली उसमें से अपनी इच्छा या किसी के अनुचित दबाव से कुछ भी घटाने या बढ़ाने का अधिकार नहीं। सम्मेलन में जो हुआ, उसमें से क्या लिखा गया, क्या नहीं लिखा गया, इसकी जिम्मेवारी मेरी नहीं है और न ही उस समय इस देखरेख का अधिकार मुझे मिला। सम्मेलन के समाप्त होने के बाद भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री आनन्द ऋषि जी म. के तत्त्वावधान में ही प्रकाशनीय प्रस्तावों की तालिका तैयार हुई और मुझे चार्ज मिलने से पहले ही वह तालिका कांफ्रेंस के अधिकारियों को प्रकाशित करने के लिए दे दी गई। हाँ, देते समय मेरी सम्मति नवीन प्रधानमंत्री के नाते अवश्य ली गयी थी। प्रकाशित प्रस्तावों में दूसरी धारा को न पाकर यह अर्थ लगाया गया कि वह धारा मैंने निकाल दी। इसके लिए कार्यवाही की कापियां भी मंगवाकर देखी गई पर खेद है कि कार्यवाही में धारा

न होने का दोष भी मेरे सिर मंढ़ा गया। आक्षेप पूर्ण दबाव डाले गए कि मैं दूसरी धारा प्रकाशित करवा दूँ। पर वह मेरे अधिकार से परे की बात थी। मैं स्वयं मानता हूँ कि अधिकारों के विषय में श्रमण संघ के प्रस्ताव अस्पष्ट हैं। सबसे बड़ी भूल सादड़ी में हुई कि आप श्री जी जो कार्यक्षम हैं (जैसाकि एतद्विषयक पत्र-व्यवहारों से प्रतीत होता है।) को अक्षम मानकर व्यर्थ ही उपाचार्य पद का चुनाव हुआ। दूसरी गलती यह कि उपाचार्य चुनकर भी दूसरी धारा जोड़कर उनके अधिकारों को अस्पष्ट कर दिया गया। इस तरह ये दोनों धाराएं परस्पर टकराती रही। फिर भीनासर सम्मेलन में उसे स्पष्ट किए बिना ही एक नोट और जोड़ दिया गया। अतः मैं स्वयं ही इन अधिकारों के विषय में समाहित नहीं हूँ। संभव है आप श्री जी भी उलझन में हो। पर उलझन निकालने का यह तरीका बिल्कुल अनुचित प्रतीत होता है कि आप मेरे ऊपर आरोप लगाकर अनुचित दबाव डालें। अनुचित दबाव सहकर अनधिकृत कार्य करने की अपेक्षा मैं यह अच्छा समझता हूँ कि इस पद को छोड़ दूँ। मैंने कठोर होकर भी अपनी स्थिति स्पष्ट की। पर देखा गया कि जितना हम बढ़ते गए दोनों ओर से अविश्वास और कटुता बढ़ती गई और अन्ततः मुझे यह निर्णय करना पड़ा कि इस पद पर मैं बिल्कुल ना रहूँ।

विशेष प्रार्थनाः– मैंने यह त्यागपत्र इतनी शीघ्रता से इसलिए दिया है कि अग्रिम व्यवस्था के लिए जनरल कमेटी के सहयोग से आप श्री जी कोई विचार विमर्श कर सकें। जनरल कमेटी की अंतिम तारीख 21 अक्टूबर तक मैं यह कार्य करता रहूँगा। उसके बाद प्रधानमंत्री के नाम से मुझे कुछ प्राप्त होगा तो आपके चरणों में प्रस्तुत कर दूँगा और प्रधानमंत्री का दायित्व मुझ पर नहीं रहेगा।

मंत्रीमण्डल की व्यवस्था से संघ का अनुशासन ठीक चल सकेगा, ऐसा मुझे विश्वास नहीं है। इसके लिए आचार्य, उपाचार्य, उपाध्याय मण्डल, प्रवर्तक मण्डल की व्यवस्था ठीक जंचती है। जिन साधु-साध्वियों का उत्तरदायित्व आचार्य, उपाचार्य व उपाध्याय ले सकते हैं उनके सिवाय अन्य साधु-साध्वी अपना-अपना प्रवर्त्तक चुन लें। यदि यह व्यवस्था ठीक

बैठती हो तो इस पद का प्रश्न स्वयं ही समाप्त हो जाता है। यदि मंत्रीमण डल बनाए रखना है तो इस त्यागपत्र को प्रकट करना ही होगा। यह निश्चित समझें कि मुझे अब इस पद पर काम नहीं करना है। आशा करता हूँ कि आप श्री अपनी असीम कृपा, प्रेम अैर सौहार्द के साथ ही इस पद से मुझे विदा देंगे।"

हस्ताक्षरः—
लालचन्द मुणोत
प्रधानमंत्री जी म. की आज्ञा से

श्री लालचन्द जी मुणोत ने यह त्याग पत्र रजिस्टर्ड पोस्ट से तुरंत भेज दिया ताकि सुरक्षित रूप से समय पर पहुँच जाय। 21 तारीख को कांफ्रेंस की जनरल मीटिंग लुधियाना में होनी थी उसमें वस्तु स्थिति ज्ञात हो जाय और नए प्रधानमंत्री आदि चुनने की प्रक्रिया प्रारंभ हो जाय।

कांफ्रेंस के अध्यक्ष श्री विनयचन्द भाई से वाचस्पति गुरुदेव की चर्चा होती रहती थी। वे भी वाचस्पति गुरुदेव के विचारों के समर्थक थे पर परिस्थितियों के आगे विवश थे। वे कांफ्रेंस की 21 तारीख की जनरल मीटिंग के लिए जाने लगे तो त्याग पत्र की दूसरी प्रति वाचस्पति गुरुदेव ने उनको दे दी और आचार्य श्री जी को सौंपने के लिए कह दिया। उन्होंने लुधियाना जाकर पत्र आचार्य श्री जी को दे दिया और उन्होंने उसे अपने सिरहाने रख लिया। त्यागपत्र और उसके माध्यम से उठाए गए मुद्दे समाज के सामने नहीं आ सके।

लुधियाना से पत्र व्यवहार होता रहा पर जो संघानुशासन से संबद्ध विषय थे उन्हें समाहित करने की पहल किसी ने नहीं की।

21 अक्टूबर तक वाचस्पति गुरुदेव प्रधानमंत्री का कार्य करते रहे। उसके बाद आए सभी पत्र उन्होंने आचार्य श्री जी की सेवा में प्रेषित कर दिए। उधर से वापस भिजवा दिए गए। पर वाचस्पति गुरुदेव ने प्रधानमंत्री की हैसियत से फैसले लेने बन्द कर दिए तथा पत्र व्यवहार के लिए साथ रहने वाले पंडित श्री लालचन्द मुणोत को उपाचार्य श्री जी के पास वापस भेज दिया और निश्चिन्त हो गए।

पद लिप्सा या लिप्तता से सदैव पृथक् उनका मानस पुनः मूल स्थिति में आ गया। आत्माराधना, धर्मप्रभावना, समाज जागरणा का काम पूर्ववत् चालू रहा।

पूरे चातुर्मास में पांचों मुनिराज प्रातः 2-3 मील भ्रमणार्थ जाते थे। हर अष्टमी पक्खी को उपवास करते थे। महास्थविर श्री ताराचन्द जी म. की अंतिम समाधि में भरपूर साहाय्य प्रदान किया।

जयपुर चातुर्मास में पटियाला से गुरु भक्त बरखाराम जी दर्शनार्थ आए। उन दिनों किसी परेशानी में उलझ गए थे। चेहरे की उदासी वाचस्पति गुरुदेव ने पढ़ ली। पूछने लगे– बरखा! क्या बात है? श्रावक ने बताया– "बड़ी भारी चिन्ता में हूँ।" हंसकर बोले– "सारी चिन्ता यहीं छोड़ जा।" वाचस्पति गुरुदेव के एक वाक्य ने मन का भार हल्का कर दिया। घर आए तो चिन्ता का कारण भी दूर हो चुका था।

जयपुर चातुर्मास में तेरापंथ संघ के प्रमुख श्रावक श्री सोहनलाल दुग्गड़ जो प्रायः कलकत्ता में रहते थे वाचस्पति गुरुदेव के सम्पर्क में आए। प्रवचनों से प्रभावित तथा जीवन से अभिभूत हो गए। उन्होंने स्पष्ट रूप में स्वीकार किया कि गुरुदेव मैं अपनी परम्परागत मान्यताओं का कायल नहीं हूँ। मुझे आपके समाजोत्थान के विचार अच्छे लगते हैं।

वाचस्पति गुरुदेव ने प्रधानमंत्री के तौर पर काम करना बन्द कर दिया पर उपाचार्य श्री जी को ज्ञात नहीं था। समाज के अन्य साधु या साध्वी को भी नहीं। तथा सामान्य जनता इस बड़े कदम से तो सर्वथा अनभिज्ञ ही रही। उपाचार्य जी अपनी ओर से संघ में प्रचारित व प्रसारित करने के लिए कोई आदेश, अध्यादेश, नियम संविधानानुसार वाचस्पति गुरुदेव के पास भिजवाते थे। अब उन्होंने समाचार भिजवा दिया कि अब ये काम किसी और माध्यम से करें या करवाएं। मैं अब प्रचार-प्रसार नहीं कर सकता क्योंकि मैं अब त्याग-पत्र दे चुका हूँ। कुछ और स्थानों से जब पत्रादि आते तो उनको भी यही कहलवा दिया जाता। संघों में जब यह पता चला कि वाचस्पति श्री मदनलाल जी म. प्रधानमंत्री पद छोड़ चुके हैं तो सर्वत्र बम विस्फोट का धमाका

सा हुआ। हर ओर से एक ही प्रश्न पूछा गया क्या कारण बने त्याग पत्र के? क्या आपकी शिकायत है, क्या आपकी मांग है? वाचस्पति गुरुदेव ने सबको इतना ही कहा– मैं अपने कारणों को त्याग-पत्र में आचार्य श्री जी के पास लिख चुका हूँ। जो समाधान मिलेगा वहीं से मिलेगा। मैं किसी को कुछ नहीं कहूँगा। आचार्य श्री जी मेरे आराध्य और पूजनीय रहे हैं। ऐसा एक भी वाक्य नहीं कहूँगा जो उनकी गरिमा के प्रतिकूल हो। दूसरी बात उन्होंने स्पष्ट की कि मैंने प्रधानमंत्री पद छोड़ा है, श्रमण संघ नहीं। मैं इससे अलग होकर नया संघ या कोई ग्रुप नहीं बनाऊँगा। इस संघ का सामान्य साधु बनकर कार्य करूंगा। तीसरी बात मैंने व्यवस्था को सुधारने की मांग की है, किसी अधिकार या सत्ता की नहीं। जब तक संविधान के शब्दों की स्पष्टता नहीं हो जाती, मैं पद के साथ न्याय नहीं कर सकता।

वाचस्पति गुरुदेव पूर्णतः स्पष्ट थे अपने विषय में। न उन्हें पद का लोभ पहले था, न पद निभाते समय उत्कृष्टता की कोई अनुभूति की और न छोड़ने पर हीनता का कोई बोध हो रहा था। वे हर हालत में स्थिरचित्त थे। भावना यही थी कि नवनिर्मित संघ का ढाँचा अनुशासन, संयम, सुव्यवस्था और प्रेम की बुनियाद पर खड़ा हो।

जिस-जिसको त्यागपत्र का पता चला उसी ने दबाव डाला कि वापस ले लो, पर वाचस्पति गुरुदेव दबाव में नहीं आए, न उलझे। संघ के सभी संतों से प्रेम संबंध पूर्ववत् चलते रहे। पत्रादि का आवागमन भी जारी रहा। संतों से मिलना जुलना भी।

जयपुर से हरियाणा की ओर विहार हुआ। खण्डेला में पधारे। वहाँ उन्हें हार्ट की तकलीफ हो गई। कई वर्षों से शरीर स्वास्थ्य के प्रति उपेक्षा सी की जा रही थी। लंबे-लंबे विहार, कठोर जीवन शैली और काम का निरन्तर दबाव। शरीर पर असर आना शुरू हो गया। हार्ट की तकलीफ के कारण कुछ विश्राम लिया और फिर चल दिए। नारनौल में श्री फूलचन्द जी 'श्रमण' म. मिले। पुरानी आत्मीयता बदस्तूर कायम थी। एक जनवरी को वाचस्पति गुरुदेव भिवानी में विराजमान थे।

त्यागपत्र को लेकर भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण समाज में बनते जा रहे थे। कुछ अज्ञान वश, कुछ पूर्वाग्रह वश व कुछ प्रेम वश। सब अपने-अपने ढंग से टिप्पणी कर रहे थे। वाचस्पति गुरुदेव हर प्रक्रिया को सहजता से सुनते रहे, सहते रहे। उन्हें सबका पूर्वाभास था कि ऐसा ही होगा। सबसे बड़ी विलक्षण बात ये रही कि वाचस्पति गुरुदेव ने त्याग पत्र के कारण सार्वजनिक नहीं किए। जिनसे अपेक्षा थी उन्होंने समाधान नहीं दिए और लोग बिना कारण जाने बोलते रहे, लिखते रहे। कांफ्रेंस के अध्यक्ष ने त्यागपत्र की नकल मांगी तो भी गुरुदेव ने नहीं दी। लुधियाना जाने का अनुरोध बढ़ा तो भी मना कर दिया। कुछ पत्रिकाओं ने त्यागपत्र को आधार बनाकर श्रमण-संघ की आलोचना प्रारंभ कर दी। वाचस्पति गुरुदेव ने उनको भी हवा नहीं दी। उन्हें तो सुव्यवस्था चाहिए थी, न मनुहार, न सम्मान, न क्षमायाचना, न पद और कुछ नहीं। पूरे एक साल तक कांफ्रेंस के अध्यक्ष श्री विनयचन्द भाई का प्रत्यक्ष परोक्ष, पत्र, जैन प्रकाश आदि के माध्यम से आग्रह बना ही रहा कि आपको प्रधानमंत्री पद पुनः संभालना चाहिए मगर कोई प्रलोभन व आग्रह उन्हें विचलित नहीं कर पाया।

एक जगह उन्होंने लिखा कि "मैं भूत को नहीं देखता, सुदूर भविष्य को देख रहा हूँ। इसलिए मैं निरन्तर तटस्थ होता जा रहा हूँ। मुझमें इतनी धीरज नहीं कि हर समस्या की उपेक्षा कर अपने पद से चिपका रहूँ। इतनी सरलता भी नहीं कि सबकी हाँ में हाँ कर सबको खुश करने की नीति अपनाऊँ।"

वाचस्पति गुरुदेव का त्यागपत्र उस समय का सबसे ज्वलन्त प्रश्न था। मार्च 57 में विजयनगर में उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म., प्रान्त मंत्री श्री पन्नालाल जी म., उपा. श्री हस्तीमल जी म., प्रांत मंत्री श्री सहस्रमल जी म. आदि 27 सन्त और 27 साध्वियां एकत्रित हुए। सबने एक ही मांग की कि "वाचस्पति गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. ने सांघिक मामलों के सुधारों के लिए जो कदम उठाया है, उन सुधारों को क्रियान्वित किया जाय।" तथा वाचस्पति गुरुदेव को भी उन्होंने लिखा

कि पद संभाल लो। वाचस्पति गुरुदेव का उन्हें भी उत्तर था कि संघ के व्यवस्थित निर्माण के लिए मैं तैयार हूँ, पद ग्रहण के लिए नहीं।

भिवानी से वाचस्पति गुरुदेव हाँसी पधारे। वहाँ तपस्वी श्री बद्रीप्रसाद जी ने मंगल दर्शन किए। श्री तपस्वी जी म. तो स्वयं ये चाहते थे कि पदों का जंजाल गुरुदेव के ईर्द-गिर्द ना फैले। अब वह जंजाल हट चुका था तो उन्हें विशेष खुशी मिली। राहत की सांस ली।

अहं ब्रह्मास्मि

आत्मा माया से मुक्त होने पर ब्रह्म कहलाती है। वाचस्पति गुरुदेव भी साढ़े 6 माह एक स्वप्निल माया को ओढ़े रहे। उतार दी एक झटके से वह माया और बन गए निर्माय ब्रह्म।

वही पुराना धर्मचक्र प्रवर्तन प्रारंभ हो गया। हाँसी-हिसार-उकलाना से नरवाना पधारे। सारा बांगर झूम उठा। नरवाना श्री संघ ने वाचस्पति गुरुदेव से आगामी चातुर्मास संवत् 2014 सन् 1957 की भावना भाई। पुरजोर विनती की, लेकिन वाचस्पति गुरुदेव जी रोहतक मण्डी श्री संघ को हल्का सा संकेत कर चुके थे। अतः नरवाना वालों को आश्वासन नहीं दे पाए। उनकी मायूसी बढ़ने लगी तो बीच का रास्ता निकाला कि यदि प्रातःकाल रोहतक श्री संघ नहीं आया तो चातुर्मास नरवाना किया जा सकता है। इस हल्की सी आशा को लेकर नरवाना के लाला नौराताराम, भिक्खाराम, न्यादरमल जी आदि सुखद सपनों में खो गए, लेकिन अगले ही रोज सपना टूट गया क्योंकि रोहतक मण्डी समाज उपस्थित हो गया और चातुर्मास का तोहफा ले गया।

रोहतक प्राचीन काल से मुनियों की कर्मस्थली रहा था। पर इस बार रोहतक का नवविकसित मण्डी एरिया चातुर्मास स्थल बनाया गया। मण्डी बसने के बाद निकटवर्ती गांवों के परिवार आकर बसे और फिर स्थानक का निर्माण हुआ। अब चातुर्मास की बारी आई थी। वाचस्पति गुरुदेव उस क्षेत्र के निर्माण के विश्वकर्मा थे।

बड़ौदा की पावन धरा पर पधारे। चौधरी दरिया सिंह जैसे सुयोग्य हरियाणवी जैन कवि का भाग्य जाग उठा क्योंकि कई वर्षों की प्रतीक्षा के बाद उसके गुरुदेव का आगमन हुआ था। उसकी विशाल मित्र मण्डली एकत्र होकर धार्मिक भजनों से आकाश को हृदयाकाशों को गुञ्जायमान

रखती थी। आस-पास का सारा इलाका लाभ लेता था। चौधरी दरिया सिंह जैसे योग्य श्रावक को धर्म क्षेत्र में आगे लाने में वाचस्पति गुरुदेव की कृपा ही कारण थी। दिल्ली के पारसनाथ जैन स्कूल में उसकी शिक्षा-दीक्षा करवाने में वाचस्पति गुरुदेव ही निमित्त थे।

चातुर्मास के लिए रोहतक पहुँचे। स्थानक की लघुकाया में वाचस्पति गुरुदेव का समोसरण लगना शक्य नहीं था। अतः चैम्बर की धर्मशाला को प्रवचन स्थल बनाया। रोहतक बैठकर भी वाचस्पति गुरुदेव की आभाएं समग्र हरियाणा, पंजाब और दिल्ली को आलोकित करती रही। शेष भारत से उनका सम्पर्क बना रहा। प्रधानमंत्री पद से पृथक् हुए थे। संघीय स्थितियों के प्रति पूर्णतया सजग थे। उन्होंने जो चेतावनी संघीय ढांचे के बारे में दी थी अब वह श्रमण संघ के सामने विकराल चुनौती के रूप में उभरने लगी थी। सारे भारत से आवाज आ रही थी कि ध्वनियंत्र की समस्या का समाधान करो। आचार्य श्री जी को समाज और संत अपील कर रहे थे। लेकिन निर्णय इसलिए नहीं हो पा रहा था क्योंकि राजस्थान आदि अधिकतर प्रान्तों के शत-प्रतिशत साधु और साध्वियां एवं श्रावक वर्ग भी ध्वनियंत्र के प्रयोग के विरोध में थे जबकि आचार्य श्री जी के पारिवारिक मुनि खोलने के पक्ष में थे। किसको ठुकराएं किसको अपनाएं। अन्ततः आचार्य श्री जी ने उपाचार्य श्री जी को अधिकार दे ही दिया कि आप निर्णय ले लो। उन्होंने उपाध्याय मण्डल, केन्द्रीय और प्रान्तीय मंत्रियों से परामर्श किया और अध्यादेश जारी कर दिया कि "जब तक नया और अंतिम निर्णय न हो तब तक कोई साधु-साध्वी ध्वनि यंत्र में न बोले। यदि कोई बोलेगा तो उसे दीक्षाच्छेद का दण्ड दिया जाएगा और जब तक वह दण्ड नहीं लेगा तब तक कोई साधु उससे सांभोगिक संबंध (वन्दना, आहार-पानी, संयुक्त प्रवचन नहीं करना) न रखे। यदि कोई उससे संबंध रखेगा तो वह भी संबंधों से बाहर हो जाएगा।"

यह अध्यादेश सर्वप्रथम प्रसारणार्थ वाचस्पति गुरुदेव के पास आया। लेकिन पद त्याग के कारण मना कर दिया। फिर प्रान्तीय

मंत्रियों के माध्यम से इस अध्यादेश का प्रसारण करवाया गया। उत्तर भारत में दो प्रान्त मंत्री थे– पंडित श्री शुक्लचन्द जी म. तथा श्री प्रेमचन्द जी म.। दोनों ने यह अध्यादेश प्रसारित कर दिया। श्री प्रेमचन्द जी म. ने यह अध्यादेश अपने निर्धारित क्षेत्र में विचरने वाले वाचस्पति गुरुदेव के पास भी भिजवाया। तब वाचस्पति गुरुदेव ने अध्यादेश लाने वाले डॉक्टर लालचन्द जी को अपनी प्रकृति के अनुसार स्पष्ट कर दिया था कि मैं इसका पालन करूंगा पर यदि श्री प्रेमचन्द जी म. माईक में बोले तो हमारा उनसे भी संबंध विच्छेद होगा। पं. केसरी श्री प्रेमचन्द जी म. कुछ साल तक इस विषय में सावधान रहे और वाचस्पति गुरुदेव ने तब तक उनसे चातुर्मास-दीक्षा आदि की आज्ञाएं मंगवाई।

इधर पंडित श्री शुक्लचन्द जी म. इस अध्यादेश का प्रसारण कर उलझन में आ गए। श्री सुशील मुनि जी म. ने माईक में बोलने की आज्ञा श्री प्रेमचन्द जी म. से मंगवाई तो उन्होंने नियमानुसार मना कर दिया। श्री सुशील मुनि जी म. ने अपने मित्र मुनियों के माध्यम से आचार्य श्री जी से आज्ञा मंगवा ली। आज्ञा पत्र की भाषा में यह लिख दिया गया कि उपाचार्य जी का यह अध्यादेश असंवैधानिक है और आचार्य जी को अमान्य है। श्री सुशील मुनि जी म. को हरी झण्डी मिल गई। तथा अपने कार्यक्रम में पंडित श्री शुक्लचन्द जी को भी साथ ले गए। उन सब साधु-साध्वियों को श्री प्रेमचन्द जी म. ने प्रायश्चित का भागी घोषित कर दिया, जिनका ध्वनि प्रसारण यंत्र से स्वल्प सा भी संबंध था। तथा आदेश दे दिया कि जब तक ये दण्ड न लें तब तक शेष साधु-साध्वी उनसे अपना संबंध विच्छेद कर लें। इस आदेश के तहत वाचस्पति गुरुदेव के अनेक मुनियों से संबंध विच्छिन्न हो गए। यहाँ तक कि पूज्य आचार्य श्री आत्माराम जी म. से भी। ज़िन्दगी का बड़ा दर्दनाक मोड़ था। हुआ सब अधिकारों की अस्पष्टता तथा संविधान के प्रति अप्रतिबद्धता से, जिसकी चेतावनी वाचस्पति गुरुदेव ने गत वर्ष दे दी थी।

रोहतक चातुर्मास के मध्य उनके चरणों में तीन दीक्षार्थी बन्धु भी दर्शनों के लिए मार्ग दर्शन हेतु आते रहे। श्री प्रकाशचन्द जी, श्री पद्मचन्द जी एवं श्री शान्तिचंद जी चांदनी चौंक दिल्ली में कई वर्षों से वैराग्याभ्यास पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी म. के चरणों में करते हुए परिपक्व हो चुके थे। वाचस्पति गुरुदेव उनकी प्रगति से पूर्णतः सन्तुष्ट थे और उनमें अपने मुनि परिवार का भविष्य देख रहे थे। वाचस्पति गुरुदेव की संतुष्टि का प्रमाण-पत्र पाकर वैरागी उनके बंधुजन और पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. निश्चिन्त हो गए और दीक्षा की निश्चितता बनने लगी।

पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. ने निवेदन किया कि गुरुदेव आप श्री चातुर्मास के पश्चात् शीघ्र दिल्ली पधारें और विरक्तों को दीक्षा प्रदान करें। वाचस्पति गुरुदेव ने समाचार दिलवाया कि दीक्षा का मुहूर्त्त शुद्ध निकलवाएं। जालंधर के सुश्रावक श्री केसरदास जी से पृच्छा की तो उन्हें कोई उचित दिन नहीं मिल सका। तदन्तर पूज्य श्री कस्तूरचन्द जी म. ने माघ सुदी त्रयोदशी संवत् 2014 (2 फरवरी 1958) का दिन निश्चित कर दिया।

वाचस्पति गुरुदेव ने दूसरा समाचार यह भिजवाया कि मेरी दिल्ली आने की अनुकूलता कम है अतः आप ही सारी दीक्षा विधि सम्पन्न कर लेना। क्योंकि नवीन अध्यादेश के अन्तर्गत अपने अनेक निकटवर्ती मुनियों से संबंध कट चुके हैं और वे दिल्ली में विचर रहे हैं। उनसे न मिलूं तो मन नहीं मानेगा, मिलने पर संबंधों की अड़चनें आएंगी।

पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी ने निवेदन किया कि दीक्षाएं तो आपके हाथों से ही होंगी। जब तक आप नहीं पधारेंगे, दीक्षाएं टलती रहेंगी। ये कार्य आप श्री जी का है और आप ही सम्पन्न करेंगे। अन्ततः वाचस्पति गुरुदेव को मानना ही पड़ा और आने की स्वीकृति प्रदान कर दी। दिल्ली में इस सूचना से हर्षोल्लास छा गया।

उसी चातुर्मास के मध्य में ये भी निर्णय हुआ कि साध्वी श्री सुन्दरी देवी जी म. की निश्राय में वैरागन भागवन्ती जी की दीक्षा बुटाना गांव

में मार्गशीर्ष सुदी दसमी को होगी और वाचस्पति गुरुदेव दीक्षा पाठ पढ़ाएंगे। साध्वी वर्या श्री सुन्दरी देवी जी म. पर वाचस्पति गुरुदेव की विशेष अनुकंपा रही थी। अपने सान्निध्य में कई चातुर्मास करवाए थे। सम्मेलनों में ले गए थे। सन् 1949 में प्रथम शिष्या शांतिदेवी जी को दीक्षित किया था और इस साल भी रोहतक मण्डी में साथ चातुर्मास करवाया हुआ था। अतः उनकी दीक्षा पर भी वाचस्पति गुरुदेव का जाना तय हो गया।

रोहतक में ही शहर की स्थानक में साध्वीवर्या श्री धनदेवी जी म. का चातुर्मास भी चल रहा था। वार्धक्य और शिथिल स्वास्थ्य के कारण मण्डी में दर्शन करने नहीं आ पाती थी पर भावना बहुत रहती थी। अतः वाचस्पति गुरुदेव ही समय-समय पर दर्शन देने पधार जाते थे।

जैन समाज की सुरक्षा के लिए वाचस्पति गुरुदेव ने रोहतक में भी अपना जलवा दिखाया। वहाँ कोई अकेला साधु बगीचे में रहता था और उसने अपने पास एक मोटा कुत्ता पाल रखा था। घरों में आहार लेने जाता या अन्यान्य काम से जाता तो उस कुत्ते को साथ रखता। जैन समाज उसके इस कृत्य से बड़ी खिन्न थी, पर उसके क्रोधी स्वभाव से डरती भी थी। जैनेतर समाज के लोग ईशारा कर करके फब्तियां कसते थे कि जैनों का कुत्ते वाला साधु आ रहा है। समाज की इस परेशानी का वाचस्पति गुरुदेव को पता चला। उन्होंने अधिकारी व प्रबुद्ध श्रावकों को बुलाया और कहा कि उसे प्रेम से समझाओ माने तो ठीक नहीं तो सख्त एक्शन लो फिर मैं देखूंगा कि वह क्या करता है? कुछ निर्भीक समझदार श्रावक उसके पास गए और उसे कहा कि अपने धर्म की गरिमा की रक्षा करो और इस कुत्ते को रखना छोड़ दो। वह तो गाली गलौच पर उतर आया। श्रावकों ने उसकी मुंहपत्ती उतार ली और कह दिया– तूझे जो करना है सो कर ले। उसने इधर-उधर पैर मारे पर उसकी दाल नहीं गली। आखिरकार पुलिस थाने में पहुँच गया और वाचस्पति गुरुदेव के खिलाफ रिपोर्ट दर्ज करने को कहने लगा। मामले की तहकीकात करने थानेदार स्थानक में आया। पूछने लगा– आपने एक साधु की मुंहपत्ती

उतरवाई है क्या? वाचस्पति गुरुदेव ने थानेदार से पूछा— आपके नीचे काम करने वाला सिपाही यदि महकमे के नियमों के विरूद्ध आचरण करता है तो तुम क्या कदम उठाते हो? थानेदार बोला— हम उसे सस्पेंड करके उसकी बेल्ट उतार लेते हैं। वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया— "हम जैन साधुओं की भी एक नियमावली है जो साधु उसका पालन नहीं करता है, समाज उसकी मुंहपत्ती उतार लेती है। वह आदमी जैन साधु बनकर कुत्ते पालता है और जैन धर्म को कलंकित करता है। इसलिए उसका वेष लेना हमारा अधिकार है।" थानेदार संतुष्ट होकर चला गया और तथाकथित साधु की एक न चली।

चातुर्मास के पश्चात् वाचस्पति गुरुदेव बुटाना गांव में महासती श्री सुन्दरी देवी जी की वैरागन को दीक्षा देने हेतु पधारे। उत्साह और सादगी का सुन्दर समन्वय था। छोटा सा गांव धन्य हो उठा। दिल्ली से तीनों दीक्षार्थी भी उस अवसर पर उपस्थित हुए थे। दीक्षा की सम्पन्नता के पश्चात् शाम को गांव के प्रमुख श्रावक श्री मोतीराम जी की धर्मपत्नी सोना देवी का देहान्त हो गया।[1]

सारा समाज कहने लगा कि गुरु कृपा रही। यदि उनका देहान्त पहले हो जाता तो दीक्षा के कार्यक्रम में बहुत बड़ी बाधा आती। या तो दीक्षा स्थगित होती या सादगी के माहौल में होती।

बुटाना से गोहाना होते हुए गन्नौर पदार्पण हुआ। वहाँ दिल्ली के कुछ श्रावक दर्शनों के लिए आए। बातचीत के दौरान ज्ञात हुआ कि दिल्ली बारादरी में पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. के पास श्री सुशील मुनि जी म. आए थे और उन्हें पूज्य गुरुदेव ने वन्दना व्यवहार न करने कराने के लिए संकेत किया था। क्योंकि प्रेमचन्द जी म. के द्वारा प्रसारित अध्यादेश का उल्लंघन करने से सांभोगिक संबंध टूट गए थे। परन्तु श्री सुशील मुनि जी म. नाराज हो गए और असम्बद्ध प्रलाप करने लगे। बाद में उन्होंने कांफ्रेंस के प्रमुख नेता आनन्दराज सुराणा को भड़का दिया और वह भी पूज्य गुरुदेव को अनाप-शनाप बक गया।

---

1 परम पूज्य श्री विनयचन्द्र जी म. के पिता-माता हैं श्री मोतीराम जी एवं सोनी देवी जी जैन।

पूज्य गुरुदेव तदपि शान्त रहे और सुराणा जी के खिलाफ खड़े लोगों को शान्त किया। कुछ देर बाद सुराणा जी भी क्षमा मांगने आए।

इस सारी घटना को सुनकर वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया– "मेरे शिष्य ने जो व्यवहार किया बिल्कुल सही किया है। नियमानुसार किया है। मैं उसे शाबासी देता हूँ।" वाचस्पति गुरुदेव के उत्तर से समग्र समाज संतुष्ट हुआ। संदेहग्रस्त मन भी असंदिग्ध हुए।

अब वाचस्पति गुरुदेव दिल्ली के लिए प्रस्थित हुए। संघ में तीन सधे हुए साधकों को प्रवेश देना था। दीक्षा के इस मंगलमय पर्व पर यों तो सैकड़ों साधु-साध्वी एकत्रित हो सकते थे क्योंकि गुरुदेवों के सबसे घनिष्ठ संबंध थे, अपने जमाने के बेताज बादशाह थे। किन्तु पिछले 5-6 महीनों की उठक-पटक के कारण सांभोगिक संबंध प्रायः छिन्न से हो गए थे अतः इस आयोजन को पारिवारिक स्वरुप देना ही उन्हें सामयिक लगा। अधिक हलचल से बचने के उद्देश्य से उन्होंने दिल्ली प्रवेश का दिन भी किसी को नहीं बताया। जिस रोज तीनों वैरागियों की केसर रस्म पूरी हुई, उसी रोज किसी ने सूचना दी कि वाचस्पति गुरुदेव नॉवल्टी सिनेमा के पास पहुँच चुके हैं। सभी मुनिराज, वैरागी वृन्द, सकल समाज तत्काल उनकी अगवानी में आगे पहुँचा। उनके स्थानक में पदार्पण मात्र से कार्यक्रमों में द्रुतता आ गई। तभी ज्ञात हुआ कि योगिराज श्री रामजीलाल जी म. भी दरियागंज पधार चुके हैं। वाचस्पति गुरुदेव उनसे मिलने, बारादरी में लाने के लिए चल दिए। मुनिमण्डल तो साथ-साथ था ही। दोनों महापुरुष मिलकर एकमेक हो गए। चांदनी चौंक में मेला लग गया पूज्य श्री मूलचन्द जी म., स्वामी श्री फूलचन्द जी म. भी यू.पी. से पधार गए। दो फरवरी को बड़ी भव्यता के साथ दीक्षा समारोह सम्पन्न हुआ। तीनों को दीक्षा पाठ वाचस्पति गुरुदेव ने पढ़ाया और पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी म. को शिष्य रूप में अर्पित कर दिया। पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. ने विनती की कि आप इन्हें अपना शिष्य बनाओ ताकि इनको ऊँचा गौरव व ऊँची विरासत मिल सके। वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया कि मैंने 6 शिष्यों के बाद शिष्य

न बनाने का नियम कर लिया था अतः अगली पीढ़ी तुझे ही संभालनी है। तुझमें और मुझमें अन्तर भी नहीं है। पूज्य गुरुदेव मौन हो गए। उस दीक्षा का सभापतित्व वाचस्पति गुरुदेव के परम श्रद्धालु श्री हरजस राय जी ने किया और वैरागी पद्मचन्द जी के पिता मा. शामलाल जी ने सभा का संचालन किया।

उसी शाम वाचस्पति गुरुदेव जी ने पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. को एक विशेष हिदायत दी कि 'अपना जीवन व्यवहार ऐसा बनाना कि जिससे नए मुनियों का मन पूरी तरह विश्वास से भर जाए। इन्हें अपना मन तुम्हारे सामने खोलने में संकोच न रहे।' नवदीक्षित मुनियों को भी विनय-संयम-सेवा के बहुमूल्य सूत्र प्रदान किए। 9 फरवरी की बड़ी दीक्षा से पूर्व वाचस्पति गुरुदेव ने तीनों मुनियों का प्रतिक्रमण सुना और त्रुटिहीनता देखी तो बहुत खुश हुए। नया संशोधन ये दिया कि कवि अमर मुनि जी म. द्वारा रचित 'पंच पद वन्दना' की बजाय त्रिलोक ऋषि जी म. द्वारा लिखित 'पंच पद वन्दना' पढ़ी जाय। क्योंकि सम्मेलनों में एकरुपता की दृष्टि से वही मान्य की गई थी।

दीक्षा के पश्चात् दिल्ली में विचरण चला। पूज्य श्री त्रिलोक चन्द जी म. तथा पंडित श्री शुक्लचन्द जी म. आदि मुनियों से मिलन हुआ।

वाचस्पति गुरुदेव जब चिराग दिल्ली ठहरे हुए थे तब उन्हें ज्ञात हुआ कि राजस्थान से उपाध्याय श्री हस्तीमल जी म. पधारने वाले हैं। आजकल में महरौली पधारेंगे। वाचस्पति गुरुदेव ने गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. के सहित दो मुनियों को उनके स्वागतार्थ महरौली भेज दिया। जब दोनों मुनि वहाँ पहुंचे तो वातावरण उन्हें प्रतिकूल मिला। उन्होंने वन्दना व्यवहार लेने देने से मना कर दिया। उन्होंने बताया कि आपके मुनियों का ध्वनिवर्धक में बोलने वालों से सांभोगिक संबंध है, ऐसा हमें गुड़गावां में श्री सुशील मुनि जी म. ने बताया है। गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. ने कहा— इस विषय में मुझे कुछ कहने का अधिकार नहीं है। मैं तो आपकी सेवा में उपस्थित हुआ हूँ। आप चिराग दिल्ली पहुँचकर गुरुदेवों से पूछ लीजिए। अगले रोज चिराग दिल्ली पदार्पण

हो गया। तब वाचस्पति गुरुदेव ने बात स्पष्ट की। "अक्टूबर 57 में उपाचार्य श्री जी म. ने ध्वनिवर्धक पर बोलने का निषेध किया है और बोलने वालों से संबंध रखने पर संबंध विच्छेद की घोषणा की है। उस घोषणा के बाद हमारा किसी भी ऐसे साधु-सती से संबंध नहीं है जो ध्वनियंत्र में बोलता हो। बल्कि इस मामले में तो हमारा पुराना सारा ढांचा ही बदल गया है। 2 फरवरी की दीक्षा पर हम किसी भी साधु सती को बुला नहीं पाए। इस अध्यादेश की घोषणा से पूर्व ध्वनियंत्र प्रयोक्ता संतों से हमारे मुनि संबंध रख लेते थे, पर वह अध्यादेश लागू होने से पहले की बात है।" उपाध्याय श्री हस्तीमल जी म. की सारी भ्रांति दूर हो गई और पुनः मधुरता की गंध बहने लगी।

वाचस्पति गुरुदेव नई दिल्ली कांफ्रेंस भवन में ठहरे हुए थे। एक रात आनन्द राज सुराणा उनके चरणों में बैठे थे। कहने लगे– संस्कृत भाषा का 'महावीराष्टक स्तोत्र' बहुत सुन्दर रचना है पर इसका अच्छा सा हिन्दी अनुवाद नहीं मिलता। यदि आपके पास हो तो देने की कृपा करें। वाचस्पति गुरुदेव ने श्री रामप्रसाद जी म. को संकेत किया। उन्होंने रात के अंधेरे में ही कच्ची पेंसिल से उसका पद्यानुवाद कागज पर लिख दिया और सुबह होते ही साफ करके सुराणा जी को सौंप दिया। इतनी उच्चस्तरीय रचना देखकर सुराणा जी दंग रह गए। उसी दिन 'जैन प्रकाश' का मुद्रण होना था। एक अप्रैल के उसी अंक में मुखपृष्ठ पर मुद्रित करवाकर सुराणा जी ने अपनी पसन्द की अभिव्यक्ति कर दी। कांफ्रेंस भवन में रहते-रहते ही पूज्य श्री सेठ प्रकाशचन्द जी म. अस्वस्थ हो गए। उपचार की अनुकूलता की दृष्टि से उन्हें धीरे-धीरे चांदनी चौंक लाया गया। उन दिनों पूज्य श्री शांति चन्द्र जी म. भी ढीले चल रहे थे। वाचस्पति गुरुदेव उनके देह संस्थान को देखकर लाड़ में 'लाला' कहते थे। उनका स्वास्थ्य दीक्षा के बाद प्रायः ढीला सा ही रहा। एक कमरे में दोनों को विश्राम के लिए लिटा दिया। वाचस्पति गुरुदेव जब भी उस कमरे में आते एक चुटकी लेते– 'एक तरफ सेठ है, दूसरी तरफ लाला है।' वातावरण में इन शब्दों से शहद सा घुल जाता था।

स्वाध्याय उनकी खुराक थी। जिसको खुद भी डटकर खाते थे मुनियों को भी खिलाते थे। प्रतिदिन मुनियों की सामूहिक वाचना की प्रथा चालू रखते थे। चांदनी चौंक में यही क्रम चालू रहा। पूज्य श्री रामप्रसाद जी म. मूल आगम पढ़कर मूलार्थ बता देते और विशेष व्याख्या वाचस्पति गुरुदेव करते। नवदीक्षित श्री पद्म मुनि जी म. को उन्होंने नंदीसूत्र की पहले तो मूल वाचना करवाई फिर कहा कि इसकी प्रतिदिन स्वाध्याय करते रहना, कण्ठस्थ हो जाएगा और ऐसा ही हुआ। पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी म. ने उन दिनों चांदनी चौंक में श्रावक श्राविकाओं को धर्मशिक्षण का जोरदार अभियान चलाया हुआ था। प्रवचन में भी विविध आगम याद करवाए जाते थे। कक्षाएं लगती परीक्षाएं होती, प्रमाण पत्र, पारितोषिक आदि भी दिए जाते थे। सारे क्षेत्र में एक क्रांति सी घटित हो रही थी। वाचस्पति गुरुदेव इस शिक्षण अभियान से परम संतुष्ट थे। साथ ही उन्होंने पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी म. को ये भी आदेश-निर्देश दे रखा था कि इस कार्य की संपूर्ति के लिए कोई भी 'संगठन' नहीं बनाना। पूज्य गुरुदेव जी म. ने उनकी हर आज्ञा स्वीकारी थी, यह भी उसी तरह सहर्ष स्वीकृत थी।

चांदनी चौंक की एक अद्भुत घटना पूज्य श्री शास्त्री जी म. की जुबानीः—

"मैं बारादरी में दूसरी मंजिल पर खड़ा था। श्रावक श्री श्योचन्द जी से कुछ पूछना था। ऊपर से आवाज लगाई "ऊपर आ जा।" श्योचन्द जी आए। मैं पूछताछ करके बैठ गया। श्रावक जी नीचे चले गए। वाचस्पति गुरुदेव ने मुझे बुलाया। मैं चरणों में गया। पूछने लगे— "क्या साधु श्रावक को किसी काम के लिए आज्ञा दे सकता है?" मैंने कहा— नहीं। "तो तूने श्योचन्द को ऊपर आने का आदेश क्यों दिया?" तुझे कहना चाहिए था दया पालो। वैराग्य काल में जो तुम्हारा और उसका नाता था, वह अब बदल गया है। इस बात का ध्यान रहे। मैंने सविनय आज्ञा को स्वीकारा।"

दिल्ली वाले वाचस्पति गुरुदेव के चातुर्मास के लिए बहुत लालायित थे पर वे स्वयं दिल्ली से बाहर निकलने को उत्सुक थे।

यू.पी. में बड़ौत और कांधला वालों का बहुत आग्रह बढ़ा तो बड़ौत को स्वीकृति प्रदान कर दी। शहर में वाचस्पति गुरुदेव मण्डी में साध्वीवर्या श्री केसरो देवी जी म.।

महावीर जयन्ती दिल्ली में मना यू.पी. की ओर विहार किया। कई वर्षों से सेवा में विराजमान पंडित श्री रणसिंह जी म. इस बार श्री योगिराज जी म. के चरणों में रहे, साथ ही स्वामी श्री फूलचन्द जी म. भी।

वाचस्पति गुरुदेव ने चातुर्मास से पूर्व यू.पी. के छोटे-बड़े अनेक गांव, मण्डी शहरों को लाभान्वित किया। खट्टा गांव (भण्डारी श्री बलवन्त राय जी की दीक्षा भूमि) में उपाध्याय श्री हस्तीमल जी म. से पुनः मधुर मिलन हुआ। उन्होंने यू.पी. का संक्षिप्त विचरण किया था और कोल्हापुर रोड, दिल्ली चातुर्मास के लिए लौट रहे थे।

वाचस्पति गुरुदेव का बड़ौत संवत् 2015 सन् 1958 का चातुर्मास अत्यन्त गरिमापूर्ण और उत्साह भरा था। बाहर के झंझावातों से मुक्त वे अपनी स्वाध्याय ध्यान की स्रोतस्विनी में निरन्तर गोते लगाते रहे। उस चातुर्मास में पूज्य गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. ने प्रसिद्ध जैन विद्वान् श्री मोहनलाल मेहता द्वारा लिखित Jain Psychology नामक शोध प्रबंध का हिन्दी अनुवाद किया और वाचस्पति गुरुदेव ने उसे तन्मय होकर सुना। उनकी ज्ञान पिपासा उन्हें प्रौढ़वय में भी नितान्त शिशु बना देती थी।

एक दिन बड़ौत शहर की स्थानक के नीचे केन्द्रीय खाद्य मंत्री श्री अजित प्रसाद जी का जलसा या बैठक थी। कार्यक्रम के बाद जैन भाईयों ने कहा ऊपर वाचस्पति गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. विराजमान हैं, आप भी दर्शन करके आशीर्वाद ले लें। मंत्री जी के पास या तो समय कम था या मन कम था, फिर भी समाज की बात मानकर ऊपर तक आ गए। वाचस्पति गुरुदेव के पास तक गए नहीं। पौड़ियों पर ही बोले–

'पूज्य महाराज श्री जी से विनती कर दो दर्शन दे दें।' श्रावक वर्ग फौरन वाचस्पति गुरुदेव के पास गया, निवेदन किया कि मंत्री जी की इच्छा है कि आप उन्हें वहाँ दर्शन दे दें। वाचस्पति गुरुदेव ने पूछा– "उन्हें कोई शारीरिक कष्ट है क्या?" श्रावकों ने कहा– "नहीं गुरुदेव! उन्हें थोड़ी जल्दी है।" वाचस्पति गुरुदेव ने कहा– "मैंने अजित प्रसाद जी को बुलाया नहीं था। उन्हें जल्दी हो तो जा सकते हैं। केवल मंत्री होने के वजह से मैं उनको वहाँ दर्शन देने जाऊँ यह मेरे वश की बात नहीं है। उनकी इच्छा हो तो आ सकते हैं, नहीं तो जा सकते हैं।" दोबारा कहने की किसी में हिम्मत नहीं थी। श्रावकों को अजित प्रसाद जी को ही कहना पड़ा कि आपके पास समय हो तो उनके दर्शन कर लें, जल्दी हो तो जा सकते हैं, वो तो आएंगे नहीं। श्री अजित प्रसाद जी को पता चला कि शाहों के शाह आज भी मौजूद हैं। जूते उतारकर अन्दर आए, वन्दना की। काफी देर बैठकर धर्म चर्चा की और प्रभावित होकर लौटे।

एक दिन कुछ पुलिस कर्मी स्थानक में चढ़ आए। कुछ गुस्से के मूड में थे। कहने लगे हम यहाँ की तलाशी लेंगे। वाचस्पति गुरुदेव को उनका यह व्यवहार बहुत गैर जिम्मेदाराना लगा। बिना अनुमति के पुलिस धर्म स्थानक में आई, इस वास्ते उन्होंने पुलिस वालों को अच्छी खासी झाड़ पिलाई। वे बेचारे सहमकर वापस चले गए। वाचस्पति गुरुदेव इसके बाद आराम से बैठे थे कि एक जैन भाई आया पैर पकड़कर कहने लगा– "आपने मुझे बचा दिया वरना मैं मारा जाता। आज हमारी दुकान पर टैक्स वालों का छापा था। मैं कुछ गोपनीय कागजात छिपाकर स्थानक में रख गया था। उन्हें कहीं से भनक लग गई। वे यहाँ मेरे कागज ढूंढने आए थे। पर आपकी डांट के आगे टिक नहीं पाए। मेरा तो आपकी कृपा से बचाव हो गया।" वाचस्पति गुरुदेव उस श्रावक की चालबाजी से बहुत नाराज हुए और उसे पुलिस वालों से भी ज्यादा डांट पिलाई। उसने भी सहर्ष सारी डांट बर्दाश्त कर ली क्योंकि उसका बचाव हो चुका था। डा. चेतनलाल, लाला सेठन लाल आदि प्रबुद्ध श्रावकों ने चातुर्मास में विशेष लाभ लिया और वाचस्पति

गुरुदेव की कृपा पाई। डा. चेतनलाल जी ने संवत्सरी पर्व की विज्ञप्ति प्रसारित की थी। उसमें उन्होंने लिखा कि पर्यूषणों में प्रतिदिन गरीबों के लिए भंडारा लगाया गया जिसमें 600 व्यक्तियों ने प्रतिदिन भोजन किया।

वाचस्पति गुरुदेव का सम्पूर्ण श्रमण संघ के मुनियों से भावनात्मक संबंध बना रहा। पत्रों का आदान-प्रदान भी होता रहा। परन्तु एक नया मोड़ संबंधों में ये आया कि पंजाब केसरी श्री प्रेमचन्द जी म. से भी सांभोगिक संबंध कट गए। वे अक्टूबर 57 के अध्यादेश से पूर्व ध्वनियंत्र में बोलते थे। जब उन्होंने उपाचार्य जी का अध्यादेश स्वयं प्रसारित किया तो स्वयं भी बोलना छोड़ा तथा औरों से भी छुड़वाया। जो नहीं माने उन्हें दण्ड का पात्र बनाया। लेकिन पंजाब केसरी जी म. पंजाब विचरण के सिलसिले में जब लुधियाना आए, तब आचार्य श्री आत्माराम जी म. से मिले तो उन्होंने कह दिया कि उपाचार्य जी का आदेश मैंने अमान्य कर दिया है अतः आप बोल सकते हैं। इस अनुमति के बाद उन्होंने ध्वनियंत्र का प्रयोग चालू कर दिया और वाचस्पति गुरुदेव को नियमानुसार, अपने पूर्व कथनानुसार उनसे भी संबंधोच्छेद करना पड़ा।

श्रमण संघ के आधिकारिक मामलों से सर्वथा अलिप्त रहने के बावजूद कांफ्रेंस के प्रबुद्धचिन्तक लोग प्रायः हर मंच से हर अवसर पर वाचस्पति गुरुदेव की चर्चा करते थे। उस समय स्थिति विकट हो चली थी, स्वच्छन्दता पनप रही थी, नए-नए काण्ड उभर कर आ रहे थे। आचार्य और उपाचार्य जी के परस्पर विरोधी आदेशों से सामान्य श्रद्धालु असमंजस में था। कई लोगों ने सलाह देनी शुरू कर दी कि व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव जी म. के नेतृत्व में सात साधुओं की काउंसिल बना दी जाय और प्रशासन के सर्वअधिकार उसे सौंप दिए जाएं। वाचस्पति गुरुदेव तो इन विचारों से ऊपर उठ चुके थे। उनका विचरण यू.पी. में हो रहा था। एक-एक गांव में संयम तप की ज्योति जगा रहे थे।

हिलवाड़ी[1] में एक पीड़ादायी घटना हुई। उनके तीसरे शिष्य श्री रामचन्द्र जी म. बिना किसी प्रकट कारण के कुपित हो गए। उत्तेजना की स्थिति में भाषा विवेक, मुनि चिन्हों का सम्मान एवं गुरुजन की विनय प्रतिपत्ति को भुला दिया। बड़ौत आकर सिरसली वालों की धर्मशाला में ठहर गए। वहाँ उनके गांव के कुटुम्बीजन रहते हैं। उन्हें उनकी यह हरकत बहुत अनिष्टकारी लगी। अगली सुबह उन्हें वाचस्पति गुरुदेव के चरणों में ले गए और संघ में शामिल करने की अनुनय विनय की। वाचस्पति गुरुदेव तो इच्छुक नहीं थे, पर समाज का सम्मान भी रखना था। अतः एक दिन का दीक्षाच्छेद देकर संघ में प्रवेश दिया। अब वे तीसरे शिष्य न रहकर छठे हो गए।

हिलवाड़ी ग्रामवासियों को उस समय की एक घटना स्मृतिगत रहती है और समय-समय पर जिक्र में आती है।

सूर्यास्त के बाद एक बार घबराए हुए कुछ बन्धु आए। गुरुदेव से कहा– हमारे नौजवान लड़के को सांप ने काट लिया है। आप घर आकर मंगलपाठ सुना दो। वाचस्पति गुरुदेव ने कहा– अब हम घर नहीं जा सकते यदि यहाँ ला सकते हो तो ले आओ। परिवार वाले चारपाई पर लिटाकर ले आए। वाचस्पति गुरुदेव ने 'विसापहार स्तोत्र' सुनाया और वह युवक स्वस्थ हो गया।

कांधला में पधारे तो चातुर्मास की विनती ने और जोर पकड़ा। पिछले साल भी उनकी भावना थी पर पूरी नहीं हो पाई थी। इस बार तो क्षेत्रवासी कटिबद्ध थे। वाचस्पति गुरुदेव भी चाहते थे कि पूज्य श्री कांशीराम जी महाराज की इस दीक्षा भूमि को सींचा जाय। अतः चातुर्मास का आश्वासन दे दिया। शेष क्षेत्रों को लाभ देने की भावना से विहार यात्रा प्रारंभ कर दी। शामली से मुजफ्फरनगर की ओर बढ़े। वहाँ पंजाब के ओसवाल परिवारों ने साग्रह निवेदन किया था। मार्ग बिल्कुल नया व अज्ञात था। आहारादि की अनुकूलता कम बन पाती थी। काम

1 श्री नरेश मुनि जी म., श्री सुधीर मुनि जी म., श्री वकील मुनि जी म., श्री अजय मुनि जी म. की जन्म-भूमि।

चलाना था। गन्ने की बहुलता वाला ईलाका होने से इक्षुरस की उपलब्धि बहुत होती थी, उसी से शरीर पोषण किया। प्रकटतः तो ज्ञात नहीं हुआ पर उस दौरान उन्हें शूगर की शुरूआत हो गई। इतनी वृद्ध अवस्था के बावजूद अब तक इस रोग से बचे हुए थे। चलते-चलते बड़ौत आए तो कुछ शक हुआ। टेस्ट करवाने पर ज्ञात हुआ कि शूगर बढ़ गई है। इस बात से वे तनिक भी हतोत्साहित नहीं हुए। शूगर बढ़ाने वाली हर वस्तु का तुरन्त प्रत्याख्यान कर लिया। इस आत्म नियंत्रण का परिणाम ये निकला कि नौ महीने बाद शूगर का रोग जड़ से खत्म हो गया।

वाचस्पति गुरुदेव अमींनगर सराय में विराजमान थे। मई का महीना था। अक्षय तृतीया संवत् 2016 (10 मई 1959) को दिल्ली में 9 साल से स्थिरवासी वाचस्पति गुरुदेव के ज्येष्ठ शिष्य बाबा श्री जग्गूमल जी म. संथारापूर्वक दिवंगत हो गए। 22 वर्ष का शुद्ध संयम पालने वाले अपने वयोवृद्ध शिष्य के वियोग से वाचस्पति गुरुदेव को हार्दिक कष्ट हुआ तदपि उनके पीछे विशाल मुनि परिवार जुड़ गया था, पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. उनके यश को बढ़ाने वाले हैं, इस बात से वाचस्पति गुरुदेव संतुष्ट थे। वहाँ से उन्होंने दिल्ली में संवेदना, ढाढ़स, आश्वासन का संप्रेषण किया और अपने चरणों में आने का संकेत कर दिया। पूज्य गुरुदेव भी नई मुनिमण्डली को लेकर वाचस्पति गुरुदेव के चरणों में पधारने हेतु यू.पी. की ओर बढ़े। बामनौली में आकर अपना मनोभार उनकी गोद में हल्का कर लिया। वाचस्पति गुरुदेव ने हर छोटे बड़े मुनि को अपनी कृपापूर्ण स्नेहिलता से सहलाया और आगे बढ़ने का उत्साह प्रदान किया। पूज्य गुरुदेव जी म. का मन था कि इस वर्ष का चातुर्मास बड़ों की छत्रछाया में करूं पर वाचस्पति गुरुदेव का मन था कि यू.पी. के कई क्षेत्रों को लाभ मिले और पूरे इलाके को पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी की क्षमताओं का पता चल सके। अतः स्वतंत्र चातुर्मास के लिए मना लिया।

उस वर्ष संवत् 2016 सन् 1959 में यू.पी. को चार चातुर्मासों का लाभ मिला।

1. कांधला में वाचस्पति गुरुदेव जी म.।
2. बामनौली में पूज्य श्री मूलचंद जी, श्री फूलचन्द जी म.।
3. अमींनगर में पंडित रणसिंह जी म., तपस्वी श्री बद्री प्रसाद जी म. ठाणे 4 तथा
4. बड़ौत में पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. सशिष्य ठाणे 5।

वाचस्पति गुरुदेव लघुमुनियों में संयम, आत्मनियंत्रण, समाचारी पालन की प्रेरणा भरते रहते थे। बकौल शास्त्री श्री पद्म चन्द जी म.–

"दिल्ली से पहली बार हमारा निर्गमन हुआ था। गांवों का सीधा सादा जीवन, खान-पान, रहन-सहन हमें बहुत भाया। दिल्ली में सुना करते थे कि गांवों में घी, दूध, दही, मक्खन की प्रचुरता होती है। उत्सुकता वश मैंने पूज्य श्री बलवन्त राय भण्डारी जी म. से मक्खन लाने की विनती कर दी, वे ले भी आए। जब माण्डले पर झोली खुली तो मक्खन दिखा। वाचस्पति गुरुदेव पूछने लगे– "भण्डारी! मक्खन क्यों लाया है" उन्होंने कहा कि पद्म ने मंगवाया है। तत्काल सभी नए संतों को बुला लिया और कहने लगे– "बिना रोग आदि पुष्ट कारण के, जीवन पर्यन्त मक्खन नहीं खाना। युवा संतों को विगय कम से कम लगाने चाहिए। मक्खन तो बिल्कुल नहीं।" यह कहकर सब संतों को जीवन पर्यन्त के लिए मक्खन का प्रत्याख्यान करवा दिया।"

कांधला चातुर्मास भी अपने आप में अनूठा ही चातुर्मास था। कांधलावासी सब कुछ भूल सकते हैं पर उस चातुर्मास की यादें उनके लिए भुलाने लायक नहीं हैं।

कांधला चातुर्मास ठाणे-3 से हुआ। वाचस्पति गुरुदेव जी म., श्री भण्डारी जी म. व गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म., पर कर्तृत्व इतना रहा मानों 30 मुनिराज हों। समग्र क्षेत्रवासियों की सेवा-वृत्ति रही। श्री बद्रीदास जी एवं श्री चेतनलाल जी तो बस स्थानक के लिए समर्पित थे। आम धारणा थी कि वाचस्पति गुरुदेव की इन पर विशेष कृपा होगी। एक दिन दोनों चरणों में बैठे थे। वाचस्पति गुरुदेव ने चेतनलाल जी से कहा– "चेतन, जो तूझे मांगना है अभी मांग ले।" श्रावक जी चुप

रहे। फिर दोबारा वही बात दोहराई तब भी श्रावक जी नहीं बोले। फिर तिबारा कहा, तब भी मौन रहे। उसे कुछ सूझ नहीं रहा था कि क्या माँगूं? बाद में बद्रीदास ने कहा— चेतन, तू चूक गया। गुरु म. निहाल हुए थे पर तेरी किस्मत में नहीं है। तू गूंगा बना रहा। चेतन लाल भी बस हाथ मलता रहा।

क्षेत्र में एक विषादपूर्ण घटना घटी। पद्मसेन नम्बरदार का पुत्र अचानक काल कर गया। वाचस्पति गुरुदेव उसकी धार्मिक भावना से बहुत प्रभावित थे। उसकी मृत्यु का इन्हें भी दुःख हुआ। फिर भी उन्होंने नम्बरदार के परिवार को बहुत संभाला और धैर्य दिया।

कांधला में दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों सहवर्ती समाज हैं। परस्पर प्रेम अच्छा है। तदपि कुछ सैद्धान्तिक चर्चाएं दोनों पक्षों में चलती रहती हैं। स्त्रीमुक्ति एक विवादित विषय है और यही अक्सर चर्चा में आता है। वाचस्पति गुरुदेव ने लाला पलटू मल जी से कहकर दिगम्बर मंदिर से षट्खंडागम की जयधवला और विजयधवला दो टीकाएं मंगवाई। बारीकी से अध्ययन किया। गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. की अन्वेषण एवं शोध परख प्रज्ञा ने उन स्थलों को ढूंढ निकाला, जिसमें स्पष्ट लिखा है कि स्त्री मोक्ष की अधिकारिणी है। दिगम्बरों के प्रारंभिक और मौलिक ग्रंथों में स्त्रीमुक्ति की स्पष्ट स्वीकृति है तो पश्चाद्वर्ती लेखकों की प्रस्तुतियों को अधिमान देने की आवश्यकता नहीं है। ये सांघिक धारणा कांधला चातुर्मास की देन है।

एक दिन प्रवचन करते-करते वाचस्पति गुरुदेव को हार्ट अटैक हो गया। परन्तु उन्होंने स्वयं को तत्काल संभाल लिया। कुछ दिन विश्राम लेना पड़ा फिर अपने रोजमर्रा के रुटीन में आ गए। व्याधियों से वे कभी हारा नहीं करते।

कांधला चातुर्मास का एक सौन्दर्य यह भी था कि बड़ौत व कांधला एकमेक हो गए थे। वहाँ पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी का चातुर्मास था। वहाँ प्रातः प्रवचन होता कांधला मध्याह्न में। दर्शनार्थी बन्धु दो-दो प्रवचनों का लाभ लेते थे। इसलिए दोनों जगह अतिरिक्त रौनकें होती

थी। गुरु शिष्य के निरन्तर सम्पर्क का आनन्द ही अद्भुत होता है। दोनों जगहों की विशेषताएं एक दूसरे क्षेत्र को उल्लास और उमंग से भरती रही। बड़ौत में उस वर्ष धर्म शिक्षण का कार्य विशाल स्तर पर चला। दिल्ली से मा. शामलाल जी ने परीक्षार्थियों के लिए सर्टीफिकेट तैयार किए। 'जैन धर्म परिषद्' के नाम से उस सर्टीफिकेट पर उत्साह वर्धन के लिए पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. ने अपने हस्ताक्षर किए थे। वाचस्पति गुरुदेव ने परीक्षा के हर चरण की अनुमोदना और सराहना की। केवल एक सावधानी दी कि मुनिगण अपने हस्ताक्षर न करें। पूज्य गुरुदेव जी म. ने उनके संकेत को आदेश से अधिक सम्मान दिया और स्वीकृत किया।

चातुर्मास पूर्ण हुआ। मिलन स्थान बड़ौत को चुना गया। अपनी कल्प व्यवस्थाओं को निभाने हेतु पूज्य गुरुदेव तब तक के लिए हिलवाड़ी ग्राम में पधार गए जब तक कि वाचस्पति गुरुदेव नहीं पधार जाते। वाचस्पति गुरुदेव में तो सर्व समाहितता थी। अतः जब वे पहुँचे तो सब नदी नाले गंगासागर में आ मिले। बड़ौत में अपने शिष्य प्रशिष्यों की कर्तृत्व शक्ति एवं पुण्यवत्ता देखकर वाचस्पति गुरुदेव भाव विभोर हो गए।

पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी की विचार सरणी की दिशा संघीय स्थितियों की ओर थी। उन्होंने देखा कि वाचस्पति गुरुदेव ने जिस सिद्धान्त को लेकर श्रमण संघ का निर्माण किया था और जिन कारणों से त्याग-पत्र देने को विवश हुए थे, उन कारणों का ज्ञान बहुत कम लोगों के पास है। जिन लोगों के पास है वे विशाल जनमत को समझा नहीं पा रहे हैं। अतः कुछ प्रबुद्ध श्रावकों का एक संगठन बन जाए तो वातावरण में कुछ जागरुकता सी बनी रह सकती है। उस संगठन का हरियाणा तक सीमित रुप उन्होंने अपने मन में व लिखित रूप में बना लिया और वाचस्पति गुरुदेव को दिखाया, निवेदन किया कि यदि आपकी अनुमति हो तो इसे मूर्त रूप दे दिया जाएगा और फिर इसे विस्तार करते हुए पंजाब, दिल्ली, यू.पी. तक प्रसृत कर दिया जाएगा। वाचस्पति गुरुदेव

को यह प्रारुप बड़ा जानदार लगा परन्तु कुछ गहन चिन्तन में डूब गए। फरमाने लगे– "सुदर्शन! तेरी योजना क्षमता और रचनाबल निराला है। परन्तु मेरे विचारानुसार वर्तमान स्थितियां किसी नए संगठन के निर्माण की नहीं हैं। संगठन बनाते ही अपने ऊपर आरोप लग सकते है कि श्रमणसंघ से त्याग-पत्र अपने नूतन संघ का निर्माण करने के लिए दिया है, जबकि हमारा ऐसा लक्ष्य न पहले था और न अब है। मैं तो बिखरी शक्तियों के एकीकरण के पक्ष में हूँ न कि प्रमुख संघ के बिखराव में। मैं आज चाहूँ तो तुझे आचार्य पद देकर नई व्यवस्था बना दूँ मगर इससे समाज में काँटे बिखर जायेंगे। आचार्य परम्परा से स्वयं दूर रहकर तथा तुझे दूर रखकर मैं राहों के कांटे साफ कर रहा हूँ।"

वाचस्पति गुरुदेव के चिन्तन को अपने लिए श्रेयवर्धक मानकर पूज्य गुरुदेव ने भी अपनी वह योजना हमेशा के लिए ठण्डे बस्ते में डाल दी और जीवन पर्यन्त नूतन संगठन निर्माण से बचे रहे।

बड़ौत मिलन पर तय हुआ कि वाचस्पति गुरुदेव तो हरियाणा की ओर पधारेंगे तथा पूज्य गुरुदेव यू.पी. का सघन अवगाहन करेंगे। बड़ौत से मलकपुर गांव में पधारे तो दिल्ली में रहने वाले अनेक परिवार अपने गांव का वैभव देखने व दिखाने पहुँच गए। एक मेला सा जुड़ गया। एक रात वाचस्पति गुरुदेव ने प्रवचन की कमान संभाली। विशाल सभा जुड़ी हुई थी। निकटता के कारण बड़ौत के सैकड़ों श्रद्धालु भी उपस्थित थे। ग्राम प्रजा भी थी। वाचस्पति गुरुदेव ने उस शांत नीरव वातावरण में जिनवाणी का दिव्य उद्घोष सुनाया, सुनाते रहे-सुनाते रहे-समय की सूईयां थम गई। न जाने क्या सरूर था, इलहाम था, सुनाने वाले गुरु म. सुनने वाले निस्तन्द्र! जब वाग्धारा रुकी तब ऐसा प्रतीत हुआ कि स्वर्गों से उतरकर पृथ्वीलोक पर आए हैं। सभी श्रावकों ने, मुनियों ने कहा कि ऐसा प्रवचन प्रथम बार सुना है।

छपरौली को लाभ दे यमुना को पारकर हरियाणा पधार गए। काफी क्षेत्रों को पावन किया, काफी को और करना था। मगर गन्नौर आने पर पुनः हार्ट अटैक हो गया। रात का समय था उपचार कुछ लेना नहीं

था। धैर्य से रात गुजारी। गन्नौर छोटी मण्डी जहाँ कार्डियोलोजिस्ट तो दूर एम.बी.बी.एस. भी उपलब्ध नहीं थे। साधारण आर.एम.पी. डा. श्री शिखर चन्द जी ने केस को अपने अनुभव और दक्षता से संभाल लिया। डा. साहब की सूझ-बूझ, वाचस्पति गुरुदेव का धैर्य, निश्चिन्तता की शैली ने स्वास्थ्य को पुनः पटरी पर पहुंचा दिया। ठीक हुए तो सोनीपत के लिए प्रस्थान कर दिया। तब तक सोनीपत मण्डी स्थानकवासी समाज की दृष्टि से उदीयमान क्षेत्र बनने की भूमिका तक आ चुका था। 30-40 परिवार समीपवर्ती गांवों से आकर बस चुके थे। मगर सामाजिक संगठन नहीं बना था, न धर्म ध्यान के लिए स्थानक था। मुनियों का आगमन होता था पर ठहरना कम था। चातुर्मास आदि तो बिल्कुल नहीं। भावना तो सबकी थी पर पूर्ति का मार्ग नहीं था। जब वाचस्पति गुरुदेव पधारे तब चातुर्मास करवाने की ललक उठी। तपस्वी श्री बद्रीप्रसाद जी का मन भी था कि इस क्षेत्र को दिव्य-भव्य चातुर्मास की सौगात मिले क्योंकि उन्हें सोनीपत मण्डी में संभावनाओं के सुप्तस्रोत, गुप्त खजाने नजर आए। वाचस्पति गुरुदेव का मानस भी तैयार हुआ, पर घोषणा नहीं की। लघु-गुरु गांवों को कृपा से सनाथ करते हुए जुलाना पदार्पण किया। महावीर जयन्ती निकट थी, जनता में उत्साह था। वाचस्पति गुरुदेव हों तो उत्साह कई गुना स्वाभाविक था। स्थानीय श्रावक लाला रामनारायण स्नेहीराम जी ने विनती की कि गुरुेदव मण्डी में जयन्ती का आयोजन होगा। उन्होंने वाचस्पति गुरुदेव से पूछा आप श्री की आज्ञा हो तो किसी बड़े स्तर के मिनिस्टर को ले आऊँ। वाचस्पति गुरुदेव जानते थे इनके राजनीति में लम्बे हाथ हैं और कहने मात्र से मिनिस्टर आ जाएंगे, फिर भी मना कर दिया और बोले– यदि उनको सुनना हो तो उन्हें बुला लो और यदि हमें सुनना है तो हमारे अनुसार महावीर जयन्ती मनाओ। बात समझ में आ गई और सारा कार्यक्रम वाचस्पति गुरुदेव के निर्देशन में पूर्ण धार्मिक वातावरण में सम्पन्न हुआ।

चातुर्मास का भी निर्णय करना था। पलड़े दो तरफ झुक रहे थे संगरूर और सोनीपत। वाचस्पति गुरुदेव का स्वयं का झुकाव तो संगरूर

की ओर था पर तपस्वी श्री बद्रीप्रसाद जी का सोनीपत की ओर। ऐसी स्थिति में एक मानसिक विचार बना लिया था कि एक निश्चित तारीख पर जो समाज पहले पहुँच जाएगी उसे ही चातुर्मास का उपहार दे दिया जाएगा। निश्चित तारीख आई और सोनीपत समाज सूर्योदय होते ही चरणों में हाजिर हो गई। संवत् 2017 सन् 1960 के चातुर्मास का नायाब तोहफा पाकर सोनीपत समाज धन्यातिधन्य हो उठी। वाचस्पति गुरुदेव ने उस वर्ष न केवल सोनीपत को ही कृतार्थ किया अपितु रोहतक को पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. का चातुर्मास देकर शिखरस्थ कर दिया।

जब वाचस्पति गुरुदेव जुलाना-जीन्द को फरसकर सफीदों पधारे तब तक पूज्य गुरुदेव भी यू.पी. फरसकर वहाँ पधार गए। अद्भुत संगम था, खुशनुमा समां था। उस समागम की एक मधुर स्मृति श्री शास्त्री जी म. के शब्दों में:—

"हम पावन गुरुदेव के चरणों में पहुँचकर वन्दनादि से निवृत्त हुए थे कि हम छोटे-छोटे संतों को एक ओर ले जाकर बोले— "गर्मी का मौसम है बोलो क्या चाहिए?" श्री प्रकाश मुनि जी म. संकोच वश कुछ नहीं बोले पर मैंने अपनी मांग रख दी—शर्बत पीने का मन है। मेरी सरल मांग पर खुश हो गए। तुरन्त पूज्य श्री रामप्रसाद जी म. से कहा— "किसी घर से अभी लेकर आ और छोटे मुनियों की प्यास शांत कर।" वे भी तत्काल ले आए। वाचस्पति गुरुदेव के हाथ का वह मीठा प्रसाद आज भी माधुर्य और शैत्य का वर्षण कर रहा है।"

चातुर्मासार्थ सोनीपत पदार्पण हुआ। समाज का अपना स्थान नहीं था। अतः अग्रवाल धर्मशाला में ठहरे। 30-40 घर होते हुए भी सारी मण्डी जैनमय बन गई। जैनों से ज्यादा अजैन उमड़े। समीपवर्ती गांवों के श्रद्धालुओं ने सोनीपत को धर्म-ध्यान का केन्द्र बना लिया। संवत्सरी पर ये आलम था कि लगभग 1100 पौषध तथा 2000 दर्शनार्थियों के अलावा स्थानीय भक्तों की गिनती आंकड़ों से पार पहुँच गई।

1960 के चातुर्मास में समाज ने निर्णय लिया कि धर्माराधना के लिए स्थानक बनानी है। धर्मशाला के सामने विशाल प्लाट खरीदने का

मन बना। उस योजना को बल देने वास्ते पहली दानराशि मानसा के श्रावक रामजीदास जी ने लिखवाई 1100 रुपये। उस युग में भारी रकम मानी गई। समाज ने वाचस्पति गुरुदेव जी से विनती की कि उस प्लाट पर अपने चरण डाल दें, पर उन्होंने इंकार कर दिया। वे उस नवनिर्माण से स्वयं को प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष सम्बद्ध नहीं करना चाहते थे। श्रावकों के कार्य से स्वयं को पृथक् रखने की कला उनके पास थी।

उनके प्रति जनमानस में जो श्रद्धा भाव था, वह सीमाओं में नहीं बंधता था। प्रमाण प्रस्तुत हैः—

8 जुलाई को चातुर्मास का प्रारंभ हुआ। 10 जुलाई को उनके पास भक्त श्रावक श्री बनवारी लाल जी (सांधल वाले) के आंगन में द्वितीय पुत्र ने खुशियां भरी। 11 तारीख को सायंकाल ही श्री बनवारी लाल जी वाचस्पति गुरुदेव से आग्रह करने लगे— अभी आप श्री बालक को दर्शन देने चलो। सूर्यास्त में समय थोड़ा था। पर भक्त भगवान का नाता अटूट था। घर बिल्कुल एक मिनट की दूरी पर था। पधार गए। जाते ही बनवारी लाल जी ने दो दिन के बालक को चरणों में डाल दिया और कहा यह आपका है, और आपकी सेवा करेगा। वाचस्पति गुरुदेव भी श्रद्धार्पण से भावुक हो गए, बोले-ठीक है। बच्चे को पालो-पोसो, बड़ा करो, जब मौका होगा देखा जाएगा। भगवान को सौंपी गई वह भेंट पूज्य श्री सुदर्शन लाल जी म. के करकमलों में सन् 1973 में आई और 18 जनवरी 1979 में विधिवत् वाचस्पति गुरुदेव के संघ में सजी-धजी। वाचस्पति परिवार के सुशिक्षित, स्वर्णपदक जयी श्री राकेश मुनि जी के रुप में 11 जुलाई की शाम की स्मृति को उजागर कर रही है।

नरवाना के गुरुभक्त श्रावक श्री नौराता राम जी संवत्सरी पर पौषध करने आए। दोपहर बाद तबीयत घबराने लगी। शरीर गर्मी से तपने लगा। वाचस्पति गुरुदेव से भी उनकी बेचैनी देखी नहीं गई। एक निर्दोष उपाय उन्हें सुझाया। प्रासुक जल की गीली पट्टी सारे शरीर पर लपेटी। घंटे भर के प्रयोग से ताप शांत हो गया। आर्त्त ध्यान टल गया। वाचस्पति गुरुदेव को भी राहत मिली।

समाज सेवा में वे उदारता और मितव्ययिता का समन्वित रूप पसन्द करते थे। इसका ज्वलन्त उदाहरण सोनीपत का ही वह ऐतिहासिक चातुर्मास है। जहाँ चातुर्मास की पूर्ति पर समाज ने हिसाब लगाया तो कुल दो हजार रुपये खर्चा आया था।

उस वर्ष श्रमण संघ में फिर भूचाल आया। कांफ्रेंस के पदाधिकारी स्थान-स्थान पर गए। वाचस्पति गुरुदेव के पास भी आए। वार्तालाप से वाचस्पति गुरुदेव भांप गए कि कुछ अघटित घटने वाला है। उन्होंने उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म. के पास समाचार भिजवाया कि आप पद से किनारा कर लो। समाचार का निहितार्थ उन्हें समझ नहीं आया और अपने दायित्व का निर्वाह करते रहे। 15 दिसम्बर 1960 के दिन आचार्य श्री जी की ओर से घोषणा जारी करवा दी कि मैं उपाचार्य श्री जी को अधिकारों से दूर करता हूँ और पांच मुनियों की स्वतंत्र समिति को अधिकार प्रदान करता हूँ। काफी उथल-पुथल के बाद उपाचार्य श्री जी ने 30 नवम्बर को अपने पद से और साथ ही श्रमण संघ से त्याग-पत्र दे दिया।

वाचस्पति गुरुदेव अपने चातुर्मासों की आज्ञा पहले मंत्री श्री प्रेमचन्द जी से मंगवाते रहे थे। जब उन्होंने ध्वनियंत्र में बोलना शुरू किया तब से उपाचार्य जी से मंगवाने लगे थे। अब वे श्रमण संघ छोड़ चुके तो उनसे भी मंगवाना शक्य ना रहा। हाँ, उनसे पत्र व्यवहार तथा भावनात्मक संबंध कायम रहे।

वाचस्पति गुरुदेव के पास न जाने कितने-कितने नूतन प्रस्ताव आए पर वे तो माया मुक्त ब्रह्म बनकर दूर-दूर तक अवलोकन करते रहे। पूज्य श्री हस्तीमल जी म. ने संयमी मुनियों का पृथक् संघ बनाने का सुझाव दिया और उसके नेतृत्व के लिए दो नाम प्रस्तुत किए— पंडित श्री समर्थमल जी म. या व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलाल जी म.।

कवि श्री अमर मुनि जी म. के कई परामर्शों में एक परामर्श था— आचार्य उपाचार्य विवाद जब तक न सुलझे तब तक सब दायित्व प्रधानमंत्री को दे दिया जाय और प्रधानमंत्री बनें वाचस्पति श्री मदनलाल जी म.।

फिर कभी विचार आया कि पंजाब सम्प्रदाय को पुनर्जीवित करके आचार्य श्री मदनलाल जी को बना दिया जाय।

पूज्य श्री गणेशीलाल जी म. संयुक्त समाचारी बनाने और दोनों के परिवारों का संघ बनाने के पक्ष में थे।

वाचस्पति गुरुदेव को इन बातों में कोई रस नहीं था, रुचि नहीं थी। केवल संयम और समाधि उनका ध्येय था, जो उन्हें सर्वात्मना उपलब्ध थे।

उत्तर भारत में वाचस्पति गुरुदेव के दृष्टिकोण को बहुत श्रद्धा और यथार्थता से समझने वालों में श्री फूलचन्द जी 'श्रमण' म. का नाम अग्रणी रहा था। वे समय-समय पर अपने भावोद्‌गार लिखित-अलिखित दोनों विधियों से प्रेषित करते रहते थे तथा उनके दर्शनाकांक्षी भी थे। वाचस्पति गुरुदेव भी उनकी मनःस्थिति एवं परिस्थिति दोनों से वाक़िफ थे।

चातुर्मास के अनन्तर वाचस्पति गुरुदेव गोहाना पधारे और वहीं पर पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. रोहतक में धर्म मंदाकिनी प्रवाहित कर चरणावनत हुए। गोहाना में चातुर्मास करने वाले श्री मूलचन्द जी म. एवं स्वामी श्री फूलचन्द जी म. भी वाचस्पति गुरुदेव के पदार्पण के बाद गोहाना पधार गए और एक लघु सम्मेलन सा हो गया। वाचस्पति गुरुदेव ने अपने सर्वाधिक कुशल शिष्य की योग्यता को स्वीकारते हुए कहा था, "सुदर्शन रोहतक में इस साल दो तरह की बाढ़ आई, एक पानी की और दूसरी तेरी रौनकों की और तू दोनों से बचा रहा। इस बात की मुझे बेहद खुशी है।" ये था वाचस्पति गुरुदेव का दाद देने का अन्दाज।

गोहाना से जीन्द पधारे तो पुनः हार्ट की धड़कनों में दिक्कत आई। उम्र के ढलान पर व्याधियों का असर आने लगा था। मन फिर भी निश्चिन्तता की गहनता में डूबा रहता था। जीन्द कुछ दिन विश्राम हेतु ठहरे। उसी दौरान पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. भी पधार गए। भावी विचरण के लिए विचार-विमर्श चलने लगा। दो विचार

आए। वाचस्पति गुरुदेव पंजाब का भाव रख रहे थे तथा तपस्वी श्री बद्रीप्रसाद जी म. हरियाणा में विचरने के इच्छुक थे। पंजाब के अनेक संघ वाचस्पति गुरुदेव के पदार्पण की बाट जोह रहे थे। जालंधर के प्रमुख श्रावक श्री सतीश जी, केसरदास जी, राजकुमार जी आदि विनती लेकर आए हुए थे। उस समय पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. ने रास्ता निकाला। प्रवचन में फरमा दिया कि पंजाब के गुरु भक्तों, चिन्ता न करो, आपकी भावना गुरु म. पूरी करेंगे। श्रावकों को आश्वासन मिल गया और प्रसन्न हो गए। श्री तपस्वी जी म. ने पूज्य गुरुदेव जी म. से पूछा कि पंजाब पदार्पण की संभावना कैसे बना दी। पूज्य गुरुदेव जी म. ने सप्रेम निवेदन किया कि पंजाब हमारे लिए बिल्कुल नया है। यदि बड़ों की छत्रछाया में एक बार विचरण हो जाएगा तो अनुकूलता रहेगी। गुरु म. अभी तो विहार करने लायक हैं फिर यदि आयु के कारण बैठ गए तो हमारे विचरण में कौन मदद करेगा? श्री तपस्वी जी म. सहमत हो गए। सामान्यतः वे गुरु म. की बात को टालते भी नहीं थे।

जीन्द में ही दिल्ली चांदनी चौंक का समाज आया। विनती की कि पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी को हमारे क्षेत्र में भेजें। उनका तर्क था कि जब 1959 में बाबा श्री जग्गूमल जी म. के स्वर्गवास के बाद विहार हुआ तब विदाई में पूज्य गुरुदेव ने आश्वासन दिया था कि चांदनी चौंक की सामाजिक व्यवस्था सर्वमान्य बन जाने के बाद आने का भाव रखूँगा। इस वर्ष ओसवालों व अग्रवालों का दीर्घकालीन विवाद समाप्त हो गया है और व्यवस्था बन गई है कि मकान की देखभाल ओसवालों द्वारा संचालित ट्रस्ट के अधीन रहेगी तथा साधु-साध्वी मण्डल की, चातुर्मास की तथा शेष प्रवास की विनती और सेवा 'श्रावक प्रबन्धक समिति' के अन्तर्गत रहेगी। इस समिति में अग्रवाल व ओसवालों का समान प्रतिनिधित्व रहेगा। चांदनी चौंक समाज का आदर हर छोटे बड़े मुनिराज करते रहे है पर उस समय वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया कि इस साल मैं श्री सुदर्शन मुनि जी को अपने साथ पंजाब ले जा रहा हूँ।

अतः फिर कभी अनुकूलता होने पर चांदनी चौंक की भावना साकार हो सकेगी।[1]

वाचस्पति गुरुदेव स्वास्थ्य कारणों से छोटे-छोटे पड़ाव और सीधा रास्ता लेकर आगे प्रस्थित हुए तथा पूज्य गुरुदेव को लंबा रास्ता देकर पार्श्ववर्ती क्षेत्रों की सार-संभाल करवाई। पहला लक्ष्य मूनक को बनाया। मूनकवासियों की प्रसन्नता की झलक बहुत पहले ही मिलने लगी। 40-50 युवकों का जत्था नरवाना पहुँच गया और प्रतिदिन विहारों में साथ-साथ चलता था। विहार क्या था एक जुलूस सा बन जाता था। मूनकवासियों के लिए अपनी श्रद्धा के सर्वोच्च केन्द्र पधार रहे थे। अतः उत्साह स्वाभाविक ही था। वाचस्पति गुरुदेव मूनक को सुप्रीम कोर्ट कहकर सम्मान देते थे तो मूनक वाले उन्हें अपनी घरेलू, सामाजिक, मानसिक समस्या के समाधान हेतु सुप्रीम कोर्ट से भी ऊपर मानते थे। उन दिनों लाला चिरंजीलाल जी, सूरजभान जी इन दो अग्रवाल परिवारों में जायदाद को लेकर टकराव-मनमुटाव चल रहा था। वाचस्पति गुरुदेव पधारे तो अंतिम फैसला उन्हीं पर छोड़ दिया। समाज भी चाहता था कि ये समस्या हल हो जाय। वाचस्पति गुरुदेव ने कहा कि दोनों पक्ष अपनी-अपनी बातें श्री सुदर्शन मुनि व श्री तपस्वी जी को सुना दो, ये मुझे बता देंगे, फिर मैं निर्णय लूंगा। दोनों परिवारों ने अपनी-अपनी बातें सुनाई और अंततः वाचस्पति गुरुदेव के पास सारांश पहुँचा और उन्होंने दोनों परिवारों को फैसला सुना दिया। गुरुओं की निष्पक्षता, श्रावकों की श्रद्धा के फलस्वरूप केस हल हो गया, परिवारों का प्रेम बहाल हो गया।

अग्रिम चातुर्मास संवत् 2018 सन् 1961 के लिए पंजाब के कई क्षेत्र लालायित थे। जालंधर और अमृतसर श्री संघ अधिक आग्रहशील थे। मूनक में जब जालंधर संघ आया तब वाचस्पति गुरुदेव ने कहा मेरा मन है आप मेरे योग्यतम शिष्य श्री सुदर्शन मुनि जी का चातुर्मास कराओ। वो मुझसे भी ज्यादा धर्म ध्यान करवाएगा। अग्रणी श्रावक वाचस्पति

1 पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी म. ने चांदनी चौंक क्षेत्र की उस भावना को सन् 1964 में पूरा किया तथा सन् 1970 में चातुर्मास भी किया।

गुरुदेव के हार्द को समझते थे और वे पूज्य गुरुदेव की क्षमताओं को भी जानते थे मगर जालंधर के सभी परिवार पूज्य गुरुदेव से अपरिचित थे। अतः प्रमुख लोगों ने कहा कि इस बार तो आप स्वयं ही कृपा करो। वाचस्पति गुरुदेव ने उन सबकी बात मान ली। अमृतसर श्री संघ के अधिकारियों को वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया कि अभी मुनिराज पहले क्षेत्र को देखेंगे फिर कोई निर्णय देंगे।

मूनक में वाचस्पति गुरुदेव को ज्ञात हुआ कि आचार्य श्री गणेशीलाल जी म. ने उदयपुर में अपने संघ का कार्यभार श्री नानालाल जी म. को दे दिया है। उनसे वाचस्पति गुरुदेव के भावनात्मक संबंध क्षेत्रीय दूरी होने पर भी निकट के थे। आचार्य श्री आत्माराम जी म. के संदेश आते रहे कि आकर मिल लो पर अभी स्थितियों की अनुकूलता न देखकर लुधियाना का मन नहीं बना। बुढ़लाढा, मानसा, बरनाला का मार्ग लेकर रायकोट अवश्य पधारे। वहाँ श्री गोकलचन्द जी म. के पारिवारिक मुनिराज वयोवृद्ध श्री नेकचन्द जी म. विराजमान थे। वाचस्पति गुरुदेव ने पूर्ण विधि के साथ घुटने झुकाकर उन्हें वन्दना की। तत्रस्थित मुनिवृन्द चकित रह गया। एक दिन जालंधर से कुछ श्रावक जैसे कि केसरदास जी आदि आए। प्रसंगवश कहने लगे कि जालंधर में कुछ व्यक्तियों को कहीं से उकसाहट मिल रही है और वे कह रहे हैं कि वाचस्पति जी म. श्रमण-संघ को विभाजित कर रहे हैं इसलिए हम उन्हें विरोध स्वरुप काले झण्डे दिखाएंगे। वाचस्पति गुरुदेव हंसने लगे बोले– 'केसरदास जी, जिंदगी में पहले कभी देख नहीं पाए अब उनका भी मजा लेंगे।' उत्तेजित होने की बजाय उपेक्षा भाव से बात को टाल दिया और परिणाम ये निकला कि कोई भी असभ्य घटना नहीं घटी।

रायकोट से जगरावाँ आए, फिर जालंधर जाने का सीधा और छोटा रास्ता पूछा। पता चला कि नकोदर होकर जालंधर निकट है लेकिन बीच में सतलुज दरिया है पुल न होने से नाव का सहारा लेना होता है। अपवाद मार्ग समझकर उस विधि को स्वीकारने का निश्चय किया। जगरावाँ से सिधवाँ गांव में रुके जो कि जगरावाँ से 7 किमी. था। चलते समय देर

हो गई और गांव में पहुँचते-पहुँचते गर्मी तीव्र हो गई। वाचस्पति गुरुदेव को चक्कर आ गया। मकान मिलने में परेशानी आई। लोगों में भावना ही नहीं थी। काम चलाना था बस चल गया। अगले दिन तो पानी भी उपलब्ध नहीं हुआ। सतलुज पार करनी थी बस चल दिए। मुख्य धारा तक पहुँचने तक दो तीन और धाराएं पैदल पार की। एक जगह पानी अनुमान से अधिक था। पैर डगमगा गए जैसे-तैसे संभले। आगे मुख्य धार तक गए तो कोई मल्लाह नहीं। सिर ढकने की जगह नहीं, तेज धूप, तपता रेत, पूरा बियावान। न पीछे जा सकते क्योंकि 11-12 किमी. का रास्ता पार कर आए थे। इतना वापस कैसे जाते? हार्ट और चक्कर की दिक्कतें देह पर हावी भी थी। अतः बैठ गए। दूसरे किनारे से काफी देर बाद एक किश्ती आई। नाविक से कहा हमें पार जाना है। उसने पैसे की मांग की। उसे समझाया कि हम जैन साधु हैं पैसा नहीं रखते पर वह तो मानने को तैयार ही नहीं हुआ बल्कि उल्टा उपदेश देने लगा। घंटे भर बाद माना और पार हुए। अगले किनारे आते ही लगा कि जालंधर तो बिल्कुल पास है। नकोदर के श्वेताम्बर मूर्तिपूजक घरों में असीम श्रद्धा भाव था। क्षेत्र में नव जागरण की लहर पैदा हो गई। ऐसे महिमान्वित गुरु भगवंत यों ही थोड़े मिलते हैं।

नकोदर में ही वाचस्पति गुरुदेव ने पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी म. का अमृतसर का चातुर्मास घोषित किया था क्योंकि अमृतसर पहुँचकर पूज्य गुरुदेव ने स्थिति का आकलन किया था और अनुकूलता पाई थी।

नकोदर जैसे क्षेत्र को एक बड़े संतप्रवर का शरणा मिला था इससे घर-घर में चाव छा गया था। दोपहर को बहनों का तांता लग जाता। केवल बहनों का आना वाचस्पति गुरुदेव को गंवारा न हुआ। थोड़ी देर बाद बहनों से बोले– “तुम्हारी इच्छा हमें ठहराने की है या विहार कराने की है?” बहनें सहम गई और कहने लगी– “गुरुदेव आप दीर्घ काल तक विराजो हमारा सौभाग्य होगा।” वाचस्पति गुरुदेव ने कहा– “हमारी शर्त है कि व्याख्यान के अलावा तुम्हें उपाश्रय में नहीं आना।”

बहने बोलीं– “जब संत आते हैं तब हम दिन में यहीं बैठी रहती हैं और कुछ शंका समाधान भी कर लेती हैं और वार्तालाप भी।” वाचस्पति गुरुदेव ने शंका समाधान के लिए कथा के बाद भाईयों की उपस्थिति में उनको मौका दे दिया तथा दिनभर की आवाजाही बन्द करवा दी।

गर्मी का मौसम था। उपाश्रय हवादार कम था। श्रावकों ने कहा– ‘उपाश्रय के बाहर टेंट लगवा देते हैं। वहाँ रात्रि विश्राम कर लेना।’ परन्तु वाचस्पति गुरुदेव ने अकल्पनीय होने से निषेध कर दिया। पर सूर्यास्त के बाद श्रावकों ने टेंट लगवा दिया। नतीजा ये निकला कि टेंट में वाचस्पति गुरुदेव तो आए ही नहीं और उसके कारण उपाश्रय में गर्मी और बढ़ गई। फिर भी समता से सहन की। अगले दिन श्रावकों को वास्तविकता का पता चला और संयमी जीवन के प्रति श्रद्धान्वित हुए।

जालंधर का प्रवेश अपनी भव्यता, सुन्दरता और उत्साह के कारण एक स्मरणीय इतिहास बन गया था। वहाँ का युवक वर्ग वाचस्पति गुरुदेव का दीवाना था। कुछ मस्तिष्कों में कोई छोटी-मोटी भ्रांति उत्पन्न हो गई थी, उनके पदार्पण मात्र से छिन्न-भिन्न हो गई। प्रधान दौलतराम मंत्री सतीश के नेतृत्व में समाज ने विशुद्ध निष्ठा से सेवा की तथा धर्म लाभ लिया।

वार्धक्य के बावजूद प्रवचन का सारा दायित्व वाचस्पति गुरुदेव स्वयं ही वहन करते थे।

गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी ने उस वर्ष ‘शालिभद्र महाकाव्य’ की रचना की थी। वाचस्पति गुरुदेव को रचना बहुत भायी। अतः रचना का सस्वर प्रवचन में गायन प्रारंभ कर दिया। प्रतिदिन बनने वाला अंश अगले दिन श्रोताओं तक पहुँचता था। महान् साहित्यकार की रचना को महान् कण्ठ मिला तो कृति कालजयी बन गई।

जालंधर में मण्डी फैंटनगंज के निवासी हरियाणवी 30-40 जैन परिवारों को उस वर्ष विशेष प्रोत्साहन और अधिमान मिला। उन परिवारों का पहले भी प्रत्येक साधु-साध्वी के पास जाना होता था पर

शहर के अधिकांश जैनों ने उनसे सम्पर्क नहीं बनाया था पर इस बार तो वे विस्तृत समाज के अंग बन गए।

धर्माराधना के आंकड़े बता रहे हैं कि वाचस्पति गुरुदेव के संकेत भर से एक दिन वहाँ 750 आयम्बिल हुए थे। संवत्सरी पर 500 पौषध और 200 तेले हुए।

प्रधानमंत्री पद से अलग होने के बाद भिन्न-भिन्न स्थानों पर जो छिटपुट चर्चाएं हो रही थी उनका निराकरण वाचस्पति गुरुदेव ने स्वयं करने की बजाय कुछ श्रावकों के हवाले कर दिया। 10-12 प्रमुख प्रबुद्ध श्रावकों की एक समिति बना दी जो विवादों का समाधान अपने स्तर पर करती रही और वाचस्पति गुरुदेव एवं मुनिमण्डल अपने अध्यात्म पक्ष में अविराम प्रगति करता रहा।

जो व्यक्ति सीधे तौर पर उनसे ही समाधान लेना चाहते वाचस्पति गुरुदेव उन्हें भी निराश नहीं करते थे। पर श्रावक श्री पृथ्वीराज जी (कपूरथला), श्री सतीश जी, दौलतराम जी, केसरदास जी आदि विश्वस्त श्रावक अनावश्यक विवादों का पहले ही निराकरण कर देते थे। जालंधर चातुर्मास शान से पूरा हुआ। श्रद्धाएं गहन हुई। विहार हुआ कपूरथला की ओर और वहीं पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. ने अमृतसर चातुर्मास की उपलब्धियां गुरु चरणों में भेंट की।

सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म

एक-एक क्षण सत्य की उपासना में, ज्ञान की आराधना में और अनन्त की साधना में व्यतीत करने वाले ब्रह्म को साक्षात् जीने वाले परम पुरुष ने तन को तृण माना था, मन की तहों को जाना था, वचन को विजित किया था। धर्म उनका ध्येय था, सिद्धान्त रक्षा उनकी रगों का रक्त प्रवाह था, सरलता उनकी पहचान थी।

मानव जीवन के सात दशक संयम पर्याय के पांच दशक पूर्ण प्रायः थे। फिर भी अपनी धर्मयात्रा में अनवरत गतिमान वह यायावर विश्राम का विचार किए बगैर चला जा रहा था।

कपूरथला में अपने शिष्यों को आशीराशि से भरपूर कर जालंधर की ओर प्रेषित किया और स्वयं एक लघु क्षेत्र सुल्तानपुर लोधी की ओर प्रस्थित हो गए वाचस्पति गुरुदेव।

पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. ने जालंधर पधार कर वहाँ के जनमानस में धर्मक्रांति का शंखनाद कर दिया। जन-जन ने स्वीकार किया कि वाचस्पति गुरुदेव के ये समर्थ उत्तराधिकारी श्री सुदर्शन लाल जी म. अपने गुरुवर की गरिमा को कई गुना करने वाले हैं। वाचस्पति गुरुदेव की गतवर्ष की उक्ति शत प्रतिशत सत्य है कि मेरे शिष्य श्री सुदर्शन मुनि जी का चातुर्मास मुझसे भी सवाया होता है। गुरु को अपने शिष्यों की पहचान होती है। शिष्यों को गुरुदेवों का ध्यान होता है। पूज्य गुरुदेव जी म. को लुधियाना में विराजमान आचार्य सम्राट श्री आत्माराम जी म. के स्वास्थ्य की गिरावट का ज्ञान हुआ तो श्री केसरदास जी से परामर्श किया कि क्या ही अच्छा हो यदि हम आचार्य श्री जी के लुधियाना जाकर दर्शन कर लें, न जाने वह उज्ज्वल ज्योति कब विलीन हो जाए। श्री केसरदास जी सुल्तानपुर लोधी गए

और वाचस्पति गुरुदेव को पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. के विचारों से अवगत कराया। वाचस्पति गुरुदेव उन विचारों से सिद्धान्ततः सहमत हुए पर व्यवहारिकता के धरातल पर लाने के लिए उन्होंने कहा– 'आप अपने सहयोगी बन्धुओं से परामर्श कर लो क्योंकि सामाजिक मसलों पर आपकी समिति ही आजकल सक्रिय काम कर रही है।' श्री केसरदास जी ने वापस आकर संबंधित साथियों से सम्पर्क किया और पूछा कि क्या वाचस्पति गुरुदेव से लुधियाना पधारने का अनुरोध करें? सबने सकारात्मक रुख रखा और सभी व्यक्ति सुल्तानपुर लोधी वाचस्पति गुरुदेव की सेवा में पहुँचे। श्री पृथ्वीराज जी, श्री सतीश जी, त्रिलोकचन्द जी, सुरेन्द्रनाथ जी, दौलतराम जी, दीना नाथ जी आदि ने अपने भाव प्रकट किए। श्री केसरदास जी प्रायः मौन ही रहे। कहने वालों ने कहा कि आचार्य श्री आत्माराम जी म. का शरीर ढल रहा है, न जाने कब जीवन ज्योति बुझ जाय, आप श्री उनके दर्शनों का भाव बनाओ, ये हमारी सामूहिक भावना है। वाचस्पति गुरुदेव ने अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए फरमाया कि मेरा मन सदा ही आचार्य श्री जी के चरणों में रहता है। पर 4-5 वर्षों से ऐसी परिस्थितियां बनी है कि मैं उनके साक्षात् दर्शन नहीं कर सका। अब मैं वहाँ जाना चाहता हूँ लेकिन वहाँ किसी प्रकार की किसी को असमाधि हो, ऐसा नहीं चाहता। मेरा मन है कि हमारे लिए उनके पास जाना केवल तीर्थ यात्रा ही हो, अन्य कुछ नहीं। मैं वहाँ जाकर प्रवचन नहीं करूंगा। श्रमण संघ या प्रधानमंत्री पद के त्यागपत्र से जुड़ी वार्त्ता नहीं करूंगा क्योंकि आचार्य श्री जी का स्वास्थ्य इस तरह की चर्चा के अनुकूल नहीं है तथा वे अपना अधिकार पांच मुनियों को दे चुके हैं, उपाचार्य श्री जी भी पद और संघ से पृथक् हो चुके हैं। अतः संघ से सम्बद्ध कोई बात उधर से भी न छेड़ी जाय ऐसा आश्वासन भी चाहता हूँ तथा उनके दर्शनों के अतिरिक्त रहने के लिए कोई पृथक् स्थान पसन्द करूंगा क्योंकि एक ही जगह पर कुछ वार्तालाप की संभावना बन सकती है जो कि मौजूदा माहौल में उचित नहीं लगती।

शिष्टमण्डल को वाचस्पति गुरुदेव का स्टैण्ड बहुत ही संतुलित और दूरदर्शितापूर्ण लगा। लुधियाना जाकर आचार्य श्री जी से अन्तरंग भेंट की। आचार्य श्री जी काफी अस्वस्थ थे फिर भी श्रावकों की बातों को सुना और वाचस्पति गुरुदेव ने जो-जो निवेदन किया था उसमें पूर्ण सहमति जताई और कहा मेरी ओर से कोई भी विवादास्पद् बात नहीं उठेगी। संतुष्ट शिष्टमण्डल ने आचार्य श्री जी से हुए वार्तालाप का विवरण वाचस्पति गुरुदेव को दे दिया और वाचस्पति गुरुदेव ने लुधियाना जाकर आचार्य प्रवर के दर्शनों का निश्चय कर लिया तथा पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. को भी लुधियाना चलने का आदेश भिजवा दिया। कुल 12 ठाणे लुधियाना का भाव लेकर अपने-अपने स्थान से चल दिए। सन् 1962 जनवरी माह प्रारंभ हो चुका था। मौसम में ठण्ड थी पर कदमों में सरगर्मी। फिल्लौर से वाचस्पति गुरुदेव ठाणे 12 आचार्य श्री जी के दर्शनार्थ लुधियाना की ओर अग्रसर हुए। 16 या 17 जनवरी की सुहानी सुबह थी। वृद्ध शरीर पर अधिक भार डालते हुए वाचस्पति गुरुदेव ने 16 किमी. का सफर तय किया। लुधियाना में भी बहुत संख्या में साधु-साध्वी वृन्द एकत्रित हो चुका था। आचार्य श्री जी की ढीली सेहत भी एकत्री भाव का कारण थी और वाचस्पति गुरुदेव का दर्शनार्थ आगमन भी। वाचस्पति गुरुदेव से पूर्व पंजाब केसरी श्री प्रेमचन्द जी म., पंडित श्री शुक्लचन्द जी म. पधार चुके थे। कुछ और प्रमुख मुनिराजों के पधारने की संभावना थी। पधारे हुए मुनियों में से कुछ मुनिवृन्द वाचस्पति गुरुदेव के स्वागतार्थ चुंगी तक आगे लेने आए। स्थानक तक पहुँचते-पहुँचते दोपहर के तीन बज गए। आचार्य श्री को सर्दी के कारण धूप में विश्राम हेतु लिटाया हुआ था। 60-70 साधु साध्वियों ने उन क्षणों का प्रत्यक्ष अवलोकन किया जब ऊपर पहुँचकर वाचस्पति गुरुदेव ने सविधि, सश्रद्ध, सजानुपात आचार्य श्री जी को वन्दना की तथा देवसी संवत्सरी संबंधी क्षमायाचना की। पूज्यपाद आचार्य श्री जी ने भी उसी प्रकार सावंत्सरिक क्षमायाचना की जैसी कि जिन शासन की परम्परा है। दोनों महापुरुष करबद्ध बैठे रहे। चिर अन्तराल के बाद मिलन की भावुकता ने नयनों को तरलित

कर दिया था। पुनः वन्दना की और सायंकाल की निकटता के मद्देनजर नीचे आ गए। निकटवर्ती अग्रवाल धर्मशाला में श्री मुनिलाल लोहटिया के घर के सामने भण्डोपकरण रख ठहर गए। मन में प्रसन्नता थी कि आचार्य श्री जी के दर्शन हो गए। निश्चिन्तता भी हुई कि कोई सांघिक चर्चा किसी ओर से नहीं हुई।

परन्तु न जाने कैसे, एक अफवाह पंजाब में प्रसारित हो गई कि आचार्य श्री जी ने व्याख्यान वाचस्पति जी म. के आगे झोली फैला दी कि हमें माफ कर दो, पर वे आचार्य श्री जी की बात को ठुकराकर एकदम चल दिए। यह कुचर्चा व्यापक रूप से फैली और फैलाई गई। वाचस्पति गुरुदेव और मुनिमण्डल इस चर्चा से अनभिज्ञ रहा क्योंकि उन्हें अपने व्यवहार पर कोई शंका नहीं थी। मूनक के गुरुभक्त श्रावक श्री विलायती राम जी, अनन्तराम जी आदि जो उस वक्त आए हुए थे, उन्हें इस चर्चा की भनक मिली और उधर पृथ्वीराज जी आदि जो इस प्रक्रिया में शुरू से ही माध्यम बने हुए थे, उन तक भी चर्चाओं का अंश पहुँचा और वे सत्य को जानने वास्ते वाचस्पति गुरुदेव के चरणों में पहुँचे। उन्होंने जब चर्चाओं का जिक्र वाचस्पति गुरुदेव से किया तो सुनकर भौंचक्के रह गए मानों सती सीता के संबंध में फैले जनापवाद की तरह एक मिथ्या आरोप सत्यव्रती साधक पर चिपकाया जा रहा है।

एक निराधार बात शतसहस्र कण्ठों से निकलने और उछलने से सत्य प्रतीत होने लगी। हिटलर के प्रचार मंत्री गोयबिल्स की उक्ति चरितार्थ सी होने लगी कि एक झूठ को सौ बार बोलो तो वह झूठ भी सत्य हो जाता है। वाचस्पति गुरुदेव सत्य के पक्षपाती ही रहे थे, उसके लिए वे अपनी जिन्दगी तक होमने को तैयार थे और सत्य के लिए उन्होंने कितने-कितने संघर्ष किए थे। आज उन्हें लगा कि झूठ उन्हें घेरकर परास्त करना चाहता है। पर वे कच्ची मिट्टी के नहीं थे कि जरा सी जलधार में बह जाते। अतः सत्य के अडिग हिमालय बनकर उन्होंने फरमाया कि झोली फैलाने की बात सरासर मिथ्या है। आचार्य श्री जी के पौत्र शिष्य श्री फूलचन्द जी श्रमण वहाँ मौके पर उपस्थित थे। उनसे

सच्चाई का प्रमाण पत्र ले आओ। यदि वे कह दें कि आचार्य श्री जी ने झोली फैलाई और मैंने ठुकराई तो मैं दण्ड लेने को भी तैयार हूँ। श्रावक वर्ग सत्य को जानता व समझता था पर जनमानस को विश्वस्त करने के वास्ते वे श्रमण जी म. के पास गए और पूछा कि क्या आचार्य श्री जी ने झोली फैलाई थी? और वाचस्पति जी म. ने ठुकराई थी? श्री श्रमण जी म. हंसे और बोले– 'जो व्यक्ति ऐसा दुष्प्रचार करते हैं, उन्हें सद्बुद्धि मिले। न आचार्य जी ने झोली फैलाई और न उन्होंने ठुकराई। उनका जितना विनयपूर्ण व्यवहार था उसकी तो कोई आशा व कल्पना भी नहीं कर सकता। उन्होंने आचार्य श्री जी की शान के खिलाफ न कोई काम किया और न कोई बात कही।

सत्य सबके सामने था। अतः अनर्गल चर्चाओं की उपेक्षा कर वाचस्पति गुरुदेव अपने कर्त्तव्यों में लीन रहे। लुधियाना के गणमान्य श्रावक श्री रामप्रसाद, केदारनाथ आदि ने विशेष लाभ लिया। पूज्य तपस्वी श्री बद्रीप्रसाद जी म. अहर्निश ध्यान जाप आदि में लीन रहते थे। जन सम्पर्क कार्य पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. व गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. के हाथों में था। श्री श्रमण फूलचन्द जी म. दर्शन करने प्रतिदिन धर्मशाला में आते। वाचस्पति गुरुदेव सर्व मुनि मण्डल को लेकर प्रतिदिन आचार्य श्री जी के सान्निध्य में पहुँचते। शरीर स्वास्थ्य पृच्छा तक सामान्य वार्तालाप होता रहता। वार्तालाप की बजाय उस आगम-सूर्य के मौन दर्शन से ही अपने को आलोकित करने का प्रयत्न रहता। लग रहा था कि यह संघ सूर्य जिन शासन गगन के पश्चिम क्षितिज को छूने जा रहा है। जब तक दृष्टिगोचर हो रहा है तब तक उसके आलोक से स्वयं को कृतार्थ करने का भाव मुनि मण्डल के मन में था।

एक रोज कांफ्रेंस के पदाधिकारी श्री धीरज भाई तुरखिया आचार्य जी के स्वास्थ्य की सुखसाता पूछने आए थे वाचस्पति गुरुदेव के पुराने परिचित श्रावक थे। उनके साथ गत वर्षों की कुछ घटनाओं से सम्बद्ध वार्तालाप हुआ। उस वार्तालाप के दौरान पंजाब केसरी श्री प्रेमचन्द जी म., पंडित

श्री शुक्लचन्द जी म., श्री रघुवर दयाल जी म., श्रमण श्री फूलचन्द जी म., पंडित श्री हेमचन्द्र जी म., श्री ज्ञान मुनि जी म. भी उपस्थित रहे थे।

शाम को श्री ज्ञान मुनि जी म. अकेले में मिलने भी पधारे थे। एक शाम पंडित श्री शुक्लचन्द जी म. भी पधारे पर गोचरी का समय था, मिल नहीं सके। समय की अल्पता के कारण वे वापस स्थानक में पधार गए।

तीन दिन की वह दर्शन यात्रा पूर्ण हुई। लक्ष्य पूर्ति करके विहार का मन बनाया। आचार्य श्री जी का मंगलपाठ सुन नीचे उतरने लगे तभी श्री विमल मुनि जी म. लुधियाना पधार गए। उन्होंने दोनों बाजू फैलाकर वाचस्पति गुरुदेव को रोका और कहने लगे कि और रुक जाओ। उस सीन को किसी के संकेत पर एक फोटोग्राफर ने फिल्मांकित करने का प्रयास किया तो गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी ने फोटोग्राफर को मना कर दिया। संभव था कि बाद में वह फोटो भी दुष्प्रचार का माध्यम बना दिया जाता।

वाचस्पति गुरुदेव फिल्लौर होते हुए फगवाड़ा पहुँचे। झोली फैलाने व ठुकराने वाली अफवाह उधर भी सुनी। किसी ने समाधान चाहा तो वाचस्पति गुरुदेव ने या मुनियों ने सत्य दर्शन करा दिया। संदेहों का कोहरा छंटने लगा। फगवाड़ा पहुँचने पर ठण्ड ने जोर पकड़ा। धुंध की चादर ने धरा गगन को ढकना शुरू कर दिया। उन्हीं उदास दिनों में 30 जनवरी 1962 का विकराल दिन भी आया जब आचार्य प्रवर श्री आत्माराम जी म. दिवंगत हो गए। वाचस्पति गुरुदेव ने उस रोज उपवास रखा। उन्हें उनके जीवन से गहरा जुड़ाव था। समर्पण भाव से उनके आदेश निर्देश पाले थे। अतः उनके विरह ने उन्हें हिला दिया। उस रोज वे किसी से नहीं बोले। यदा कदा संतापमय आहें भरते रहे। हार्ट पर भी दबाव बना। 31 तारीख को 'हा हंत हंत सर्वमपि प्रणष्टम्' शीर्षक वाला संवेदना पत्र लुधियाना में स्थित मुनि वर्ग के पास लिखवाया पर वातावरण में न जाने क्या हवाएं थी कि वह पत्र श्रद्धालु वर्ग का पाठ्य नहीं बन सका। वाचस्पति गुरुदेव अपने श्रद्धेय

को श्रद्धार्पण कर कृतार्थ थे। पत्रों को सार्वजनिक करने से उनको कोई सरोकार नहीं था।

कुछ ही दिनों में पंजाब के हर क्षेत्र में वाचस्पति गुरुदेव के प्रति श्रद्धा का ज्वार उमड़ने लगा। स्थान-स्थान से फरसने की विनतियां आने लगी। पंजाब के श्रावकों के पास आस्थाओं के लिए एक ही विकल्प बचा था वाचस्पति गुरुदेव के मंगलमय दर्शन और प्रवचन। जन आस्थाओं को अवलम्बन देने हेतु विहारों का कार्यक्रम बनाया। बंगा से होशियारपुर का भाव बना। बंगा पधारे तो धर्म ध्यान के अद्‌भुत ठाठ लगे। एक अनुभव श्री इन्द्रजीत की लेखनी ने लिखा हैः—

1962 के प्रारंभ में पंडितों ने अष्टग्रही के नाम जनता को भयग्रस्त और संत्रस्त कर रखा था। भयभीत जनता पूजापाठ धर्मानुष्ठान में लगी रहती थी। तीन दिन अधिक खतरे के बताए जा रहे थे। उन्हीं दिनों वाचस्पति गुरुदेव बंगा पधारे। प्रथम व्याख्यान था। विशाल परिषद् जुटी हुई थी। श्रोता प्रवचन में झूम रहे थे पर अन्दर ही अन्दर अष्टग्रहों की आशंका से किसी उपाय की प्रतीक्षा में थे कि ऐसे महान् संत कोई रास्ता बताएंगे। वाचस्पति गुरुदेव ने पहलू बदला और कहने लगे कि— 'धर्म कभी डरकर नहीं किया जाता। जो लोग अष्टग्रहों के योग से डरकर धर्म करते हैं वे अपने आपको धोखा देते है। धर्म तो सर्वदा की जाने वाली चीज है। यदि आप धर्म को धर्म समझकर कर रहे हैं तो आठ तो क्या ग्यारह ग्रह भी इकट्‌ठे हो जायें तो भी आपका कुछ नहीं बिगाड़ सकते। धर्म और दान करने का कोई समय नहीं होता।' लोगों को प्रवचन से बड़ी राहत मिली और मुझे उनके प्रति विशेष आस्था का भाव बना।

होशियारपुर श्री संघ वाचस्पति गुरुदेव के संयमी जीवन, उच्च दृष्टिकोण एवं दिव्य प्रवचनों का कायल रहा था। अतः आगामी चातुर्मास के लिए सभक्ति विनती करने लगा। फरीदकोट भी प्रबल दावेदार था। दोनों की भावनाओं को सम्मानित करते हुए संवत 2019 सन 1962 का अपना चातुर्मास फरीदकोट तथा पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. का होशियारपुर के लिए घोषित किया।

होशियारपुर में ही पंजाब केसरी श्री प्रेमचन्द जी म. का आगमन हुआ। 15 दिनों तक साथ रहे। सार्वजनिक प्रवचन भी हुए। पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी म. ने भी पावन दर्शनों का लाभ लिया। वहाँ से वाचस्पति गुरुदेव ने अमृतसर के लिए प्रस्थान किया तथा पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी म. को ऊना, नालागढ़, शिमला फरसने का आदेश दिया।

अमृतसर पहुँचकर वाचस्पति गुरुदेव परम प्रसन्न हुए। क्योंकि गत वर्ष चातुर्मास में पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. ने जो सामाजिक हृदय परिवर्तन किया था वह नितान्त कल्पनातीत था। दिलों के उस परिवर्तन को वैधानिक रूप देने की भावना वाचस्पति गुरुदेव के मन में थी ताकि सुनिर्मित भव्य मंदिर पर कलशारोहण का मंगल कार्य सम्पन्न हो सके। मुख्य धारा से पार्थक्य बनाए हुए कुछ परिवारों को यथा श्री परजनलाल जी, अमृतलाल जी आदि को उन्होंने सविधि ससम्मान समाज का अंग बना दिया।

उन दिनों वाचस्पति गुरुदेव के लघु भ्राता श्री मूलचन्द जी म. श्री फूलचन्द जी म. ठाणे 4 मूनक में विराजमान थे। पूज्य श्री मूलचन्द जी म. अस्वस्थ थे। स्वामी श्री फूलचन्द जी म. के एकाकी कंधों पर ही उनकी सेवा का समग्र भार था। शेष दो मुनिराज—श्री रूपचन्द जी म. तथा श्री जगमन्दर दास जी म. सेवा कार्य में अधिक सक्षम नहीं थे। अतः मूनक से पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. के पास पत्र आया कि आप चातुर्मास में सेवार्थ यहाँ पर आ सकें तो हर कार्य आसानी से सम्पन्न हो जाएगा। पूज्य गुरुदेव ने यह समाचार वाचस्पति गुरुदेव के पास अमृतसर भिजवा दिया। वाचस्पति गुरुदेव अमृतसर से पट्टी पहुँचे तब तक मूनक से ये समाचार आ गया कि सुदर्शन मुनि जी म. को भेज दो।

वाचस्पति गुरुदेव मुनिमण्डल से एतद् विषयक परामर्श करने लगे तब श्री बद्रीप्रसाद जी म. ने कहा कि पूज्य श्री सुदर्शन लाल जी म. की बजाय पंडित श्री रणसिंह जी म. के साथ मैं सेवा में चला जाता हूँ। मूनक में पांच संतों की बजाय दो से काम चल जाएगा। दूसरी बात ये

कि श्री मूलचन्द जी म. टी.बी. की संक्रामक छूत की बीमारी से पीड़ित है। श्री सुदर्शन लाल जी म. के साथ छोटी आयु के मुनिराज हैं। सेवा शुश्रूषा के दौरान यदि उस रोग के परमाणु किसी युवा संत के श्वासों में संक्रमित हो गए तो संघ की बड़ी क्षति हो सकती है। मेरे शरीर की प्रकृति ऐसे रोगाणुओं से शीघ्र प्रभावित नहीं होती और यदि हो भी जाय तो कोई चिन्ता का विषय नहीं है। मैं काफी आयु जी चुका हूँ। हमें नए संतों की सुरक्षा अवश्य करनी है। वाचस्पति गुरुदेव उनके दृढ़ विचारों से बहुत प्रभावित हुए। और तदनुसार कार्यक्रम बना दिया। दोनों महामुनिराज सेवा के लिए रवाना हो गए। भीषण गर्मी दीर्घ मार्ग की चिन्ता न करते हुए लम्बे-लम्बे विहार करके 13 दिन में चातुर्मास बैठने से काफी पूर्व ही मूनक पहुँच गए। उनके पहुँचने से मुनि और श्रावक निर्भार हो गए। श्री रूपचन्द जी म. तथा श्री जुगमन्दर दास जी म. ने फिर नरवाना चातुर्मास कर लिया।

वाचस्पति गुरुदेव का अमृतसर में श्री प्रेमचन्द जी म. से फिर दोबारा मिलन हुआ था। हाँ, पट्टी से जीरा पहुँचने पर एक गुप्त ग्रहण की कृष्ण छाया उनके जीवन सूर्य को लगने लगी जिसके कुप्रभाव ने उनके आयुष्य काल को एक वर्ष के अन्दर-अन्दर ग्रस लिया।

एक दिन आहार के दौरान पापड़ खा रहे थे। पापड़ का एक टुकड़ा गले में तेजी से चुभा और तीव्र वेदना की अनुभूति हुई। गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. से कहा– "रामप्रसाद! देख गले में कुछ लगा है।" उन्होंने गौर से देखा तो दाढ़ और तालू के बीच एक छोटा सा छाला नजर आया। बताया कि छाला है। पहले भी हुआ था, ये भी पहले की तरह ठीक हो जाएगा। पर वाचस्पति गुरुदेव के अन्तर्मन ने कुछ और ही देखा तथा कह ही डाला– 'यह साधारण छाला नहीं है ये कैंसर का छाला है।' उन्हें यह आभास किसी चिकित्सीय परीक्षण से नहीं हुआ अपितु चेतना के गहन संवेदनों से हुआ था।

कुछ दिन पूर्व उन्होंने एक सपना देखा था चारों ओर पानी है, मैं पार कर रहा हूँ, पार करता जा रहा हूँ। कई नदी नाले पार कर दिए,

फिर आगे पानी दिखा उसे पार नहीं कर पाया। इसका निहितार्थ ये लगाया था कि अब से पूर्व कई रोगों ने शरीर को आक्रान्त किया था। उन पर विजय मिलती रही। अब जो व्याधि आएगी उसे पार पाना संभव नहीं होगा। वह रोग अंतिम सिद्ध होगा। उस दिन के शब्द और भाव तो दैनिक चर्या में लुप्त हो गए। छाले के लिए दवा आदि नहीं ली। चातुर्मास के लिए अपने प्रिय क्षेत्र फरीदकोट में पधार गए। 39 वर्ष पूर्व अपने गुरुजनों के साथ चातुर्मास किया था। आज चातुर्मास का प्रवेश था। उल्लास और हर्ष भी उत्कर्ष पर था। गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. के मुख से गीत के बोल यों फूट पड़े थे–

खुशी हर ओर छाई है, श्री गुरुदेव आए हैं।
निधि अनमोल पाई है, श्री गुरुदेव आए हैं।।

धर्म ध्यान का रंग बरसने लगा। प्रवचन वाचस्पति गुरुदेव जी और धर्म प्रशिक्षण गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. करते थे। परन्तु गले के छाले में आराम नहीं पड़ा। ग्लिसरीन लगाई गई पर राहत नहीं मिली अपितु पीड़ा बढ़ने लगी। जलन उग्र होने लगी। मुनि चिन्तित हुए। एक दिन फिर बोले– "कैंसर का छाला है, ठीक नहीं होगा।" मुनियों को ये शब्द अप्रिय लगे, अश्रव्य लगे तो कहा– "आप ऐसा क्यों कहते है? आप कोई डाक्टर तो हैं नहीं।" वाचस्पति गुरुदेव हंस पड़े। धीरे-धीरे पीड़ा और बढ़ी। डाक्टरों को दिखाया। उन्हें भी आशंका हुई कि मामला गंभीर है। दिल्ली से बाबू हेमचन्द्र जी प्रायः प्रति सप्ताह दर्शनों को आया करते थे। उन्हें भी गले में पीड़ा का पता चला तो दिल्ली के प्रख्यात विशेषज्ञों से सलाह मशविरा किया। डाक्टरों की राय आप्रेशन की बनने लगी पर वाचस्पति गुरुदेव किसी भी बड़ी चिकित्सा को लेना नहीं चाहते थे। उनका निश्चय अटल था। अतः उनसे विनती ही की जा सकती थी, उन्हें बाध्य नहीं। उन्होंने कहा– 'बड़ी मुश्किल से संयम के दो चार टके बटोरे हैं, सदोष चिकित्सा करवाकर मैं उन्हें गंवाना नहीं चाहता।

हाँ! अमृतसर के एक होम्योपैथिक डाक्टर श्री सीताराम जी से कुछ पुड़िया लेनी शुरू की पर लाभ कुछ नहीं हुआ। बढ़ती पीड़ा के बावजूद अपना नित्य क्रम पूर्ववत् जारी रखा प्रवचन नहीं छोड़ा। दर्शनार्थियों एवं स्थानीय श्रद्धालुओं की जिज्ञासा तृप्ति करते रहे। उदाहरणार्थ आचार्य श्री आत्माराम जी म. के द्वारा देवलोक गमन से पूर्व निर्धारित की गई साधु समिति के संयोजक श्री आनन्द ऋषि जी म. के निर्देश से कांफ्रेंस के प्रतिनिधि श्री बद्रीनारायण शुक्ल 8 सितम्बर को विनती करने आए थे कि संयोजक समिति की सामूहिक इच्छा है कि आप अपना प्रधानमंत्री पद से दिया त्यागपत्र वापस ले लो। वाचस्पति गुरुदेव इन सब अपीलों से ऊपर उठ चुके थे। फिर उस रात उस प्रतिनिधि भाई से तीन घंटे वार्त्तालाप किया।

आचार्य श्री गणेशीलाल जी म. से उनका सम्पर्क बना ही रहता था। पत्र व्यवहार का अधिकतर कार्य श्री दीनानाथ बोथरा के हाथ में था तथा सामाजिक व्यवस्थाओं का संचालन प्रधान श्री किशोरी लाल जी एवं मंत्री श्री कस्तूरी लाल जी करते थे। सबके मन में वाचस्पति गुरुदेव के प्रति असीम अगाध श्रद्धा थी और उनकी खिदमत में कुछ ना कुछ करना चाहते थे।

चातुर्मास के दो माह बीत चले, पर कष्ट कम होने की बजाय बढ़ने लगा। तब हर ओर से विनती और आग्रह बना कि कोई सही उपचार करवाओ। पटियाला के गुरुभक्त श्री बरखाराम जी ने कहा कि कैंसर होने न होने का पता Biopsy से लगेगा। सही निदान के बिना उपचार भी संभव नहीं है। इच्छा तो नहीं थी फिर भी बायोप्सी के लिए स्वीकृति दे दी। पटियाला के विशेषज्ञ प्रभावित स्थल का एक अंश काटकर ले गए और कह गए कि कुछ दिन बोलने से बचाव रखना ताकि घाव भर जाए। मांस के अंश की गहन जांच से पुष्टि हो गई कि गले में कैंसर है।

बायोप्सी के लिए जिस दिन पीस दिया था उससे अगले दिन दिल्ली से श्री गुलाब चन्द जी लोढा आ गए। पुराने विश्वास पात्र एवं कृपा पात्र श्रावक थे। उनसे कई घंटे वार्तालाप करते रहे, घाव में वेदना बढ़

गई। फिर प्रतिदिन का प्रवचन रोकना पड़ा। लेकिन सामान्य वार्तालाप, आहारादि ग्रहण, दूर-दूर तक भ्रमणार्थ जाना नहीं छोड़ा। तब तक वेदना का भीषण प्रकोप नहीं हुआ था। प्रवचन का दायित्व गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. ने ले लिया। फिर भी प्रवचन के पट्टे पर खुद आकर अवश्य बैठते थे। प्रवचन का आनन्द भी लेते थे और उनके बैठने से श्रोता वर्ग भी उत्साहित रहता था।

जनसामान्य एवं श्रद्धालुओं की मानसिक समस्याओं से वे कभी असंपृक्त नहीं रहे। एक कुशल युग निर्माता एक स्नेहशील पितामह की तरह सबको अपने हृदय का प्यार दुलार लुटाते रहे।

फरीदकोट चातुर्मास के दौरान वर्षा की अधिकता से नहरों का जलस्तर ऊपर आ गया। नहर के पारवर्ती गांवों में पानी घुसने का खतरा बनने लगा। गांवों की पंचायतों ने फैसला कर लिया कि यदि ऐसा कुछ होने लगेगा तो नहर को शहर की तरफ काट देंगे। शहर में पानी जाएगा, गांव बच जाएंगे। इस खबर से शहर में बेचैनी बढ़ गई। जट्ट सरदारों के आगे सरकार भी लाचार थी। जैन समाज के कुछ युवक जगदीश जैन, प्रेमचन्द आदि रात्रि दस बजे वाचस्पति गुरुदेव के चरणों में आए और सारी स्थिति बतायी। शहर को खतरा है। वाचस्पति गुरुदेव तो ग्राम नगर सबके संरक्षक थे। बोले ऐसा कुछ नहीं होगा। श्रावकों को आश्वासन मिल गया। नहर में पीछे से आने वाले पानी का दबाव कम हो गया और न पानी गांवों की ओर गया, न शहर की ओर। सबकी सुरक्षा वाचस्पति गुरुदेव को काम्य थी।

श्री ज्ञानचन्द सर्राफ के सुपुत्र श्री अमृतलाल की धर्म पत्नी पुत्राभाव से उदास रहती थी। वाचस्पति गुरुदेव ने उसे धर्म का अवलम्बन दिया और समय पाकर उसकी आशा पूर्ण हुई और कृतज्ञता वश उनके चरणों में नमन करती रही।

चातुर्मास शान और धर्म ध्यान से पूर्ण हुआ। वाचस्पति गुरुदेव ने समाज की सेवा का आभार माना। लेकिन ब्रादरी को हर खुशी के बावजूद ये मलाल रहा कि रोगोपचार नहीं हो सका। समाज की

मनोव्यथा अभिनन्दन पत्र में विशेष रूप से झलकती रही। समाज ने ये भी विनती की कि तबियत ठीक नहीं है, अभी आप विहार न करें। मगर वाचस्पति गुरुदेव प्रगाढ़ कारणों के बिना कल्प का उल्लंघन नहीं करना चाहते थे।

ये विचार भी बना कि यहाँ से चलकर अमृतसर में होम्योपैथी डाक्टर सीताराम जी का उपचार ले लिया जाय, दूर का उपचार इतना सफल नहीं हो पाता। पूर्ण उत्साह से विहार किया। उधर होशियारपुर में पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. पल-पल बेचैनी से काट रहे थे। बढ़ते रोग के कारण चिन्ता भी बढ़ रही थी। वाचस्पति गुरुदेव कोटकपूरा, बाघा पुराना होकर मोगा पहुँचे, उससे पूर्व ही पूज्य गुरुदेव लंबे-लंबे विहार करके मोगा पधार गए। अपने गुरुओं को आगे लेने गए। बीमारी के बावजूद गजब का मनोबल देखा तो स्वयं को भी ढाढस और साहस मिला। मन का भार कम हुआ। समाज के हर कार्य का भार स्वयं उठा लिया। प्रवचनादि के दायित्व से सबको भारमुक्त किया।

अमृतसर की ओर बढ़ने का भाव था। एक युवा मुनि और सेवा में रहे, ये पूज्य गुरुदेव जी म. की प्रबल इच्छा थी, ताकि पूज्यपाद श्री बलवन्त राय भण्डारी जी म. को तथा गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. को एक हेल्पर मिल जाय। अतः ये विचार कार्यान्वित हुआ। श्री पद्म चन्द जी म. उनकी सेवा में नियुक्त हो गये। जीरा-पट्टी पधारे। पट्टी मुख्य मार्गों से अलग थलग छोटा सा कस्बा स्थानक व मंदिर दोनों समाजों का सांझा प्यार भरा क्षेत्र है। अधिक जनसम्पर्क से बचाव रहेगा तथा खुली आबोहवा, निकटवर्ती परिवार होने से रोग की स्थिति में अनुकूलता रहेगी। उस चिन्तन के साथ लाला पृथ्वीराज, त्रिलोकचन्द, हंसराज, केवल कृष्ण जी आदि श्रावकों की विशुद्ध भक्ति ने वाचस्पति गुरुदेव को रिझा लिया और कुछ दीर्घकाल तक ठहरने के लिए मना लिया।

पट्टी में दो दुःखद समाचार भी मिले। टोहाना में तपस्वी श्री फकीरचन्द जी म. के स्वर्गवास का तथा उदयपुर में 11 जनवरी 1963 को आचार्य श्री गणेशीलाल जी म. के स्वर्गवास का। एक साल के भीतर

स्थानकवासी समाज के दो स्तंभ ध्वस्त हो गए थे। गत वर्ष श्री आचार्य आत्माराम जी म. तथा इस वर्ष आचार्य श्री गणेशीलाल जी म. और न जाने क्या अनिष्ट संघ पर मंडरा रहा था।

वाचस्पति गुरुदेव ने उनके संबंध में श्रद्धांजलि प्रेषित की उसे साधु मार्गी संघ के नवस्थापित मुखपत्र 'श्रमणोपासक' के प्रथम अंक के प्रथम पृष्ठ बल्कि मुख्य पृष्ठ पर प्रकाशित कर उस श्रद्धांजलि की महत्ता को प्रमाणित किया।

समग्र भारत के साधु वर्ग, श्रावक वर्ग में वाचस्पति गुरुदेव के स्वास्थ्य को लेकर चिन्ता व्याप्त थी। पत्रादि आते रहते थे। श्री श्रमण फूलचन्द जी म. की भावुकता कुछ अलग और हटकर होती थी।

वाचस्पति गुरुदेव की काया प्रतिदिन कुछ न कुछ क्षीण होती जा रही थी। जीवन कथा न जाने कब किस मोड़ पर साथ छोड़ दे किसी को ज्ञात नहीं था। मुनियों ने एक विनती की कि आप अपने जीवन के अनुभव 'आत्मकथा' के रूप में लिखकर भविष्य को भव्य इतिहास दे जाओ। श्री गुलाब चन्द लोढ़ा भी कई बार इसरार कर चुके थे। वाचस्पति गुरुदेव ने अन्ततः कलम उठा ली और 'अपनी बात' लिखनी शुरू कर दी। प्रतिदिन थोड़ा-थोड़ा लिखते थे। गृहस्थ जीवन तथा दीक्षा पर्याय के 19 वर्षों का विवरण ही इस आत्मकथा में लिख पाए थे कि शरीर में लिखने का सामर्थ्य भी शेष न रहा। संवत् 1989 तक की जीवन यात्रा अपूर्ण होते हुए भी एक सत्यतापूर्ण दस्तावेज है। इस 'आत्मकथा' को पूज्य गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. ने बांचकर सुनाया भी और कहीं-कहीं संशोधन भी हुआ।

वाचस्पति गुरुदेव ने श्री रामप्रसाद जी म. से कहा कि पट्टी के मंदिरमार्गी भाईयों की भावनापूर्ति के लिए प्रवचन में कल्पसूत्र का वाचन करो। यद्यपि स्थानकवासी परम्परा में कल्पसूत्र के वाचन की प्रमुखता नहीं है पर वाचस्पति गुरुदेव तो समग्र जैनत्व के उद्धारक थे। मंदिर जी से कल्पसूत्र की संस्कृत टीका मंगवाई गई। उसी का आधार लेकर गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. ने लगभग डेढ़ माह तक कल्पसूत्र पर

प्रवचन किए जो अपने आप में क्लासिकल थे, जिनके संबंध में वाचस्पति गुरुदेव ने शास्त्री श्री पद्म चन्द जी म. से कहा कि यदि तू इन्हें लिख लेता तो एक अमूल्य निधि बन जाती।

अपने लघु मुनियों में उच्च संस्कारों का पल्लवन और अनुपयोगी प्रवृत्तियों के उन्मूलन के प्रति उनके हृदय में तड़प बनी रहती थी। जैसा कि शास्त्री जी म. ने स्वीकारा है– "रात्रि में सेवा की मुख्य ड्यूटी तो पूज्य श्री भण्डारी जी म. की थी, पर मैं भी बगल में आसन लगाता था और आवश्यकता पड़ने पर श्री भण्डारी जी म. के उठने से पहले मैं उठकर उनके पास पहुँच जाता था। मेरी इस तत्परता से उनका मानस सदा खिला रहता और वो मुझे बहुत साधुवाद देते थे। एकदा मैंने प्रसंगवश श्रावक श्री राजकुमार जी (वर्तमान में रिटायर्ड I.A.S. Officer) के परिवार और खानदान का सारा ब्यौरा दे दिया। मुझसे वाचस्पति गुरुदेव बहुत नाराज हुए। कहने लगे– 'तुम्हारी दीक्षा पर्याय बहुत छोटी है। स्वाध्याय सेवा की इस उम्र में तुम गृहस्थों के पारिवारिक परिचय में ही उलझोगे तो अपने साधुत्व के लक्ष्य को कैसे हासिल करोगे? संयम की बातें याद रखो न कि खानदान।" संकेत पाकर पूज्य गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. ने शास्त्री जी म. को कर्मग्रंथों का गहन अध्ययन करवाया।

पट्टी में लगभग तीन महीने लगे। श्रावकों के लिए वे तीन माह त्रिकाल त्रिलोक की सर्वोच्च उपलब्धि बन गए। वाचस्पति गुरुदेव का शरीर क्रमशः शिथिलतर होता जा रहा था। पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. इतस्ततः विचरण कर वाचस्पति गुरुदेव के चरणों में आ गए। अन्यत्र जाने का मन ही नहीं होता था पर आज्ञा पालनार्थ जाना भी पड़ता था, पर मन गुरु-चरणों में ही पड़ा रहता था। पट्टी में होम्योपैथी उपचार तो चल ही रहा था धार्मिक उपाय का भी आश्रय लिया। पूज्य श्री शांतिचन्द्र जी म. ने रोगोपशांति के लिए 27 दिन का विशेष जाप किया लेकिन उसका भी कोई परिणाम नहीं निकला।

गर्मी का मौसम प्रारंभ हुआ। अब चलने का मन भी बना। सोचा-कुछ काल जंडियाला में लगाकर चातुर्मास से पूर्व अमृतसर पहुँच

जाएं तो ठीक रहेगा। मार्ग में तरनतारण में रुके। भिक्षा में ऐसा कोई पदार्थ उपलब्ध नहीं हुआ जिसे आसानी से निगला जा सके। गले का जख्म बढ़ रहा था। बोलने में इतना कष्ट नहीं था पर ठोस पदार्थ चबाना पड़े और गले से उतारना पड़े तो वेदना बढ़ जाती थी।

सब संतों का आहार आ गया। पर जब तक वाचस्पति गुरुदेव को आहार न मिले तब तक दूसरे संत कैसे करें? ठोस होने से वाचस्पति गुरुदेव के गले से नीचे नहीं उतर रहा था, उसके बिना संतों के गले से नहीं उतर रहा था। श्री शास्त्री जी म. को हुक्म हुआ– 'तू किसी घर से ढूंढकर ला।' वे ऐसे घर पहुँच गए जहाँ सामक (श्यामाक) की खीर बनी हुई थी। गृह स्वामिनी ने श्रद्धापूर्वक दी। वे लाए और अनुकूल रही। तब संतों के गले से भोजन का निवाला निगला गया।

एक अप्रैल को रुग्ण काया लेकर जंडियाला में प्रवेश किया। पीड़ा के बावजूद सहनशक्ति गजब की थी। स्थानक छोटा होने पर भी उन्होंने कभी अप्रसन्नता व्यक्त नहीं की। श्रावकों की भावना सुविशाल थी। कथा गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. ही फरमाते थे क्योंकि पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. को जालंधर वीर-जयन्ती मनाने के लिए भेज दिया था।

13 अप्रैल वैशाखी का व्याख्यान मंदिरमार्गी समाज के कालेज हाल में आयोजित था। भीड़ ज्यादा थी, पूज्य गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. का प्रवचन प्रारम्भ हो गया। मगर भीड़ में शोर-शराबा रहा। अनुशासन बिल्कुल नहीं था। वाचस्पति गुरुदेव को यह अव्यवस्था सहन नहीं हुई। शरीर, गला, रोग, वेदना की परवाह न करते हुए खुद ही प्रवचन करने खड़े हो गए। गले के दर्द को भुला दिया। आवाज की बुलन्दगी, शेराना अन्दाज, ललकार और दहाड़ सब कुछ बेमिसाल था। 20-25 मिनट तक श्रोताओं की ओर से पूरा सन्नाटा रहा। जिसने वह आवाज सुन ली, दृश्य देख लिया, देशना सुन ली, दिल में बैठा ली, वह धन्य-धन्य हो गया। यह उनका अंतिम प्रवचन था। यद्यपि किसी को उस दिन ये ख्याल नहीं आया कि ये घड़ी किस कारण बहुमूल्य है। उस दिन का प्रवचन कुछ

ज्यादा ही मंहगा पड़ा। रोग पर दुष्प्रभाव पड़ा। पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. के पास जालंधर समाचार भिजवा दिया कि महावीर-जयंती सम्पन्न कर जंडियाला गुरु पधार जाएं। यदि आवश्यकता हुई तो डोली से अमृतसर ले जाना पड़ सकता है। पूज्य गुरुदेव तदनुसार जण्डियाला पधार गए। अमृतसर श्री संघ पधारने और चातुर्मास की विनती लेकर उपस्थित हो गया। ये विचार भी बन गया कि इस वर्ष संवत् 2020 सन् 1963 का चातुर्मास अमृतसर हो जाएगा तथा पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. का जालंधर में।

जण्डियाला के श्रावकों को विहार की भनक लगी तो अकुला गए। सब इकट्ठे होकर चरणों में आए। कहने लगे– "आप हमारे नाथ हो, सर्वस्व हो। आप पैदल चलकर यहाँ आये हो, यदि पैदल चलकर अमृतसर जाओ तो हमें कोई आपत्ति नहीं, पर यदि डोली में बैठकर अमृतसर जाना पड़ेगा तो हमारी भावनाएं आहत होंगी। हम गेट पर लेट जाएंगे मगर आपको लाचार हालत में जाने की अनुमति नहीं देंगे। हमारा क्षेत्र छोटा है मगर आपकी भक्ति में कमी नहीं आने देंगे।"

वाचस्पति गुरुदेव ने उनकी भावना का सम्मान करते हुए कहा– "यहाँ से जाने का विचार स्थगित करता हूँ। बड़े शहरों की तुलना में यहाँ अधिक साता है, घर निकट हैं। जैन श्रावक, वैद्य, हकीम, डॉक्टर हैं, दवाई की दुकान है, हवा पानी शुद्ध है।" वाचस्पति गुरुदेव के इस आश्वासन से क्षेत्रवासी धन्य-धन्य हो गए।

समाज के तत्कालीन प्रधान श्री विद्यासागर जी थे। उनका सारा भ्रातृवर्ग लाला गैण्डामल जी, हकीम सोहन लाल जी, रोशन लाल जी, देशराज जी, मनोहर लाल जी, डॉक्टर जनकराज जी, जगन्नाथ शाह जी, श्री टेकचन्द जी आदि हर एक परिवार सेवा-शुश्रूषा में तैनात निष्णात रहते थे।

मई के मध्य में खेवड़ा से हकीम ताराचन्द जी आए। वाचस्पति गुरुदेव के अन्तरंग विश्वस्त श्रावक थे। उन्होंने कहा– 'मेरे विचार

से आप कुछ दस्तावर दवाईयां लो। मल शुद्धि से कैंसर के रोगाणु बाहर आ जाएंगे। वाचस्पति गुरुदेव उनकी हिकमत पर विश्वास रखते थे, अतः मान गए। उन्होंने कुछ दवाईयां बताई। जैन दुकानों से अचित जड़ी-बूटियां मिल गई। हर मुनिराज ने जड़ियां कूट-कूट कर दवा तैयार की। एक माह तक प्रयोग चला। हकीम ताराचन्द जी तब तक जण्डियाला गुरु में ही ठहरे। उस उपचार का नकारात्मक परिणाम ही सामने आया। दस्तों की अधिकता से शरीर में दुर्बलता आ गई और वे एकदम निढाल हो गए। हकीम जी को हार माननी पड़ी और बोले– 'ये रोग काबू में आने वाला नहीं है। अब तक गले के छाले का आकार बड़ा हो गया था। भोजन नली और श्वांस नली दोनों को प्रभावित करने लगा। इस वजह से तरल पदार्थ निगलने, बोलने में कष्ट होने लगा। उनके शब्दों की स्पष्टता भी घटने लगी। वातावरण में चिन्ता भी बढ़ी। श्री ज्ञानमुनि जी म. व श्री विमल मुनि जी म. साता पूछने पधारे। समता देखकर हर आगन्तुक को आश्चर्य और श्रद्धा की अनुभूति होती थी। जब उनसे उनकी शारीरिक और मानसिक सुखसाता पृच्छा की जाती थी तब वे बताते थे कि शरीर में इतनी पीड़ा है मानों मेरे गले को कोई चाकू से छील रहा है या वहाँ कोई ज्वालामुखी धधक रहा हो। लेकिन मेरा मन बेचैन नहीं है। मैंने जीवन भर रातों में जाग-जागकर जो स्वाध्याय की है, साधना का मर्म जाना है, शरीर और आत्मा की भिन्नता का जो रहस्य समझा है उसका प्रैक्टिकल कर रहा हूँ।

शरीर असत्य है, आत्मा सत्य है। शरीर अन्तधर्मा है, आत्मा अन्तहीन है, अनन्त है शरीर जड़ है आत्मा ज्ञानमय है शरीर माया है आत्मा ब्रह्म है। मैं उस पर-ब्रह्म का साक्षात्कार कर रहा हूँ, उसमें डूब रहा हूँ। हाँ, इस शरीर पीड़ा का कारण भी मेरे अन्दर छिपा हुआ कोई कर्म है, जो मैंने कभी अज्ञान अवस्था में बांधा होगा।

उनके मुख से एक गाथांश प्रायः निसृत होता रहता था– "अबोहि कलुसं कड़ं।"

संयम नियमों के प्रति उनकी जागरुकताः—

एक दिन उनसे विनती की कि आप दूध में घरेलू बिस्कुट भिगो कर लें। इससे शरीर में कुछ खाद्य तत्व चला जाएगा। घर के बिस्कुट प्रायः सभी परिवारों में मिलते हैं। परन्तु वाचस्पति गुरुदेव बोले— 'मैंने सन् 40 में पटियाला में बिस्कुटों का त्याग कर दिया था क्योंकि उस समय बिस्कुटों में अण्डे जैसी अभक्ष्य वस्तु डालने की आशंकाएं व्यक्त की जा रही थी। उस समय घर बाजार के बिस्कुटों की भिन्नता का ख्याल मेरे मन नहीं था। इसलिए मैंने तो बिस्कुट मात्र का नियम ले रखा है। घर के बिस्कुट शुद्ध होते हुए भी मैंने आगार (छूट) नहीं रखा। इसलिए मैं अपने नियम में ढील नहीं आने दूँगा।

बाबू हेमचन्द जी दिल्ली से सरकारी वैद्य को लाए। गर्मी का मौसम, गले की जलन, निगलने में कष्ट को देखते हुए कहने लगे— 'शिकंजवी लेने से पीड़ा में बचाव रहेगा।' समाज के प्रधान विद्या सागर जी पास ही खड़े थे। वाचस्पति गुरुदेव को पूरा ध्यान था। आहार के लिए श्री भण्डारी जी आज्ञा लेने लगे, तब बोले— 'भण्डारी! विद्यासागर के घर शिकंजवी मिले तो नहीं लानी। उसने संतों के निमित्त बनवा दी हो तो दोष लगेगा। मैं अपनी जीवन पर्यन्त निभाई निर्दोष आहार चर्या को अंतिम समय में छोड़ना नहीं चाहता।

गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. उन्हें कमर पर बैठाकर ऊपर खुले कमरे में (बरसाती) सायंकाल ले जाते और प्रातः नीचे लाया करते। कुछ भक्तों ने सोचा कि ऐसी मुद्रा में वाचस्पति गुरुदेव का एक फोटो खींच लें। एक सुबह जब उन्हें नीचे लाया जा रहा था तब एक फोटोग्राफर को उनके फोटो लेने वास्ते स्थानक के सामने वाले मकान पर खड़ा कर दिया। जैसे ही कैमरामैन क्लिक करने वाला था वाचस्पति गुरुदेव की उस पर नजर पड़ गई और उन्होंने अपने मुंह पर चादर ढक ली। फोटोग्राफर और उसके प्रेरक ताकते रह गए।

उनकी बढ़ती वेदना को देखकर मुनियों ने रातभर जागरण की व्यवस्था बना डाली। रात के 10 से प्रातः 3 बजे तक एक दो घण्टे

अलग-अलग बांट लिए और उनकी सेहत के लिए जप आदि करते रहते।

वाचस्पति गुरुदेव ने अपने समीपस्थ सभी मुनियों को जीवन भर जाप और स्वाध्याय के लिए भिन्न-भिन्न पाठ भी अर्पण किए।

श्री ताराचन्द जी उपचार की असफलता के बाद खेवड़ा गांव में चले गए पर ध्यान उनका जण्डियाला में ही लगा रहा। वहाँ से उन्होंने एक पत्र लिखा– 'आपने शेरों की तरह घर छोड़ा था, शेरों की तरह संयम को पाला है और अब शेरों की तरह ही संसार से विदा होना है, घबराना नहीं।' एक भावुक शिष्य अपने परम आराध्य के लिए और क्या सौगात दे सकता है?

उन्होंने कई बार पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी से संथारा कराने को कहा, लेकिन जून की भीषण गर्मी और गले के दर्द को देखकर हिम्मत नहीं हुई। शरीर में खुश्की आने का खतरा था। कुछ श्रावकों जैसे कुन्दनलाल पारख दिल्ली, ने भी पूज्य गुरुदेव को कहा था कि गर्मी बढ़ने से असमाधि बन सकती है, इसलिए संथारे की जल्दी मत करना।

स्वयं वाचस्पति गुरुदेव का आकलन था कि पौष-माघ का महीना होता तो मैं खुद संथारा पचक्ख लेता पर आजकल तो मुझे प्यास बहुत लगती है। सादा पानी गले को काटता है। कुछ शर्बत, मिश्रित पानी गले से उतर जाता है। सादे पानी की तो एक बूंद भी शस्त्र सी लगती हैं गले का भीतरी हिस्सा क्षत-विक्षत हो चुका था। अनाथी मुनि ने कहा था 'सत्थं जहा परम तिक्खं सरीर विवरन्तरे' जैसे शरीर के अन्दर कोई तीक्ष्ण शस्त्र चुभ जाये। वैसी वेदना वाचस्पति गुरुदेव के गले की थी।

यदि सादा पानी पीने की अनुकूलता होती तो तिविहार संथारा किया या करवाया जा सकता था। आहार की इच्छा तो उन्हें रही ही नहीं थी बल्कि कई बार कहते– "कितनी मौज आ गई है, आहार की इच्छा ही नहीं होती।" उन्हें हर बात में मौज मिलती थी तभी तो माता-पिता ने मौजीराम नाम रख दिया था।

संघ समाज की समस्याओं से पूर्णतः निर्लिप्त और विविक्त हो चुके थे। कोई बात आती तो कह भी देते– हमें क्या लेना है? उनके मुनिराज भी इतने जागरुक थे कि बाह्य जगत् की कोई बात उन तक जाने ही नहीं देते थे।

जीवनेच्छा– मृत्यु भय दोनों भावनाओं से ऊपर उठ चुके थे। कहने का अंदाज ही निराला था। "जीवन अपना है किसी से उधार मांगकर नहीं लाए हैं। मरने का मुझे भय नहीं है। यही इच्छा है कि जब तक जीऊँ अपने में लीन रहूँ।" कई बार मुनियों की सोच थी कि भले ही दवाई का कोई सत प्रभाव नहीं आ रहा पर दवा लेने से नाक, गले और मुंह की सफाई होती रहती है और इससे रोगवृद्धि में रुकावट हो जाती है। मुनियों की भावनाओं को वे ठुकराते नहीं थे, उनकी परम कृपा थी।

बाह्य वातावरण से पृथक् होने पर भी भारत के अधिकांश साधु-साध्वी उनकी ओर निहारते रहते थे। मई के पहले सप्ताह में श्रमण संघ के नूतन आचार्य श्री आनन्द ऋषि जी म. की ओर से श्री बद्री नारायण शुक्ल आए थे। उन्हें संक्षेप में उत्तर लिखित में दिया कि तबियत ठीक होने तक कुछ नहीं कहा जा सकता।

घरेलू स्तर पर पूज्य श्री रामकृष्ण जी म. भविष्य को लेकर चिन्तित थे। उन्होंने वाचस्पति गुरुदेव को पत्र लिखा था कि आप सब साधुओं को एक कर दो अर्थात् श्रमण संघ के साथ टूटे हुए संबंधों को जोड़कर सबको एक कर दो।

वाचस्पति गुरुदेव ने सोचा– 'चलो इसी निमित्त से अपने मुनियों की कुछ रुपरेखा बना दूँ।' विचार मन ही मन में चल रहा था। 15 जून, दिन के समय तेज आंधी के दबाव से स्थानक की मुंडेर का एक हिस्सा अन्दर की ओर गिर गया। एक अपशकुन सा समझा गया। 16 जून, 10 बजे वाचस्पति गुरुदेव ने पैड और पैन मांगे। पूज्य गुरुदेव ने सौंप दिए और उन्होंने मुनिसंघ के लिए अपनी वसीयत लिख दी।

"(मुनि) रामकिशन ने लिखा है कि किसी भी कीमत पर संघ एक कर दो। उसका उत्तर– "20 संतों में जिसे श्रमण संघ में रहना हो रहे,

मेरी ओर से रुकावट नहीं। श्री छोटेलाल जी म. के नेश्राय के संत अगर संघ अनुशासन व्यवस्था ठीक बन जाए अपने संयम की उन्नति समझें तो (श्रमण संघ में) मिल सकते हैं वरना पूज्य अमर सिंह जी, पूज्य कांशीराम जी की सम्प्रदाय के नाम पर चलें। उनमें सुदर्शन नेता, बाकी सब इसकी आज्ञा में रहें।"

पत्र लिखकर श्री भण्डारी जी म. को थमा दिया। उन्होंने पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. को पढ़ने के लिए आगे बढ़ा दिया। पढ़ा तो स्तब्ध रह गए। चरणों में गिरकर विनती की कि गुरुदेव मेरे सिवाय किसी और का नाम लिख दो। मुझसे ये भार वहन नहीं होगा। वाचस्पति गुरुदेव ने धीमी आवाज में कहा– "मैंने जो करना था कर दिया, अब मैं तुम से निश्चिन्त और तुम मुझसे निश्चिन्त।" कहकर अपने दाएं हाथ के पोरों को गिनने लगे। ग्यारह पोरे गिनकर रुक गए। संभव है कि मुनि संघ को, समाज को व संसार को ग्यारह दिन की और मोहलत देने का आभास दे रहे हों।

पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. के सर्वाङ्गीण जीवन से प्रभावित होकर उन्होंने संघ का भविष्य उनको सुपुर्द किया था। अपने सुयोग्य उत्तराधिकारी के संबंध में उनकी पहचान की झलक सन् 1955 के एक पत्र से मिलती है जो उन्होंने अपने निकट के श्रावक निहालचन्द जी चोरड़िया को लिखवाया था– 'सुदर्शन मुनि मेरे भावों में समाया है। इसका कण-कण पवित्र है। इसकी सेवा मेरी सेवा है।'

उसके बाद भी उन्होंने संथारा करवाने को कहा पर मुनियों की विवशता पूर्ववत् कायम थी।

एक दिन उन्होंने अपने हाथ में गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. का हाथ लिया और पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. के हाथ में थमा दिया। बोले– "देख सुदर्शन! रामप्रसाद बहुत भोला है, इसका ध्यान रखना। मैं इसे तुझे सौंप रहा हूँ।" कहने और सुनने वालों के नयन सजल हो उठे।

आजीवन सेवाव्रती श्री बलवन्त राय भण्डारी जी म. के लिए उन्होंने श्रद्धेय श्री सेठ जी म. एवं गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. से कहा कि

इसका साथ कभी नहीं छोड़ना। हाँ इसका मन कहीं और किसी संत के पास रहने का हो तो बात अलग। वरना तुम दोनों इसके साथ ही रहना।

एक विशेष संकेत पूज्य गुरुदेव को दिया— 'सुदर्शन, मेरे बाद हरियाणा में चले जाना वहाँ तुझे चेले ही चेले मिलेंगे।'

उनकी आज्ञा पालित हुई और भाषा फलित हुई।

25 जून को श्रावक केसरदास जी आए। बहुत धीमी-धीमी आवाज में वार्तालाप किया। कुछ अंश—

'मुझे अब जाना है, मेरे पुराने साथी मुझे बुला रहे हैं।' श्री केसरदास जी ने पूछा— 'आपको क्या दिखाई दे रहा है?' बोले— 'देवलोक दिख रहा है। देवियां झारी लिए खड़ी स्वागत करने आ रही हैं।' 'कुछ और भी दिखाई दे रहा है?' उत्तर में फरमाया कि गृहस्थ को सब बातें नहीं बतानी होती।

वे अपने आपको पूर्णतया तैयार कर चुके थे। आलोचना निन्दनादिक पारलौकिक आराधना के प्रत्येक चरण को पारकर संथारे की भावना में लीन थे। 26 जून को दिल्ली चांदनी चौंक से श्रावक श्री निहालचन्द जी चोरड़िया आए। स्थिति देखकर पूछा कि क्या अगली यात्रा की पूरी व्यवस्था कर ली है? अर्थात् आलोचना कर ली है। बोलने की असमर्थता के कारण लिखकर दिया— 'आलोचना, क्षमापना करके मैं बिल्कुल निःशल्य हो चुका हूँ। पूरी तरह तैयार हूँ। मुझे आगे जाने का भय नहीं है।'

उस दिन फिर मुनियों से संथारा करवाने का आग्रह किया पर मुनि भी विवश थे। उस रोज उन्होंने कुछ निर्देश भी दिए, जो उनके भावी मुनियों के लिए आधारभूत बनेः—

1. मेरे बाद मेरे नाम का कोई स्मारक नहीं बनाना। तुम्हीं मेरे जिन्दा स्मारक हो। यदि तुम संयम में रहोगे तो मेरी स्मृति बनी रहेगी और मैं जिन्दा रहूँगा। मेरे नाम से कोई पुस्तकालय, विद्यालय या औषधालय मत बनवाना।

2. गृहस्थों से चंदा मांगने के लिए कभी हाथ मत पसारना। पैसा मांगने से तुम साधु नहीं, भिखारी बन जाओगे। साधु तो दाता होता है, याचक नहीं।

3. जीभ के चटोरे मत बनना, नहीं तो एषणा समिति में दोष लगने लगेंगे।

4. औरतों के चक्कर से बचकर रहना। उनसे अधिक सम्पर्क नहीं रखना, नहीं तो संयम में दाग लगने का खतरा है।

मुनिवर्ग उन शिक्षाओं को श्रद्धा से ग्रहण करता रहा और एक-एक पल को शंका आशंका से तोलता रहा।

भय भावना घनीभूत होने लगी। मुनियों को रात्रि में उल्कापात दृष्टिगोचर हुए। पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. को सपना सा दिखा कि वाचस्पति गुरुदेव ऊपर की ओर जा रहे हैं और हजारों लोग साथ-साथ है। तुरन्त बैठ गए और मन भावुकता के ज्वार में डूब गया।

रात को वाचस्पति गुरुदेव ने संथारे के लिए बोला। पीड़ा के बावजूद इतनी सावधानी रख रहे थे कि मेरे कारण किसी की नींद न खुल जाय। मुनिवृन्द तो जागा ही हुआ था।

काफी दिनों से गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. उन्हें दैवसिक रात्रिक प्रतिक्रमण सुनाते थे। परन्तु 27 तारीख की सुबह रात्रि प्रतिक्रमण उन्होंने अपने आप ही करना शुरू कर दिया। किसको पता था कि ये उनका अंतिम प्रतिक्रमण है। ईसा-मसीह के Last Supper की तरह वे तो प्रतिक्रमण की आज्ञा और मुनियों से पूर्व ही ले चुके थे ये सोचकर कि कहीं चूक नहीं रह जाय। और मुनियों ने आज्ञा ली तब तक उनका प्रतिक्रमण काफी हो चुका था। गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. ने पूछा– 'गुरु महाराज! आप क्या कर रहे हो?' कहने लगे– 'प्रतिक्रमण'। फिर पूछा– 'कौन सा आवश्यक कर रहे हो?' उत्तर दिया– 'पांचवां'। फिर कान लगाकर सुना तो 'इच्छामि खमासमणो' का पाठ पढ़ रहे थे।

शारीरिक क्षीणता के बावजूद इतनी अप्रमत्तता देख मुनि हैरत में थे।

वे किसी और को नहीं, अपने को ही सुना रहे थे। उनके लिए और की सत्ता रही भी नहीं थी।

समय को टालने के प्रयास चल रहे थे मगर वाचस्पति गुरुदेव समय की पकड़ से बाहर जा चुके थे। पूज्य गुरुदेव जब से जण्डियाला गुरु में पधारे थे, उन्होंने उत्तराध्ययन का 29वां अध्ययन सुनाना प्रारंभ कर दिया था। 73 विषयों में से पहले 37 विषय सुना दिए। अब 38वां विषय शरीर-प्रत्याख्यान शुरू करना था लेकिन मन की अज्ञात कुशंका के कारण यह विषय छेड़ा ही नहीं। कई दिनों तक 'योग-प्रत्याख्यान' पर ही प्रवचन देते रहे। फिर भी विषय वस्तु की मांग को नजरअंदाज नहीं किया जा सका। 27 जून प्रातः शरीर प्रत्याख्यान की व्याख्या करनी ही पड़ी। सुबह उस विषय का सैद्धान्तिक स्वरुप प्रकट हुआ तो शाम को उसका प्रैक्टिकल होना था।

सभी निकटस्थ मुनि चाहते थे कि वाचस्पति गुरुदेव की भावनानुसार संथारे का प्रत्याख्यान करवा दें लेकिन परिस्थितियां उन्हें रोक रही थी। 11 बजे वाचस्पति गुरुदेव ने बोलने की कोशिश की। शब्द पकड़ में नहीं आए। उन्हें कागज पेंसिल दी ताकि कुछ लिख दें। हाथ कांप रहा था। कुछ लिखा वह भी समझ नहीं आया। दोबारा विनती की तो कुछ अक्षर साफ दिखे– 'बदरी।' गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. बोले– 'वो तो दूर हैं।' सुनकर शांत हो गए। शायद उनका भाव रहा हो कि यदि श्री बद्रीप्रसाद जी म. यहाँ होते तो संथारा करवा देते।

हाँ, दोपहर बाद शारीरिक लक्षण बदलने लगे। चार महीने पुरानी चेहरे की सोजिश उतर गई। काफी समय से बहने वाला बलगम आना बन्द हो गया। अब तक सीधे लेटने में तकलीफ होती थी पर आज सीधे लेट गए। वैद्य जी कहने लगे– 'दवाई का अनुकूल असर आ रहा है।' पर रोग कह रहा था मैं अपना आखिरी वार करने की तैयारी कर रहा हूँ।

अढ़ाई बजे के लगभग ग्लूकोज की ड्रिप लगाई। परन्तु एक घंटे तक एक बूंद ग्लूकोज भी अन्दर नहीं गया। बोतल ज्यों की त्यों भरी रही।

साढ़े तीन बजे ड्रिप उतार ही दी। श्री भण्डारी जी म. तथा श्री शास्त्री जी म. वहीं बैठे रहे। बाकी सब मुनिराज ऊपर चले गए। उस समय अमृतसर के श्रावक रोशनलाल एवं हंसराज जी दर्शन करने आए। तभी वाचस्पति गुरुदेव सीधे लेट गए। दोनों हाथ जोड़े, धीरे-धीरे बोलकर संथारा ग्रहण कर लिया। साढ़े चार बजे का समय था। श्री शास्त्री जी म. ने संथारा ग्रहण की सूचना तत्काल ऊपर सभी मुनियों को दे दी। सभी नीचे आ गए। नवकार मंत्र चार शरण सुनाने लगे। स्वाध्याय प्रारंभ हो गया। सबकी नजर उनकी ओर लगी रही। पौने पांच बजे आंखों की पुतलियां पलट गई। उन्हें संभाला तो ठीक हो गई। फिर दो मिनट बाद वही दृश्य पुनरावृत्त हुआ। प्रयत्न करने पर भी पुतलियां ठीक नहीं हुई। शरीर में विचित्र सा परिवर्तन आया उन्हें एक झटका सा लगा। एक सिहरन सी हुई। एक रोशनी की लहर सी दौड़ी। पहले सारे शरीर में रक्तिम प्रकाश छाया। रौंगटे खड़े हुए। फिर एकदम पीली आभा से शरीर व्याप्त हो गया। उस आभा में शरीर की कालिमा और हड्डियां विलुप्त हो गई। शरीर का यंत्र चलते-चलते एकदम रुक गया। सिर के बाल फिर भी तने रहे। सिर की रगें देर तक फड़कती रही। मस्तक गर्म था, धीरे-धीरे सब कुछ शान्त हो गया। और महान् साधक की महान् यात्रा पूर्ण हो गई। असत् पड़ा रह गया, वह सत् में समाविष्ट हो गए। जड़ तत्व धरा पर था, ज्ञान तत्व स्व को पा गया, सान्त अभी भी दृग्गोचर था, अनन्त अपनी यात्रा पर गतिमान थे। माया कल्पना धरी रह गई और वे ब्रह्ममय ब्रह्मलीन हो गए।

इतिहास पुरुष इतिहास के अंग बन गए। महान् परिवार के महान् सपूत, महान् धर्मवंश के महान् अवतंस, महान् गुरु के महान् शिष्य, महान् परंपरा के महान् अवतार, महान् शिष्यों के महान् गुरु आषाढ़ सुदी छठ संवत् 2020 (27 जून, 1963) की शाम को चिरनिद्रा में सो गए।

उनके आदर्शों के साकार पुञ्ज ज्येष्ठ कनिष्ठ सभी मुनिराजों ने धैर्य और साहस से उनको विदाई दी।

चतुर्विंशंतिस्तव का कायोत्सर्ग कर उनसे जुड़ी ममता भावनाओं को

विजित किया। वस्त्रादि परिवर्तन की रस्म को सम्पन्न कर शरीर समाज को सौंप दिया। शरीर नीचे हाल में लाया गया। नौ मुनिराज अपने गुरुओं की गरिमा-महिमा की सुरक्षा को आत्मलक्ष्य बनाकर आत्मलीन हो गए।

उत्तर भारत का समग्र जैन समाज उपस्थित हो गया। 28 तारीख को संस्कार के लिए विमान को उठाया गया। जण्डियाला की मंदिरमार्गी समाज जो स्थानकवासियों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चल रही थी, ने अपनी परम्परा और श्रद्धा के अनुसार पुष्पवर्षा करनी शुरू कर दी। चांदनी चौंक के विज्ञ श्रावकों ने पूज्य गुरुदेव को सूचना दी और उन्होंने निषेध करवा दिया और श्रावकों ने आज्ञा पर पुष्प चढ़ाए।

30 तारीख को श्रद्धांजलि सभा हुई, जिसमें गुरुवर्य श्री रामप्रसाद जी म. की कालजयी रचना—

बुझ गई है जीवन ज्योति, स्मृतियां ही सदा अमर हैं।
हो गए दृष्टि से ओझल, वो परम पूज्य गुरुवर हैं।।

की प्रस्तुति की। पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म. ने व्यापकता सर्वाङ्गीणता से समन्वित सम्बोधन दिया। आशा विश्वास और श्रद्धा का प्रकट निगूढ़ स्वर उनके प्रत्येक शब्द में था। संघ को, संघ गौरव को अखण्ड बनाने की प्रतिज्ञा के साथ पूज्य गुरुदेव की श्रद्धांजलि पूर्ण हुई

उस वर्ष पूज्यपाद भण्डारी श्री बलवन्त राय जी म. की निश्राय में ठाणे 9 ने अमृतसर चातुर्मास किया यह मानकर कि ये वाचस्पति गुरुदेव का चातुर्मास है।

उसके पश्चात् भी उनका मुनिमण्डल जहाँ-तहाँ प्रवास, निवास, चातुर्मास करता है सब उन्हीं का होता है और होता रहेगा।

परिशिष्ट

प्रवचन कला का चमत्कार

1. एक बार खेतड़ी सिंघाने की ओर जा रहे थे। ऐसे गांव में ठहरे जहाँ सब लोग अपरिचित थे। संत आहार के लिए गए तो लोगों ने डर कर दरवाजे बन्द कर लिए। दिन में वाचस्पति गुरुदेव ने प्रवचन किया। श्रोताओं का तांता लग गया। सब मंत्र-मुग्ध हो गए। कहने लगे– 'ये तो भगवान् हैं। इनकी वाणी में कृष्ण की बांसुरी जैसी आवाज है।'

लोग प्रभावित हुए शाम को आहार की विनती करने लगे। वाचस्पति गुरुदेव स्वयं ही गोचरी लेने गए। आहार गरम देखकर बोले– 'ये रोटियां हम नहीं लेंगे। तुमने तो हमारे लिए बनाई हैं। दोपहर की बची हो तो ले लेंगे।' लोगों ने बहुत आग्रह किया पर त्याग और नियमों में ढील नहीं आने दी। लोग आश्चर्यचकित रह गए।

2. एक मुसलमानों के गांव में सूर्यास्त के समय पहुँचे। प्रतिक्रमण के पश्चात् प्रवचन प्रारंभ कर दिया। काफी श्रोता एकत्र हो गए। एक पहर पूरा हो गया और मर्यादानुसार प्रवचन बंद कर दिया। परन्तु तभी गांव के दूसरे भाग में बसने वाले और लोग भी आ गए। कहने लगे– 'हम भी आपका प्रवचन सुनना चाहते हैं। परन्तु वाचस्पति गुरुदेव ने फरमाया कि अब हम सुना नहीं सकते, क्योंकि हमारा नियम है कि एक पहर के बाद हम ऊँची आवाज में नहीं बोलते हैं।' कुछ लोगों ने चढ़ावा चढ़ाने के लिए रुपये निकाल लिए, ये सोचकर कि शायद रुपयों के लोभ में मान जाएं। परन्तु किसी ने कहा– 'यार यही तो मुश्किल है कि ये कुछ नहीं लेते। कुछ लेने वाले होते तो हमारी मर्जी से चलते मगर ये तो अपनी मर्जी के मालिक हैं।

3. रोहतक के पास 'बेरी' कस्बे में उस युग में आंखों के आप्रेशन की सुविधा थी। जैन परिवार न होते हुए भी वहाँ तपस्वी श्री नेकचन्द

जी म. वास्ते जाना पड़ा। काफी दिनों तक ठहरना हुआ। वाचस्पति गुरुदेव जी म. तथा योगिराज जी म. सेवा में थे। दिन में एक बार भोजन लाते तथा दिन में ही प्रवचन करते। वाचस्पति गुरुदेव का जब प्रवचन होता तो वीरता, करुणा तथा भक्ति रस की धाराएं बहने लगती थी। योगिराज जी म. का साथ होता। गांव एकत्रित हो जाता। एक अंधा बूढ़ा आदमी लाठी टेक-टेक कर आता। प्रवचन सुनकर झूम जाता। एक दिन उसने विनती की– 'मेरी कुटिया में भी दर्शन दो।' एक दिन वाचस्पति गुरुदेव अचानक पहुँच गए। घर में घोर गरीबी थी, औरों के घर में आटा पीसकर, पानी भरकर पति-पत्नी गुजारा करते थे। अपने घर में भगवान को देखकर भाव-विभोर हो गए। मगर भोजनादि कुछ तैयार नहीं था तो रोने लगे– 'हाय! हमारे दुर्भाग्य?' वाचस्पति गुरुदेव ने कहा– 'कुछ और हो तो दे दो।' 'कच्चे पापड़ है अभी सेंक देते है।' 'नहीं सेको मत ऐसे ही दे दो।' 'क्या आप कच्चा पापड़ ही खाओगे?' कहते हुए वृद्ध ने बड़ी भावना से बहरा दिया। वापस आकर वाचस्पति गुरुदेव ने संतों से कहा– 'आज अमृत लाया हूँ।' उस पापड़ का एक-एक टुकड़ा सब संतों को दिया। सबने उसमें निहित भावनामृत का स्वाद लिया।

औत्पातिकी बुद्धि का चमत्कार

1. एक मौलवी आकर बहस करने लगा। कहने लगा 'खुदा के हुक्म के बिना पत्ता नहीं हिलता।' वाचस्पति गुरुदेव– 'मस्जिद के सामने हिन्दू बाजा बजाते है तो क्या खुदा के हुक्म से बजता है या बिना हुक्म के? यदि हुक्म से बजता है तो बुरा क्यों मानते हो? यदि बिना हुक्म के बजता है तो बजाने वाले खुदा से ज्यादा ताकतवर हो गए?' मौलवी को कोई जवाब नहीं सूझा।

2. एक बार हरियाणा के खुडाली गांव में वाचस्पति गुरुदेव तथा श्री योगिराज जी म. विराजमान थे। वाचस्पति गुरुदेव स्वाध्याय कर रहे थे। श्री भण्डारी जी म. आहार के लिए गए हुए थे तथा योगिराज जी म. टहल रहे थे। सामने चारपाई पर कुछ जमींदार बैठे थे। उनमें से एक ने कहा– 'ये मुंह बांधे कहाँ से आ गए?' दूसरा बोला– 'भाई, साधु हैं, आ गए तो दर्शन हो गए, अच्छी किस्मत है हमारी। पहला कहने लगा– 'हम तो इन्हें अपने गांव में घुसने भी न दें।' यह बात श्री योगिराज जी म. ने सुन ली। उससे पूछ लिया– 'चौधरी, कहाँ का है?' बोला– 'चांदी का। (चिड़ी-चांदी प्रसिद्ध ग्राम युगल है) योगिराज जी म. ने तुरन्त कह दिया– 'अच्छा, आज हम चांदी में भी आएंगे, दम हो तो रोक लेना।' तभी आहार आ गया। आहार के बाद श्री योगिराज जी बोले– 'गुरु म., आज तो चांदी चलना है।' कारण पूछने पर सारी बात बता दी। वाचस्पति गुरुदेव तुरन्त तैयार हो गए। तीनों चांदी पहुँचे। संयोगवशात् वही जमींदार टकरा गया। योगिराज जी म. बोले– 'ले चौधरी! हम तो आ गए और ठहरेंगे भी।' उचित मकान देख कर ठहर गए। वह जमींदार कुछ उपद्रवी लोगों को लेकर पहुँच गया। कहने लगा– 'शास्त्रार्थ करेंगे।' सब बैठ गए। वाचस्पति गुरुदेव प्रश्नों का

समाधान करने लगे। उन्हें जिज्ञासा भाव तो था नहीं। नीयत झगड़े की थी। कुछ बदतमीजी करने लगे। योगिराज जी म. वाचस्पति गुरुदेव के प्रति अशिष्ट शब्दों को सहन नहीं कर सके। कड़क कर बोले– 'बासी अनाज के नशे में बात मत करना, होश में बात करो। पूछो, समझो, हम इन लाठियों से डरने वाले नहीं है। ऐसी लाठियां बहुत घुमा-घुमाकर तोड़ दी हैं ज्यादा बकवास की तो परिणाम अच्छा नहीं होगा।' सब घबरा गए। झगड़े की नीयत वाले खिसक गए। जिज्ञासु रह गए। पूरे एक सप्ताह ठहरे। गांव में धर्म का खूब रंग बरसा।

3. ऐसे ही एक जगह जाटों के लड़के भारी मुद्‌गर लेकर व्यायाम कर रहे थे। तीनो को गुजरते देख मजाक करने लगे। वाचस्पति गुरुदेव की आज्ञा लेकर श्री योगिराज जी म. ने मुद्‌गर को तिनके की तरह उठाया और यतना के साथ रख दिया। नौजवान लड़के लोहा मान गए।

4. जालंधर चातुर्मास में एक दिन कथा में फरमाने लगे– 'एक पाठ बोलूंगा तीन बार। जिसे लिखना हो लिख लो। बाद में नहीं बताऊँगा। किसी के पास पैन नहीं मिला सब हाथ मलते रह गए। बाद में लोगों ने विनती की। बोले– 'वो तो कोई लहर थी।'

5. दिल्ली सदर बाजार में थे। बाहर घूमने के लिए जीतगढ़ की पहाड़ी पर जाते थे। एक दिन देखा कि कुछ पुलिस वाले तेरापंथ के साधुओं को (संभवतः नगराज जी) परेशान कर रहे थे। उन्होंने तुरन्त पुलिस को डांटा– 'क्या कर रहे हो?' 'नहीं म., हम आपको कुछ नहीं कह रहे। 'नहीं ये भी तो हमारा भाई है। कोई बात हो तो समझाओ। संत को तंग करने का क्या मतलब है?' पुलिस वालों ने माफी मांगी। सन्त ने आभार माना।

6. सन् 1954 में श्वेताम्बर मूर्तिपूजक सम्प्रदाय के महान् आचार्य श्री वल्लभ विजय जी म. का देवलोक गमन हो गया। समग्र भारत शोक में था। दिल्ली में उनकी स्मृति में श्रद्धांजलि सभा का आयोजन होना था। स्थान था बारादरी चांदनी चौंक।

दिगम्बर, मूर्तिपूजक, तेरापंथी, स्थानकवासी सम्प्रदायों के सभी मुख्य मुनिराजों को उसमें शामिल होना था। पर एक समस्या आई कि पट्टों की व्यवस्था कैसे हो? किसी ने सुझाव दिया– 'आचार्य पदधारी ऊँचे पट्टों पर बैठें, बाकी सब नीचे। दूसरे इससे सहमत थे। पर एक सम्प्रदाय का लघु संत अन्य सम्प्रदाय के प्रमुख मुनि से नीचे बैठने को तैयार नहीं था। तभी वाचस्पति गुरुदेव ने कहा– "हम सब एक महान् व्यक्तित्व को श्रद्धांजलि अर्पण करने आए हैं। अतः सभी लोग अपने-अपने आसन जमीन पर बिछाकर श्रद्धांजलि देंगे। सबको बात जंच गई और अत्यन्त सौम्य वातावरण में आयोजन सम्पन्न हुआ।

7. अमृतसर में प्रवचन फरमा रहे थे। ओढी हुई चादर का एक भाग फटा हुआ था। वह कई बार श्रोताओं को दृष्टिगोचर भी हो जाता था। एक श्रावक ने सोचा– 'गुरुदेव, मेरे यहाँ से नई चादर ले आएं तो अच्छा होगा। इस भाव से वह श्रद्धालु प्रवचन के बाद उनके निकट आया। कहने लगा– 'गुरुदेव आपकी चादर फटी हुई है। वाचस्पति गुरुदेव उसकी भावना को भांप गए। पलटकर बोले– 'चादर ही फटी है, संयम तो नहीं फटा। यदि वह फटे तब ध्यान दिलाना।' संयम परक दृष्टिकोण के हिमायती वे तभी तो कहलाए।

8. बड़ौत के समीपवर्ती मलकपुर गांव में थे। गांव के कुछ लोग बैठे हुए थे। उन्होंने जैन मुनियों के संबंध में सुन रखा था कि वे स्नान नहीं करते। ये बात उन्हें रुचिकर नहीं लग रही थी। उनमें से एक व्यक्ति ने पूछ ही लिया आप स्नान नहीं करते। अतः पवित्र कैसे हो सकते हो? वाचस्पति गुरुदेव फरमाने लगे– "तुम गऊमाता को पूजते हो? वह कितना नहाती है?" "वह तो नहाती नहीं है।" फिर पूछा– "भैंस कितना नहाती है।" "वह तो ज्यादातर समय पानी में रहना पसन्द करती है।" अर्थात् नहाती ही रहती है। वाचस्पति गुरुदेव– "क्या तुम उसकी पूजा करते हो?" "नहीं, वह पूजनीय नहीं है।" वाचस्पति गुरुदेव ने कहा– "स्नान से कोई पवित्र नहीं होता। पवित्र होता है आचार विचारों की शुद्धि से। जैन मुनि ब्रह्मचर्य का स्नान करते है।"

9. हाँसी में व्याख्यान की अजस्र धारा बह रही थी। वीर, वैराग्य रसों से पूर्ण उनके प्रवचनों में भक्तजन डुबकियां लगा रहे थे। लगता था हर कोई वीर बनकर संयम के मार्ग पर चल पड़ेगा। वाचस्पति गुरुदेव ने हुंकार लगाई– 'क्या है कोई वीर, जो दीक्षा लेने को तैयार हो?' मोहग्रस्त संसारी आत्माएं हौंसला नहीं कर पाई। फिर शेर सी गर्जना हुई और ललकार सारी सभा में गूंजी। तभी एक 60-65 साल का मोलड़ नाम का बुजुर्ग खड़ा हो गया। कहने लगा– 'मुझे अपना चेला बना लो।' वाचस्पति गुरुदेव मन ही मन मुस्कुराए। सभा का मूड पलटते हुए हास्य का पुट दे दिया। कहने लगे– "दांत गिरे अरु खुर घिसे पीठ बोझ ना लेय, ऐसे बूढ़े बैल को कौन खली भुस देय।"

10. धर्म सभा खचाखच भरी हुई थी। वाचस्पति गुरुदेव का व्याख्यान धुंआधार चल रहा था। तभी 5-6 साल का बच्चा भीड़ को चीरता हुआ पट्टे की ओर वंदना करने के लिए बढ़ने लगा। सभा में थोड़ी बेचैनी सी व्याप्त हुई। बच्चे की मस्ती देख वाचस्पति गुरुदेव भी मस्ती में आ गए। व्याख्यान रोक दिया और बच्चे की ओर चरण बढ़ाते हुए कहने लगे– 'आओ जनाब, क्या कहना है।' बच्चे को क्या कहना था, वंदना की और **"जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए।"** पर वाचस्पति गुरुदेव की शालीनता और विनोद प्रियता ने सभा को प्रमुदित कर दिया।

व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव के चातुर्मासों की तालिका

क्रम संख्या	स्थान	विक्रम संवत्	ईस्वी सन्
1	बामनौली (यू.पी.)	1971	1914
2	दिल्ली चांदनी चौंक	1972	1915
3	उदय पुर (राजस्थान)	1973	1916
4	अलवर (राजस्थान)	1974	1917
5	दिल्ली चांदनी चौंक	1975	1918
6	रोहतक शहर (तब पंजाब, अब हरियाणा)	1976	1919
7	जयपुर (राजस्थान)	1977	1920
8	अलवर (राजस्थान)	1978	1921
9	दिल्ली चांदनी चौंक	1979	1922
10	फरीदकोट (पंजाब)	1980	1923
11	दिल्ली चांदनी चौंक	1981	1924
12	रोहतक - दिल्ली - संयुक्त	1982	1925
13	बामनौली (यू.पी.)	1983	1926
14	दिल्ली चांदनी चौंक	1984	1927
15	बामनौली (यू.पी.)	1985	1928

क्रम संख्या	स्थान	विक्रम संवत्	ईस्वी सन्
16	दिल्ली चांदनी चौंक	1986	1929
17	दिल्ली चांदनी चौंक	1987	1930
18	भिवानी (तब पंजाब, अब हरियाणा)	1988	1931
19	कहसून (तब पंजाब, अब हरियाणा)	1989	1932
20	जोधपुर (राजस्थान)	1990	1933
21	दिल्ली चांदनी चौंक	1991	1934
22	हांसी (तब पंजाब, अब हरियाणा)	1992	1935
23	संगरूर (पंजाब)	1993	1936
24	खेवड़ा (तब पंजाब, अब हरियाणा)	1994	1937
25	रावलपिण्डी (तब हिन्दुस्तान, अब पाकिस्तान)	1995	1938
26	रायकोट (पंजाब)	1996	1939
27	पटियाला (पंजाब)	1997	1940
28	अहमदगढ़ मण्डी (पंजाब)	1998	1941
29	सढौरा (तब पंजाब, अब हरियाणा)	1999	1942
30	दिल्ली चांदनी चौंक	2000	1943
31	सदर बाजार दिल्ली	2001	1944

क्रम संख्या	स्थान	विक्रम संवत्	ईस्वी सन्
32	हांसी (तब पंजाब, अब हरियाणा)	2002	1945
33	अमृतसर (पंजाब)	2003	1946
34	जीन्द (तब पंजाब, अब हरियाणा)	2004	1947
35	संगरूर (पंजाब)	2005	1948
36	मलेरकोटला-अहमदगढ मण्डी (संयुक्त) पंजाब	2006	1949
37	जालन्धर (पंजाब)	2007	1950
38	अमृतसर (पंजाब)	2008	1951
39	पालनपुर (गुजरात)	2009	1952
40	जोधपुर (राजस्थान)	2010	1953
41	सब्जी मण्डी दिल्ली	2011	1954
42	संगरूर (पंजाब)	2012	1955
43	जयपुर (राजस्थान)	2013	1956
44	रोहतक मण्डी (तब पंजाब अब हरियाणा)	2014	1957
45	बड़ौत (यू.पी)	2015	1958
46	कांधला (यू.पी)	2016	1959
47	सोनीपत (तब पंजाब अब हरियाणा)	2017	1960
48	जालन्धर (पंजाब)	2018	1961
49	फरीदकोट (पंजाब)	2019	1962

व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव के हस्त लिखित प्रवचन के कुछ पन्ने तथा कुछ ऐतिहासिक तस्वीरें

प्रभु प्रार्थना २॥ परमात्मा की प्रार्थना कुछ लेनेके लिये नही करनी चाहिये देनेके लिये करनी चाहिये। तन मन धन
प्राण समर्पी अर्जुनने इन पर नेग दिखाया यहदो वहदो इच्छा पूरी करो यह स्वार्थी प्रार्थना है इसके विपरीत यह
इच्छा करना प्रभो मेरे में तन मन धन दूसरों के लिये बलिदान करने की शक्ति आजाय यह सच्ची और निःस्वार्थ प्रार्थना
है हे प्रभो मुझे ऐसा बल दीजोगे कि मै अपनी शारीरिक मानसिक कौटुम्बिक आर्थिक समस्त शक्तियां तेरे समर्
पित करूं लेने में बहुतसे मनुष्य राजी है कुछ ऐसे हैं जो दोनों में ऐसे बहुत कम हैं जो देने में नहुरत्ना वसुन्ध
रा के अनुसार ऐसे भी कई व्यक्ति होगये हैं जिन्होने कष्ट पाकर दूसरों का भला किया आज देशके नेताओं में
ही देखलीजे कई तरहके मिलेगें साधु समाजमें भी कई तरहके होते हैं दूसरों के प्राणों की रक्षा करने के लिये
अपने प्राणों को बलि दान करने वालो की कमी नही मेघरथने कबूतर के लिये अपना मांस दे दियाथा मोहम्मद
साहबभी फाकताके लिये अपना मांस देने को तैयार होगयेथे साहित्यमें पशु पक्षीयों की रक्षा के उदाहरण इसलि
येहै कि जो छोटो का रक्षा करताहै वो बड़ो की तो करताही है महाभारतमें रंती देव की कथा आती है वे राजाथे उन्हे
४८ दिन खाए हुये होगयेथे एक चाण्डाल भूखा मरता चिल्लाता आया उन्होने अपना भोजन देदिया इसतरह देकर
राजी होने वालों की संख्या कम है निःस्वार्थ भावसे देना परमात्मा को देना है शास्त्र के साथ व्यवहारिकवालो
का भी कथन करनाहै पड़ता है व्यवहारिक जीवन ठीक नही तो धार्मिक जीवन भी ठीक नही होता विना गुरु के ज्ञाननही
पेढके न बैठे पास अक्षर न बांचसके विनाही पढे कहो कैसे जाने फारसी जोहरी के मिले विन हाथ नग लिये फिरे विनाजो
हरी वाको कोई संशय न सरसी वैद्य के मिले विना बूंटी को बताने कौन खदा जैसे ज्यार वाकी औषध है फारसी
सुन्दर कहत मुख रंचहु न देख्यो जाये गुरु विना ज्ञान जैसे अंधेरे में आरसी। कोई तुलर लिखाको फूलपर

परमात्मा को त्रिभुवन धनी कहते हैं दुनिया या संसार तीन हिस्सों बांट गया जीवन भी भोगी जीवन त्यागी जीवन त्यागी जीवन दो प्रकार ग्रहस्थ मुनि । अधोलोक अंधकार मय है भोगी जीवन अंधकार मय मध्य और ऊर्ध्व लोक प्रकाश मय मध्य लोक में अंधकार और प्रकाश होनो पाए जाते हैं ग्रहस्थ जीवन रत्न मिला है फिर भी वह जीवन विकास जाता है ग्रहस्थ के कामों में विचार पूर्वक करने से पुण्य बिना विचारे पाप पाने भी करोति पुण्य जानयति ति पापं । त्यागी जब भोगों की इच्छा करता है तब अपने को गिरा देता है सोना टूट कर भी बिकता है उसी कीमत में मोती के टूटने से बिकता भी नहीं और कीमत भी कुछ नहीं रहती । जो मनुष्य कहता है करता नहीं उस का कहना गुन गुनाना है । गुन गुनाना भी दो प्रकार का एक साधारण मक्खी गुण गुनाती है दूसरी शहद की मक्खी साधारण मक्खी गुन गुना कर इधर उधर से गुन गुना कर गंदा लाती है और भोजन पर बैठ कर रोग फैलाती है मगर शहद की मक्खी गुन गुना कर फूलों से रस ग्रहण करती है शहद पैदा करती है एक गुन गुनाना रोग फैलाता है दूसरा शहद पैदा करता है । बहुत से लोग बोलते हैं दूसरों की निंदा और अवगुण प्रकाश करने के लिये । शहद की मक्खी के समान गुण ग्राहक बनो निंदक न बनो । परमात्मा सब को प्रकाश देता है भोगी को भी त्यागी को भी भोगी प्रकाश पाकर भी अंधता रहता है अंधकार मय जीवन । त्यागी वह है जो भोगों को छोड़ कर फिर नहीं चखता तो तू गर्भ वास में जिस दिन दुख सहेगा उल्टे पे हरदम लटकते हो गरज के बीच में जो भूख के लेना वहां पर गिजा कुछ भी नहीं । राम रे रखोगे वहां पर आरती से काजो मुजे प्रब प्रभु को भज बैठे भी । फेकर कुछ भी नहीं उस दिन होर कौन छिपने की जब आवेगा काल निशानी में नर तन रतन । बिना प्रभु के सवेरा क्यों होवेगा आंखों में दिल कर सब भूलनी डाली समझ कर ढल रही है पाप की पोट धरी सिर ऊपर प्रभु नहीं भजा दिन जाती है

जीवन क्या। जीने की कला भी। जीवन में आने वाली उलझनों से लड़ना संघर्ष करना जो इनसे लड़ा आगे बढ़ा
वह बहादुर वरना कायर बनना जी. अ. ने कहा बैठा रुकना मृत्यु व्यक्ति समाज राष्ट्र जो रुका खतम
बहने वाला छोटा सा झरना साथियों को ले कर दरिया फिर जन कल्याण करना समुद्र में जो रुक बहता।
नहीं रुका बिना प्रवाह सड़ता मच्छरों का घर बीमारी का वातावरण खराब नज़रों में घृणा का पात्र बनना
पुन यह जीवन क्या जो विवेका नी गंदा जी. नजरों से गिरा जीवन मारे मारे कुत्ते की तरह दुत्कार भयभीत
दूसरों की गुलामी यह मानवता नहीं स्वाभिमानी दबूं कहाँ लेकिन उलझनों से समाज की कायरता यही
नरजीना नहीं कुत्तों की तरह भौंकना पेट में तरह तरह अपने को सच्चा और बुरे झूठी मौत दूर कहां
जाम पाकर की शिकायत में रस ना विचारने में आयुर्वेद ज़हर पत्थर सा कठोर प्रेम और नम्रता नहीं
यह जीने की कला नहीं जीवन समुद्र बालक जवानी बुढ़ापा सब लहरें बचपन जवानी
आ गई गई बुढ़ापा आता जाता नहीं बचपन सादी जवानी चंचल बुढ़ापा ऐश आराम आमोद
प्रमोद खतम बुढ़ापा वैराग्य दशरथ को दो जैसी वैराग्य भी राउ स्वभाव मुकर कर जीता वह जानिये
जो कि मुकुट सम कीन्ह श्रवण समीप देख सित केश मनहु चौथपन अस उपदेसा) जराजाव ममतासे —

धर्म संप्रदाय में भेद धर्म अलग वह नया व पुराना नहीं संप्रदायवाओं में भी मरे भी नये भी पुराने भी धर्म जो सदा धर्म सब
का कल्याण धर्म झगड़ा नहीं संप्रदाय पंथ झगड़ा। धर्म की परख नये पन पुराने पन में नहीं नया पुराना न
देखकर असलियत परखनी पुरानी धर्म नारक जो धारणा जो आत्मपने से शिथिलाचार को पोषण करने
के लिये गलत बताना धर्म नष्ट करने के लिये नई परम्परा चालू करना गलत तर्कों द्वारा परम वैराग्य.
धर्म का नाम लेकर आरंभ परिग्रह बढाना पतन। शिथिलाचार का पोषण करना धर्म नहीं धर्म कषाय
शमन विकारों से मुक्ति। सत्य आदि की साधना के बल पर जन्म मरण मुक्त होना जैन दर्शन के अनुसार आत्मा
श। इन्द्रियों से अलग। मन मस्तिष्क से भिन्न पूर्ण ब्रह्म आज केवल जिस दिन लोक भाषा के पर्दे को
भेद कर स्वधर्म में आएगा अनन्त ज्ञान ज्योति से जगमगा उठेगा। लेकिन कुछ दर्शन आत्मा को
गुलाम कहते हैं कुछ भी कितनी भी जनित कितनी भी कठिन क्रिया गुलाम रह जाये

आगे की प्रथम पंक्ति में ा ` ` दा ` विराजित तपस्वीराज श्रीचन्द्र जी महाराज, कविरत्न उपाध्याय श्री अमरचन्द्र जी महाराज, पण्डितरत्न श्री हेमचन्द्र जी महाराज, पूज्य गुरुदेव गणी श्री श्यामलाल जी महाराज, व्याख्यान वाचस्पति श्री मदन लाल जी महाराज, जैनाचार्य पूज्य श्री पृथ्वीचन्द्र जी महाराज, योगिराज श्री रामजीलाल जी महाराज

पि ली पंक्ति में ाये ` दाये विराजित ाण्डारी श्री पदमचन्द्र जी महाराज, श्री शिखर चन्द्र जी महाराज, श्री रणि ह जी महाराज, श्री विजयचन्द्र जी महाराज, पण्डितरत्न श्री प्रेमचन्द्र जी महाराज, श्री रामकृ ण जी महाराज, श्री अणेलकचन्द्र जी महाराज, श्री हेमचन्द्र जी महाराज, श्री शिवचन्द्र जी महाराज, ाण्डारी श्री लवन्त ि ह जी महाराज

जैनाचार्य पूज्य श्री पृथ्वीचन्द्र जी महाराज, पूज्य गुरुदेव गणी श्री श्यामलाल जी महाराज, व्याख्यान वाचस्पति श्री मदन लाल जी महाराज, योगिराज श्री रामजीलाल जी महाराज, घोर तपस्वी श्री निहालचन्द्र जी महाराज, कविरत्न उपाध्याय श्री अमरचन्द्र जी महाराज, पण्डितरत्न श्री हेमचन्द्र जी महाराज आदि ठाणे 26

श्रद्धेय पूज्य गुरुदेव गणी
श्री श्यामलाल जी महाराज
पण्डितरत्न
श्री प्रेमचन्द्र जी महाराज
व्याख्यान वाचस्पति
श्री मदनलाल जी महाराज

श्री मदन लाल जी म., श्री शुक्ल चन्द जी म. तथा श्री रघुवर दयाल जी म.

तर्जः प्यारे भगवान् के गीत...

जय विजय जय विजय जय विजय जय विजय
श्री मदन लाल गुरुदेव की जय विजय ॥

1. गुरुओं के सामने वो थे रहते झुके,
जिससे तूफान मन के थे सब ही रुके,
सीखनी है हमें उनसे करनी विनय ॥

2. ज्ञान का इक चमकता हुआ नूर था,
होता मन का अँधेरा सभी दूर था,
आगमन उनका था सूर्य का सा उदय ॥

3. बरसे स्वाध्याय के ऐसे घन थे घने,
आगमिक ज्ञान के गहरे सागर बने,
जो भी आया निकट वह बना ज्ञानमय ॥

4. अनुकरण योग्य था उनका चारित्र बल,
देख उनको गए ढीले ढाले संभल,
धर्मद्रोही सदा उनसे खाते थे भय ॥

5. धर्म की प्रेरणा उनकी वाणी में थी,
चेतना आती प्रत्येक प्राणी में थी,
जागरण मंत्र था गूँजता हर समय ॥

6. शान्ति देती है उनकी चरण वन्दना,
कर दिखाने की कुछ उठती है भावना,
पाप कर्मों का होता विलय और क्षय ॥

यस्य ज्ञान विभाभि रुज्ज्वलतमा जाता दिगन्ता इमे,
मिथ्यात्वाद् विनिवारिता जनि जुषो यस्याभवन् भाषणैः।
चारित्रे द्रढिमा च यस्य दृढतामद्यापि दत्ते जनान्,
वन्दे श्री मदनं त्रिरत्न सदनं वाचस्पतिं सद्गुरुम् ॥

जिनकी ज्ञान प्रभाओं से प्रत्येक दिशा आलोकित है,
जिनके भाषण से मिथ्यामति कितनी हुई निराकृत है।
धर्म चरण की दृढ़ता दी जिनके संयम ने जन-जन को,
उमड़ा मन गुरुवर वाचस्पति मदनमुनि के वन्दन को ॥